॥श्रीमद्भगवद्गीता॥

यथार्थ गीता

(हक़ीक़ी गीता)

५२००

सालों के लम्बे
अरसा के बाद
श्रीमद्भगवद्गीता की
दाड़मी तशरीह

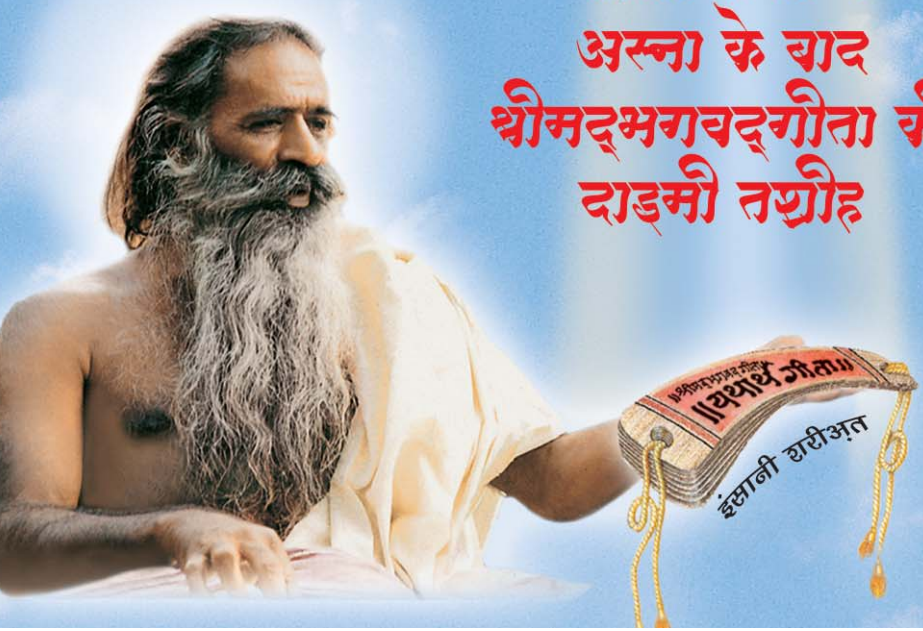

शर्हनवीस के मुतअल्लिक़

'यथार्थ गीता' के शर्हनवीस एक आबिद हैं जो ता'लीमी ख़िताबों से वाबस्तः न होने पर भी मुर्शिद की मेह्बानी के समरः की शक्ल में ख़ुदाई अह्काम से मुतहर्रिक हैं। मज़्मून-नवीसी को आप रियाज़त और इबादत में ख़लल मानते रहे हैं लेकिन गीता की इस तश्रीह में हिदायत ही वसीलः बनी। मा'बूद ने आपको एहसास में बताया कि आपके सारे ख़साइल साकिन हो गये हैं, सिर्फ मा'मूली-सी एक रुज्हान बाक़ी है- गीता की मज़्मून-नवीसी। पहले तो स्वामीजी ने इस रुज्हान को यादे इलाही से काटने की कोशिश की लेकिन मा'बूद के हुक्म की मुजस्सम शक्ल है- 'यथार्थ गीता'। तश्रीह में जहाँ भी ख़ामी होती, मा'बूद इस्लाह कर देते थे। स्वामीजी के खुद के सुकून के वास्ते लिखी यह तश्रीह सबके सुकून का बाइस बने, इसी नेक ख़्वाहिश के साथ!

-अज़तरफ़ नासिर।

सालों के लम्बे अस्ना के बाद श्रीमद्भगवद्गीता की दाइमी तश्रीह

॥ ॐ नमः सद्गुरुदेवाय ॥

॥ श्रीमद्भगवद्गीता ॥

॥ यथार्थ गीता ॥

(हक़ीक़ी गीता)

इंसानी शरीअ़त

शर्हनवीस (व्याख्याकार) :

आ'ला बुजुर्ग श्री परमहंस महाराज के मुतवस्सिल

स्वामी श्री अड़गड़ानन्द जी

श्री परमहंस आश्रम

ग्राम व पोस्ट- शक्तेषगढ़, ज़िला-मिर्ज़ापुर, उ०प्र०, भारत

प्रकाशक :

श्री परमहंस स्वामी अड़गड़ानन्दजी आश्रम ट्रस्ट

न्यू अपोलो स्टेट, गाला नं- 5, मोगरा लेन (रेलवे सब वे के पास)

अंधेरी (पूर्व), मुम्बई - 400069

प्रकाशक :

श्री परमहंस स्वामी अड़गड़ानन्दजी आश्रम ट्रस्ट

न्यू अपोलो स्टेट, गाला नं- 5, मोगरा लेन (रेलवे सब वे के पास)
अंधेरी (पूर्व), मुम्बई - 400069
फोन - (022) 28255300
ई-मेल - contact@yatharthgeeta.com
वेबसाइट - www.yatharthgeeta.com

© लेखक

संस्करण– पहला, गंगा दशहरा - सन् 2002 (2,000 प्रतियाँ)
दूसरा, श्रीगुरुपूर्णिमा - सन् 2024 (1,000 प्रतियाँ)

श्रीकृष्ण ने जिस वक़्त गीता की नसीहत दी थी, उस वक़्त उनके दिली एहसासात क्या थे? दिली एहसासात के सारे ख़्यालात का इज़्हार नहीं किया जा सकता। कुछ तो बयान में आ पाते हैं, कुछ अदा से ज़ाहिर होते हैं और बाक़ी ख़ालिस अ़मली हैं, जिसे कोई राहरौ चलकर ही जान सकता है। जिस मक़ाम पर श्रीकृष्ण फ़ाइज़ थे, धीरे-धीरे चलकर उसी मक़ाम को हासिल करने वाला अज़ीम इंसान ही जानता है कि गीता क्या कहती है। वह गीता के सुतूर ही नहीं दुहराता बल्कि उनके मफ़्हमोत का भी इज़्हार कर देता है। क्योंकि जो मंज़र श्रीकृष्ण के सामने था, वही उस मौजूदः अज़ीम इंसान के सामने भी है। लिहाज़ा वह देखता है, दिखा देगा, आपमें जगा भी देगा, उस राह पर चला भी देगा।

बुज़ुर्गवार श्री परमहंस जी महाराज भी उसी सतूह के अज़ीम इंसान थे। उनके अल्फ़ाज़ और बातिनी तर्ग़ीब से मुझे गीता का जो मफ़्हूम मिला, उसी की तद्वीन 'यथार्थ गीता' है।

– स्वामी अड़गड़ानन्द

हमारे नश्रो-इशाअत

किताबें		ज़बान
यथार्थ गीता	❖ भारतीय भाषायें	हिन्दी, मराठी, पंजाबी, गुजराती, उर्दू, संस्कृत, उड़िया, बंगला, तमिल, तेलगू, मलयालम, कन्नड़, आसामी, सिन्धी।
	❖ विदेशी भाषायें	अंग्रेजी, जर्मन, फ्रेंच, नेपाली, स्पेनीश,फारसी,डच, जापानी, इन्डोनेशियन, नार्वेजीयन, चायनीज, इटालियन, रूसी, पुर्तगाली, अरबी।
शंका समाधान		हिन्दी, मराठी, गुजराती, नेपाली, अंग्रेजी।
जीवनादर्श एवं आत्मानुभूति		हिन्दी, मराठी, गुजराती, अंग्रेजी।
अंग क्यों फड़कते हैं? क्या कहते हैं?		हिन्दी, अंग्रेजी, गुजराती, जर्मन।
अनछुये प्रश्न		हिन्दी, मराठी, गुजराती।
एकलव्य का अंगूठा		हिन्दी, मराठी, गुजराती।
भजन किसका करें?		हिन्दी, मराठी, गुजराती, बंगला, अंग्रेजी, नेपाली।
योगशास्त्रीय प्राणायाम		हिन्दी, गुजराती।
षोडशोपचार पूजन-पद्धती		हिन्दी, गुजराती।
योगदर्शन-प्रत्यक्षानुभूत व्याख्या		हिन्दी, गुजराती, संस्कृत, अंग्रेजी।
ग्लोरिस् ऑफ योगा		अंग्रेजी।
प्रश्न समाज के - उत्तर गीता से		हिन्दी।
गीता के प्रमुख प्रश्न		हिन्दी।
भगवान सद्गुरु		हिन्दी।
बारहमासी		हिन्दी।
अहिंसा का स्वरुप		हिन्दी, मराठी, गुजराती, अंग्रेजी।
अमृतवाणी १-७		हिन्दी।
ऑडियोसीडीज् (Mp3)		
यथार्थ गीता		हिन्दी, गुजराती, मराठी, उर्दू, तमिल, तेलगू, अंग्रेजी, जर्मन, बंगला, मलयालम, कन्नड़।
अमृतवाणी (श्री स्वामी जी की पाक ज़बान से निकले ताहिर कलामों की तद्वीन)		हिन्दी।
गुरुवंदना		हिन्दी।
विडियोसीडीज्		
(श्री स्वामीजीके प्रवचन)		हिन्दी।

© इख़्तियार-ए-कामिल- मुसन्निफ़

(इस किताब का कोई भी हिस्सः-इशाअत, रिकार्डिंग, नक़्ल की इशाअत और तर्मीग बगैर मुसन्निफ़ की इजाज़त के सख़्त मना है।)

लामुतनाही श्री से मुज़ैयन

जोगियों के सरताज अज्दादे वक़्त

आ'ला बुजुर्ग **श्री स्वामी परमानन्द साहिब**

श्री परमहंस आश्रम, अनुसुइया (चित्रकूट)

के बेहद पाक क़दमों में

बाअदब पेशे ख़िद्मत

बरूहानी तर्ग़ीब

गुरु-वन्दना

।। ॐ श्री सद्गुरुदेव भगवान् की जय ।।

जय सद्गुरुदेवं, परमानन्दं, अमर शरीरं अविकारी।
निर्गुण निर्मूलं, धरि स्थूलं, काटन शूलं भवभारी।।

सूरत निज सोहं, कलिमल खोहं, जनमन मोहन छविभारी।
अमरापुर वासी, सब सुख राशी, सदा एकरस निर्विकारी।।

अनुभव गम्भीरा, मति के धीरा, अलख फकीरा अवतारी।
योगी अद्वेष्टा, त्रिकाल द्रष्टा, केवल पद आनन्दकारी।।

चित्रकूटहिं आयो, अद्वैत लखायो, अनुसुइया आसन मारी।
श्री परमहंस स्वामी, अन्तर्यामी, हैं बड़नामी संसारी।।

हंसन हितकारी, जग पगुधारी, गर्व प्रहारी उपकारी।
सत्-पंथ चलायो, भरम मिटायो, रूप लखायो करतारी।।

यह शिष्य है तेरो, करत निहोरो, मोपर हेरो प्रणधारी।
जय सद्गुरु.....भारी।।

।। ॐ ।।

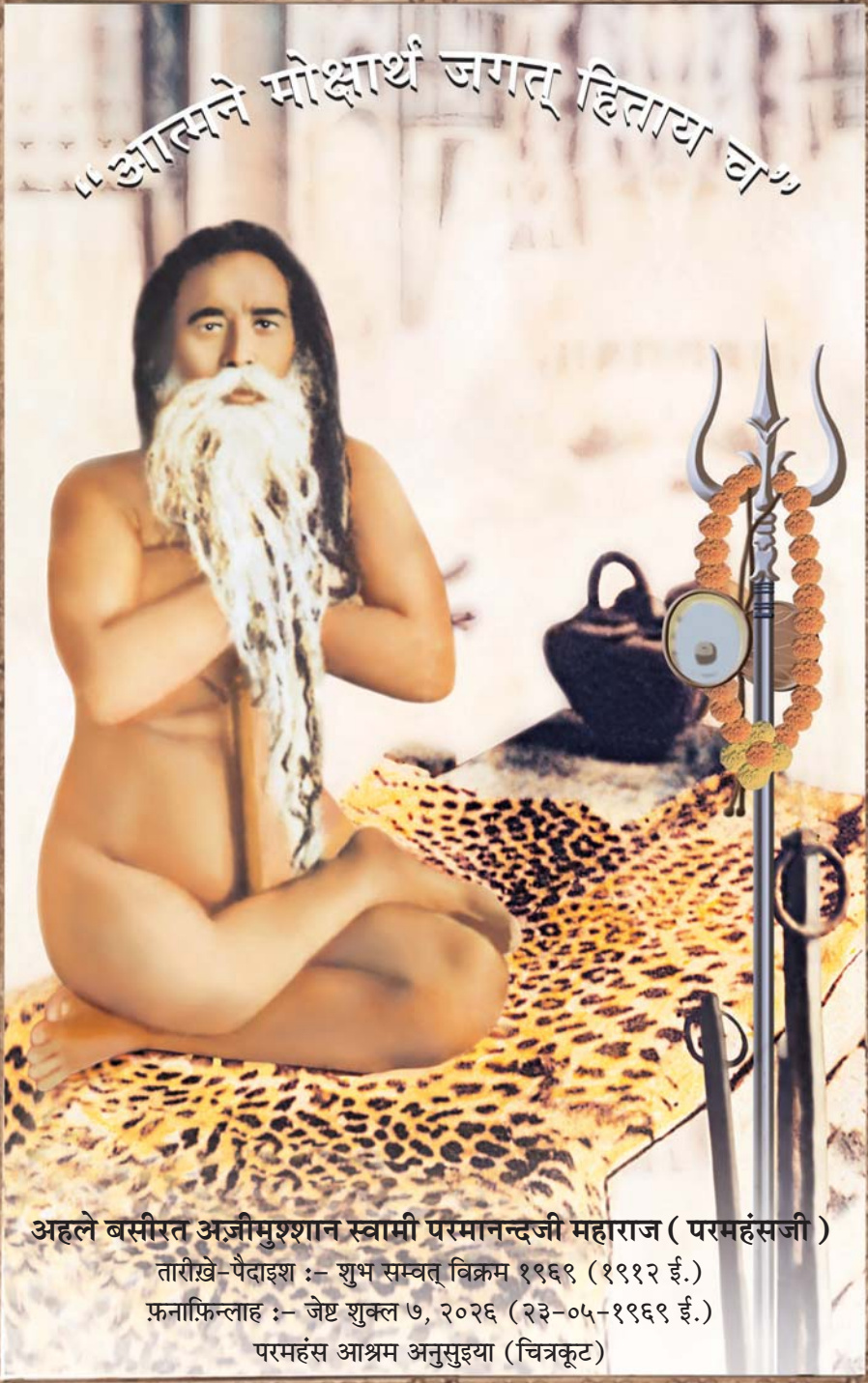

अहले बसीरत अज़ीमुश्शान स्वामी परमानन्दजी महाराज (परमहंसजी)

तारीख़े-पैदाइश :- शुभ सम्वत् विक्रम १९६९ (१९१२ ई.)

फ़नाफ़िन्लाह :- जेष्ट शुक्ल ७, २०२६ (२३-०५-१९६९ ई.)

परमहंस आश्रम अनुसुइया (चित्रकूट)

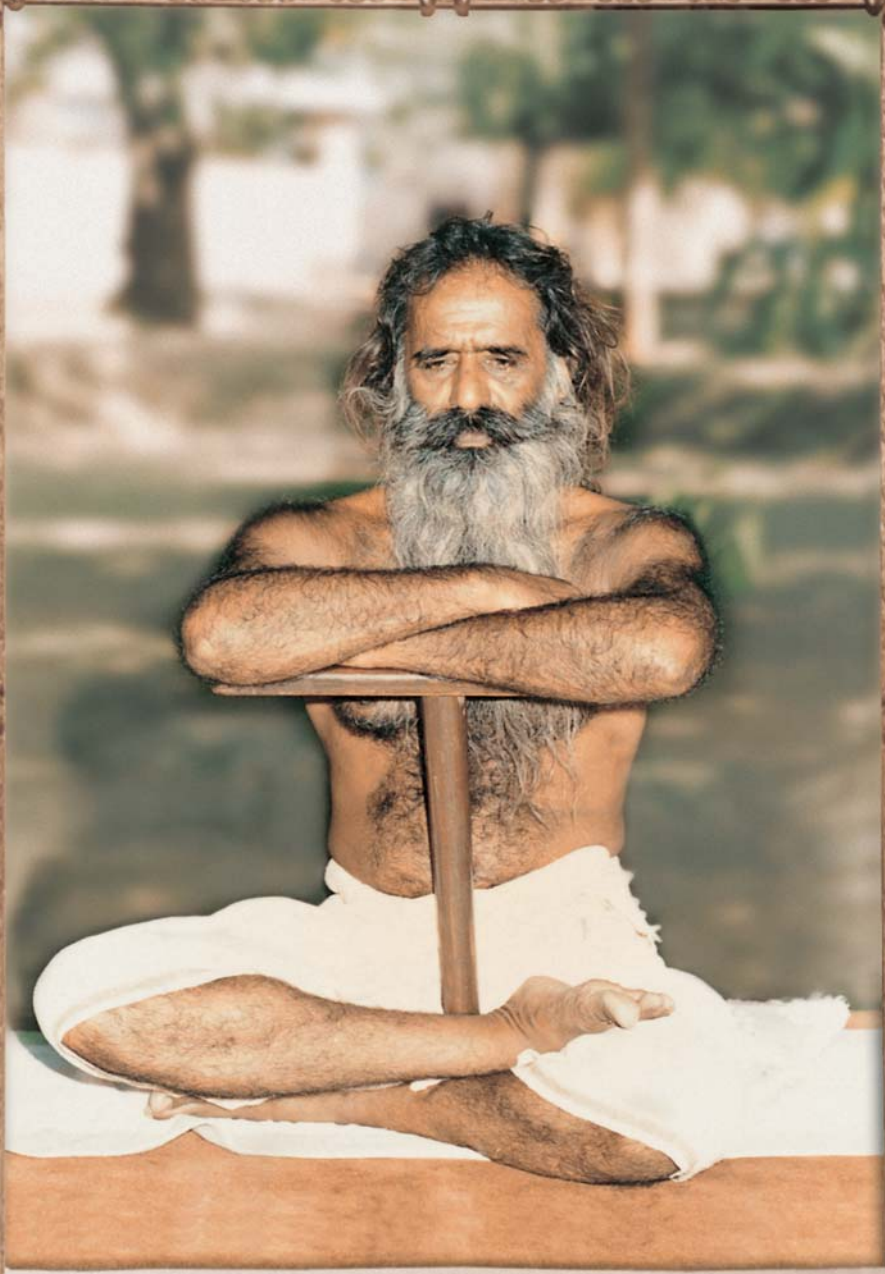

स्वामी श्री अड़गड़ानन्द जी महाराज

(आ'ला बुजुर्ग श्री परमहंस महाराज के मुतवस्सिल)

मुतर्जिम की क़लम से.....

वली वेदव्यास से पहले कोई भी शरीअ़त किताब की शक्ल में दस्तयाब नहीं थी। शुनीदः इल्म की इस रिवायत को तोड़ते हुए उन्होंने चार वेद, ब्रह्मसूत्र, महाभारत, श्रीमद्भगवद्गीता जैसी पाक किताबों में अन्दोख्तः माद्दी और रूहानी इल्म के ज़ख़ीरः की तद्वीन कर अख़ीर में ख़ुद ही फैसलः दिया कि सारे वेदों की जान और उपनिषदों का जौहर है 'गीता'। गीता अच्छी तरह मुतालअः करके दिल में बसाने के क़ाबिल है, जो बन्दःपर्वर श्रीकृष्ण की पाक ज़बान से निकला कलाम है।

दरहक़ीक़त अलग-अलग नज़रीयात से गीता पर तमाम तफ़्सीरें लिखी जा चुकी हैं, जबकि सबकी वाहिद बुन्याद गीता है। सवाल पैदा होता है कि जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कोई एक ही बात कही होगी; फ़िर इख़्तिलाफ़ात क्यों? दरअस्ल मुक़र्रिर एक ही बात कहता है लेकिन सुननेवालों में जहाँ तक रसाई होती है, वहीं तक पहुँच पाते हैं। लिहाजः इख़्तिलाफ़ात दिमाग़ी फ़ित्रत है।

गीता किसी ख़ास इंसान, ज़ात, तब्क़ः, मौका-महल, मज़्हबी तफ़्रिक़ात ख़्वाह किसी क़दामत परस्त फ़िर्कः की किताब नहीं है बल्कि ये तमाम दुन्या की दाइमी दीनी किताब है। यह ख़ुद में दीनी किताब ही नहीं बल्कि दीगर दीनी किताबों में मौजूद हक़ाइक का पैमानः है। वाहिद ख़ुदा के वुजूद को सभी क़बूल करते हैं लेकिन उसे हासिल करने का मुकम्मल तरीक़ः सिल्सिलःवार सिर्फ़ गीता में ही मौजूद है जिसकी तश्रीह रम्ज़आश्ना, अह्लेबसीरत, क़ाबिले-एहतिराम स्वामी अड़गड़ानन्द महाराज की 'यथार्थ गीता' है। रूहानी तर्ग़ीब से अमलीतौर पर जो कुछ उन्होंने गीता के बारे में सोचा-समझा और जाना, उसी की क़लमबंद तह्रीर है 'यथार्थ गीता'। जोग के मालिक श्रीकृष्ण के गीता में बयान किये गये मफ़्हूम की सहीह तह्क़ीक़ पेश करने की बिना पर इस तश्रीह का नाम रखा गया है 'यथार्थ गीता'।

उस रूहेमुत्लक़ के मावराई कलाम के मुताबिक़ जिस्म एक लिवास है जो त़गैय्युर पज़ीर है। आप औरत हों ख़्वाह मर्द, यह शक्ल जिस्म की है, रूह की नहीं। औरत, मर्द कोई भी क्यों न हो उसकी पनाह में आकर आ'ला शरफ़ को हासिल करता है। लिहाज़ा यादे-इलाही का हक़ औरत-मर्द दोनों को यकसाँ है। यक़ीनी तौर पर अगर इंसान इस तश्रीह का मुतालअः करेगा, इस पर अमल पैरा होगा तो बिलाशुब्हः ज़ात-पात, फ़िर्कःपरस्ती और मज़्हबी तफ़्रिक़ात से नजात पाकर सिराते-मुस्तक़ीम की तरफ़ माइल हो आ'ला मसर्रत को हासिल करेगा।

'यथार्थ गीता' का मुख़्तलिफ़ चौदह ज़बानों में तर्जमः हुआ है। 'यथार्थ गीता' की शक्ल में उसका तर्जमः उर्दू ज़बान में पेशे-ख़िद्मत है जो नागरी रस्मुलख़त में सायः है।

किसी ज़बान का दूसरी ज़बान में तर्जमः करना एक मुश्किल तलब काम है क्योंकि हर ज़बान का अपना मिज़ाज, अपनी तर्बियत, इज़्हारे-ख़यालात का अपना तरीक़ः और तलफ़्फ़ुज़ की अपनी ख़ुसूसीयत होती है। स्वामी जी की हिदायत के मुताबिक़ तश्रीह का लफ़्ज़ ब लफ़्ज़ तर्जमः करने की नाचीज़ ने अपनी सलाहीयत के मुताबिक़ पूरी कोशिश की है। कुछ ता'रीफ़ी अल्फ़ाज़ को भी लफ़्ज़ देने की कोशिश की गयी है। जोग के मालिक श्रीकृष्ण, मर्देकामिल अर्जुन बग़ैरः के सिफ़ाती

नामों को जैसा का तैसा लिखा गया है। इस तर्जमः में इस्ते'माल हुए मुश्किल अल्फ़ाज़ के मा'ना की फ़ेहरिस्त भी किताब के आख़िर में क़ारी हज़्रात की सहूलत के लिए शामिल है।

'गीता' का तसव्वुफ़ कोई सहूल नहीं। तर्जमः करने में तमाम मुश्किलें सामने आयीं, मगर आ'ला बुज़ुर्ग बेहद मुह्तरम 'स्वामी जी' हमेशः अपने रह्मोकरम से नवाज़ते रहे, नज़र अता करते रहे जिससे यह काम मुकम्मल हो सका। शुक्रगुज़ार हूँ मैं श्री प्रेमनाथ चौबे जी का, जो हिम्मत अफ़्ज़ाई करने के साथ-साथ जब भी स्वामी जी से मिलने की ज़रूरत पड़ती तो फ़ौरन स्वामी जी से मुलाक़ात कराने की ज़ह्मत गवारा करते।

सबसे पहले मोह्तरमः सत्या शर्मा ने 'यथार्थ गीता' का उर्दू में तर्जमः करने की पेशकश की। एक किताब भी अता की। बहुत ही मुश्किल काम जानकर मैंने तर्जमः करने से मना भी कर दिया, लेकिन जब मैं ख़ुद 'यथार्थ गीता' का मुतालअः करने बैठा तो गीता की वह्दानियत में मेरी दिलचस्पी बढ़ती गई और इसका एहसास हुआ कि 'यथार्थ गीता' एक ऐसी अज़ीम दीनी शरीअ़त की किताब है जो हर आमो-ख़ास को वाहिद ख़ुदा में राग़िब कर सिराते-मुस्तक़ीम की तरफ़ माइल करती है। क़ुदूरत को मिटाकर, दिलों में मुहब्बत पैदा कर, जात-पात, फ़िर्क़ः वारानः व आ'ला, अद्ना के ख़यालात को ख़त्म कर इंसानीयत का सबक़ दे, क़ौमी यकज़ेह्ती को आ'ला बलंदी पर पहुँचाने में क़ादिर है। बहुत-बहुत शुक्रगुजार हूँ अज़ीज़ी श्री राजनारायणजी पाण्डेय का, जो सालों इस काम से बाबस्तः हो नागरी रस्मे-ख़त तैयार करने में सिर्फ़ अपना कीमती वक़्त ही सर्फ़ नहीं किया बल्कि प्रूफ़ रीडिंग के काम को भी बड़े ख़ुलूस के साथ अंजाम दिया। उन्हीं की मेह्नत का समरः है कि यह काम बहुत जल्द मुकम्मल हो सका। इसके इलावः मैं उन तमाम हज़्रात का भी शुक्रगुज़ार हूँ जिन्होंने जैसे जिस शक्ल में भी इस काम में मेरी मदद की है।

तमाम कोशिशों के बावुजूद भी मेरी लाइल्मी की वज़्ह से इस किताब में त'माम ख़ामियों का होना मुम्किन है। मैं क़ारेईन इकराम से गुज़ारिश करूँगा कि अपनी सलाह और इस्लाह से नवाज़ने की ज़ह्मत गवारा करेंगे ताकि आने वाले एडीशन्स में इसे दुरुस्त किया जा सके।

सज़्दए शुक्र अदा करता हूँ उस पर्वर्दगार का, जिन्होंने मेरे इस काम में इतनी तक़्वीयत बख़्शी। हक़ीक़त तो यह है कि अगर क़ाबिले एहतिराम स्वामी जी की दुआएँ और उनका फ़ज़्लोकरम न होता तो यह तर्जमः मुश्किल ही नहीं बल्कि नामुम्किन था। जो कुछ भी, जैसा भी बन पड़ा है महज़ उनकी करम फ़र्माई है वर्नः -

दीन और ईमान की बातें,
उस अज़ीम इंसान की बातें।
मैं नाचीज़ कहाँ लिख पाता,
गीता की ये ज्ञान की बातें।

फ़क़त
ख़ाकसार
मुनीर बख़्श 'आलम'
चुर्क, सोनभद्र (उ०प्र०)

गीता तमाम इंसानों की दीनी शरीअ़त है।

– वली वेदव्यास

श्रीकृष्ण के दौर के वली वेदव्यास से पहले कोई भी शरीअ़त किताब की शक्ल में दस्तयाब नहीं थी। शुनीदः इल्म हासिल करने की इस रस्म को तोड़ते हुए उन्होंने चार वेद, ब्रह्मसूत्र, महाभारत, भागवत और गीता जैसी किताबों में पहले से अंदोख्तः पसअन्दाज़ माद्दी और रूहानी इल्म के ज़ख़ीरः की तद्वीन कर आख़िर में ख़ुद ही फ़ैसलः दिया कि–

गीता सुगीता कर्त्तव्या किमन्यैः शास्त्रसंग्रहैः।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माद्विनिःसृता।। (महाभारत, भीष्मपर्व ४३/१)

गीता अच्छी तरह मुतालअः (ग़ौरोफ़िक्र) कर के दिल से क़बूल करने के क़ाबिल है, जो बन्दःपर्वर श्रीकृष्ण की पाक ज़बान से निकला हुआ कलाम है, फिर दूसरे शराए' फ़राहम करने की क्या ज़रूरत है।

गीता का मग़्ज़े-सुख़न इस श्लोक से ज़ाहिर होता है कि–

एकं शास्त्रं देवकी पुत्र गीतम्
एको देवो देवकी पुत्र एव।
एको मन्त्रस्तस्य नामानि यानि
कर्माप्येको तस्य देवस्य सेवा।। (गीता-माहात्म्य)

या'नी, एक ही शरीअ़त है जो देवकी के पिसर बन्दःपर्वर श्रीकृष्ण ने अपनी पाक ज़बान से गाया– गीता। एक ही क़ाबिलेहुसूल देवता है, उस गीत में जिस सच्चाई का इज़्हार किया– वह है रूह। सिवा रूह के कुछ भी दाइमी नहीं है। उस गीत में उन अज़ीम जोग के मालिक ने किसका विर्द करने के लिए कहा? ओम्, अर्जुन! 'ओम्' लाफ़ानी रूहेमुत्लक़ का नाम है। उसका विर्द कर और तसव्वुर मेरा रख। एक ही अमल है– गीता में बयान किया गया आ'ला देवता, एक रूहेमुत्लक़ की ख़िद्मत। उन्हें अक़ीदत के साथ अपने दिल में क़बूल कर। लिहाज़ा शुरू से ही गीता आपकी शरीअ़त रही है।

बन्दःपर्वर श्रीकृष्ण के हज़ारों साल बा'द जिन अज़ीम इंसानों ने एक मा'बूद को हक़ बताया, गीता के ही पैग़ाम को पहुँचाने वाले हैं। मा'बूद से ही दुन्यवी, मावराई सुकून की ख़्वाहिश, ख़ौफ़ेख़ुदा, तौहीदपरस्ती - यहाँ तक तो सभी अज़ीम इंसानों ने बताया, लेकिन ख़ुदाई रियाज़त, ख़ुदा तक की दूरी तय करना, यह सिर्फ़ गीता में ही पूरी तौर पर सिलसिलःवार मह्फ़ूज़ है। देखिए- 'यथार्थ गीता'।

गीता से आसूदगी अम्नोसुकून तो मिलता ही है लेकिन यह लाफ़ानी, बेनाम आ'ला मक़ाम भी देती है। इसे हासिल करने के लिए देखें- गीता की फख़्रे-आलम (विश्व गौरव) ख़िताब को हासिल करने वाली तश्रीह 'यथार्थ गीता'।

गो कि दुन्या में सभी जगह गीता की क़द्रो-मंज़िलत है, फिर भी यह किसी मज़्हब या फ़िर्क़ः का अदब नहीं बन सकी, क्योंकि फ़िर्क़े किसी न किसी क़दीमी ख़याल से जकड़े हैं। भारत में ज़ाहिर हुई गीता दुन्या की अक़्लीयत की अमानत है। गीता तसव्वुफ़ मुल्क भारत की रूहानी अमानत है।

लिहाज़ा इसे क़ौमी शरीअ़त की तौफ़ीक़ अता कर ऊँच-नीच, फ़िर्क़ःपरस्ती और लड़ाई-झगड़ा के रिवाज से परेशान दुन्या के तमाम इंसानों को अम्नोसुकून देने की कोशिश करें।

ॐ

दीनी उसूल-एक

(१) सभी पर्वर्दगार की मख़्लूक़ -

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति।। (१५/७)

सभी इंसान ख़ुदा की मख़्लूक़ हैं।

(२) इंसानी जिस्म की हक़ीक़त -

किं पुनर्ब्राह्मणाः पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा।
अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम्।। (९/३३)

सुख से आरी, लम्हाती लेकिन कमयाब इंसानी जिस्म को हासिल कर मेरी याद कर या'नी मेरी याद का हक़ इंसानी जिस्म क़बूल करने वाले को है।

(३) इंसान की सिर्फ़ दो ज़ातें -

द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन्दैव आसुर एव च।
दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे शृणु।। (१६/६)

इंसान सिर्फ़ दो तरह के हैं- देवता और शैतान। जिसके दिल में रूहानी दौलत (दैवी सम्पत्ति) काम करती है, वह देवता है और जिसके दिल में दुन्यवी दौलत (आसुरी सम्पत्ति) काम करती है, वह शैतान। तीसरी कोई ज़ात काइनात में नहीं है।

(४) हर मुराद ख़ुदा से सह्लुलहुसूल -

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा
यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोक-
मश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान्।। (९/२०)

मुझे याद कर लोग जन्नत तक की ख़्वाहिश करते हैं, मैं उन्हें अता करता हूँ। मत्लब यह कि सब कुछ वाहिद ख़ुदा से सह्लुलहुसूल है।

(५) ख़ुदाई क़ुर्बत से गुनाहों का ख़ातिमः -

अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः।
सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं सन्तरिष्यसि।। (४/३६)

सारे गुनाहगारों से ज़ियादः गुनाह करने वाला भी इल्म की कश्ती से बिला शुब्हः पार हो जायेगा।

(६) इल्म (ज्ञान) -

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्।
एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा।। (१३/११)

रूह के तसल्लुत में बर्ताव; उंसुर के मा'ना में मुझ पर्वर्दगार का बदीही दीदार इल्म है और इसके इलावः जो कुछ भी है, जहालत है। लिहाज़ा मा'बूद का बदीही दीदार ही इल्म है।

(७) याद (भजन) का हक़ सबको -

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः।।

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति।
कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति।। (९/३०-३१)

बेहद बदकर्दार इंसान भी मेरी याद करके जल्द ही दीनदार हो जाता है और हमेशः क़ाइम दाइम रहने वाले हक़ीक़ी सुकून को हासिल कर लेता है। लिहाज़ा दीनदार इंसान वह है जो वाहिद ख़ुदा के लिए वक़्फ़ है।

(८) राहे ख़ुदा में बीज का इख़्तिताम (नाश) नहीं -

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्।। (२/४०)

इस ख़ुदशनासी के अमल का थोड़ा बर्ताव भी आमदो-रफ़्त के बेहद ख़ौफ़ से नजात दिलानेवाला होता है।

(९) मक़ाम-ए-ख़ुदा -

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया।। (१८/६१)

ख़ुदा सभी दुन्यवी जानदारों के दिल में मक़ाम करता है।

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्।। (१८/६२)

पूरी अक़ीदत के साथ उस वाहिद ख़ुदा की पनाह में जा; जिसके फ़ज़्ल से तू आ'ला सुकून, दाइमी आ'ला मक़ाम को हासिल करेगा।

(१०) यग (यज्ञ) -

सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे।
आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते।। (४/२७)

सारे हवास के कारोबार को मन की कोशिशों को इल्म से रौशनज़दः रूह में, तक़्वा की तम्सील आतशे-जोग (योगाग्नि) में सुपुर्द (हवन) करते हैं।

अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे।
प्राणापानगतीरुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः।। (४/२९)

बहुत से जोगी नफ़्से आमद (श्वास) का नफ़्से ख़ारिज (प्रश्वास) में हवन करते हैं और बहुत से नफ़्से ख़ारिज का नफ़्से आमद में। इससे आगे की हालत होने पर दूसरे तनफ़्फ़ुस की हरकत को क़ाबू में करके हब्से-दम (प्राणायाम) की तरफ़ माइल हो जाते हैं। इस तरह रियाज़ते जोग (योग-साधना) के मख़्सूस तरीक़ः का नाम यग है। उस यग को अमली शक्ल देना अमल है।

(११) यग करने का हक़ -

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम्।
नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम।। (४/३१)

यग न करने वालों को दुबारः इंसानी जिस्म भी हासिल नहीं होता। या'नी यग करने का हक़ उन तमाम लोगों को है, जिन्हें इंसानी जिस्म नसीब हुआ है।

(१२) ख़ुदाई दीदार मुम्किन है –

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप।। (११/५४)

लाशरीक अक़ीदत के ज़रीअः मैं बदीही दीदार करने, जानने व निस्बत बनाने के लिए भी सह्लुलहुसूल हूँ।

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेन-
माश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः।
आश्चर्यवच्चैनमन्यः श्रृणोति
श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित्।। (२/२९)

इस लाफ़ानी रूह को कोई शाज़ ही हैरतअंगेज़ नज़र से देखता है या'नी यह बदीही दीवार है।

(१३) रूह ही हक़ है, अबदी है –

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः।। (२/२४)

रूह (आत्मा) ही हक़ है। रूह ही अबदी है।

(१४) ख़ालिक़ (विधाता) और उसके ज़रीअः तख़्लीक़ की गयी काइनात फ़ानी है –

आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते।। (८/१६)

ख़ालिक़ (ब्रह्मा) और उससे तख़्लीक़ की गयी काइनात, देवता और शैतान दुःखों का मख़्ज़न और चन्दरोज़ः व फ़ानी हैं।

(१५) देवता की इबादत (देव-पूजा) –

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया।। (७/२०)

ख़्वाहिशात से जिनकी अक़्ल मह्सूर है, ऐसे कमअक़्ल इंसान ही मा'बूद के इलावः दीगर देवताओं की इबादत करते हैं।

येऽप्यन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम्।। (९/२३)

देवताओं की इबादत करने वाला मेरी ही इबादत करता है। लेकिन यह इबादत ग़ैरमुनासिब तरीक़ों की हामिल है, लिहाज़ा ख़त्म हो जाती है।

कर्शयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः।
मां चैवान्तः शरीरस्थं तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान्।। (१७/६)

सालेह अक़ीदतमंद देवताओं की इबादत करते हैं, लेकिन ऐसे परस्तारों को भी तू शैतान जान।

(१६) बदज़ात (अधम) -

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः।
दम्भाहंकारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः।। (१७/५)

जो यग के मुक़र्ररः तरीक़ः को तर्क कर ख़याली तरीक़ों से यग करते हैं, वे ही ज़ालिम, गुनाहगार और इंसानों में बदज़ात हैं।

(१७) मुक़र्ररः तरीक़ः क्या है?-

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्।। (८/१३)

ॐ, जो लाफ़ानी ख़ालिक़ेकुल (ब्रह्म) का तअर्रूफ़कुनिंदः है, उसका वज़ीफ़ः (जप) और मुझ एक रूहे मुत्लक़ की याद, मुबस्सिर अज़ीम इंसान की निगहबानी में तसव्वुर (ध्यान)।

(१८) शरीअ़त (शास्त्र) -

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ।
एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत।। (१५/२०)

शरीअ़त 'गीता' है।

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि।। (१६/२४)

फ़र्ज़ और नाफ़र्ज़ के तअय्युन में शरीअ़त ही सुबूत है, लिहाज़ा 'गीता' के मुक़र्ररः तरीक़ः से अमल करें।

(१९) दीन (धर्म) -

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। (१८/६६)

दीनी तब्दीली को तर्ककर मह्ज़ एक मेरी पनाह में हो जा या'नी वाहिद ख़ुदा के मुतअल्लिक़ बतौर कुल्ली सुपुर्दगी ही दीन की बुन्याद है। उस ख़ुदा को हासिल करने के मुक़र्ररः तरीक़ः का अमल ही दीनीअमल है। (बाब २, श्लोक ४०) और जो उसका अमल करता है वह बेहद गुनाहगार भी जल्द ही दीनदार हो जाता है (बाब ९, श्लोक ३०)।

(२०) दीन को हासिल कहाँ से करें? -

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च।। (१४/२७)

उस लाफ़ानी ख़ुदा की, ख़ालिद की, दाइमी दीन की और मुसल्सल सालिम यकरंग मसर्रत की मैं ही पनाह हूँ या'नी ख़ुदा में ज़म मुर्शिद ही इन सबकी पनाहगाह है।

नोटः- दुन्या के सारे मज़ाहिब का हक़ीक़ीचश्मः (सत्यधारा) गीता की ही इशाअत है।

ॐ

ज़माना-ए-क़दीम से लगात आज तक के मुफ़क्किरीन के ज़रीअः दिये गये हक़ीक़तअंदोज़ सिलसिलःवार पैग़ाम

(श्री परमहंस आश्रम जगतानन्द, ग्राम व पोस्ट- बरैनी, कछवां, ज़िला- मिर्ज़ापुर (उत्तर प्रदेश) में अपनी रहाइश के वक़्त में स्वामी श्री अड़गड़ानन्द जी ने दरवाज़ः के पास इस इबारत को गंगा दशहरा (सन् १९९३ ई०) के पाक मौक़ा पर बोर्ड पर नक़्श करवाया।)

ॐ

।। मुअल्लिमे - आलम भारत।।

- **वैदिक ऋषि- (अनादिकाल) (कुरूने माजी)- नारायण सूक्त-**
  ज़र्रः-ज़र्रः में जल्वःगर ख़ुदा (ब्रह्म) ही हक़ है। उसके जानने के इलावः नजात का कोई दूसरा तरीक़ः नहीं है।
- **भगवान श्रीराम (त्रेता - लाखों साल पहले - रामायण)-**
  वाहिद रूहे मुत्लक़ की याद के वग़ैरः इफ़ादः चाहता है, वह जाहिल है।
- **भगवान श्रीकृष्ण (तक़्रीबन ५२०० साल पहले - गीता) -**
  रूहे-मुत्लक़ ही हक़ है। ग़ैरोफ़िक्र की तक्मील में उस अबदी मा'बूद का हुसूल मुम्किन है। देवी-देवताओं की इबादत जहालत की देन है।
- **हज़्रत मूसा अलै० (तक़्रीबन ३००० साल पहले - यहूदी धर्म) -**
  तुमने ख़ुदा से अक़ीदत हटाई, बुत बनाया- इससे ख़ुदा नाराज़ है। मुनाजात में लग जाओ।
- **महात्मा जरथुस्त्र (तक़्रीबन २७०० साल पहले - पारसी धर्म) -**
  अहुरमज़्दा (ख़ुदा) की इबादत के ज़रीअः दिल में मौजूद उयूब को ख़त्म करो, जो तक्लीफ़ के सबब हैं।
- **महावीर स्वामी (तक़्रीबन २६०० साल पहले - जैन ग्रन्थ) -**
  रूह ही हक़ है। सख़्त रियाज़त से इसी जनम में जाना जा सकता है।
- **महात्मा गौतम बुद्ध (तक़्रीबन २५०० साल पहले - महापरिनिब्बान सुत्त) -**
  मैंने उस लाफ़ानी मक़ाम को हासिल किया है, जिसे पहले वली हज़्रात ने हासिल किया था, यही नजात है।

- **हज़्रत ईसा (तक़्रीबन २००० साल पहले - ईसाई धर्म) -**
  ख़ुदा, इस्तिना से हासिल होता है। मेरे या'नी मुर्शिद की कुर्बत में जाओ, इस वास्तें कि ख़ुदा के पिसर कहलाओगे।

- **हज़्रत मुहम्मद सल्ल० (तक़्रीबन १४०० साल पहले - इस्लाम धर्म) -**
  'ला इलाह इल्लल्लाह मुहम्मदुर्र रसूलल्लाह'- ज़रः-ज़रः में जल्वःगर ख़ुदा के सिवा कोई क़ाबिले-इबादत नहीं है। मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं।

- **आदि शंकराचार्य (१२०० साल पहले) -**
  दुन्या बातिल है। इसमें हक़ है तो सिर्फ़ अल्लाह (हरि) और उसका नाम।

- **परम सन्त कबीर (६०० साल पहले) -**

  राम नाम अति दुर्लभ, औरन ते नहिं काम।
  आदि मध्य औ अन्तहूँ, रामहिं ते संग्राम।।

  राम से जंग करो, यही रिफ़ाही है।

- **सद्गुरु नानक (५०० साल पहले) -**
  'एक ओंकार सतगुरु प्रसादि।' वाहिद ख़ुदा ही हक़ है लेकिन वह मुर्शिद की मेह्बानी का सिलः है।

- **स्वामी दयानन्द सरस्वती (२०० साल पहले) -**
  जावेद, अबदी, लाफ़ानी वाहिद रूहे मुत्लक़ की इबादत करें। उस ख़ुदा का ख़ास नाम ओम् है।

- **स्वामी श्री परमानन्द जी परमहंस (१९१२-१९६९ ई०) -**
  पर्वर्दगार जब मेह्बानी करते हैं तो दुश्मन दोस्त बन जाता है और मुसीबत दौलत हो जाती है। ख़ुदा सब जगह से देखता है।

ॐ

फ़ेहरिस्ते मज़ामिन

(अनुक्रमणिका)

क्र.सं.	मज़्मून	पेज नं०
१.	दीबाचः	१
२.	पहला बाब : ग़मो-शुब्हः जोग (संशय-विषाद योग)	१३
३.	दूसरा बाच : अमली तजस्सुम (कर्म-जिज्ञासा)	३६
४.	तीसरा बाब : तर्ग़ीबे-इख़्तितामे-अदू (शत्रु-विनाश प्रेरणा)	७६
५.	चौथा बाब : अमली जोग की तश्रीह (यज्ञकर्म स्पष्टीकरण)	१०२
६.	पाँचवाँ बाब : सारिफ़-ए-यग रब्बुल अर्बाब (यज्ञभोक्तामहापुरुषस्थ महेश्वर)	१३५
७.	छठा बाब : जोग-ए-रियाज़त (अभ्यास योग)	१४९
८.	सातवाँ बाब : इल्मे-मुकम्मल (समग्र जानकारी)	१६९
९.	आठवाँ बाब : इल्मे लाफ़ानी इलाह (अक्षर ब्रह्मयोग)	१८३
१०.	नवाँ बाब : बेदारी-ए-शाहंशाहे-उलूम (राजविद्या-जागृति)	२०२
११.	दसवाँ बाब : बयाने-शानो-शौकत (विभूति-वर्णन)	२२२
१२.	ग्यारहवाँ बाब : दीदारे-मज़ाहिरे-काइनात जोग (विश्वरूपदर्शन योग)	२३९
१३.	बारहवाँ बाब : इल्मे-अक़ीदत (भक्तियोग)	२६४
१४.	तेरहवाँ बाब : मैदां-आलिमे मैदां बाबे-जुज़ जोग (क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ विभाग योग)	२७३
१५.	चौदहवाँ बाब : तक़्सीमे-सिफ़ात जोग (गुणत्रय विभाग योग)	२८६
१६.	पँद्रहवाँ बाब : मर्देहक़ आगाह जोग (पुरुषोत्तम योग)	२९७
१७.	सोलहवाँ बाब : सिफ़ाते यज़्दाँ-ओ-अह्रमन जोग (दैवासुर सम्पद् विभाग योग)	३०९
१८.	सत्रहवाँ बाब : अक़ीदते ॐ, तत्, सत् बाबे जुज़ जोग (ॐ तत्सत् तथा श्रद्धात्रय विभाग योग)	३१९
१९.	अठारहवाँ बाब : इल्मे-तर्के-इरादी जोग (संन्यास योग)	३३२
२०.	इख़्तिताम	३६४
२१.	कुछ ख़ास अल्फ़ाज़ के मआनी	३९१

ॐ

दीबाचः

दरहक़ीक़त गीता की शर्ह लिखने की अब कोई ज़रूरत महसूस नहीं होती, क्योंकि इस पर सैकड़ों तश्रीहात लिखी जा चुकी हैं, जिनमें तमाम तो सिर्फ़ संस्कृत में ही हैं। गीता को लेकर पचासों ख़यालात हैं, जबकि सबकी बुन्याद वाहिद गीता है। जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने एक बात कही होगी, फिर ये इख़्तिलाफ़ात क्यों? दरहक़ीक़त मुक़र्रिर एक ही बात कहता है, लेकिन सुनने वाले अगर दस बैठे हों तो दस तरह के मफ़्हूम उनकी समझ में आते हैं। इंसान की अक़्ल पर मलकाते मज़मूम (तमोगुण), मलकाते रदीयः (रजोगुण) या मलकाते फ़ाज़िलः (सतोगुण) का जितना असर है, उसी की सतह से उस बात को पकड़ पाता है, इससे आगे वह समझ नहीं पाता। लिहाज़ा इख़्तिलाफ़ात क़ुद्रती है।

मुख़्तलिफ़ ख़यालात से और कभी-कभी एक ही उसूल को अलग-अलग दौर और ज़बानों में इज़्हार करने से आम इंसान शको-शुब्हः में पड़ जाता है।

तमाम तश्रीहों के बीच वह हक़ीक़त भी ज़ाहिर होती है, लेकिन ख़ालिस मा'ना वाली एक किताब हज़ारों तश्रीहों के बीच रख दी जाय, तो उनमें यह पहचानना मुश्किल हो जाता है कि हक़ीक़ी कौन है? मौजूदा दौर में गीता की तमाम तश्रीहें हो गयी हैं। सभी अपनी-अपनी सच्चाई का ए'लान करती हैं, लेकिन गीता के हक़ीक़ी मफ़्हूम से वे बहुत दूर हैं। बिला शुब्हः कुछ अज़ीम इंसानों ने हक़ीक़त का मुशाहदः भी किया लेकिन कुछ वुजूहात से वे उसे मुआशरः के सामने पेश न कर सके।

श्रीकृष्ण की मंशा को दिलनशीं न कर पाने की बुन्यादी वजह है कि वे एक जोगी थे। श्रीकृष्ण जिस सत्ह की बात करते हैं, धीरे-धीरे उनके नक़्शे-क़दम पर चलने वाला, उसी सत्ह पर खड़ा होने वाला कोई अज़ीम इंसान ही लफ़्ज़-ब-लफ़्ज़ बता सकेगा कि श्रीकृष्ण ने जिस वक़्त गीता की नसीहत दी थी, उस वक़्त उनके दिली एहसासात क्या थे? दिली एहसासात के सारे ख़यालात का इज़्हार नहीं किया जा सकता। कुछ तो बयान में आ पाते हैं, कुछ अदा से ज़ाहिर होते हैं और बाक़ी ख़ालिस अमली हैं जिसे कोई राहरौ चलकर ही जान सकता है। जिस मक़ाम पर श्रीकृष्ण फ़ाइज़ थे, धीरे-धीरे चलकर उसी मक़ाम को हासिल करने वाला अज़ीम इंसान ही जानता है कि गीता क्या कहती है? वह गीता के सुतूर ही नहीं दुहराता बल्कि उनके मफ़्हूमात का भी इज़्हार कर देता है; क्योंकि जो मंज़र श्रीकृष्ण के सामने

था वही उस मौजूदा अज़ीम इंसान के सामने भी है। लिहाज़ा वह देखता है, दिखा देगा; आप में जगा भी देगा, उस राह पर चला भी देगा।

'बुज़ुर्गवार श्री परमहंस जी महाराज' भी उसी पाए के अज़ीम इंसान थे। उनके अल्फ़ाज़ और बातिनी तर्ग़ीब से मुझे गीता का जो मफ़्हूम मिला, उसी की तद्वीन 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) है। इसमें मेरा अपना कुछ भी नहीं है। यह असल पर मुन्हसिर है। वसीलः क़बूल करने वाले हर इंसान को इसी दाइरः से गुज़रना होगा। जब तक वह इससे अलग है, तब तक ज़ाहिर है कि वह तद्बीर (साधन) नहीं करता; किसी-न-किसी तरह की लकीर ज़रूर पीटता है, लिहाज़ा किसी अज़ीम इंसान की पनाह लें। श्रीकृष्ण ने किसी दूसरी सच्चाई को नहीं ज़ाहिर किया- **'ऋषिभिर्बहुधा गीतम्'**- आरिफ़ हज़्रात ने कई मर्तबः जिसकी हम्दोसना की है, वही बयान करने जा रहा हूँ। उन्होंने यह नहीं कहा कि उस इल्म को सिर्फ़ मैं ही जानता हूँ, मैं ही बताऊँगा, बल्कि कहा- ''किसी मुबस्सिर की कुर्बत में जाओ, पूरे ख़ुलूस से ख़िद्मत करके उस इल्म को हासिल करो।'' श्रीकृष्ण ने अज़ीम इंसानों के ज़रीअ तह्क़ीक की गयी हक़ीक़त को ही ज़ाहिर किया है।

'गीता' सलीस संस्कृत में है। अगर अल्फ़ाज़ के अज़्ज़ाए तर्तीबी की तरफ़ ख़याल करें तो गीता का ज़ियादःतर हिस्सः आप बतौर ख़ुद दिलनशीं कर सकेंगे। लेकिन आप जैसे-का-तैसा मफ़्हूम नहीं लेते। बतौर मिसाल श्रीकृष्ण ने साफ़-साफ़ कहा- यग का तरीक़-ए-कार ही अमल है; फिर भी आप कहते हैं कि खेती करना अमल है। यगः के मत्लब को साफ़ करते हुए उन्होंने बताया कि यग में बहुत से जोगी हज़्रात जान (प्राण) की रियाह (अपान) में सुपुर्दगी (हवन) करते हैं, बहुत से रियाह की जान में सुपुर्दगी करते हैं। बहुत से जोगी जान-रियाह दोनों को रोककर हब्सेदम में लग जाते है। बहुत से जोगी हज़्रात हवास की तमाम ख़साइल को एहतियात के आग में सुपुर्द करते हैं। इस तरह तनफ़्फ़ुस की फ़िक्र 'यग' है। मन के साथ हवास का एहतियात यग है। शरीअ़त के मुसन्निफ़ ने ख़ुद यग को बताया, फिर भी आप कहते हैं कि 'विष्णु' (पर्वर्दगार) के वास्ते स्वाहा बोलना, आग में जौ, तिल, घी को सुपुर्द करना यग है। जोग के मालिक ने ऐसा एक लफ़्ज़ भी नहीं कहा।

क्या वज्ह है कि आप समझ नहीं पाते? बाल की ख़ाल निकालकर रटने पर भी क्यों तर्ज़े तक़्रीर ही आपके हाथ लगती है? आप अपने को हक़ीक़ी इल्म से मुबर्रा ही क्यों पाते हैं? दरहक़ीक़त इंसान जनम के बा'द धीरे-धीरे बड़ा होता है तो ख़ानदानी दौलत, घर, दुकान, ज़मीन, जाएदाद, ओहदः, इज़्ज़त, गाय, भैंस, और मशीन, औज़ार

वग़ैरः उसे विरासत में मिलते हैं। ठीक इसी तरह उसे कुछ कदामतें, रिवाजें, इबादत के तौर-तरीक़े भी विरासत में मिल जाते हैं। तैंतीस करोड़ देवी-देवता तो भारत में बहुत पहले शुमार किये गये थे, दुन्या में उनकी बेशुमार शक्लें हैं। बच्चा जैसे-जैसे बड़ा होता है अपने वालिदैन, भाई-बहन, पास-पड़ोस में उनकी इबादत देखता है। ख़ानदान में मुरव्वजः इबादत के तौर-तरीक़े के मुस्तक़िल निशान की छाया उसके दिमाग़ पर पड़ जाती है। देवी की इबादत मिली तो ताउम्र देवी-देवी रटता है, ख़ानदान में आसेब (भूत-प्रेत) की इबादत मिली तो भूत-भूत रहता है। कोई शिव तो कोई कृष्ण और कोई कुछ-न-कुछ पकड़े ही रहता है। उन्हें वह छोड़ नहीं सकता।

ऐसे गुमराह इंसान को 'गीता'-जैसी इफ़ादी शरीअ़त मिल भी जाय, तो वह उसे नहीं समझ सकता। बाप-दादों की दौलत को शायद वह छोड़ भी सकता है, लेकिन इन क़दामतों और मज़्हबी मसाइल को नहीं सुलझा सकता। आबाओअज्दाद की दौलत को हटाकर आप हज़ारों मील दूर जा सकते हैं, लेकिन दिलो-दिमाग़ में नक़्श ये क़यामतपरस्त ख़यालात वहाँ भी आप का पीछा नहीं छोड़ते। आप सर क़लम करके तो अलग रख नहीं सकते। लिहाज़ा आप हक़ीक़ी शरीअ़त को भी उन्हीं क़दामतों, रस्म-रिवाजों, मुसल्लमात और इबादत के तौर-तरीक़ों के मुताबिक़ ढालकर देखना चाहते हैं। अगर उनके मुताबिक़ बात ढलती है, बात-चीत का सिल्सिलः बैठता है तो आप उसे सहीह मानते हैं और नहीं बैठता तो ग़लत मानते हैं। इसीलिए आप गीता का राज़ नहीं समझ पाते। गीता का राज़, राज़ ही बनकर रह जाता है। इसके हक़ीक़ी जानकार आबिद या मुर्शिदेकामिल हैं। वे ही बता सकते हैं कि गीता क्या कहती है, सब नहीं जान सकते। सबके लिए आसान तरीक़ः यही है कि इसे किसी अज़ीम इंसान की क़ुर्बत में समझें, जिसके लिए श्रीकृष्ण ने ज़ोर दिया है।

गीता किसी मख़्सूस इंसान, ज़ात, तब्क़ः, फ़िर्क़ः, दौर या किसी क़दामती फ़िर्क़ः की किताब नहीं है बल्कि यह सारी दुन्या की हर दौर की किताबे शरीअ़त है। यह हर मुल्क, हर ज़ात और हर सत्ह के हर औरत मर्द के लिए, सबके लिए है। सिर्फ़ दूसरों से सुनकर या किसी से मुतअस्सिर होकर इंसान को ऐसा फ़ैसलः नहीं लेना चाहिए, जिसका असर सीधे उसके ख़ुद के वुजूद पर पड़ता हो। पहले से चली आ रही ज़िद के ख़याल से आज़ाद होकर सच्चाई की तह्क़ीक़ करने वालों के लिए यह आरिफ़ों से तअल्लुक़ रखनेवाली किताब रोशनी की मीनार है। हिन्दुओं का इस्रार है कि वेद ही सुबूत हैं। वेद का मा'ना है इल्म, रूहेमुत्लक़ की जानकारी। रूहेमुत्लक़ न संस्कृत में है न संहिताओं (वेद से तअल्लुक़ रखने वाले मज्मूअः) में। किताबें तो

मह्ज़ उसके लिए इशारियः हैं। वह दरहक़ीक़त दिल में बेदार होता है।

विश्वामित्र फ़िक्र में डूबे हुए थे। उनकी अक़ीदत देखकर ब्रह्मा (ख़ालिक़) तश्रीफ़ लाए और बोले- ''आज से तुम आरिफ़ हो।'' विश्वामित्र को इत्मीनान नहीं हुआ, ग़ौरोफ़िक्र में डूबे रहे। कुछ वक़्त के बा'द देवताओं के साथ ख़ालिक़ फिर आये और बोले- ''आज से तुम शाही आरिफ (राजर्षि) हो।'' लेकिन विश्वामित्र का मक़्सद हल नहीं हुआ। वे लगातार फ़िक्र में डूबे रहे। ख़ालिक़ रूहानी दौलतों के साथ फ़िर आये और बताया कि आज से आप वली (महर्षि) हुए। विश्वामित्र ने कहा- ''नहीं, मुझे नफ़्सकुश बर्हमन आरिफ़ (जितेन्द्रिय ब्रह्मर्षि) कहें।'' ब्रह्मा ने कहा- ''अभी तुम नफ़्सकुश नहीं हो।'' विश्वामित्र फ़िर रियाज़त में लग गये, उनके दिमाग़ से रियाज़त का जलाल निकलने लगा, तब देवताओं ने ख़ालिक़ से गुज़ारिश की। ख़ालिक़ उसी तरह विश्वामित्र से बोले- ''अब तुम बर्हमन आरिफ़ (ब्रह्मर्षि) हो।'' विश्वामित्र ने कहा, ''अगर मैं बर्हमन आरिफ़ हूँ तो वेद मुझे क़बूल करें।'' वेद विश्वामित्र के दिल में उतर आये। जो उंसुर ज़ाहिर नहीं था, ज़ाहिर हो गया। यही वेद है, न कि किताब। जहाँ विश्वामित्र रहते थे, वहाँ वेद रहता था।

यही श्रीकृष्ण भी कहते हैं कि दुन्या लाफ़ानी पीपल का दरख़्त है, ऊपर रूहेमुत्लक़ जिसकी जड़ और नीचे तमाम क़ुद्रती तख़्लीक़ात शाख़ें हैं। जो इस क़ुद्रत का ख़ातिम करके रूहेमुत्लक़ को जान लेता है, वह वेदों का आलिम है। अर्जुन! मैं भी वेदों का आलिम हूँ। लिहाज़ा क़ुद्रत के इशाअत और इख़्तिताम के साथ रूहेमुत्लक़ के एहसास का नाम 'वेद' है। यह एहसास ख़ुदा की देन है। लिहाज़ा वेद इंसान की पहुँच के बाहर कहा जाता है। अज़ीम इंसान इंसानी दाइरा-ए-हद के बाहर होता है, उसके वसीलः से रूहेमुत्लक़ ही बोलता है। वे रूहेमुत्लक़ के मुबल्लिग़ (ट्रान्समीटर) हो जाते हैं। सिर्फ़ अल्फ़ाज़ के इल्म की बुन्याद पर उनके अल्फ़ाज़ में पोशीदः हक़ीक़त को परखा नहीं जा सकता। उन्हें वही जान पाता है, जिसने अमली राह पर चलकर इस इंसानी हद से बाहर (Non-Person) की हालत को पाया हो, जिसका इंसान (तकब्बुर) इलाह में जज़्ब हो चुका हो।

दरहक़ीक़त वेद इंसानों की पहुँच के बाहर हैं; लेकिन बोलने वाले चन्द अज़ीम इंसान ही थे। उन्हीं के कलाम की तद्वीन 'वेद' कहलाता है। लेकिन जब शरीअ़त तह्रीर में आ जाती है तब मुआशराती इंतिज़ामियः के उसूल भी उसके साथ क़लमबन्द कर दिये जाते हैं। अज़ीम इंसान के नाम पर अवाम उनका भी इत्तिबाअ करने लगते हैं, गो कि दीन से उनका दूर का भी वास्तः नहीं रहता। जदीद दौर में वज़ीरों के

आगे-पीछे घूमकर आम रहनुमा भी हुक्काम से अपना काम करा लेते हैं, जबकि वज़ीर ऐसे रहनुमाओं को जानते भी नहीं। इसी तरह मुआशराती इंतिज़ाम कर अज़ीम इंसान की ओट में जीने खाने का इंतिज़ाम भी किताबों में कलमबंद कर देते हैं। उनका मुआशराती इस्ते'माल जुज़वक़्ती होता है। वेदों के मुतअल्लिक़ भी यही है। उनकी क़दीमी सच्चाई उपनिषदों में मुन्तख़ब है। उन्हीं उपनिषदों का मग़्ज़ेसुख़न जोग के मालिक श्रीकृष्ण का कलाम 'गीता' है। लुब्बे-लुवाब यह है कि गीता इंसानी कुव्वत के बाहर, वेद के रस के समन्दर से पैदा हुआ, उपनिषद् के नोशाब का मुकम्मल जौहर है।

इसी तरह हर एक अज़ीम इंसान, जो उंसुरे आ'ला को हासिल कर लेता है, ख़ुद में किताबेशरीअ़त है। उसके कलाम का मज्मूअः दुन्या में कहीं भी हो, शरीअ़त कहलाता है; लेकिन चन्द मज़ाहिब के मानने वालों का यह कहना है कि- ''जितना क़ुरआन पाक में लिखा है उतना ही हक़ है। अब क़ुरआन नहीं मब्ऊस होगा।'', ''ईसामसीह पर यक़ीन किये बग़ैर जन्नत नहीं मिल सकती; वह ख़ुदा का इकलौता बेटा था।'', ''अब ऐसा अज़ीम इंसान नहीं हो सकता''- यह उनकी क़दामती सोच है। अगर उसी उंसुर को ज़ाहिर कर लिया जाय, तो वही बात फिर होगी।

'गीता' आलमगीर है। दीन के नाम पर मुरव्वजः दुन्या की तमाम शराए' में गीता का मक़ाम बेमिसाल है। यह ख़ुद में किताबे शरीअ़त ही नहीं, बल्कि दीगर मज़्हबी किताबों में पोशीदः सच्चाई का पैमानः भी है। गीता वह कसौटी है, जिस पर हर एक मज़्हबी किताब में धुँधला सच उजागर हो उठता है, एक दूसरे के मुख़ालिफ़ बयानात का हल निकल आता है। हर एक मज़्हबी किताब में, दुन्या में जीने-खाने का फ़न और मज़्हबी रविश के तौर-तरीक़ों की इफ़्रात है। ज़िंदगी को दिलकश बनाने के लिए उन्हें करने और न करने के दिलचस्प लेकिन ख़ौफ़नाक बयानात से मज़्हबी किताबें भरी पड़ी है। मज़्हबी तौर-तरीक़ों की इसी रविश को अवाम दीन समझने लगते हैं। ज़िंदगी गुज़ारने के फ़न के लिए तैयारशुदः इबादत के उसूलों में दौरे ज़मानः और हालात के मुताबक़ बदलाव क़ुद्रती है। मज़्हब के नाम पर समाज में झगड़े की वाहिद वज्ह यही है। 'गीता' इन लम्हाती इंतिज़ामात से ऊपर उठकर रूहानी तक्मील में क़ाइम करने का अमली ग़ौरो-फ़िक्र है, जिसका एक भी श्लोक माद्दी ज़िंदगी बसर करने के लिए नहीं है। इसका हर एक श्लोक आपसे बातिनी जंग 'इबादत' की माँग करता है। ग़ैरमुस्तनद मुख़्तलिफ़ मज़्हबी किताबों की तरह यह आपको जन्नत या दोज़ख़ की कशमकश में फँसाकर नहीं छोड़ती; बल्कि उस दाइमीयत का हुसूल कराती है, जिसके पीछे ज़िंदगी और मौत की क़ैद नहीं रह जाती।

हर एक अज़ीम इंसान का अपना अंदाज़ और कुछ अपने ख़ास अल्फ़ाज़ होते हैं। जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने भी गीता में 'अमल' (कर्म), 'यग', 'नस्ल' (वर्ण), इब्नुलग़ैब (वर्णसंकर), 'जंग' (युद्ध), 'मैदान' (क्षेत्र), 'इल्म' (ज्ञान) वग़ैरः अल्फ़ाज़ पर बार-बार ज़ोर दिया है। इन अल्फ़ाज़ का अपना मफ़्हूम है और इनके दुहराए जाने में भी इनकी अपनी ख़ूबसूरती है। हिन्दी तर्जमः में इन अल्फ़ाज़ को उसी मफ़्हूम में लिया गया है और ज़रूरी जगहों की तफ़्सीर भी की गयी है। गीता के दिलकश मुन्दर्ज़ःज़ैल सवालात हैं, जिनका मफ़्हूम जदीद मुआशरः खो चुका है। वे इस तरह हैं जिन्हें आप 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में पायेंगे-

१. **श्रीकृष्ण-** जोग के मालिक थे।

२. **हक़-** रूह ही हक़ है।

३. **अबदी-** रूह अबदी है, ख़ुदा अबदी है।

४. **अबदी दीन (सनातन धर्म)-** रूहेमुत्लक़ से मिलाने वाला तरीक़-ए-अमल है।

५. **जंग (युद्ध)-** रूहानी और दुन्यवी दौलतों की तसादुम 'जंग' है, ये बातिन के दो ख़साइल हैं। इन दोनों का ख़त्म हो जाना अंजाम है।

६. **मैदाने जंग (युद्ध-स्थान)-** यह इंसानी जिस्म और मन के साथ हवास का हुजूम मैदाने-जंग है।

७. **इल्म (ज्ञान)-** रूहे मुत्लक़ की बदीही जानकारी 'इल्म' है।

८. **जोग (योग)-** दुन्या के वस्लोहिज्र से आरी ग़ैर मर्ई ख़ुदा से निस्बत बना लेने का नाम 'जोग' (योग) है।

९. **इल्मी जोग (ज्ञानयोग)-** इबादत ही अमल है। अपने पर मुन्हसिर होकर, अमल में लग जाना 'इल्मी जोग' है।

१०. **बेग़रज़ अमली जोग (निष्काम कर्मयोग)-** ख़ुदा पर मुन्हसिर होकर, ख़ुदसुपुर्दगी के साथ अमल में लग जाना 'बेग़रज़ अमली जोग' है।

११. **श्रीकृष्ण ने किस हक़ को उजागर किया?-** श्रीकृष्ण ने उसी हक़ को उजागर किया, जिसको मुबस्सिर इंसानों ने पहले देख लिया था और मुस्तक़्बिल में भी देखेंगे।

१२. **यग (यज्ञ)-** रियाज़त के ख़ास तरीक़ः का नाम 'यग' है।

१३. **अमल (कर्म)-** यग को अमली शक्ल देना ही 'अमल' है।

१४. **नस्ल (वर्ण)**– इबादत का एक ही तरीक़ः, जिसका नाम अमल है जिसको चार दर्जात में बाँटा है; वे ही चार नस्लें हैं। यह एक ही रियाज़तकश के ऊँचे-नीचे दर्जात हैं, न कि ज़ातें।

१५. **दोग़लः (इब्नुल ग़ैब)**– राहे-ख़ुदा में भटक जाना, रियाज़त में शको-शुब्हः का पैदा हो जाना दोगलः (इब्नुल ग़ैब) है।

१६. **इंसानी दर्जात (मनुष्य की श्रेणी)**– वातिन के ख़साइल के मुताबिक़ इंसान दो तरह के होते हैं- एक फ़िरिश्तों (देवताओं) जैसा, दूसरा शैतानों (असुरों) जैसा। ये ही इंसान की दो ज़ातें हैं जिनका तअय्युन ख़साइल के मुताबिक़ किया जाता है और ये ख़साइल कमोबेश होते रहते हैं।

१७. **फ़िरिश्तः (देवता)**- दिल की दुन्या में ख़ुदाई नूर हासिल करानेवाली सिफ़ात का अम्बोह है। बाहरी देवताओं की इबादत जहालत की देन है।

१८. **अवतार**– अवतार इंसान के दिल में होता है, बाहर नहीं।

१९. **अज़ीमुश्शान दीदार (विराट् दर्शन)**– जोगी के दिल में ख़ुदा के ज़रीअः अता किया गया एहसास है। ख़ुदा रियाज़तकशों में ख़ुद नज़र बनकर खड़े हों तभी दीदार होता है।

२०. **क़ाबिले इबादत इलाह (पूजनीय देव 'इष्ट')**– वाहिद आ'लातरीन ख़ुदा ही 'क़ाबिले इबादत इलाह' है। उसे तलाश करने की जगह दिल की दुन्या है। उसके हुसूल का (मस्दर) उसी ग़ैरमर्ई शक्ल में मौजूद 'हुसूल वाले अज़ीम इंसानों' के ज़रीअः मुम्किन है।

अब इनमें से जोग के मालिक श्रीकृष्ण की हक़ीक़ी शक्ल को समझने के लिए बाब तीन तक आपको मुतालअः करना होगा और बाब तेरह तक आप पूरी तरह समझने लगेंगे कि श्रीकृष्ण जोगी थे। बाब दो से ही सच्चाई साफ़-साफ़ सामने आ जायेगी। अबदी और हक़ीक़त एक दूसरे तक्मिलः हैं; यह बाब दो से ही ज़ाहिर होगा, वैसे यह सिल्सिलः पूरा होने तक चलेगा। जंग की शक्ल क्या है, बाब चार तक पहुँचते-पहुँचते ज़ाहिर होने लगेगी, बाब ग्यारह तक शको-शुब्हः दूर हो जायेगा, वैसे बाब सोलह तक इस पर नज़र रखनी चाहिए। 'मैदाने जंग' (युद्ध-स्थल) के लिए बाब तेरह बारहा देखें।

'इल्म' बाब चार से ज़ाहिर होगा और बाब तेरह में अच्छी तरह समझ में आयेगा कि बदीही दीदार का नाम 'इल्म' है। 'जोग' बाब छः तक आप समझ सकेंगे,

वैसे आखिर तक जोग के मुख़्तलिफ़ हिस्सों की तश्रीह है। 'इल्मी जोग' बाब तीन से छः तक ज़ाहिर हो जायेगा, आगे देखने की कोई ख़ास जरूरत नहीं है। बेग़रज़ अमली जोग (निष्काम कर्मयोग) बाब दो से शुरू होकर तक्मील तक है। 'यग' के बारे में आप बाब तीन से चार तक पढ़ें, साफ़-साफ़ ज़ाहिर हो जायेगा।

'अमल' (कर्म) का नाम बाब २/३९ में पहली बार दिया गया है। इसी श्लोक से बाब चार तक पढ़ लें, तो ज़ाहिर हो जायेगा कि अमल का मा'ना इबादत यादे इलाही क्यों है? बाब सोलह और सत्रह यह ख़याल क़ाइम कर देता है कि यही हक़ीक़त है। 'दोग़लः' (वर्णसंकर) बाब तीन में और 'अवतार' बाब चार में ज़ाहिर हो जायेगा। 'एहतिमाम-ए-नस्ल' (नस्ली तक़्सीम) के लिए बाब अट्ठारह देखना होगा, वैसे इशारः तो बाब तीन-चार में भी है। इंसान की देवता और शैतान ज़ातों के लिए बाब सोलह क़ाबिले-दीद है। 'अज़ीमुश्शान दीदार' (विराट् दर्शन) बाब दस से लगात ग्यारह तक ज़ाहिर हो गया है, बाब सात, नौ और पन्द्रह में भी इस पर रोशनी डाली गयी है। बाब सात, नौ और सत्रह में ख़ारिजी देवताओं का ख़ारिजुल वुजूद होना ज़ाहिर हो जाता है। ख़ुदा की इबादत का मक़ाम दिल की दुन्या ही है, जिसमें तसव्वुर (ध्यान) तनफ़्फ़ुस के फ़िक्र वग़ैरः का बरताव, जो तन्हाई में बैठकर (बुतख़ाना और मूरत के सामने नहीं) किया जाता है- बाब तीन, चार, छः और अट्ठारह में ज़ाहिर है। बहुत ग़ौरो-फ़िक्र से क्या मत्लब है? अगर बाब छः तक ही मुतालअः कर लें, तो भी 'यथार्थ गीता' का अस्ल मफ़्हूम आपकी समझ में आ जायेगा।

गीता जंगे-रोज़ी का वसीलः नहीं, बल्कि ज़िंदगी की जंग में दाइमी फ़त्ह की अमली तर्बियत है, लिहाज़ा 'किताबें-जंग' है, जो हक़ीक़ी कामयाबी दिलाती है, लेकिन गीता में बयान की गयी जंग तलवार, कमान, तीर, गुर्ज़ और फावड़ा से लड़ी जाने वाली दुन्यवी जंग नहीं है और न इन लड़ाइयों में हक़ीक़ी कामयाबी मुज़्मिर है। यह नेको-बद ख़साइल की जंग है, जिनके मुशाबहत बयान का रिवाज रहा है। वेद में इन्द्र और वृत्र, इल्म और जहालत, पुराणों में देवताओं और असुरों की जंग, जंगी दास्तानों (रज़्मीयात) में राम और रावन, कौरव और पाण्डव की जंग को ही गीता में मैदाने-दीन (धर्मक्षेत्र) और मैदाने-अमल (कुरुक्षेत्र), रूहानी दौलत व दुन्यवी दौलत, हमज़ात और ग़ैरनस्ली (विजातीय), नेक सिफ़त और बदसिफ़त की जंग कही गयी है।

यह जंग जहाँ होती है, वह जगह कहाँ है? गीता का मैदाने-दीन (धर्मक्षेत्र) और मैदाने-अमल (कुरुक्षेत्र) भारत का कोई ज़मीनी हिस्सः नहीं, बल्कि ख़ुद गीता के मुसन्निफ़ के अल्फाज़ में- **'इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते।'**- कौन्तेय! (कुन्ती

वलद) यह जिस्म ही एक मैदान है, जिसमें बोया हुआ भला और बुरा बीज बशक्ले तअस्सुर हमेशः उगता है। दस हवास, मन, अक़्ल, ज़ेह्न, गुरूर, पांचो उयूब और तीनों सिफ़ात की बुराइयाँ इस मैदान की तफ़्सीलात है। कुद्रत से पैदा हुई इन तीनों सिफ़ात से नाचार होकर, इंसान को काम करना पड़ता है। वह एक लम्हः भी काम किये बग़ैर नहीं रह सकता। **'पुनरपि जननम् पुनरपि मरणम्, पुनरपि जननी जठरे शयनम्।'** एक जनम से लेकर दूसरे जनम तक करते ही तो वक़्त गुज़र रहा है, यही मैदाने-अमल (कुरुक्षेत्र) है। मुर्शिदेकामिल के वसीलः से रियाज़त के सहीह दौर में पड़कर रियाज़तकश जब हक़ीक़ी दीने इलाही की तरफ़ आगे बढ़ता है, तब यह मैदान, मैदाने-दीन बन होता है। यह जिस्म ही मैदान है।

इसी जिस्म के अस्ना में बातिन के दो ख़साइल कदीमी हैं- रूहानी दौलत और दुन्यवी दौलत। रूहानी दौलत में है- सवाब की शक्ल में पाण्डु और फ़र्ज़ की शक्ल में कुन्ती। सवाब सादिर होने से पहले इंसान जो कुछ भी फ़र्ज़ समझकर करता है अपनी समझ से वह फ़र्ज़ ही अदा करता है, लेकिन उससे फ़र्ज़ की अदायगी होती नहीं, क्योंकि नेकी के बग़ैर फ़र्ज़ को समझा ही नहीं जा सकता। कुन्ती ने पाण्डु से तअल्लुक़ होने से पहले जो कुछ भी हासिल किया, वह था 'कर्ण', ताउम्र कुन्ती के औलाद से लड़ता रह गया। पाण्डवों का असीरुलफ़त्ह दुश्मन अगर कोई था, तो यह था 'कर्ण'। (ग़ैरनस्ली अमल ही 'कर्ण' है), जो गिरिफ़्त में लेनेवाला है, जिसमें रिवायती क़दामतों की अक्कासी होती है- इबादत के तौर-तरीक़े पीछा नहीं छोड़ते। नेकी सादिर होने पर दीन की तम्सील 'युधिष्ठिर', इश्क़ (अनुराग) की तम्सील 'अर्जुन', एहसास की तम्सील 'भीम', उसूल की तम्सील 'नकुल', सुह्बते-सालेह की तम्सील 'सहदेव', पाकीज़गी की तम्सील 'सात्यकि', जिस्म में अह्लियत की तम्सील 'काशिराज', फ़र्ज़ के ज़रीअः दुन्यां पर फ़त्ह 'कुन्तिभोज' वग़ैरः मा'बूद की तरफ़ राग़िब दिमाग़ी ख़साइल का उरुज होता है, जिनका शुमार सात अक्षौहिणी फौज है। 'अक्ष' नज़र को कहते हैं। हक़ीक़ी नज़रीयः से जिसका बन्दोबस्त है, वह है रूहानी दौलत। हक़ीक़ी दीन रूहेमुत्लक़ तक का फ़ासिल तय कराने वाले ये सात ज़ीनें 'सात सुतूर' हैं, न कि कोई ख़ास आ'दादेशुमार! दरहक़ीक़त में ख़साइल बेशुमार हैं।

दूसरी तरफ़ है मैदाने-अमल (कुरुक्षेत्र), जिसमें दस हवास और एक मन ग्यारह अक्षौहिणी फ़ौज है। मन व हवास से मुज़य्यन नज़रीयः से जिसकी बनावट है, वह है दुन्यवी दौलत (आसुरी सम्पद्), जिसमें है जहालत की तम्सील 'धृतराष्ट्र' जो हक़ीक़त को जानते हुए भी नाबीना (अंधा) बना रहता है; उसकी हमसफर है 'गांधारी'- हिस्सी

बुन्याद वाली ख़स्लत। इसके साथ हैं- फ़िरेफ़्तगी (मोह) की तम्सील 'दुर्योधन', बदअक़्ली की तम्सील 'दुःशासन', ग़ैरनस्ली अमल की तम्सील 'कर्ण', शक की तम्सील 'भीष्म', शिर्क की तम्सील 'द्रोणाचार्य', दुन्यवी रग़बत की तम्सील 'अश्वत्थामा', बरअक्स की तम्सील 'विकर्ण', नामुकम्मल, रियाज़त में मेह्बानी की तम्सील 'कृपाचार्य' और इन सबके बीच जानदार की तम्सील 'विदुर' है, जो रहता है जहालत में लेकिन नज़र हमेशः पाण्डवों पर टिकी है, सवाब की बुन्याद पर खड़ी ख़स्लत पर है, क्योंकि रूह आ'ला मा'बूद का ख़ालिस हिस्सा है। इस तरह दुन्यवी दौलत भी लामह्दूद है। मैदान एक ही है- जिस्म, इसमें जंग करने वाले ख़साइल दो हैं। एक दुन्या में यक़ीन दिलाती है, नीच-कमीनी शक्लों (योनियों) की वज्ह बनती है, तो दूसरी आ'ला इंसान पर्वर्दगार में यक़ीन और दाख़िल दिलाती है। मुबस्सिर अज़ीम इंसान की सरपरस्ती में धीरे-धीरे रियाज़त करने पर रूहानी दौलत की तरक़्क़ी और दुन्यवी दौलत का हर तरह से ख़ातिमः हो जाता है। जब कोई ऐब ही नहीं रहा, मन पर हर तरफ़ से बन्दिश और बंदिशशुदः मन की भी तह्लील हो जाती है तो रूहानी दौलत की ज़रूरत ख़त्म हो जाती है। अर्जुन ने देखा कि कौरवों के पैरों के बाद पाण्डवों के पैरो जंगजू भी जोग के मालिक में तह्लील हो रहे हैं। तक्मील के साथ रूहानी दौलत भी तह्लील हो जाती है, आख़िरी दाइमी नतीजः निकल आता है। इसके बाद अज़ीम इंसान अगर कुछ करता है, तो सिर्फ़ अपने तावेईन की रहनुमाई के लिए ही करता है।

रिफ़ाहे आम के इसी ख़याल से अज़ीम इंसानों ने लतीफ़ दिली एहसासात का बयान उन्हें मुस्तह्कम शक्ल देकर किया है। गीता बह्रों से वाबस्तः है, क़वाइद के पैमाने पर खरी है, लेकिन इसके किर्दार तम्सीली हैं; शक्ल से मुबर्रा, लियाक़तों में मह्ज़ मुशक्कल हैं। गीता की शुरूआत में तीस-चालीस किर्दारों के नाम लिये गये हैं जिनमें निस्फ़ हमज़ात और निस्फ़ ग़ैरनस्ली हैं। कुछ पाण्डवों के हमनवा हैं, कुछ कौरवों के पैरोकार। दुन्या को अपने अज़ीमुश्शान दीदार (विश्वरूप दर्शन) के वक़्त इनमें से चार-छः नाम दुबारः आये हैं, वर्नः पूरी गीता में इन नामों का ज़िक्र तक नहीं है। मह्ज़ एक अर्जुन ही ऐसा किर्दार है, जो अज़अव्वलताआख़िर जोग के मालिक के सामने है। यह अर्जुन भी मह्ज़ लियाक़त का शबीह है, न कि कोई ख़ास इंसान। गीता की शुरुआत में अर्जुन दाइमी ख़ानदानी रिवायात के लिए परेशान है, लेकिन जोग के मालिक कृष्ण ने इसे जहालत बताया और हिदायत दी कि रूह ही बरहक़ है। 'जिस्म फ़ानी है, इसलिए जंग कर।', इस हिदायत से यह ज़ाहिर नहीं होता कि अर्जुन कौरवों को ही मारे। पाण्डवों के हमनवा भी जिस्मवाले ही तो थे, दोनों तरफ़

के लोग अजीज़ ही तो थे। पिछले तअस्सुरात की बुन्याद वाला जिस्म क्या तेग़ से काटने पर ख़त्म हो सकेगा? जब जिस्म फ़ानी है, जिसका वुजूद है ही नहीं, तो अर्जुन कौन था? श्रीकृष्ण किसकी हिफ़ाज़त में खड़े थे? क्या किसी जिस्म वाले की हिफ़ाज़त में खड़े थे? श्रीकृष्ण ने कहा- ''जो जिस्म के लिए मेहनत करता है, वह गुनाहों से भरी ज़िन्दगी वाला जाहिल इंसान बेकार ही जीता है।'' अगर श्रीकृष्ण किसी जिस्म रखनेवाले की ही हिफ़ाज़त में खड़े हैं तब तो वे भी कजफ़हम हैं, बेकार ही जीने वाले हैं। दरहक़ीक़त इश्क़ ही अर्जुन है। आशिक़ (अनुरागी) के लिए अज़ीम इंसान हमेशः खड़े हैं।

अर्जुन शागिर्द था और श्रीकृष्ण एक मुर्शिदेकामिल थे। आजिज़ोइन्किसारी के साथ उसने कहा था कि, दीन की राह में फ़िरेफ़्तः ज़ेह्न मैं आपसे अर्ज करता हूँ, जो शरफ़ (आ'ला इफ़ादी) हो, वह नसीहत मुझे दीजिए। अर्जुन इम्तियाज चाहता था, दुन्यवी (माद्दी-चीजें) नहीं। सिर्फ़ नसीहत ही मत दीजिए, सहारा दीजिए, सँभालिए। मैं आपका शागिर्द हूँ, आपकी पनाह में हूँ। इसी तरह गीता में जगह-जगह पर ज़ाहिर है कि अर्जुन मुल्तजी अह्ल है और जोग के मालिक श्रीकृष्ण एक मुर्शिदेकामिल हैं। वे मुर्शिदेकामिल आशिक़ (अनुरागी) के साथ हमेशः रहते हैं, उनकी रहनुमाई करते हैं।

जब जज़्बाती तौर पर कोई शख़्स 'क़ाबिले एहतिराम महाराज जी' के पास रहने की इस्रार करने लगता था तब वे कहा करते थे- ''जाओ, जिस्म से कहीं रहो, दिल से मेरे क़रीब आते रहो। सुब्हो-शाम राम, शिव, ॐ किसी एक दो-ढाई हर्फ़ के नाम का विर्द करो और मेरी शक्ल का दिल में ख़याल करो। एक मिनट भी शक्ल पकड़ लोगे तो जिसका नाम यादे इलाही है, वह मैं तुम्हें अता कर दूँगा। इससे ज़ियादः पकड़ने लगोगे तो दिल से रथबान बनकर हमेशः तुम्हारे साथ रहूँगा।''

याद के साथ जब शक्ल पकड़ में आ जाती है तो इसके बा'द अज़ीम इंसान उतना ही क़रीब रहता है जितना हाथ-पाँव, नाक-कान वग़ैरः आपके करीब हैं। आप हजारों किलोमीटर दूर क्यों न हो, वह हमेशः क़रीब हैं। मन में ख़यालात के उठने से भी पहले वे रहनुमाई करने लग जाते हैं। आशिक़ के दिल में वह अज़ीम इंसान हमेशः रूह से वाबस्तः होकर बेदार रहता है। अर्जुन आशिक़ी की अलामत है।

गीता के ग्यारहवें बाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण का आबोताब देखने पर अर्जुन अपनी मामूली ख़ामियों के लिए मुआफी की गुज़ारिश करने लगा। कृष्ण ने मुआफ़ किया क्योंकि इल्तिज़ा के मुताबिक़ संजीदः होकर कहा- ''अर्जुन! मेरी इस शक्ल को न पहले किसी ने देखा है और न मुस्तक़्बिल में कोई देख सकेगा।'' तब

तो गीता हम लोगों के लिए बेकार है, क्योंकि उस दीदार की लियाक़त अर्जुन तक महदूद थी, जबकि उसी वक़्त संजय देख रहा था। पहले भी उन्होंने कहा था, बहुत से जोगी हज़्रात इल्मी रियाज़त से पाक होकर मेरी मुजस्सम शक्ल को हासिल कर चुके हैं।'' बिल आख़िर वे अज़ीम इंसान कहना क्या चाहते हैं? दरहक़ीक़त इश्क़ ही अर्जुन है, जो आपके दिल का ख़ुसूसी ख़याल से आरी है। इश्क़ से आरी इंसान न इसके पहले कभी देख सका है और न इश्क़ से ख़ाली इंसान मुस्तक़्बिल में कभी देख सकेगा- **'मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा। किएँ जोग तप ग्यान बिरागा।।'** लिहाज़ा अर्जुन एक अलामत है। अगर अलामत नहीं है, तो गीता का पीछा छोड़ दें, गीता आपके लिए नहीं है, तब तो उस दीदार की लियाक़त अर्जुन तक ही महदूद थी।

बाब के आख़िर में जोग के मालिक फैसलः देते हैं- ''अर्जुन! लाशरीक बन्दगी और अक़ीदत के ज़रीअः मैं इस तरह बदीही दीदार के लिए (जैसा दीदार तूने किया), उंसुर से ज़ाहिर तौर पर जानने के लिए और दाखिल होने के लिए भी सहलुलहुसूल हूँ।'' लाशरीक बन्दगी इश्क़ की ही दूसरी शक्ल है और यही अर्जुन की ख़ुद की शक्ल भी है। अर्जुन राहरौ की अलामत है। इस तरह गीता के किर्दार बतौर अलामत हैं। मुनासिब जगहों पर उनकी तरफ़ इशारः है।

रहे हों कोई तारीख़ी कृष्ण और अर्जुन, हुई हो कोई आलमी जंग, गीता में माद्दी जंग का बयान बिल्कुल नहीं है। उस तारीख़ी जंग के मुहाने पर परेशान तो था अर्जुन, न कि फ़ौज। फ़ौज तो जंग करने के लिए तैयार खड़ी थी।

क्या गीता की नसीहत देकर श्रीकृष्ण ने अम्नपसन्द अर्जुन को फ़ौज की लियाक़त वाला बनाया? दरहक़ीक़त वसीलः लिखने में नहीं आता। सब कुछ का मुतालअः कर लेने के बा'द भी बरताव करना बाक़ी ही रहता है। इसी की तर्ग़ीब 'यथार्थ गीता' है।

श्रीगुरु पूर्णिमा — मुतवस्सिले मुर्शिदकामिल, अह्बाबे आलम

२४ जुलाई, १९८३ ई० — **स्वामी अड़गड़ानन्द**

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

श्रीमद्भगवद्गीता

यथार्थ गीता (हक़ीक़ी गीता)

।। अथ प्रथमोऽध्यायः।।

(पहला बाब)

धृतराष्ट्र उवाच (धृतराष्ट्र बोला)-

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः।
मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत सञ्जय।।१।।

धृतराष्ट्र ने पूछा- ''संजय! मैदाने-दीन (धर्मक्षेत्र), मैदाने-अमल (कुरुक्षेत्र) में इकट्ठा जंग की ख़्वाहिश वाले मेरे और पाण्डु के औलाद ने क्या किया?

जहालत की तम्सील धृतराष्ट्र और एहतियात की तम्सील संजय। जहालत मन के अस्ना में रहती है। जहालत से घिरा हुआ मन धृतराष्ट्र पैदाइशी नाबीना है; लेकिन तम्सीले एहतियात संजय के वसीलः से वह देखता है, सुनता है। वह समझता है कि पर्वर्दगार ही हक़ है, फिर भी जब तक इससे पैदा तम्सीले फ़िरेफ़्तगी दुर्योधन ज़िंदः है, इसकी नज़र हमेशः कौरवों पर रहती है, उयूब पर ही रहती है।

जिस्म एक मैदान है। जब दिल की दुन्या में रूहानी दौलत की इफ़्रात होती है तो यह जिस्म मैदाने-दीन बन जाता है और जब इसमें दुन्यवी दौलत की इफ़्रात होती है तो यह जिस्म मैदान-ए-अमल बन जाता है। 'कुरु' या'नी 'करो'- यह लफ़्ज़ हुक्मी है। श्रीकृष्ण कहते हैं- कुद्रत से पैदा तीनों सिफ़ात के ज़ेरे असर पाबन्द होकर इंसान अमलपैरा होता है। वह एक लम्हः भी अमल किये बग़ैर नहीं रह सकता। सिफ़ात उससे करा लेती हैं। नींद में भी काम बन्द नहीं होता। वह भी तनदुरुस्त जिस्म की मह्ज़ ज़रूरी ख़ुराक है। तीनों सिफ़ात इंसान को देवता से लगात हशरातुलअर्ज़ तक अज्साम में ही बाँधती हैं। जब तक कुद्रत और कुद्रत से पैदा सिफ़ात जिंदः हैं,

तब तक काम का सिल्सिलः (कुरु) लगा रहेगा। लिहाज़ा पैदाइश और मौत के सिल्सिलः वाला मैदान (क्षेत्र), उयूब वाला मैदान मैदाने-अमल है और हक़ीक़ी दीन मा'बूद में दाख़िलः दिलाने वाले क़ाबिले सवाब ख़साइल (पाण्डवों) का हल्क़ः मैदाने दीन है।

माहिरीन आसारे-क़दीमः (पुरातत्त्वविद्) पंजाब में, काशी और प्रयाग के बीच व मुख़्तलिफ़ जगहों पर 'कुरुक्षेत्र' (मैदाने-जंग) की तह्क़ीक़ में लगे हैं, लेकिन गीता के मुसन्निफ़ ने ख़ुद बताया है कि जिस मैदान में यह जंग हुई, वह कहाँ है? **'इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते।' (अ० १३/१)**- अर्जुन! यह जिस्म ही मैदान है और जो इसे जानता है, इसका कनारः पा लेता है, वह आलिमे मैदाँ है। (या'नी मैदान से बाख़बर है)। आगे इन्होंने मैदान (क्षेत्र) की तफ़्सील बतायी, जिसमें दस हवास, मन, अक़्ल, ग़ुरूर पांचों पाण्डु उयूब और तीनों सिफ़ात का बयान है। जिस्म ही मैदान है, एक अखाड़ा है। इसमें लड़ने वाले ख़साइल दो हैं- 'रूहानी दौलत' और 'दुन्यवी दौलत'- पाण्डु के औलाद और धृतराष्ट्र के औलाद, 'हमज़ात' और 'ग़ैरनस्ली' ख़साइल।

तज्रिबःकार अज़ीम इंसान की पनाह में जाने पर इन दोनों ख़साइल में जंग की शुरुआत होती है। यह मैदान और आलिमे-मैदाँ की जंग है और यही हक़ीक़ी जंग है। आलमी-जंगों से तारीख़ भरी पड़ी है, लेकिन उनमें फ़त्ह हासिल करनेवालों को भी दाइमी फ़त्ह नहीं मिलती। ये तो आपसी इंतिक़ामात हैं। क़ुद्रत का पूरी तरह ख़ातिमः करके, क़ुद्रत से मावरा के इक़्तिदार का दीदार करना और उसमें दाखिल होना ही हक़ीक़ी फ़त्ह है। यही एक ऐसी फ़त्ह है, जिसके पीछे शिक़स्त नहीं है। यही नजात है, जिसके पीछे आमदोरफ़्त की क़ैद नहीं है।

इस तरह जहालत से घिरा हर मन, ज़ब्ते नफ़्स के ज़रीअः जानता है कि मैदान और आलिमे-मैदाँ इंसान (क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ) की जंग में क्या हुआ? अब ज़ब्ते नफ़्स के उरुज के मुताबिक़ उसे सलाहीयत आती जायेगी।

संजय उवाच (संजय बोला)-

दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा।
आचार्यमुपसङ्गम्य राजा वचनमब्रवीत्।।२।।

उस वक़्त शाह दुर्योधन ने सफ़आरा पाण्डवों की फ़ौज को देखकर द्रोणाचार्य के करीब जाकर यह बात कही।

शिर्क का बरताव ही द्रोणाचार्य हैं। जब इल्म हो जाता है कि हम आ'ला मा'बूद से जुदा हो गये हैं (यही दुई का एहसास है), वहाँ उसके हुसूल के लिए तड़प पैदा से हो जाती है; तभी हम मुर्शिद की तलाश में निकलते हैं। दोनों ख़साइल के बीच यही अव्वली मुर्शिद है। अगरचे बा'द के मुर्शिद जोग के मालिक श्रीकृष्ण होंगे, जो जोग के हामिल होंगे।

शाह दुर्योधन अल्लामः द्रोण के करीब जाता है। तम्सीले-फ़िरेफ़्तगी दुर्योधन। फ़िरेफ़्तगी तमाम मुसीबतों की जड़ है, शाह है। दुर्योधन- 'दुर्' या'नी ऐबदार, 'यो धन' या'नी वह दौलत। रूहानी दौलत ही दाइमी दौलत है। उसमें जो ऐब पैदा करती है, वह है फ़िरेफ़्तगी। यही कुद्रत की तरफ़ खींचती है और हक़ीक़ी इल्म के लिए तर्ग़ीब भी अ'ता करती है। फ़िरेफ़्तगी है, तभी तक पूछने का सवाल भी है वर्गः सभी मुकम्मल ही हैं।

लिहाज़ा सफ़आरा पाण्डवों की फ़ौज को देखकर या'नी सवाब से रवाँ हमज़ात ख़साइल को मुनज़्ज़म देखकर तम्सीले-फ़िरेफ़्तगी दुर्योधन ने अव्वल मुअल्लिम द्रोण के करीब जाकर यह गुज़ारिश की-

पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम्।
व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता।।३।।

ऐ अल्लामः! अपने समझदार शागिर्द द्रुपद के वलद 'धृष्टद्युम्न' के ज़रीअः सफ़आरा खड़ी की हुई पाण्डु के औलाद की इस बहुत बड़ी फ़ौज पर नज़र डालिए।

दाइमी अटल मक़ाम में अक़ीदत रखने वाला अटल मन ही 'धृष्टद्युम्न' है। यही सवाब से लबरेज़ ख़साइल का रहबर है। **'साधन कठिन न मन कहुँ टेका।'-** वसीलः मुश्किल नहीं, मन का इरादः मज़्बूत होना चाहिए। अब देखें फ़ौज की वुस्अत-

अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि।
युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः।।४।।

इस फ़ौज में **'महेष्वासा'-** अज़ीम मा'बूद में मक़ाम दिलाने वाले एहसास की तम्सील 'भीम', इश्क़ की तम्सील 'अर्जुन' की तरह तमाम सरबाज़ बहादुर, जैसे-पाकीज़गी की तम्सील 'सात्यकि', **'विराट'-** हर जगह ख़ुदाई नज़ारः का अक़ीदः, मर्दे-मैदाँ 'शाह द्रुपद' या'नी अटल हालत और-

धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान्।
पुरुजित्कुन्तिभोजश्च शैब्यश्च नरपुङ्गवः।।५।।

'धृष्टकेतुः'– ग़ैरमुतज़ल्ज़िल फ़र्ज़, **'चेकितानः'**– जहाँ भी जाय वहाँ से ज़ेह्न को खींचकर मा'बूद में साक़िन करना, **'काशिराजः'**– जिस्म की तम्सील काशी में ही वह इक़्तिदार है, **'पुरुजित्'**– स्थूल (आम तरह का क़ाइम जिस्म), सूक्ष्म (हवास के कारोबार से वाबस्तः लतीफ़ जिस्म), कारण (हवास के मौजूआत से मुर्बरा लेकिन गुरूर से मुज़ैयन लतीफ़ से भी लतीफ़ जिस्म) अज्साम पर फ़त्ह दिलानेवाला पुरुजित, **'कुन्तिभोजः'**– फ़र्ज़ से दुन्या पर फ़त्ह, इंसानों में अफ़्ज़ल, **'शैब्य'** या'नी सदाक़त का सुलूक,

युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजाश्च वीर्यवान्।
सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः।।६।।

और जफ़ाकश **'युधामन्युः'**– जंग के मुताबिक़ मन का अकीदः, **'उत्तमौजाः'**– नेक की मस्ती, सुभद्रा का बलद **'अभिमन्यु'**– जब नेक बुन्याद पड़ जाती है तो दिल ख़ौफ से ख़ाली हो जाता है, ऐसी मुबारक बुन्याद से पैदा बेख़ौफ़ मन ज़ेह्न की तम्सील द्रौपदी के पाँचो औलाद- मुहब्बत, हुस्न, फराख़दिली, लताफ़त, इस्तिक़ामत, सब के सब मुजाहिदे आ'ज़म हैं। राहे रियाज़त पर पूरी सलाहीयत के साथ चलने की अह्लियत है।

इस तरह दुर्योधन ने पाण्डवों के तरफ़दारों के पन्द्रह-बीस नाम गिनाये, जो रूहानी दौलत के बहुत ख़ास हिस्से हैं। ग़ैरनस्ली ख़साइल का शाह होते हुए भी फ़िरेफ़्तगी ही हमज़ात ख़साइल को समझने के लिए मज़्बूर करती है।

दुर्योधन अपनी पैरवी करते हुए मुख़्तसर में कहता है। अगर कोई ख़ारिजी जंग होती तो अपनी फ़ौज बढ़ा-चढ़ाकर गिनाता। उयूब कम गिनाये गये, क्योंकि उन पर फ़त्ह पाना है, वे फ़ानी हैं। मह्ज़ पाँच-सात उयूब गिनाये गये जिनके अस्ना में सारे दुन्यवी ख़साइल मौजूद हैं, जैसे-

अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम।
नायका मम सैन्यस्य सञ्ज्ञार्थं तान्ब्रवीमि ते।।७।।

अफ़्ज़ल बर्हमन (द्विजोत्तम) हमारे तरफ़दारों में जो-जो ख़ास सरदार हैं उन्हें भी आप समझ लें। आपको जानने के लिए मेरी फ़ौज के जो सिपहसालार हैं, उनको बताता हूँ।

ख़ारिजी जंग में सिपहसालारे-आ'ज़म के लिए अफ़्ज़ल बर्हमन (द्विजोत्तम)

तख़ातुब बर्हमन नहीं है। दरहक़ीक़त 'गीता' में बातिन के दो ख़साइल की जंग है। जिसमें शिर्क का बरताव ही 'द्रोण' है। जब तक हम ज़रा-सा भी मा'बूद से अलग हैं, तब तक कुद्रत मौजूद है, शिर्क बना है। इस 'दुई' पर फ़त्ह पाने की तर्ग़ीब अव्वल मुर्शिद द्रोणाचार्य से मिलती है। अधूरा इल्म ही मुकम्मल इल्म हासिल करने के लिए तर्ग़ीब देता है। वह इबादतगाह नहीं, वहाँ बहादुरी को ज़ाहिर करनेवाला तख़ातुव होना चाहिए। ग़ैरनस्ली ख़साइल के सरदार कौन-कौन हैं?

भवान्भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिञ्जयः।
अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च।।८।।

एक तो ख़ुद आप (दुई के बरताव की तम्सील द्रोणाचार्य) है, शक की तम्सील दादा 'भीष्म' है। शक इन उयूब का मस्दर है, आखिर तक ज़िंदः रहता है, लिहाज़ा 'दादा' (पितामह) है। पूरी फ़ौज फ़ना हो गयी, यह ज़िंदः था। बिस्तरे-तीर पर बेहोश था, फिर भी ज़िंदः था। यह है शक की तम्सील 'भीष्म'। शक आखिर तक रहता है। इसी तरह ग़ैरनस्ली अमल की तम्सील 'कर्ण' और जंग को जीतने वाले 'कृपाचार्य' हैं। रियाज़त की हालत में रियाज़तकश के ज़रीअः करम का बरताव भी कृपाचार्य है। मा'बूद मेह्बानियों के मख़्ज है और हुसूल के बा'द आबिद की भी वही शक्ल है, लेकिन रियाज़त के वक़्त में जब तक हम अलग है, मा'बूद अलग है, ग़ैरनस्ली ख़स़लत ज़िंदः है, फ़िरेफ़्तगी की तम्सील घिराव है, ऐसी हालत में रिवाज़तकश अगर रह्म का बरताव करता है तो वह बरबाद हो जाता है। सीता ने रह्म किया तो कुछ वक़्त लंका में कफ़्फ़ारः अदा करना पड़ा। विश्वामित्र रह्मदिल हुए तो ज़लील होना पड़ा। जोग के कारबर्दार वली पतंजलि भी यही कहते हैं- **'ते समाधावुपसर्गा व्युत्थाने सिद्धयः'** (योगदर्शन, ३/३७)। आज के वक़्त में कामयाबियाँ ज़ाहिर होती हैं। वे दरहक़ीक़त कामयाबियाँ ही हैं, लेकिन नजात हासिल करने के लिए उतनी ही बड़ी अड़चनें हैं जितने ख़ाहिश, गुस्सः, लालच, फ़िरेब वग़ैरः। गोस्वामी तुलसीदास का भी यही फ़ैसलः है।

छोरत ग्रन्थि जानि खगराया। बिघ्न अनेक करइ तब माया।।
रिद्धि सिद्धि प्रेरइ बहु भाई। बुद्धिहि लोभ दिखावहिं आई।।

(रामचरितमानस, ७/११७/६-७)

कुद्रत (माया) तमाम अड़चनें पैदा करती है। मालो-मताअ अता करती हैं, यहाँ तक कि कामिल बना देती हैं। ऐसी हालत वाला रियाज़तकश बगल से गुजर भर

जाय, मौत का हमकिनार मरीज़ भी जी उठेगा। वह भले ही सेहतमन्द हो जाय, लेकिन रियाज़तकश उसे अपनी देन मान बैठे तो बरबाद हो जायेगा। एक मरीज़ की जगह पर हज़ारों मरीज़ घेर लेंगे, यादे-इलाही और ग़ौरो फ़िक्र का सिल्सिलः टूट जायेगा और उधर बहकते-बहकते दुन्यादारी की इफ़्रात हो जायेगी। अगर मंजिल दूर है और रियाज़तकश रह्म करता है तो रह्म का तन्हा सुलूक ही **'समितिंजय'**- लामुतनाही पूरी फ़ौज को जीत लेगा। लिहाज़ा रियाज़तकश को तक्मील के आखिर तक इससे होशयार रहना चाहिए। **'दया बिनु सन्त कसाई, दया करी तो आफत आई।'** लेकिन अधूरी हालत में यह ग़ैरनस्ली ख़स्लत का नाक़ाबिले तस्ख़ीर जंगजू है। इसी तरह फ़िरेफ़्तगी की तम्सील **'अश्वत्थामा'**, बरअक्स तसव्वुर की तम्सील **'विकर्ण'**, और गुमराही की तम्सील नफ़्स ही **'भूरिश्रवा'** है। ये सभी ख़ारिजी बहाव के सरदार हैं।

अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः।
नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः।।९।।

और भी बहुत से जंगजू तमाम अस्लिहः से लैस मेरी ख़ातिर ज़िंदगी की उम्मीद को छोड़कर जंग में डटे हैं। सभी मेरे लिए जान की कुर्बानी देने वाले हैं, लेकिन उनका कोई क़ाबिले-तवज्जोह पुख़्तः वुजूद नहीं है। अब कौन-सी फौज किन ख़यालात की बिना पर मह्फ़ूज़ है? इस पर कहते हैं-

अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम्।
पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम्।।१०।।

भीष्म की हिमायतयाफ़्तः हमारी फौज हर तरह से नाक़ाबिलेफ़त्ह है और भीम की हिफ़ाज़तयाफ़्तः इन लोगों की फ़ौज पर फ़त्ह हासिल करना सह्ल है।

'काफी' और 'नाकाफी' जैसे आसान लफ़्ज़ का इस्ते'माल दुर्योधन के शको-शुब्हः को ज़ाहिर करता है। लिहाज़ा देखना है कि भीष्म कौन-सा इक़्तिदार है, जिसपर कौरव मुन्हसिर हैं और भीष्म कौन-सी ताक़त है, जिसपर (रूहानी दौलत) सारे पाण्डव मुन्हसिर हैं? दुर्योधन अपना निज़ाम देता है कि-

अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः।
भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तः सर्व एव हि।।११।।

सब मोर्चों पर अपनी-अपनी जगह पर क़ाइम रहते हुए आप सबके सब लोग भीष्म की ही हर तरफ़ से हिफ़ाज़त करें। अगर भीष्म ज़िंदः हैं, तो हम नाक़ाबिले-शिकस्त

हैं। लिहाज़ा आप पाण्डवों से न लड़कर सिर्फ़ भीष्म की ही हिफ़ाज़त करें। कैसा जंगजू है भीष्म, जो ख़ुद अपनी हिफ़ाज़त नहीं कर पा रहा है?, कौरवों को उसकी हिफ़ाज़त का इंतिज़ाम करना पड़ रहा है। यह कोई ख़ारिजी जंगजू नहीं, शको-शुब्हः ही भीष्म है। जब तक शक 'जिंदः' है, तब तक ग़ैरनस्ली ख़साइल (कौरव) नाक़ाबिले फ़त्ह हैं। 'नाक़ाबिले-फ़त्ह' का यह मतूलब नहीं कि जिसे जीता ही न जा सके बल्कि नाक़ाबिले फ़त्ह का मतूलब असीरुल-फ़त्ह (दुर्जेय) है, जिसे मुश्किल से जीता जा सकता हो।

महा अजय संसार रिपु, जीति सकइ सो बीर।। (रामचरितमानस, ६/८०)

अगर शक ख़त्म हो जाय तो जहालत का वुजूद ख़त्म हो जाय, फ़िरेफ़्तगी वग़ैरः जो ज़ुब्बी तौर पर बाक़ी भी हैं, जल्द ही ख़त्म हो जायेंगे। भीष्म की ख़्वास्तः मौत थी। ख़्वाहिश ही शक है। ख़्वाहिश का ख़ातिमः और शक का मिटना एक ही बात है, इसी को संत कबीर ने आसान तरीक़े से कहा-

इच्छा काया इच्छा माया, इच्छा जग उपजाया।
कह कबीर जे इच्छा विवर्जित, ताका पार न पाया।।

जहाँ शक नहीं होता, वह लामहूदूद और ग़ैरमर्ई है। इस जिस्म की पैदाइश की वजह ख़्वाहिश है। ख़्वाहिश ही फ़ित्रत (माया) है और ख़्वाहिश ही दुन्या की पैदाइश की वज्ह है। **'सोऽकामयत'** (तैत्तिरीय उप०, ब्रह्मानन्द बल्ली अनुवाक् ६), **'तदैक्षत बहुस्यां प्रजायेयेति।'** (छान्दोग्य उप०, ६/२/३) कबीर कहते हैं- जो ख़्वाहिशात से हर तरह खाली है, **'ताका पार न पाया'**- वे लामहूदूद, लामुतनाही, बेशुमार उंसुर में दाख़िलः पा जाते हैं। **'योऽकामो निष्काम आप्तकाम आत्मकामो न तस्य प्राणा उत्क्रामन्ति ब्रह्मैव सन् ब्रह्माप्येति'** (बृहदारण्यक उपनिषद्, ४/४/६)- जो ख़्वाहिशात से आ़री रूह में क़ाइम बशक्लेरूह है, उसमें कभी गिरावट नहीं आती। वह मा'बूद के साथ एक हो जाता है। शुरू में ख़्वाहिशात लामुतनाही होती हैं और आख़िरुलअम्र आ'लारूह के हुसूल की ख़्वाहिश बाक़ी रहती है। जब यह ख़्वाहिश भी पूरी हो जाती है, तब ख़्वाहिश का भी इख़्तिताम हो जाता है। अगर उससे भी बड़ी कोई चीज़ होती, तो आप उसकी ख़्वाहिश ज़रूर करते। जब उससे आगे कोई चीज़ है ही नहीं तो ख़्वाहिश किसकी होगी। जब हासिल होने क़ाबिल कोई चीज़ लाहासिल न रह जाय तो ख़्वाहिश भी बुन्यादी तौर पर ख़त्म हो जाती है और ख़्वाहिश के ख़त्म होते ही शक का हर तरह ख़ातिमः हो जाता है। यही भीष्म की ख़्वास्तः मौत (इच्छामृत्यु) है। इस तरह भीष्म के ज़ेरे-हिफ़ाज़त हम लोगों की फ़ौज हर तरह से नाक़ाबिलेफ़त्ह है।

जब तक शक है, तभी तक जहालत का भी वुजूद है। शक दूर हुआ तो जहालत भी ख़त्म हो जाती है।

भीम की हिफ़ाज़तयाफ़्तः इन लोगों की फ़ौज जीतने में सह्ल है। ख़याल की तम्सील भीम। **'भावे विद्यते देवः'**– ख़याल में वह कुव्वत है कि ग़ैरमर्ई ज़ातेमुत्लक़ भी मर्ई हो जाता है। **'भाव बस्य भगवान सुख निधान करुना भवन।'** (रामचरित मानस, ७/९२ ख)

श्रीकृष्ण ने इसे अक़ीदत कहकर मुख़ातब किया है। ख़याल में वह अह्लियत है कि पर्वर्दगार को भी अपने क़ाबू में कर लेता है। ख़याल से ही पूरे की पूरे पाकीज़ः ख़साइल का उरुज है। यह सवाब का मुहाफ़िज़ है। है तो इतना ताक़तवर कि आ'लातरीन मा'बूद के हुसूल को मुम्किन बनाता है, लेकिन साथ ही साथ इतना नाज़ुक भी है कि आज नेक ख़याल है तो कल (उसे) बदख़याली में तब्दील होते देर नहीं लगती। आज आप कहते हैं, 'महाराज बहुत नेक हैं।', कल कह सकते हैं कि 'नहीं, हमने तो देखा है कि महाराज ख़ीर खाते हैं'–

घास पात जे खात है, तिन्हहि सतावे काम।
दूध मलाई खात जे, तिनकी जाने राम।।

इलाह (इष्ट) में ज़रा-सी भी कमी महसूस होने पर ख़याल मुतज़ल्ज़िल हो जाता है, पाकीजः ख़स्लत डावाँडोल हो उठती है, मा'बूद से तअल्लुक़ टूट जाता है लिहाज़ा भीम के ज़रीअः हिफ़ाज़तयाफ़्तः इन लोगों की फ़ौज फ़त्ह हासिल करने में सह्ल है। वली पतंजलि का भी यही फ़ैसलः है– **'स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्काराऽऽसेवितो दृढभूमिः।'** (योगसूत्र, १/१४)। लम्बे वक़्त तक मुसल्सल पूरी अक़ीदत के साथ की हुई रियाज़त ही ग़ैरमुतहर्रिक हो पाती है।

तस्य सञ्जनयन्हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः।
सिंहनादं विनद्योच्चैः शङ्खं दध्मौ प्रतापवान्।।१२।।

इस तरह अपनी ताक़त और कमज़ोरियों पर निगाह दौड़ाने के बा'द सदा-ए-नाकूस हुई। नाकूस की आवाज़ किर्दारों की बहादुरी का ए'लान है कि फ़त्ह हासिल करने पर कौन-सा किर्दार आपको क्या देगा? कौरवों में बुज़ुर्गवार जलाली भीष्म ने उस दुर्योधन के दिल में ख़ुशी पैदा करते हुए ऊँची आवाज़ में शेर की गरज की तरह ख़ौफ़नाक नाकूस बजाया। शेर दुन्या के ख़ौफ़नाक पह्लू की अलामत है। घोर जंगल

की घनी ख़ामोशी में शेर की दहाड़ कान में पड़ जाय तो रोंगटे खड़े हो जायेंगे, दिल काँपने लगेगा; गो कि शेर आपसे मीलों दूर है। ख़ौफ़ दुन्या में होता है, ख़ुदा में नहीं। वह तो बिला ख़ौफ़ इक़्तिदार है। शक की तम्सील भीष्म अगर फ़त्ह हासिल करता है, तो दुन्या के जिस ख़ौफ़नाक जंगल में आप हैं उससे भी ज़ियादः ख़ौफ़ की खोल में लपेट देगा। ख़ौफ़ की एक परत और चढ़ जायेगी, ख़ौफ़ का पर्दः और मोटा हो जायेगा। यह शक इसके इलावः और कुछ नहीं दे सकेगा। लिहाज़ा दुन्या से छुटकारा ही मंज़िले-मक़्सूद का रास्तः है। दुन्या में ख़स्लत तो जंगली (भवाटवी) है, घने अंधेरे का सायः है। इसके आगे कौरवों का कोई ए'लान नहीं है। कौरवों की तरफ़ से कई बाजे एक साथ बजे; लेकिन कुल मिलाकर वे भी ख़ौफ़ ही पैदा करते हैं, इससे ज़ियादः कुछ नहीं। हर ऐब कुछ-न-कुछ ख़ौफ़ तो पैदा करता ही है लिहाज़ा उन्होंने भी ए'लान किया-

ततः शङ्खाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः।
सहसैवाभ्यहन्यन्त स शब्दस्तुमुलोऽभवत्।।१३।।

उसके बा'द तमाम नाकूस, नगाड़े, ढोल और नरसिंह वग़ैरः बाजे एक साथ ही बजे। उनकी आवाज़ भी बड़ी ख़ौफ़नाक हुई। ख़ौफ़ पैदा करने के इलावः कौरवों का कोई ए'लान नहीं है। दुन्यवी ग़ैरनस्ली ख़साइल कामयाब होने पर फ़िरेफ़्तगी की बन्दिश और सख़्त बना देती है।

अब नेक ख़साइल की तरफ़ से ए'लान हुआ, जिनमें पहला ए'लान जोग के मालिक श्रीकृष्ण का है-

ततः श्वेतैर्हयैर्युक्ते महति स्यन्दने स्थितौ।
माधवः पाण्डवश्चैव दिव्यौ शङ्खौ प्रदध्मतुः।।१४।।

इसके बा'द सफ़ेद घोड़ों वाले (जिनमें ज़रा-सा भी कालापन, ऐब नहीं है, सफ़ेद सालेह पाकीज़गी की अलामत है) **'महति स्यन्दने'-** अज़ीम रथ पर बैठे हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण और अर्जुन ने भी मावराई नाकूस बजाये। मावराई का मा'ना है- नादिर, आलमे नासूत, आलमे बक़ा, आलमे लाहूत (ब्रह्मलोक), जहाँ तक पैदाइश और मौत का ख़ौफ़ है, उन तमाम अवालिम से अलग मावराई, नेक अमलवाली हालत अता करने का ए'लान जोग के मालिक श्रीकृष्ण का है। सोने-चाँदी-लकड़ी का रथ नहीं, रथ मावराई, नाकूस मावराई, लिहाज़ा ए'लान भी मावराई ही है। अवालिम से दूर वाहिद ख़ुदा है, सीधा उससे निस्बत बनाने का ए'लान आलम से दूर वाहिद इलाह

है, सीधा उससे निस्बत बनाने का ए'लान है। वे कैसे इस मक़ाम पर पहुँचायेंगे?

पाञ्चजन्यं हृषीकेशो देवदत्तं धनञ्जयः।
पौण्ड्रं दध्मौ महाशङ्खं भीमकर्मा वृकोदरः।।१५।।

'हृषिकेशः'– जो दिल की सभी बातें जानने वाले हैं उन श्रीकृष्ण ने 'पाञ्चजन्य' नाम का नाकूस बजाया। पाँचों हवासे बातिनी के पाँचों सिफ़ात लफ़्ज़ सी (शब्द), लम्स (स्पर्श), शक्ल, लज़्ज़त (रस), महक (गंध) के लुत्फ से अलग कर अपने अक़ीदतमन्दों (मुक़ल्लिदों) की जमाअत में ढालने का ए'लान किया। ख़ौफ़नाक तरीक़ः से बहक़ते हुए हवास समेटकर उन्हें अपने ख़िद्मतगार की जमा'अत में खड़ा कर देना दिल से मुहर्रिक मुर्शिद की देन है। श्रीकृष्ण एक जोग के मालिक, मुर्शिद थे। **'शिष्यस्तेऽहं'**– पर्वर्दगार! मै आपका मुक़ल्लिद हूँ। ख़ारिजी मौजूआत को तर्ककर तसव्वुर में मा'बूद के इलावः दूसरा न देखें, दूसरा न सुनें, न दूसरे को छुएँ, यह मुर्शिद के तज़्रिबाती तह्रीक पर मुन्हसिर करता है।

'देवदत्तं धनञ्जयः'– रूहानी दौलत को क़ाबू में करने वाला इश्क़ ही अर्जुन है। इलाह के मुताबिक़ उंसीयत जिसमें हिज्र, तर्के दुन्या, अश्के-रवाँ हो, **'गदगद गिरा नयन बह नीरा।'**– एहतिज़ाज़ हो, इलाह के इलावः किसी दूसरे तसव्वुर का ज़रा भी टकराव न होने पाये, उसी को इश्क़ (अनुराग) कहते हैं। अगर यह कामयाब होता है तो पर्वर्दगार में दाखिल दिलाने वाली रूहानी दौलत पर फ़त्ह हासिल कर लेता है। इसी का दूसरा नाम दौलत पर फ़त्ह हासिल करनेवाला (धनञ्जय) भी है। एक दौलत तो ख़ारिजी दौलत है जिससे जिस्म की ज़रूरीयात पूरी होती हैं, रूह से इसका कोई तअल्लुक़ नहीं है। इससे अलग हटकर हमेशः क़ाइम रहने वाली रूहानी दौलत ही खुद की दौलत है। बृहदारण्यकोपनिषद् में याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी को यही समझाया कि मालोज़र से लबरेज़ ज़मीन के मालिकानः से भी उंसुरे नोशाब का हुसूल नहीं हो सकता। उसका तरीक़ः रूहानी दौलत है।

दह्शत पैदा करने वाले भीमसेन ने 'पौण्ड्र' या'नी मुहब्बत नाम का अज़ीम नाकूस बजाया। एहसास का मस्दर और मक़ाम करने की जगह दिल है, लिहाज़ा इसका नाम वृकोदर (भीमसेन) है। आपका एहसास और लगाव बच्चे में होता है; लेकिन दरहक़ीक़त वह लगाव आपके दिल में है जो बच्चे में जाकर मुजस्सम होता है। यह ख़याल अथाह और बेइंतिहा ताक़तवर है, उसने मुहब्बत (पौण्ड्र) नाम का नाकूस बजाया। एहसास में ही वह मुहब्बत मुज़्मिर है, लिहाज़ा भीम ने पौण्ड्र (मुहब्बत)

नाम का अज़ीम नाक़ूस बजाया। एहसास बेहद ताक़तवर है, लेकिन मुहब्बत के तह्रीक के वसीलः से।

हरि ब्यापक सर्बत्र समाना। प्रेम तें प्रकट होहिं मैं जाना।।

(रामचरितमानस, १/१८४/५)

अनन्तविजयं राजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः।
नकुलः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ।।१६।।

कुन्ती के वलद शाह युधिष्ठिर ने 'अनन्तविजय' नाम का नाक़ूस बजाया। फ़र्ज़ की तम्सील कुन्ती और तम्सीले-दीन युधिष्ठिर। दीन पर मुस्तक़िल मिज़ाजी रहेगी तो **'अनन्तविजय'**- लामह्दूद आ'लारूह में मक़ाम दिलायेगा। युधि स्थिरः सः युधिष्ठिरः (जंग में जो साकिन है, वह युधिष्ठिर है)। मालिकेकुल (प्रकृति-पुरुष) मैदान और आलिमे-मैदान (क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ) की जंग में मुस्तक़िल रहता है, बड़ी से बड़ी तक्लीफ़ से भी मुतज़ल्ज़िल नहीं होता तो एक रोज़ जो लामह्दूद है, जिसकी हद नहीं है, वह है- उंसुरे आ'ला रूहे-मुत्लक़, उस पर फ़त्ह दिला देता है।

उसूल की तम्सील 'नकुल' ने 'सुघोष' नाम का नाक़ूस बजाया। जैसे-जैसे उसूल का उरुज होगा, नामुबारक का ख़ातिमः होता जायेगा, मुबारक का ए'लान होता आयेगा। सुह्बते नेक की तम्सील 'सहदेव' ने 'मणिपुष्पक' नामक नाक़ूस बजाया। मुफ़क्किरीन ने हर एक नफ़स को बेशक़ीमत जवाहर का नाम दिया है। **'तेरी हीरा जैसी स्वाँस बातों में बीती जाय।'** (बिन्दु) एक सुह्बते-नेक तो वह है, जो आप सालेह इंसानों की ज़बान से सुनते हैं; लेकिन हक़ीक़ी सुह्बते-नेक बातिनी है। श्रीकृष्ण के मुताबिक़ रूह ही हक़ है, अबदी है। ज़ेह्न हर तरफ़ से सिमटकर रूह की सुह्बत करने लगे, यही हक़ीक़ी नेक सुह्बत है। यह नेक सुह्बत ग़ौरो-फ़िक्र और मुराक़बः के मश्क़ से सादिर होती है। जैसे-जैसे हक़ की कुर्बत में याद (सुरत) टिकती जायेगी, वैसे-वैसे एक-एक साँस पर क़ाबू हासिल होता जायेगा; मन के साथ हवास पर क़ाबू मिलता जायेगा। जिस दिन मुकम्मल क़ब्ज़ः होगा, मंज़िल हासिल हो जायेगी। बाजों की तरह ज़ेह्न का रूह के सुर में सुर मिलाकर सुह्बत करना ही सुह्बते-नेक है।

बाहरी जवाहर सख़्त है, लेकिन साँस का जवाहर फूल से भी ज़ियादः नाज़ुक है। फूल तो खिलने या टूटने पर मुरझाता है; लेकिन आप अगली साँस तक ज़िंदः रहने का क़ौल नहीं दे सकते लेकिन सुह्बते नेक कामयाब होने पर हर एक नफ़स पर क़ाबू दिलाकर मक़्सदे आ'ला को हासिल करा देती है। इसके आगे पाण्डवों का

कोई ए'लान नहीं है, लेकिन हर एक वसीलः कुछ न कुछ पाकीज़गी की राह में दूरी तय कराता है। आगे फ़र्माते हैं-

काश्यश्च परमेष्वासः शिखण्डी च महारथः।
धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यकिश्चापराजितः।।१७।।

जिस्म की तम्सील काशी। इंसान जब हर जानिब से मन के साथ हवास को समेटकर जिस्म में ही मर्कूज़ करता है तो **'परमेष्वासः'**- आ'ला मा'बूद में मक़ाम करने का मुस्तहक़ हो जाता है। आ'ला मा'बूद में मक़ाम दिलाने में अह्ल जिस्म ही 'काशी' है। जिस्म में ही आ'ला मा'बूद का मुकाम है। 'परमेष्वासः' का मा'ना आ'ला कमान वाला नहीं बल्कि परम+ईश+वासः (आ'ला+मा'बूद+मक़ाम) या'नी आ'ला मा'बूद का मक़ाम है।

चोटी और जुन्नार (शिखा-सूत्र) का तर्क ही 'शिखण्डी है। आजकल लोग सर के बाल मुड़वा लेते हैं और सूत्र के नाम पर गले का जुन्नार (जनेऊ) हटा देते हैं, आग जलाना छोड़ देते हैं, हो गया उनका तर्के-दुन्या। नहीं, दरहक़ीक़त चोटी मक़्सद की अलामत है, जिसे आपको हासिल करना है और जुन्नार है- तअस्सुरात (संस्कारों) की अलामत। जब तक आगे रूहेमुत्लक़ का हुसूल बाक़ी है, पीछे तअस्सुरात (संस्कारों) का आग़ाज़ लगा हुआ है, तब तक ईसार कैसा? तर्के दुन्या कैसा? अभी तो चलने वाले राहगीर हैं। जब मंज़िले मक़्सूद (इलाह) हासिल हो जाय, पीछे लगे हुए तअस्सुरात की डोर कट जाय, ऐसी हालत में शक हर तरह से ख़त्म हो जाता है, लिहाज़ा शिखण्डी ही शक की तम्सील भीष्म का ख़ातिमः करता है। शिखण्डी राहे-ग़ौरो-फ़िक्र की ख़ुसूसी सलाहीयत है, मर्दे-मैदाँ है।

'धृष्टद्युम्न'- ग़ैरमुतहर्रिक और मुस्तक़िल मिज़ाज और **'विराटः'**- हर जगह अज़ीमुश्शान मा'बूद का जल्वः देखने की सलाहीयत वग़ैरः रूहानी दौलत के ख़ास ख़ुसूसीयात हैं। सालेह मिज़ाजी (सात्विकता) ही सात्यकि है। हक़ के ग़ौरो-फ़िक्र की ख़स्लत या'नी पाकीज़गी अगर क़ाइम है, तो कभी गिरावट नहीं आने पायेगी। इस जंग में कभी शिकस्त नहीं होने देगी।

द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते।
सौभद्रश्च महाबाहुः शङ्खान्दध्मुः पृथक्पृथक्।।१८।।

अटल मक़ाम देने वाले द्रुपद और तसव्वुर की तम्सील द्रौपदी के पाँचों औलाद-

फ़राख़ दिली, शफ़क़त, मलाहत, लताफ़त, मुस्तक़िल मिज़ाजी रियाज़त में बेहद मददगार मुजाहिदीन आ'ज़म हैं और लम्बी बाजुओं वाला अभिमन्यु- इन सबने अलग-अलग नाकूस बजाये। बाजू हल्क़-ए-कार की अलामत है। जब मन ख़ौफ़ से ख़ाली हो जाता है तो उसकी पहुँच दूर-दूर तक हो जाती है।

शाह! इन सबने अलग-अलग नाकूस बजाये। कुछ-न-कुछ दूरी सभी तय कराते हैं, इनकी ता'मील ज़रूरी है, लिहाज़ा इनके नाम गिनाये। इसके इलावः कुछ दूरी ऐसी भी है, जो दिलो-दिमाग़ से अलग हटकर है। पर्वर्दगार ही बातिन में मौजूद रहकर तब कराते हैं। इधर नज़र बनकर रूह में खड़े हो जाते हैं और सामने ख़ुद खड़ा होकर अपना तअर्रुफ़ करा लेते हैं।

स घोषो धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत्।
नभश्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्यनुनादयन्।।१९।।

उस ख़ौफ़ज़दः आवाज़ ने ज़मीनो-आस्माँ को भी आवाज़ से भरते हुए धृतराष्ट्र के औलाद के दिलों को छलनी कर दिया। फ़ौज तो पाण्डवों की तरफ़ भी थी, लेकिन दिल छलनी हुए धृतराष्ट्र के औलाद के। दरहक़ीक़त पाञ्चजन्य (एक तरह का नाकूस), रूहानी ताक़त पर इख़्तियार, लामहदूद पर फ़त्ह, नामुबारक का ख़ातिमः और मुबारक का ए'लान तसल्सुल के साथ होने लगे तो मैदाने अमल, दुन्यवी दौलत, ख़ारिजी ख़साइल का दिल छलनी हो जायेगा। उनकी ताक़त धीरे-धीरे कमज़ोर होने लगती है। पूरी तौर से कामयाबी हासिल होने पर फ़िरेफ़्तः ख़साइल पूरी तौर से ख़ामोश हो जाते हैं।

अथ व्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान्कपिध्वजः।
प्रवृत्ते शस्त्रसम्पाते धनुरुद्यम्य पाण्डवः।।२०।।
हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते।
अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला)-
सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत।।२१।।

ज़ब्तेनफ़्स की तम्सील संजय ने लाइल्मी से घिरे हुए मन (धृतराष्ट्र) को समझाया कि ऐ शाह! उसके बाद **'कपिध्वजः'**- बैराग की तम्सील हनुमान बैराग ही पर्चम है जिसका। पर्चम क़ौम का निशान माना जाता है। कुछ लोग कहते हैं- पर्चम शोख़ था लिहाज़ा कपिध्वज (पर्चमे बन्दर) कहा गया। लेकिन नहीं, यहाँ कपि आम

बन्दर नहीं, खुद 'हनुमान' थे, जिन्होंने इज़्ज़त-ज़िल्लत का ख़ातिमः किया था- **'सम मानि निरादर आदरही।'**- दुनूया की देखी-सुनी चीज़ों से, उनके मौजूआत से, उंसीयत का तर्क कर देना ही बैराग है। लिहाज़ा बैराग ही जिसका पर्चम है, उस अर्जुन ने बाक़ाइदः धृतराष्ट्र के औलाद को खड़े देखकर अस्लिहः चलाने की तैयारी के वक़्त कमान उठाकर **'हृषीकेशम्'**- जो दिल के सब कुछ को जानते हैं, उन जोग के मालिक श्रीकृष्ण से यह बात कही- ''ऐ अच्युत (मुस्तकिल मिज़ाज इंसान)! मेरे रथ को दोनों फ़ौजों के बीच खड़ा कीजिये।'' यहाँ रथबान को दिया गया हुक्म नहीं, मत्लूब (मुर्शिद) से की गयी गुज़ारिश है। किसलिए खड़ा करें?

यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धुकामानवस्थितान्।
कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन्रणसमुद्यमे।।२२।।

जब तक मैं इन जमे हुए जंग की ख़्वाहिशात वालों को अच्छी तरह देख न लूँ कि इस जंग के कारोबार में मुझे किन-किन के साथ जंग करना लाज़िमी है- इस जंग के कारोबार में मुझे किन-किन के साथ जंग करनी है?

योत्स्यमानानवेक्षेऽहं य एतेऽत्र समागताः।
धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः।।२३।।

बदअक़्ल दुर्योधन का जंग में भला चाहने वाले जो-जो शाह हज़्रात इस फ़ौज में आये हैं, उन जंग करने वालों को मैं देखूँगा, लिहाज़ा खड़ा करें। फ़िरेफ़्तगी की तम्सील दुर्योधन! फ़िरेफ़्तः ख़साइल का भला चाहने वाले जो-जो शाह हज़्रात इस जंग में आये हैं, उनको मैं देख लूँ।

सञ्जय उवाच (संजय बोला)-

एवमुक्तो हृषीकेशो गुडाकेशेन भारत।
सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम्।।२४।।
भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम्।
उवाच पार्थ पश्यैतान्समवेतान्कुरूनिति।।२५।।

संजय बोला- नींद पर क़ाबू रखने वाले अर्जुन के ज़रीअः इस तरह कहे जाने पर दिल की बातों को जानने वाले श्रीकृष्ण ने दोनों तरफ़ की फौजों के बीच भीष्म, द्रोण और **'महीक्षिताम्'**- जिस्म की तम्सील ज़मीन पर क़ब्ज़ जमाये हुए तमाम शाहों के बीच अज़ीम रथ को खड़ा करके कहा- ''पार्थ! इन इकट्ठे हुए कौरवों को देख।''

यहाँ अफ़्ज़ल रथ सोने-चाँदी का रथ नहीं है। दुन्या में अफ़्ज़ल की तश्बीह फ़ानी के मुतअल्लिक़ मुताबक़त और मुख़ालफ़त से की जाती है, यह तश्बीह नामुकम्मल है। जो हमारी रूह, हमारी शक्ल का हमेशः साथ दे वही अफ़्ज़ल है जिसके पीछे **'अनुत्तम'**- बदतरी न हो।

तत्रापश्यत्स्थितान्पार्थः पितॄनथ पितामहान्।
आचार्यान्मातुलान्भ्रातॄन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा।।२६।।
श्वशुरान्सुहृदश्चैव सेनयोरुभयोरपि।

इसके बा'द बेख़ता निशानची, फ़ानी जिस्म को रथ बनाने वाले पार्थ (अर्जुन) ने उन दोनों फौजों में मौजूद अपने वालिद के भाइयों को, मुअल्लिमों को, मामाओं को, भाइयों को, अज्दाद को, बेटों को, पोतों को, दोस्तों को, ससुरों को और ख़ैरख़्वाह लोगों को देखा। दोनों तरफ़ की फ़ौजों में अर्जुन को सिर्फ़ अपना ख़ानदान, मामा का ख़ानदान, ससुर का ख़ानदान, दोस्त-अह्बाब और पीरो-मुर्शीद दिखायी पड़े। महाभारत के वक़्त के शुमार के मुताबिक़ अट्ठारह अक्षौहिणी तक़रीबन चालीस लाख के बराबर होता है, लेकिन मौजूदः शुमार के मुताबिक़ अट्ठारह अक्षौहिणी तक़रीबन साढ़े छः अरब के होता है, जो आज की दुन्या की आबादी के बराबर है। मह्ज़ इतनी ता'दाद के लिए कभी-कभी दुन्यवी सत्ह पर रहने-खाने की दिक़्क़तें खड़ी हो जाती है। इंसानों की इतनी ता'दाद में मह्ज़ अर्जुन के तीन-चार रिस्तेदारों का ख़ानदान था। क्या इतना बड़ा भी किसी का ख़ानदान होता है? हरगिज़ नहीं। यह दिल की दुन्या की अक्कासी है।

तान्समीक्ष्य स कौन्तेयः सर्वान्बन्धूनवस्थितान्।।२७।।
कृपया परयाविष्टो विषीदन्निदमब्रवीत्।

इस तरह खड़े हुए उन तमाम दोस्तों-अह्बाबों को देखकर बेहद दर्दमंदी से घिरा हुआ वह कुन्ती का बलद अर्जुन ग़मज़दः होकर बोला। अर्जुन ग़म करने लगा; क्योंकि उसने देखा कि यह सब तो अपना ख़ानदान ही है, लिहाज़ा बोला-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला)-

दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम्।।२८।।
सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति।
वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते।।२९।।

ऐ श्रीकृष्ण! जंग के ख़्वाहिशमन्द खड़े हुए इस अपने लोगों के जमाअत को देखकर मेरे जिस्म के हिस्से ढीले हुए जाते हैं। मुंह ख़ुश्क होता जा रहा है और मेरा जिस्म लर्ज़ः बरअंदामकुन हो रहा है। इतना ही नहीं,

गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते।
न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः।।३०।।

हाथ से गाण्डीव (अर्जुन के कमान का नाम) गिरता है, जिल्द (त्वचा) भी जल रही है। अर्जुन को बुख़ार-सा हो आया। ग़मगीन हो उठा कि यह कैसी जंग है जिसमें अपने ही लोग खड़े हैं? अर्जुन को शक हो गया। वह कहता है- अब में खड़ा रह पाने में भी ख़ुद को क़ासिर पा रहा हूँ, अब आगे देखने की ताक़त नहीं है।

निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव।
न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे।।३१।।

केशव! इस जंग का आसार भी बरख़िलाफ़ ही देखता है। जंग में अपने ख़ानदान को मारकर कोई ख़ास बेह्तरी भी मुझे नज़र नहीं आ रही है। ख़ानदान को मारने से भलाई कैसे होगी?

न काङ्क्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च।
किं नो राज्येन गोविन्द किं भोगैर्जीवितेन वा।।३२।।

मुसल्लम ख़ानदान जंग के मुहाने पर है। इन्हें जंग में मारकर फ़त्ह, फ़त्ह से मिलने वाला इक़्तिदार और इक़्तिदार से मिलने वाली ख़ुशी अर्जुन को नहीं चाहिए। वह कहता है- कृष्ण! मैं फ़त्ह नहीं चाहता, इक़्तिदार और उससे मिलने वाली ख़ुशी भी नहीं चाहता। गोविन्द! हमें इक़्तिदार या ऐशोइश्रत ख़्वाह ज़िंदगी से भी क्या वास्तः है? क्यों? इस पर कहता है-

येषामर्थे काङ्क्षितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च।
त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च।।३३।।

हमें जिनके लिए इक़्तिदार का ऐश और सुख वग़ैरः की ख़्वाहिशात की तलब है, वे ही ख़ानदान ज़िंदगी की उम्मीद छोड़कर मैदाने-जंग में खड़े हैं। हमें इक़्तिदार की ख़्वाहिश थी तो ख़ानदान को लेकर। ऐशो-इश्रत, ख़ुशी और दौलत की तश्नगी थी तो अपनों और ख़ानदान के साथ उन्हें लुत्फ़ उठाने की थी; लेकिन जब सब-के-सब ज़िंदगी की उम्मीद छोड़कर खड़े हैं तो मुझे सुख, इक़्तिदार या ऐश नहीं चाहिए। इन्हीं

लोगों के साथ रहकर इन सारी चीज़ों की क़ीमत थी। इनसे जुदा होने पर हमें इनकी ज़रूरत नहीं है। जब तक ख़ानदान रहता है तभी तक ये ख़्वाहिशात भी रहती हैं। झोपड़ी में रहने वाला भी अपने ख़ानदान, दोस्त-अह्बाब को मारकर पूरी दुन्या की सल्तनत को भी क़बूल नहीं करेगा। अर्जुन भी यही कहता है कि हमें ऐश पसन्द थे, फ़त्ह-पसन्द थी; लेकिन जिनके लिए थी, जब वे ही नहीं रहेंगे तो ऐशो-इश्रत का क्या मत्लब? इस जंग में मारना किसे है?

आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः।
मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः सम्बन्धिनस्तथा।।३४।।

इस जंग में अल्लामः, ताऊ, चाचा, बेटे और इसी तरह दादा, मामा, ससुर, पोते, साले और सारे नाते-रिश्तःदार लोग ही हैं।

एतान्न हन्तुमिच्छामि घ्नतोऽपि मधुसूदन।
अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किं नु महीकृते।।३५।।

मधुसूदन! उनके ज़रीअः मुझे हलाक किया जाने पर भी या तीनों अवालिम के इक़्तिदार के लिए भी मैं इन सबको हलाक करना नहीं चाहता, फिर इस ज़मीन के लिए कहना ही क्या है।

अठारह अक्षौहिणी फ़ौज में अर्जुन को अपना ख़ानदान ही दिखायी पड़ा। अपने लोगों की इतनी बड़ी जमाअत दरहक़ीक़त है क्या? दरहक़ीक़त इश्क़ ही अर्जुन है। यादे इलाही के इब्तिदाई-दौर में हर एक आशिक़ के सामने यही मस्अलः रहता है। सभी चाहते हैं कि हम याद (भजन) करे, उस आ'ला हक़ीक़त के मक़ाम पर पहुँच जायँ लेकिन किसी तज्रिबःकार मुर्शिद की सरपरस्ती में कोई आशिक़ मैदान और मैदान के आलिम की जंग को समझता है कि हमें किनसे जंग करनी है तो वह मायूस हो जाता है। वह चाहता है कि हमारे पिदर का ख़ानदान, ससुराल का ख़ानदान, मामा का ख़ानदान, दोस्त-अह्बाब और मुर्शिदो-पीर साथ रहें, सभी खुशहाल रहें और इन सबकी ख़िद्मत करते हुए हम उस रूहे मुत्लक़ को भी हासिल कर लें। लेकिन जब वह समझता है कि राहे इबादत में आगे बढ़ने के लिए ख़ानदान छोड़ना होगा, इन तअल्लुक़ात की गिरिफ़्त से बाहर निकलना होगा तो वह बेसब्र हो उठता है।

'क़ाबिले एहतिराम महाराज जी' फ़र्माया करते थे- 'मरना और सूफ़ी होना बराबर है।' सूफ़ी के लिए दुन्या में दूसरा कोई ज़िंदः है भी; लेकिन घरवालों के नाम

पर कोई नहीं है। अगर कोई है तो उंसीयत है, फ़िरेफ़्तगी खत्म कहाँ हुई? जहाँ तक उंसियत है, उसका पूरी तरह से ईसार, उस उंसीयत के वुजूद के ख़त्म होने पर ही उसकी कामयाबी है। इन तअल्लुक़ात की वुस्अत ही तो दुन्या है, वर्नः दुन्या में हमारा क्या है? **'तुलसीदास कह चिद-बिलास जग बूझत बूझत बूझे।'** (विनयपत्रिका, १२४)- मन की वुस्अत ही दुन्या है। जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने भी दिल की वुस्अ'त को ही दुन्या कहकर मुख़ातब किया है। जिसने इसके असर को रोक लिया, उसने मख़्लूक़ाते-आलम पर ही फ़त्ह हासिल कर ली- **'इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः।'** (गीता, ५/१९)

सिर्फ़ अर्जुन बेक़रार था, ऐसी बात नहीं है। इश्क़ सबके दिल में है। हर एक आशिक़ बेक़रार होता है, उसे अज़ीज़ लोग याद आने लगते हैं। पहले वह सोचता था कि यादे इलाही से कुछ फ़ाइदः होगा, तो ये सब ख़ुशहाल होंगे। इनके साथ रहकर उसका लुत्फ़ उठायेंगे। जब ये साथ ही नहीं रहेंगे तो यह सुख लेकर क्या करेंगे? अर्जुन की नज़र इक़्तिदार के ऐश तक ही महदूद थी। वह तीनों जहान के मालिक के इक़्तिदार को ही ऐशो-इश्रत की आख़िरी हद समझता था। इसके आगे भी कोई हक़ीक़त है, इसका इल्म अभी अर्जुन को नहीं है।

निहत्य धार्तराष्ट्रान्नः का प्रीतिः स्याज्जनार्दन।
पापमेवाश्रयेदस्मान्हत्वैतानाततायिनः ।।३६।।

जनार्दन! धृतराष्ट्र के औलाद को मारकर भी हमें क्या ख़ुशी होगी? जहाँ धृतराष्ट्र या'नी धृष्टता का राष्ट्र है (गुस्ताख़ी का इक़्तिदार है), उससे पैदा फ़िरेफ़्तगी की तम्सील दुर्योधन वग़ैरः को मारकर भी हमें क्या ख़ुशी होगी? इन ज़ालिमों को मारकर हमें गुनाहगार ही तो होना पड़ेगा। जो ज़िंदगी बसर करने के मामूली फ़ाइदः के लिए बदअख़्लाक़ी को क़बूल करता है वह ज़ालिम कहलाता है; लेकिन हक़ीक़त में इससे भी बड़ा ज़ालिम वह है जो रूह के रास्ते में रुकावट डालता है। ख़ुदशनासी में ख़लल डालने वाले ख़ाहिश, ग़ुस्सः, लालच, फ़िरेफ़्तगी वग़ैरः का गुरोह ही ज़ालिम है।

तस्मान्नार्हा वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान्स्वबान्धवान्।
स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव।।३७।।

लिहाज़ा ऐ माधव! अपने अह्बाब धृतराष्ट्र के औलाद को मारने के क़ाबिल हम नहीं हैं। अपने अह्बाब कैसे? वे तो दुश्मन थे न। दरहक़ीक़त जिस्मानी रिश्ते नासमझी के बिना पर पैदा होते हैं। ये मामा हैं, ससुराल है, दोस्त अह्बाब की

जमाअत है- यह सब नासमझी ही तो है। जब जिस्म ही फ़ानी है तब इसके रिश्ते ही कहाँ रहेंगे? फ़िरेफ़्तगी है तभी तक दोस्त अह्बाब हैं, हमारा ख़ानदान है, हमारी दुन्या है। फ़िरेफ़्तगी नहीं तो कुछ भी नहीं। इस वास्ते वे दुश्मन भी अर्जुन को अपने ही लोग दिखायी पड़े। वह कहता है कि अपने ख़ानदान को मारकर हम कैसे ख़ुशहाल होंगे? अगर नासमझी और फ़िरेफ़्तगी न रहे तो ख़ानदान का वुजूद न हो। यह लाइल्मी इल्म की मुहर्रिक भी है। भर्तृहरि, तुलसी वग़ैरः तमाम मुअज़्ज़िज़ लोगों को बैराग की तर्ग़ीब बेगमों से मिली, तो कोई सौतेली माँ की बदअख़्लाक़ी से परेशान होकर राहे तर्के दुन्या (बैराग-पथ) पर आगे बढ़ता हुआ दिखायी देता है।

यद्यप्येते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसः।
कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकम्।।३८।।

गो कि लालच से बदउन्वान ज़ेह्न हुए ये लोग ख़ानदान को तबाह करने वाली बुराइयों और दोस्तों से दुश्मनी के गुनाह को नज़र-अन्दाज़ कर देते हैं, यह उनकी खामी है, फिर भी,

कथं न ज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्तितुम्।
कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्भिर्जनार्दन।।३९।।

जनार्दन ख़ानदान की तबाही से होने वाली बुराइयों को जानने वाले हमलोगों को इस गुनाह से अलग होने के लिए क्यों नहीं ग़ौर करना चाहिए? मैं ही गुनाह करता हूँ, ऐसी बात नहीं, आप भी ग़लती करने जा रहे हैं। श्रीकृष्ण पर भी इल्ज़ाम लगाया। अभी वह समझ में अपने को श्रीकृष्ण से कमतर नहीं मानता। हर एक नया रियाज़तकश मुर्शिद की पनाह में जाने पर इसी तरह की दलील देता है और अपने को समझ में कमतर नहीं मानता। यही अर्जुन भी कहता है कि ये भले न समझें, लेकिन हम-आप तो समझदार हैं। ख़ानदान की तबाही की बुराइयों पर हमें ग़ौर करना चाहिए। ख़ानदान की तबाही में बुराई क्या है?

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः।
धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत।।४०।।

ख़ानदान का ख़ातिमः होने से क़दीमी ख़ानदानी फ़र्ज़ ख़त्म हो जाते हैं। (अर्जुन ख़ानदानी फ़र्ज़, ख़ानदानी तर्बियत को ही अबदी दीन समझ रहा था।) फ़र्ज़ के ख़ातिमः के बा'द गुनाह का दबाव पूरे ख़ानदान पर पड़ता है।

अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसङ्करः।।४१।।

ऐ कृष्ण! गुनाहों के जियादः बढ़ जाने पर ख़ानदान की औरतें नाक़िस हो जाती हैं। वार्ष्णेय! औरतों के नाकिस होने पर इब्नुलग़ैब (वर्णसंकर) पैदा होता है। अर्जुन का मानना था कि ख़ानदान की औरतों के नाक़िस होने से दोग़लः पैदा होता है; लेकिन श्रीकृष्ण ने इसकी तर्दीद करते हुए आगे बताया कि, मैं ख़ुद या आ'ला मक़ाम पर फ़ाइज़ अज़ीम इंसान अगर रियाज़त के तसल्सुल में शुब्हः पैदा कर दें, तब दोगलः होता है। दोगलः के उयूब पर अर्जुन रोशनी डालता है।

सङ्करो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च।
पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रियाः।।४२।।

दोगलः ख़ानदान को बरबाद करने वालों और ख़ानदान को जहन्नुम में ढकेलने के लिए होता है। इब्नुलग़ैब पैदा होने से पिण्डदान का रिवाज ख़त्म हो जाता है। ऐसे गिरे ख़ानदानों के आबा व अज्दाद भी गिर जाते हैं। (पिण्डदान- मरने के बा'द १२ दिन तक श्राद्ध नाम से चावल, दूध, घी, तिल, शहद वग़ैरः मिलाकर उसे लड्डूनुमा बनाकर मरे हुए इंसान के नाम पर पूजा-पाठ करते हैं) वक़्ते-हाल बरबाद हो जाता है, माज़ी के आबावअज्दाद गिर जाते हैं और मुस्तक़िबल वाले भी गिरेंगे। इतना ही नहीं;

दोषैरेतैः कुलघ्नानां वर्णसङ्करकारकैः।
उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्वताः।।४३।।

दोग़लः पैदा करने वाले इन उयूब से ख़ानदान और ख़ानदान को बरबाद करने वालों के अबदी ख़ानदानी फ़र्ज़ और क़ौमी फ़र्ज़ ख़त्म हो जाते हैं। अर्जुन मानता था कि ख़ानदानी फ़र्ज़ अबदी है, ख़ानदानी फ़र्ज़ ही दाइमी है। लेकिन श्रीकृष्ण ने इसकी तर्दीद की और आगे बताया कि रूह ही अबदी, दाइमी दीन है। हक़ीक़ी अबदी दीन को जानने से पहले इंसान दीन के नाम पर किसी-न-किसी क़दामत को जानता है। ठीक इसी तरह अर्जुन भी जानता है, जो श्रीकृष्ण के अल्फ़ाज़ में एक क़दामत है।

उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन।
नरकेऽनियतं वासो भवतीत्यनुशुश्रुम।।४४।।

ऐ जनार्दन! ख़त्म हुए ख़ानदानी फ़र्ज़ वाले इंसानों को लामह्दूद वक़्त तक

दोज़ख़ में रहना पड़ता है, ऐसा हमने सुना है। सिर्फ़ ख़ानदानी फ़र्ज़ ही बरबाद नहीं होता, बल्कि दाइमी अबदी दीन भी तबाह हो जाता है। जब दीन ही बरबाद हो गया तो ऐसे इंसान का लामह्दूद वक़्त तक दोज़ख़ में रहना होता है; ऐसा हमने सुना है। देखा नहीं, सुना है।

अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयम्।
यद्राज्यसुखलोभेन हन्तुं स्वजनमुद्यताः।।४५।।

हैफ़! अफ़्सोस है कि हम लोग अक़्लमन्द होकर भी बहुत बड़ा गुनाह करने पर आमादः हुए हैं। इक़्तिदार और ऐश की लालच से अपने ख़ानदान को मारने पर आमादः हुए हैं।

अभी अर्जुन अपने को कमतर नहीं समझता है, शुरू में हर रियाज़ती इसी तरह बोलता है। मर्दे ख़ुदा (महात्मा) बुद्ध का क़ौल है कि इंसान जब अधूरा इल्म रखता है तो अपने आप को बहुत बड़ा आलिम समझता है, और जब आधे से आगे का इल्म हासिल करने लगता है तो अपने को बहुत बड़ा बेवकूफ समझता है। ठीक इसी तरह अर्जुन भी अपने को आलिम ही समझता है। वह श्रीकृष्ण को ही समझाता है कि उस गुनाह से आ'ला इफ़ादः हो, ऐसी बात भी नहीं, सिर्फ़ इक़्तिदार और सुख की लालच में पड़कर हमलोग ख़ानदान को तबाह करने के लिए आमादः हुए हैं- बहुत बड़ी भूल कर रहे हैं। हमीं भूल कर रहे हैं, ऐसी बात नहीं, आप भी भूल कर रहे हैं। एक धक्का श्रीकृष्ण को भी दिया। आख़िर में अर्जुन अपना फ़ैसलः देता है-

यदि मामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः।
धार्तराष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत्।।४६।।

अगर मुझ ग़ैरमुसल्लह, मुकाबलः न करने वाले को मुसल्लह धृतराष्ट्र के औलाद मैदाने-जंग में मारें, तो उनका वह मारना भी मेरे लिए बेहद फ़ाइदःमंद होगा। तवारीख़ तो कहेगी कि अर्जुन समझदार था जिसने अपनी कुर्बानी देकर जंग को बचा लिया। लोग जानों की कुर्बानी दे डालते हैं कि भोले-भाले मासूम बच्चे ख़ुशहाल रहें, ख़ानदान तो बचा रहे। इंसान ग़ैर मुल्क को चला जाय, शानो-शौकत से भरे महल में रहे, लेकिन दो दिन बाद उसे अपनी छोड़ी हुई झोपड़ी याद आने लगती है। फ़िरेफ़्तगी इतनी पुरज़ोर होती है। इस वास्ते अर्जुन कहता है कि मुसल्लह धृतराष्ट्र के औलाद मुझ जैसे इंतिक़ाम न करने वाले को मैदाने-जंग में मार दें, तब भी वह मेरे लिए बेहद फ़ाइदःमंद होगा ताकि औलाद तो सुखी रहें।

संजय उवाच (संजय बोला) -

एवमुक्त्वार्जुनः संख्ये रथोपस्थ उपाविशत्।
विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः।।४७।।

संजय बोला कि मैदाने जंग में ग़म से बेक़रार मनवाला अर्जुन इस तरह कहकर तीरो-कमाँ को छोड़कर रथ के पिछले हिस्सः में बैठ गया या'नी मैदान और मैदान के आलिम की टक्कर में हिस्सः लेने से पीछे हट गया।

मग्ज़े सुख़न :-

'गीता' मैदान और मैदान के आलिम के जंग की मंज़रकशी है, यह ख़ुदाई शौकतों से मुज़य्यन दीदारे इलाही को अता कराने वाला नग्मः है। यह नग़्मः सराई जिस हल्कः (मैदान) में होती है वह मैदाने अमल 'जिस्म' है जिसमें दो ख़साइल हैं- मैदाने दीन और मैदान-ए-अमल। इन फ़ौजों की शक्ल और उनकी ताक़त की बुन्याद बतायी, आवाज़ेनाक़ूस से उनकी जफ़ाकशी का इल्म हुआ। उसके बा'द जिस फ़ौज से जंग करनी है उसका मुआयनः हुआ। जिसकी ता'दाद अट्ठारह अक्षौहिणी (तक़रीबन साढ़े छः अरब) कही जाती है; लेकिन दरहक़ीक़त वे बेशुमार हैं। क़ुद्रत के नज़रीयात दो हैं- एक मा'बूद की ओर ले जाने वाली ख़स्लत- 'रूहानी दौलत'; दूसरी दुन्या की तरफ़ ले जाने वाली ख़स्लत दुन्यवी दौलतें दोनों मिज़ाज ही हैं। एक ज़ाते मुत्लक़ की ओर माइल करती है, आ'ला दीन ज़ाते-मुत्लक़ की तरफ़ ले जाती है और दूसरी दुन्या में यक़ीन दिलाती है। पहले रूहानी दौलत को सँभालकर दुन्यवी दौलत का ख़ातिमः किया जाता है, फिर दाइमी अबदी इलाह के दीदार और उसमें मक़ाम के साथ रूहानी दौलत की ज़रूरत ख़त्म हो जाती है, जंग का अंजाम निकल आता है।

अर्जुन को फ़ौज के मुआयने में अपना ख़ानदान ही दिखायी पड़ता है, जिसे मारना है। जहाँ तक तअल्लुक़ है, उतनी ही दुन्या है। उंसयत के पहले क़दम पर ख़ानदानी फ़िरेफ़्तगी ख़लल पैदा करती है। रियाज़ती जब देखता है कि क़रीबी तअल्लुक़ात से इतना अलगाव हो जायेगा, जैसे वे थे ही नहीं, तो उसे घबराहट होने लगती है। अपनों से लगाव को ख़त्म करने में उसे नुक़्सान दिखायी देने लगता है। वह मुरव्वजः क़दामतों में अपनी हिफ़ाज़त की तलाश करने लगता है, जैसा अर्जुन ने किया। उसने कहा- ''ख़ानदानी फ़र्ज़ ही अबदी दीन है। इस जंग से अबदी दीन फ़ना हो जायेगा, ख़ानदान की औरतें नाक़िस होंगी, दोगलः पैदा होगा, जो ख़ानदान और

ख़ानदान को तबाह करने वालो को हमेशः-हमेशः के लिए दोज़ख़ में ले जाने के लिए ही होता है।'' अर्जुन अपनी समझ से 'अबदी दीन' की हिफ़ाज़त के लिए बेक़रार है। उसने श्रीकृष्ण से गुज़ारिश की कि हम लोग समझदार होकर भी यह इतना बड़ा गुनाह क्यों करें? या'नी श्रीकृष्ण भी गुनाह करने जा रहे हैं। आख़िर में गुनाह से बचने के लिए 'मैं जंग नहीं करूँगा'-ऐसा कहता हुआ मायूस अर्जुन रथ के पिछले हिस्से में बैठ गया, मैदान और मैदान के आलिम की टक्कर से पीछे हट गया।

शर्हनवीसों ने इस बाब को 'ग़मे अर्जुन जोग' (अर्जुन-विषाद योग) कहा है। अर्जुन उंसीयत की अलामत है। अबदी दीन के लिए बेक़रार होने वाले आशिक़ का ग़म जोग का सबब बनता है। यही ग़म मूरिसेअव्वल (मनु) को हुआ था- **'हृदयँ बहुत दुख लाग जनम गयउ हरिभगति बिनु।' (रामचरितमानस, १/१४२)**। शको-शुब्हः में पड़कर ही इंसान ग़म करता है। उसे शक था कि दोगलः पैदा होगा जो दोज़ख़ में ले जायेगा। अबदी दीन के मिटने का भी उसे ग़म था। लिहाज़ा 'संशय-विषाद योग' (ग़मो शको-शुब्हः जोग) का आम तरीक़ः से नाम दिया जाना इस बाब के लिए मुनासिब है। लिहाज़ा,

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'संशयविषादयोगो' नाम प्रथमोऽध्यायः।।१।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की शक्ल में उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'संशय-विषाद-योग' (ग़मो शको-शुब्हः जोग) नाम का पहला बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'संशयविषादयोगो' नाम प्रथमोऽध्यायः।।१।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'संशय-विषाद-योग' (ग़मो शको-शुब्हः जोग) नाम का पहला बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ द्वितीयोऽध्यायः।।
(दूसरा बाब)

बाबे अव्वल गीता की तरफ़ पहला क़दम है, जिसकी शुरुआत में अमल के राहरौ को महसूस होने वाली उलझनों की अक्कासी है। जंग करने वाले सभी कौरव और पाण्डव थे; लेकिन शको-शुब्हः का किर्दार महज़ अर्जुन है। इश्क़ ही अर्जुन है। इलाह के मुताबिक़ उंसियत ही अमल के राहरौ को मैदान और मैदान के अलिम की टकराहट के लिए आमादः करती है। उंसीयत इब्तिदाई दर्जः है। 'क़ाबिले एहतिराम महाराज जी' कहते थे- ''नेक अह्ले ज़िंदगी में रहते हुए कलालत होने लगे, अश्के-रवाँ होता हो, हल्क़बन्द होता हो तो समझना कि यहीं से यादे-इलाही की इब्तिदा हो गयी।'' उंसीयत में सब कुछ आ जाता है। उसमें दीन, उसूल, सुह्बतेनेक, ख़याल सभी मौजूद होंगे।

उंसीयत के पहले क़दम में ख़ानदान की रग़बत ख़लल पैदा करती है। पहले सभी चाहते हैं कि हम उस मुम्ताज हक़ीक़त को हासिल कर लें, लेकिन आगे बढ़ने पर वह देखता है कि इन महबूब तअल्लुक़ात को तर्क करना होगा तब उस पर नाउम्मीदी तारी हो जाती है। वह पहले से जो कुछ फर्ज़ो-फ़े'ल (धर्म-कर्म) मानकर करता था, उतने में ही इत्मीनान करने लगता है। अपनी महब्बत को तस्दीक़ करने के लिए वह मुरव्वजः क़दामतों को बतौर सुबूत भी पेश करता है, जैसा अर्जुन ने किया। 'ख़ानदानी फ़र्ज़' अबदी है, जंग से अबदी दीन का ख़ातिमः होगा, ख़ानदान की बरबादी होगी, बदउन्वानी फैलेगी- यह अर्जुन का जवाब नहीं था, बल्कि मुर्शिद की कुर्बत से पहले का अपनाया गया महज़ एक बुरा रिवाज था।

इन्हीं बुरे रिवाजों में फँसकर इंसान अलग-अलग मज़्हब, मुख़्तलिफ़ फ़िर्क़ों, छोटी-बड़ी दलबन्दी और बेशुमार जातों को गढ़ लेता है। कोई नाक दबाता है, कोई कान फाड़ता है, किसी के छूने से दीन तबाह हो जाता है, तो कहीं रोटी-पानी से

दीन बरबाद हो जाता है। तो क्या अछूत या छूने वालों की ग़लती है? हरगिज़ नहीं। ग़लती हमारे अन्दर शक पैदा करने वालों की है। दीन के नाम पर हम बुरे रिवाज के शिकार हैं लिहाज़ा ग़लती हमारी है।

मर्दे ख़ुदा बुद्ध के वक़्त में 'केश-कम्बल' नाम का एक फ़िर्क़ था जिसमें बाल को बढ़ाकर कम्बल की तरह इस्ते'माल करने को मुकम्मल होने का पैमानः माना जाता था। कोई 'गोव्रतिक' (गाय की तरह रहने वाला) था, तो कोई 'कुक्कुरव्रतिक' (कुत्ते की तरह खाने-पीने, रहने वाला) था। इल्मे तसव्वुफ़ का इनसे कोई वास्तः नहीं है। फ़िर्क़े और बुरे रिवाज पहले भी थे, आज भी हैं। ठीक इसी तरह श्रीकृष्ण के दौर में भी फ़िर्क़े थे, बुरे रिवाज थे। उनमें से एकाध बुरे रिवाज का शिकार अर्जुन भी था। उसने चार दलीलें पेश की- १. ऐसी जंग से अबदी दीन तबाह हो जायेगा, २. दोग़लः पैदा होगा, ३. मरने के बा'द जिर्म को पानी देने की रिवाज (पिण्डोदक क्रिया) का खातिमः होगा, और ४. हम लोग ख़ानदान की बरबादी के ज़रीअः बहुत बड़ा गुनाह करने को आमादः हुए हैं। इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने फ़र्माया-

संजय उवाच (संजय बोला) -

तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम्।
विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः।।१।।

रह्मआगीं, अश्कों से लबरेज़ बेक़रार आँखों वाले उस अर्जुन के मुतअल्लिक़ **'मधुसूदन'**- गुरूर का ख़ातिमः करने वाले श्रीकृष्ण ने यह क़ौल फ़र्माया-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले)-

कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम्।
अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन ।।२।।

अर्जुन! इस ग़ैरमुसावी मक़ाम में तुझमें यह नासमझी कहाँ से आ गयी? ग़ैर मुसावी मक़ाम या'नी जिसकी बराबरी का तख़्लीक़ में कोई मक़ाम है ही नहीं, मावराई है मक़्सूद जिसका, उस ग़ैर इख़्तिलाफ़ी मक़ाम पर तेरे अन्दर जहालत कहाँ से आ गयी? जहालत क्यों? अर्जुन तो अबदी दीन की हिफ़ाज़त के लिए कमरबस्तः है। क्या अबदी दीन की हिफ़ाज़त के लिए ज़ी-जान से तैयार होना जहालत है? श्रीकृष्ण कहते हैं- हाँ, यह जहालत है। न तो मुतवक़्क़े इंसानों के ज़रीअः इसका बरताव किया गया है, न जन्नत ही अता करने वाला है और न यह शुह्रत ही अता करने वाला है।

नेक राह पर जो मज़्बूती के साथ क़ाइम है, उसे अफ़्ज़ल (आर्य) कहते हैं। ख़ानदान के लिए मरना-मिटना अगर जहालत न होती, तो अज़ीम इंसान उस पर ज़रूर चले होते। अगर ख़ानदानी फ़र्ज़ ही हक़ होता तो जन्नत और भलाई का लादर्जः (निःश्रेणी) ज़रूर बनता। यह शुह्रत अता करने वाला भी नहीं है। मीरा यादे इलाही में लग गयी, तो **'लोग कहें मीरा भई बावरी, सास कहे कुलनाशी रे'**। जिस परिवार, ख़ानदान और इज़्ज़त के लिए मीरा की सास मुसीबत का इज़्हार करती हुई रो रही थी, आज उस ख़ानदानी सास को कोई नहीं जानता; मीरा को सारी दुन्या जानती है। ठीक इसी तरह परिवार के लिए जो परेशान हैं, उनकी भी शुह्रत कब तक रहेगी? जिसमें शुह्रत नहीं, भलाई नहीं, सालेह इंसानों ने भूलकर भी जिसका बरताव नहीं किया, तो साबित है कि वह जहालत है। लिहाज़ा-

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप।।३।।

अर्जुन! नामर्द मत बन। क्या अर्जुन नामर्द था? क्या आप मर्द है? नामर्द वह है, जिसमें मर्दानगी न हो। सब अपनी समझ से मर्दानगी ही तो करते हैं। काश्तकार रात-दिन ख़ून-पसीना एक करके खेत में मर्दानगी ही तो करता है। कोई रोज़गार में मर्दानगी समझता है, तो कोई अपने ओहदः का ग़लत इस्ते'माल करके मर्द बनता है। ज़िंदगी भर मर्दानगी करने पर भी ख़ाली हाथ जाना पड़ता है। ज़ाहिर है कि यह मर्दानगी नहीं है। ख़ालिस मर्दानगी है- ख़ुदशनासी। 'गार्गी' (एक क़दीमी दौर की आलिमः) ने 'याज्ञवल्क्य' (क़दीमी दौर के आलिम फ़ाज़िल मर्दे ख़ुदा) से कहा-

नपुंसकः पुमान् ज्ञेयो यो न वेत्ति हृदि स्थितम्।
पुरुषं स्वप्रकाशं तमानन्दात्मानमव्ययम्।। (आत्मपुराण)

वह मर्द होते हुए भी नामर्द है, जो दिल में क़ाइम रूह को नहीं पहचानता। रूह ही बशक्ले मर्दे आदमी, ख़ुदपुरनूर, आ'ला, पुरलुत्फ़ और ग़ैरमर्ई है। उसे हासिल करने की कोशिश ही मर्दानगी है। अर्जुन! तू नामर्दी का हामिल न बन। यह तेरे लिए वाजिब नहीं है। ऐ आ'ला रियाज़तकश! दिल की हक़ीर कमज़ोरी को तर्क कर जंग के लिए खड़ा हो। रग़्बत को तर्क कर। यह मह्ज़ दिल की कमज़ोरी है। इस पर अर्जुन ने तीसरा सवाल खड़ा किया-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला)-

कथं भीष्ममहं संख्ये द्रोणं च मधुसूदन।
इषुभिः प्रति योत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन।।४।।

गुरूर को ख़त्म करने वाले मधुसूदन! मैं मैदाने जंग में जद भीष्म और अल्लामः द्रोण से किस तरह तीरों से जंग करूँगा, क्योंकि अरिसूदन! वे दोनों ही क़ाबिले एहतिराम हैं।

शिर्क ही द्रोण है। मा'बूद अलग हैं, हम अलग हैं- शिर्क का यह एहसास ही हुसूल की तर्ग़ीब का इब्तिदाई मख़्रज़ है। यही अल्लामः मख़्रज़ द्रोण की सक़ालत है। शक ही भीष्म है, जब तक शक है तभी तक बच्चे, ख़ानदान, रिश्तःदार सभी अपने लगते हैं। अपना लगने में शक ही ज़रीअः है। रूह इन्हीं को क़ाबिले-एहतिराम मानकर इनके साथ रहती है कि ये पिदर है, अज्दाद है, ख़ानदान के मुअल्लिम हैं, वग़ैरः। रियाज़त के तक्मीली दौर में **'गुरु न चेला, पुरुष अकेला'** (न कोई उस्ताद है न शागिर्द, सिर्फ़ तन्हा इंसान है)।

न बन्धुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्यः।
चिदानन्दरूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम्।। (निर्वाणषटक, ५)

जब क़ल्बी रुज़्हान उस आ'ला मसर्रत में मह्व हो जाता है, तब न मुर्शिद इल्म देने वाला और न शागिर्द लेने वाला ही रह जाता है। यही मावराई की हालत है। मुर्शिद की सक़ालत हासिल कर लेने पर सक़ालत एक जैसी हो जाती है। श्रीकृष्ण कहते हैं- ''अर्जुन! तू मुझमें क़याम करेगा।'' जैसे श्रीकृष्ण वैसा ही अर्जुन, और ठीक वैसा ही हासिल करनेवाला अज़ीम इंसान हो जाता है। ऐसी हालत में मुर्शिद की ज़ात भी तह्लील हो जाती है। सक़ालत दिल में रवाँ हो जाती है। अर्जुन मुर्शिद के ओह्दः की ढाल बनाकर इस जंग में लगने से कतराना चाहता है। वह कहता है-

गुरूनहत्वा हि महानुभावान्
श्रेयो भोक्तुं भैक्ष्यमपीह लोके।
हत्वार्थकामांस्तु गुरूनिहैव
भुञ्जीय भोगान्रुधिरप्रदिग्धान्।।५।।

इन क़ाबिले ता'ज़ीम मुअल्लिम हज़्रात को न मारकर में इस दुन्या में भीक का दानः भी बेह्तर समझता हूँ। यहाँ भीक का मत्लब पेट पालने के लिए भीक माँगना नहीं, बल्कि सालेह इंसानों की छोटी-मोटी ख़िद्मत के बदले उनसे भलाई की इल्तिजा

ही भीक है। **'अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्' (तैत्तिरीय, ३/२/१)** अनाज वाहिद पर्वर्दगार है जिसे हासिल करके रूह हमेशः के लिए आसूदः हो जाती है। कभी ग़ैरआसूदः नहीं रहती। हम अज़ीम इंसानों की ख़िद्मत और उनसे इल्तिजा के ज़रीअः धीरे-धीरे ख़ुदाई नोशाब को हासिल करें, लेकिन यह ख़ानदान न छूटे, यही अर्जुन के भीक के अनाज की ख़्वाहिश है। दुन्या में ज़ियादःतर लोग ऐसा ही करते हैं। वे चाहते हैं कि ख़ानदानी महब्बत के तअल्लुक़ात को न छोड़ना पड़े और नजात भी रफ़्तः-रफ़्तः हासिल हो जाय। लेकिन राहरौ के लिए, जिसके तअस्सुरात इनके ऊपर हैं, जिसमें टक्कर लेने की सलाहीयत है, जिनके बरताव के तौर-तरीक़े में क्षत्रीपन की रवानी है, उसके लिए इस भीक के अजनास का उसूल नहीं है। ख़ुद न करके, इल्तिजा करना भीक का अनाज है। गौतम बुद्ध ने भी 'मज्झिम निकाय' के 'धम्मदायाद सुत्त' (१/१/३) में इस भीक के अनाज को 'आमिष-दायाद' (गोश्त की भीक) कहकर क़ाबिले नफ़्रत माना है, जबकि जिस्म को ज़िंदः रखने के ख़याल से सभी भिकारी थे।

इन क़ाबिले एहतिराम लोगों को मारकर मिलेगा क्या? इस दुन्या में ख़ूँआलूदः दौलत और ख़्वाहिशात के ऐशो-इश्रत ही तो लुत्फ़ उठाने के लिए मिलेंगी। अर्जुन शायद सोचता था कि यादे रब से माद्दिवाती सुखों की ता'दाद में इज़ाफ़ः होगा। इतनी जिद्दोजहद के बा'द भी इस जिस्म की मुक़व्वी दौलत और ख़्वाहिश के ऐश ही तो मिलेंगे। वह फ़िर दलील पेश करता है-

न चैतद्विद्मः कतरन्नो गरीयो
यद्वा जयेम यदि वा नो जयेयुः।
यानेव हत्वा न जिजीविषाम-
स्तेऽवस्थिताः प्रमुखे धार्तराष्ट्राः।।६।।

यह भी तय नहीं है कि वह ऐश मिलेगा ही यह भी हम नहीं जानते कि हमारे लिए क्या करना बेह्तर है; क्योंकि जो कुछ हमने कहा, वह जहालत साबित हो गया। यह भी मालूम नहीं है कि हम जीतेंगे ख़्वाह उन्हें ही फ़त्ह हासिल होगी। जिन्हें मारकर हम जीना भी नहीं चाहते, वे ही धृतराष्ट्र के औलाद हमारे सामने खड़े हैं। जहालत की तम्सील धृतराष्ट्र से पैदा फ़िरेफ़्तगी वग़ैरः के साथ-साथ अपने लोगों की जमाअतें मिट ही जायेंगी तब हम जीतकर ही क्या करेंगे? अर्जुन फिर सोचता है कि जो कुछ हमने कहा, शायद यह भी जहालत हो, लिहाज़ा गुज़ारिश करता है-

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः
पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे
शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्।।७।।

बख़ीली (बुज़दिली) की बुराइयों के ज़ेरे असर बरबाद फ़ित्रत वाला, दीन के बारे में हर तरह से फ़िरेफ़्तः क़ल्ब वाला मैं आपसे अर्ज़ करता हूँ। जो कुछ तयशुदा आ'ला इफ़ादी हो, वह वसीलः मुझे बताइए! मैं आपका ख़ास-उल-ख़ास शागिर्द हूँ, आपकी पनाह में हूँ, मुझे सँभालिए। सिर्फ़ नसीहत न दीजिए, बल्कि जहाँ मेरे क़दम मुतज़लज़िल हों वहाँ सँभालिए। 'लाद दे लदाय दे और लदानेवाला साथ चले।' गर कहीं गट्ठर गिर पड़ा, तब कौन लदवायेगा? ऐसी ही सुपुर्दगी अर्जुन की है।

यहाँ अर्जुन ने ख़ुद को पूरी तरह सुपुर्द कर दिया। अभी तक वह श्रीकृष्ण को हमवज़्न ही समझता था, सिर्फ़ यही नहीं मुख़्तलिफ़ उलूम में अपने को कुछ आगे ही मानता था। यहाँ उसने अपनी लगाम श्रीकृष्ण को हक़ीक़तन सुपुर्द कर दी। मुर्शिद आख़िरी मंजिल तक दिल में मक़ाम कर रियाज़ती के साथ चलते हैं। अगर वे साथ न रहें, तो रियाज़ती को मंज़िल न मिले। किसी दोशीजः के परिवार वाले जिस तरह शादी-निकाह तक उसको एहतियात की नसीहत देते हुए सँभाल ले जाते हैं, ठीक उसी तरह मुर्शिद अपने शागिर्द की बातिन से रथवान बनकर उसे दुन्या के पेचोख़म से बचाकर मंज़िल तक पहुँचा देते हैं। अर्जुन गुज़ारिश करता है कि बन्दःपर्वर! एक बात और है-

न हि प्रपश्यामि ममापनुद्याद्
यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम्।
अवाप्य भूमावसपत्नमृद्धं
राज्यं सुराणामपि चाधिपत्यम्।।८।।

ज़मीन पर बिना किसी झंझट के मालोज़र से भरे इक़्तिदार को और देवताओं के सरताज इन्द्र के मक़ाम को पाकर भी मैं उस तरीक़ः को नहीं देखता, जो मेरी हवास को यह सुखानेवाली ख़लिश को दूर कर सके। जब ख़लिश बनी ही रही, तो सब लेकर ही मैं क्या करूँगा? अगर इतना ही मिलना है, तो मुआफ़ करें। अर्जुन ने सोचा, अब इसके आगे बतायेंगे भी क्या?

संजय उवाच (संजय बोला)-

एवमुक्त्वा हृषीकेशं गुडाकेशः परन्तप।
न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीं बभूव ह।।९।।

संजय बोला- ऐ शाह! फ़िरेफ़्तगी की तम्सील स्याह रात पर फ़त्ह हासिल करने वाले अर्जुन ने दिल के अलीम श्रीकृष्ण से यह कहकर कि 'गोविन्द! मै जंग नहीं करूँगा।' ख़ामोश हो गया। अभी तक अर्जुन की नज़र पुरान के मुतअल्लिक़ है, जिसमें मज़्हबी मा'मूलात के साथ ऐशो-इश्रत को हासिल करने का उसूल है, जिसमें जन्नत ही सब कुछ मानी जाती है- जिस पर श्रीकृष्ण रोशनी डालेंगे कि यह नज़रीयः भी ग़लत है।

तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत।
सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः।।१०।।

उसके बा'द ऐ शाह! आलिमुलकुलूब जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने दोनों तरफ़ की फ़ौजों के बीच में उस ग़मज़दः अर्जुन से हँसते हुए यह बात कही-

श्रीभगवानुवाच (श्रीभगवान बोले)-

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे।
गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः।।११।।

अर्जुन! तू ऐसे लोगों के लिए ग़मज़दः है जो ग़म करने के क़ाबिल नहीं हैं जिनके लिए ग़म किया जाय और आलिमों जैसी बातें करता है; लेकिन अक़्ल से बह्वर आलिमों- जिनकी जान चली गयी है, उनके लिए और जिनके अन्दर जान बाक़ी है, उनके लिए भी ग़म नहीं करते; क्योंकि एक दिन वे भी फ़ना हो जायेंगे। तू आलिमों जैसी मह्ज़ बातें करता है, दरहक़ीक़त आलिम है नहीं, क्योंकि-

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः।
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम्।।१२।।

ऐसा भी नहीं है कि मैं या'नी मुर्शिदेकामिल किसी दौर में नहीं था ख़्वाह तू आशिक़ (अनुरागी) अह्ल या **'जनाधिपाः'**- शाह लोग या'नी मलकाते रदीयः वाली ख़स्लत में पाया जाने वाला गुरू नहीं था और न ऐसा ही है कि आगे हम सब नहीं रहेंगे। मुर्शिद कामिल हमेशः रहता है, आशिक़ हमेशः रहते हैं। यहाँ जोग के मालिक ने जोग की अबदीयत पर रोशनी डालते हुए मुस्तक़्बिल में भी उसकी मौजूदगी

पर ज़ोर दिया। मरने वालों के लिए ग़म न करने की वज्ह बताते हुए उन्होंने फ़र्माया-

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति।।१३।।

जैसी ज़ीरूह के इस जिस्म में बचपना, जवानी और ज़ईफ़ी की हालत होती है वैसे ही मुख़्तलिफ़ अज्साम के हुसूल में साबित क़दम इंसान फिरेफ़्तः नहीं होता है। कभी आप बच्चे थे, धीरे-धीरे जवान हुए, तब आप फ़ना तो नहीं हो गये? फिर ज़ईफ़ हुए। इंसान एक ही है; उसी तरह ज़रा-सा भी फ़र्क़ नये जिस्म के हुसूल पर नहीं पड़ता। जिस्म का यह तग़य्युर तब तक चलेगा जब तक तग़य्युर से मावरा चीज़ नहीं हासिल हो जाती।

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः।
आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत।।१४।।

कुन्ती के वलद! सुख-दुःख, सर्दी और गर्मी को अता करने वाले हवास और उनकी मौजूआत के इत्तिफ़ाक़ तो हमेशः रहने वाले नहीं हैं, वक़्ती हैं। लिहाज़ा भरत के ख़ानदान वाले अर्जुन! तू इसको तर्क कर! अर्जुन हवास और उसकी मौजूआत के इतिफ़ाक़ के ज़रीअः हासिल होने वाले सुख की याद करके ही बेक़रार था। ख़ानदानी फ़र्ज़, ख़ानदानी मुअल्लिमों की परस्तीदनी वग़ैरः हवास के लगाव के तहत हैं। ये वक़्ती हैं, झूठे हैं, फ़ानी हैं। मौजूआत का इत्तिफ़ाक़ न हमेशः मिलेगा और न हमेशः हवास में हासिल करने की ताक़त ही रहेगी। लिहाज़ा अर्जुन! तू इनको तर्क कर, बर्दाश्त कर! क्यों? क्या हिमालय की जंग थी जो अर्जुन सर्दी बर्दाश्त करता? या क्या यह रेगिस्तान की जंग है जहाँ अर्जुन गर्मी बर्दाश्त करें? 'कुरुक्षेत्र' जैसा कि लोग आमतौर पर बाहर बताते हैं, मो'तदिल जगह है। तमाम सब अठारह दिन तो जंग हुई, इतने में कहाँ सर्दी-गर्मी बीत गयी? दरहक़ीक़त सर्दी-गर्मी, तक्लीफ़-आराम, इज़्ज़त, ज़िल्लत का बरदाश्त करना एक जोगी पर मुन्हसिर करता है। यह दिल की दुन्या की जंग की अक्कासी है, इस ख़ारिजी जंग के लिए गीता नहीं कहती। यह मैदान और आलिमे-मैदान की जंग है जिसमें दुन्यवी दौलत का पूरी तरह से ख़ातिमः कर मा'बूद में मक़ाम दिलाकर रूहानी दौलत भी ख़ामोश हो जाती है। जब उयूब है ही नहीं तो हमज़ात ख़साइल किस पर हम्लः करें। लिहाज़ा तक्मील के साथ ही वे भी ख़ामोश हो जाती हैं, इससे पहले नहीं। गीता बातिनी दुन्या की जंग की अक्कासी है। इस ईसार से हासिल क्या होगा? इससे फाइदः क्या है? इस पर श्रीकृष्ण कहते हैं-

यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ।
समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते।।१५।।

क्योंकि ऐ मर्दे आदमी! आराम और तकलीफ को यकसाँ समझने वाले जिस साबित क़दम इंसान को हवास और मौजूआत के इत्तिफ़ाक़ ग़मज़दः नहीं कर पाते, वह मौत से मावरा लाफ़ानी उंसुर को हासिल करने की सलाहीयत वाला हो जाता है। यहाँ श्रीकृष्ण ने एक हुसूलयाबी 'उंसुरे लाफ़ानी' का जिक्र किया। अर्जुन सोचता था कि जंग के समर में जन्नत नसीब होगी या ज़मीन, लेकिन श्रीकृष्ण कहते हैं कि न जन्नत मिलेगी न ज़मीन, बल्कि जावेदानी मिलेगी। जावेदानी क्या है?

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः।।१६।।

अर्जुन! बातिल का वुजूद नहीं है, वह है ही नहीं, उसे रोका नहीं जा सकता; और हक़ की तीनों तसल्सुले वक़्त में कमी नहीं है, उसे मिटाया नहीं जा सकता। अर्जुन ने सवाल किया- क्या बन्दःपर्वर होने की हैसियत से आप कहते हैं? श्रीकृष्ण ने बताया- मैं तो कहता ही हूँ, इन दोनों का यह फ़र्क़ हमारे साथ-साथ हक़शनास इंसानों के ज़रीअ भी देखा गया है। श्रीकृष्ण ने उसी हक़ीक़त को दुहराया जिसे मुबस्सिर इंसानों ने कभी देख लिया था। श्रीकृष्ण भी एक हक़शनास अज़ीम इंसान थे। उंसुरे आ'ला रूहेमुत्लक़ का बदीही दीदार करके उस उस मक़ाम पर फाइज़ इंसान हक़शनास कहलाते हैं। हक़ और बातिल है क्या? इस पर फ़र्माते हैं-

अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम्।
विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति।।१७।।

लाफ़ानी तो वह है, जिससे यह सारी दुन्या जारी-वो-सारी है। इस **'अव्ययस्य'**- लाफ़ानी को फ़ना करने की ताक़त किसी में नहीं है, लेकिन इस 'लाफ़ानी', 'जावेदानी' का नाम क्या है? वह है कौन?

अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः।
अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत।।१८।।

लाफ़ानी, लासुबूत, हमेशः मौजूद रहने वाली रूह के ये सभी अज्साम फ़ानी कहे गये हैं। लिहाज़ा भरत के ख़ानदान वाले अर्जुन! तू जंग कर। रूह ही नोशाब है। रूह ही लफ़ानी है, जो तीनों तसल्सुले ज़मानः में फ़ना नहीं होती। रूह ही हक़

है। जिस्म फ़ानी है, यही बातिल है, जिसका तीनों तसल्सुले-ज़मान में वुजूद नहीं है।

'जिस्म फ़ानी है, लिहाज़ा तू जंग कर'-इस हुक्म से यह ज़ाहिर नहीं होता कि अर्जुन सिर्फ़ कौरवों को मारे। पाण्डवों के तरफ़दारों में भी तो अज्साम ही खड़े थे, क्या पाण्डवों के अज्साम लाफ़ानी थे? अगर जिस्म फ़ानी है तो श्रीकृष्ण किसकी हिफ़ाज़त में खड़े थे? क्या अर्जुन कोई जिस्म वाला था? जिस्म जो बातिल है, जिसका वुजूद नहीं है, जिसे रोका नहीं जा सकता, क्या श्रीकृष्ण उस जिस्म की हिफ़ाज़त में खड़े हैं? अगर ऐसा है तो वे भी नासमझ और जाहिल हैं; क्योंकि आगे श्रीकृष्ण ख़ुद कहते हैं कि जो सिर्फ़ जिस्म के लिए खाना पकाता है, मेहनत करता है (बाब ३/१३), वह नासमझ और जाहिल है। वह ताउम्र गुनाह करनेवाला इंसान बेकार ही जीता है। आखिरकार अर्जुन कौन था?

दरहक़ीक़त इश्क़ ही अर्जुन है। आशिक़ के लिए मा'बूद हमेशः रथबान बनकर साथ में रहते हैं, मुहिब की तरह उसकी रहनुमाई करते हैं। आप जिस्म नहीं हैं। जिस्म तो लिबास है, रहने का मकान है। उसमें रहने वाला उंसीयत से भरी हुई रूह है। माद्दी जंग में मारने-काटने से अज्साम का ख़ातिमः नहीं होता। यह जिस्म छूटेगा तो रूह दूसरे जिस्म में दाख़िल हो जायेगी। इसी के मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण कह चुके हैं कि जिस तरह बचपन से जवानी या ज़ईफ़ी आती है, उसी तरह जिस्म का बदलाव भी हासिल होता है। जिस्म को काटेंगे तो ज़ीरूह नया लिबास बदल लेगी।

जिस्म अपने तअस्सुरात पर मुन्हसिर है और तअस्सुर की बुन्याद मन है। **'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।'** मन का पूरी तरह क़ाबू में होना, अटल साबित क़दम होना और आख़िरी तअस्सुर की तह्लील एक ही बात है। तअस्सुरात की बुन्याद का टूट जाना ही असाम का ख़ातिमः है। इसे तोड़ने के लिए आपको इबादत करनी होगी, जिसे श्रीकृष्ण 'अमल' या 'बेग़रज़ अमली जोग' का नाम दिया है। श्रीकृष्ण ने जगह-जगह पर अर्जुन को जंग की तर्ग़ीब दी, लेकिन एक भी श्लोक ऐसा नहीं है जो माद्दी जंग या मारकाट की हिमायत करता हो। यह जंग हमज़ात और ग़ैरनस्ली ख़साइल की है, दिल की दुन्या में है।

य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम्।
उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते।।१९।।

जो इस रूह को मारने वाला मानता है और जो इस रूह को मरी हुई समझता है, वे दोनों ही रूह की हक़ीक़त को नहीं जानते, क्योंकि यह रूह न तो मरती है

और न मारी जाती है। फ़िर इसी हक़ीक़त पर ज़ोर देते हैं-

न जायते म्रियते वा कदाचि-
न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।२०।।

यह रूह किसी दौर में न तो पैदा होती है और न फ़ना होती है, क्योंकि यह फ़क़त लिबास ही तो बदलती है। यह रूह होकर और दूसरा कुछ होने वाली नहीं है; क्योंकि यह अबदी है, हमेशः रहनेवाली है, दाइमी और क़दीमी है। जिस्म के ख़त्म होने पर भी इसका ख़ातिमः नहीं होता। रूह ही हक़ है, रूह ही क़दीमी है, रूह ही दाइमी और अबदी है। आप कौन हैं? अबदी दीन के मुक़ल्लिद। अबदी कौन है? रूह। आप रूह के पैरो हैं। रूह, रूहेमुत्लक़ और ख़ुदा एक दूसरे के मुतरादिफ़ हैं। आप कौन हैं? दाइमी दीन के परस्तार। दाइमी कौन है? रूह। या'नी हम और आप रूह के परस्तार हैं। अगर आप रूहानी राह को नहीं जानते तो आपके पास दाइमी और अबदी नाम की कोई चीज़ नहीं है। उसके लिए आप आहें भरते हैं, तो उम्मीदवार ज़रूर हैं; लेकिन अबदी दीनवाले नहीं हैं, अबदी दीन के नाम पर किसी बदरिवाज के शिकार हैं।

अपने मुल्क में या ग़ैरमुल्क में हर इंसान में रूह एक ही जैसी है। इस वास्ते सारी दुन्या में कहीं भी कोई रूह की हालत दिलानेवाला तरीक़ः जानता है और उस पर चलने के लिए कोशिश में लगा है, तो वह दाइमी दीन वाला है; चाहे वह अपने को ईसाई, मुसल्मान, यहूदी या कुछ भी क्यों न कह ले।

वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम्।
कथं स पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम्।।२१।।

ख़ाकी जिस्म को रथ बनाकर ज़ाते-मुत्लक़ की तम्सील मंज़िलेमक़्सूद पर बेज़रर निशाना लगानेवाला पृथा का वलद अर्जुन! जो इंसान इस रूह को लाफ़ानी, अबदी, दाइमी और ग़ैरमर्ई जानता है, वह इंसान कैसे किसी को हलाक करवाता है और कैसे किसी को हलाक करता है? लाफ़ानी का फ़ना होना ग़ैरमुम्किन है। जो दाइमी है वह जनम नहीं लेता। लिहाज़ा जिस्म के लिए ग़म नहीं करना चाहिए। इसी को मिसाल देकर साफ़ करते हैं-

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि संयाति नवानि देही।।२२।।

जैसे इंसान **'जीर्णानि वासांसि'**- बोसीदः पुराने लिबासों को छोड़कर नये लिबासों को पहनता है, ठीक वैसे ही यह ज़ीरूह पुराने अज्साम को तर्ककर दूसरे नये अज्साम में दाख़िल हो जाती है। जिस्म के बोसीदः होने पर ही नया जिस्म क़बूल करना है तो बच्चे क्यों मर जाते हैं? यह लिबास तो और उम्दः होना चाहिए। दरहक़ीक़त यह जिस्म अपने तअस्सुरात पर मुन्हसिर है। जब तअस्सुरात बोसीदः होते हैं तो जिस्म से वास्तः टूट जाता है। अगर तअस्सुर दो दिन का है तो दूसरे दिन ही जिस्म बोसीदः हो गया। इसके बा'द इंसान एक साँस भी ज़ियादः नहीं जीता। तअस्सुर ही जिस्म है। रूह तअस्सुरात के मुताबिक़ नया जिस्म क़बूल कर लेती है। **'अथ खलु क्रतुमयः पुरुषो यथा क्रतुरस्मिँल्लोके पुरुषो भवति तथेतः प्रेत्य भवति।' (छान्दोग्योपनिषद्, ३/१४)**- या'नी यह इंसान यक़ीनी तौर पर क़रारदाद है। इस दुन्या में इंसान जैसा मुस्तक़िल इरादः वाला होता है, वैसा ही यहाँ से मरकर जाने पर होता है। अपने अज्म से बनाये हुए अज्साम में इंसान जनम लेता है। इस तरह मौत मह्ज़ जिस्म का बदलाव है, रूह नहीं मरती। फिर इसकी जाविदानी और अबदीयत पर ज़ोर देते हैं-

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।।२३।।

अर्जुन! इस रूह को अस्लिहः वग़ैरः नहीं काट सकते। आग इसे जला नहीं सकती। पानी इसे नमनाक नहीं कर सकता और न हवा इसे सुखा ही सकती है।

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः।।२४।।

यह रूह नाक़ाबिले-तक़्सीम है- जिसमें सुराख़ नहीं किया जा सकता। यह नाक़ाबिले आतशज़नी है- इसे जलाया नहीं जा सकता। यह नाक़ाबिले नमनाक है- इसे गीला नहीं किया जा सकता। आस्मान इसे अपने में जज़्ब नहीं कर सकता। यह रूह बिलाशुब्हः नाक़ाबिले-ख़ुश्क, आलमगीर, अटल, मुस्तक़िल रहने वाली और अबदी है।

अर्जुन ने कहा था कि ख़ानदानी फ़र्ज़ दाइमी है। ऐसी जंग करने से दाइमी दीन मिट जायेगा लेकिन श्रीकृष्ण ने इसे जहालत माना और रूह को ही दाइमी बताया। आप कौन हैं? दाइमी दीन के पैरो। दाइमी कौन है? रूह। अगर आप रूह तक की दूरी तय करने वाले तरीक़-ए-ख़ास से वाक़िफ़ नहीं हैं तो आप दाइमी दीन नहीं जानते। इसका बुरा नतीजः फ़िर्क़ःपरस्ती में फँसे मज़्हबी बुज़दिल लोगों को भोगना पड़ रहा है। कुरूनेवुस्ता भारत में ग़ैरमुल्क से आने वाले मुसल्मान मह्ज़ बारह हजार थे, आज तक़्रीबन अट्ठाइस करोड़ से भी ज़ियादः हैं। बारह हज़ार से बढ़कर लाखों की ता'दाद में हो जाते, जियादः से जियादः तक़्रीबन एक करोड़ हो जाते; और कितने हो जाते? ये अट्ठाइस करोड़ से भी आगे बढ़ रहे हैं। सब हिन्दू ही तो हैं, आपके सगे भाई हैं जो छूने और खाने से बरबाद हो गये। वे बरबाद नहीं हुए वरन् उनका दाइमी, नाक़ाबिले तब्दील दीन बरबाद हो गया। जब माद्दियाती दाइरः (मैटर क्षेत्र) में पैदा होने वाली कोई चीज़ इस अबदी को छू नहीं सकती, तो छूने-खाने से दाइमी दीन कैसे बरबाद हो सकता है? यह दीन नहीं, एक बुरी रिवायत के हालात थे जिससे भारत में फ़िर्कःपरस्ती पर मुन्हसिर दिलों की दूरी बढ़ी, मुल्क का बँटवारा हुआ और क़ौमी इत्तिहाद का आज भी मस्अलः सामने खड़ा है।

इन बुरे रिवाजों के वाक़िआत तवारीख़ में भरे पड़े हैं। हमीरपुर ज़िले में पचास-साठ अह्ले ख़ानदानी क्षत्री (राजपूत ठाकुर) थे, आज वे सब मुसल्मान हैं। न उन पर तोप का हम्लः हुआ न तलवार का। हुआ क्या? नीमशब में दो-एक मौलवी, उस गाँव में जहाँ मह्ज़ एक ही कुँआ था, के करीब छिपकर बैठ गये कि मज़्हबी काम को अंजाम देने वाला बर्हमन पुरोहित सबसे पहले यहाँ गुस्ल करने आयेगा। जब वह आये तो उन्हें पकड़ लिया, उनका मुँह बंद कर दिया। उनके सामने उन्होंने पानी निकाला, मुँह लगाकर आबनोश किया और बचा हुआ पानी कुँए में डाल दिया, रोटी का एक टुकड़ा भी कुँए में डाल दिया। पंडितजी देखते ही रह गये, लाचार थे। इसके बा'द पंडितजी को भी साथ लेकर वे चले गये। अपने घर में उन्हें कैद कर दिया।

दूसरे दिन मौलवी साहिबान ने दस्तबस्तः पंडितजी से खाना खाने की गुज़ारिश की तो पंडित जी नाराज होकर बोले, ''अरे, तुम मुसल्मान हो, मैं बर्हमन, भला कैसे खा सकता हूँ?'' उन्होंने कहा- ''महाराज! हमें आप जैसे समझदार लोगों की सख़्त ज़रूरत है, मुआफ़ करें।'' पण्डित जी को छोड़ दिया गया।

पंडित जी अपने गाँव वापस आये। देखा, लोग कुएँ का इस्ते'माल पहले की ही तरह कर रहे थे। वे भूख हड़ताल करने लगे। लोगों ने वजह पूछी तो बोले- ''मुसल्मान इस कुँए के चबूतरा पर चढ़ गये थे। मेरे सामने उन्होंने इस कुँए के पानी को जूठा किया और कुएँ में रोटी का टुकड़ा भी डाल दिया।'' गाँव के लोग हैरान रह गये, पूछा ''अब क्या होगा?'' पंडित जी ने बताया, ''अब क्या! दीन तो बरबाद हो गया।''

उस वक़्त के लोग ता'लीमयाफ़्तः नहीं थे। औरतों और छोटी ज़ात वालों से ता'लीम हासिल करने का हक़ न जाने कब से छीन लिया गया था। बनिया धन-दौलत पैदा करना ही अपना फ़र्ज़ मान बैठे थे। क्षत्री हज़्रात क़सीदःख़्वाँ लोगों की क़सीदःख़्वानी में खोये थे कि राज़िक़ की तलवार चमकी तो बिजली कौंदने लगी, दिल्ली का तख़्त डगमगाने लगा। इज़्ज़त वैसे ही हासिल है, तो पढ़ें क्यों? दीन से उन्हें क्या लेना-देना? दीन सिर्फ़ बर्हमनों की चीज़ बनकर रह गया था। वे ही दीनी शराए' के मुसन्निफ़, वे ही उसके शर्हनवीस और वे ही उसके हक़ व बातिल के फ़ैसलाकुन थे। जबकि ज़मान-ए-क़दीम में औरतों, छोटी ज़ातों, बनियों, क्षत्रियों और बर्हमनों को, सबको वेद पढ़ने का हक़ हासिल था। हर एक तब्क़ः के आरिफ़ों ने वेद से मुत्अल्लिक़ जुम्लों (मंत्रों) की तस्नीफ़ की है; दीनी मुनाज़रः के फ़ैसलों में हिस्सः लिया है। ज़मान-ए-क़दीम के शाहों ने दीन के नाम पर रियाकारी फ़ैलाने वालों को सज़ा दी, दीनदारों का एहतिराम किया था।

लेकिन कुरूनेवुस्तामुद्दती भारत में दाइमी दीन का हक़ीक़ी इल्म न होने से मज़्कूरएबाला गाँव के रहने वाले भेड़ों की तरह एक तरफ़ दुबकते गये कि दीन बरबाद हो गया। कई लोगों ने इन ग़ैरपसंदीदः अल्फ़ाज़ को सुनकर ख़ुदकुशी कर ली, लेकिन सब कहाँ तक जान गवाँ देते। मुसल्सल अक़ीदः के बावुजूद भी लाचार होकर दूसरा हल खोजना पड़ा। आज भी वे बाँस गाड़कर, मूसल रखकर हिन्दुओं की तरह शादी करते हैं; बा'द में एक मौलवी निकाह पढ़ाकर चला जाता है। सब-के-सब हिन्दू ख़ालिस थे, सब-के-सब मुसल्मान बन गये।

हुआ क्या था? आबनोश किया था, नावाक़िफ़ी में मुसलमानों का छुआ खा लिया था, लिहाज़ा दीन बरबाद हो गया। दीन तो हो गया छुई-मुई। यह छुई-मुई (लाजवन्ती) एक पौदा होता है। आप छू दें तो उसकी पत्तियाँ सिमट जाती हैं, और हाथ हटाते ही फिर खिल उठती हैं। यह पौदा हाथ हटाने पर पहले की हालत में हो

जाता है; लेकिन दीन ऐसा कुम्हलाया कि आगे कभी शिगुफ़्तः नहीं होगा। वे मर गये, हमेशः के लिए उनके राम, कृष्ण और भगवान मर गये। जो दाइमी थे, वे मर गये। दरहक़ीक़त वह दाइमी के नाम पर कोई बदरविश थी जिसे लोग दीन मान बैठे थे।

दीन की पनाह में हम क्यों जाते हैं? क्योंकि हम फ़ानी (मरने-जीने वाले) हैं और दीन कोई ठोस चीज़ है जिसकी पनाह में जाकर हम भी लाफ़ानी हो जायँ। हम तो मारने से मरेंगे और यह दीन सिर्फ़ छूने और खाने से मर जायेगा, तो दीन हमारी क्या हिफ़ाज़त करेगा? दीन तो आपकी हिफ़ाज़त करता है, आपसे ताक़तवर है। आप तलवार से मरेंगे और दीन? वह छूने से ख़त्म हो गया। कैसा है आपका दीन? बुरे रिवाज ख़त्म होते हैं, न कि अबदी।

अबदी तो ऐसी ठोस चीज़ है जिसे अस्लिहः नहीं काटते, आग जला नहीं सकती, पानी इसे नमनाक नहीं कर सकता है। खाना-पीना तो दूर, दुन्या में पैदा होने वाली कोई चीज़ उसे छू भी नहीं सकती, तो वह अबदी दीन ख़त्म कैसे हो गया?

ऐसे ही कुछ बदरिवाज अर्जुन के वक़्त में भी थे। अर्जुन भी उनका शिकार था। उसने आहोज़ारी करते हुए गिड़गिड़ाकर कहा कि ख़ानदानी फ़र्ज़ अबदी है। जंग से अबदी दीन बरबाद हो जायेगा। ख़ानदानी फ़र्ज़ ख़त्म होने से हम हमेशः के लिए जहन्नुम में चले जायेंगे लेकिन श्रीकृष्ण ने कहा- ''तुझमें यह लाइल्मी कहाँ से पैदा हो गई?'' इससे साबित है कि वह कोई बदरिवाज था, तभी तो श्रीकृष्ण ने उसका हल पेश किया और बताया कि रूह ही अबदी है। अगर आप रूहानी राह को नहीं जानते तो अबदी दीन में आपका अभी तक दाखिल नहीं हुआ है।

जब यह अबदी, दाइमी रूह सबके अन्दर मौजूद हैं तो तलाश किसकी की जाय? इस पर श्रीकृष्ण कहते हैं-

अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते।
तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि।।२५।।

यह रूह ग़ैरमर्ई या'नी हवास का मौजूअ नहीं है। हवास के ज़रीअः इसे समझा नहीं जा सकता। जब तक हवास और मौजूआत का तअल्लुक़ है तब तक रूह तो है, लेकिन उसे समझा नहीं जा सकता। वह बईदुलक़ियास है। जब तक क़ल्ब और कल्ब की लहर है, तब तक वह दाइमी है तो, लेकिन हमारे दीदार, इस्ते'माल और दाख़िलः के लिए नहीं है। लिहाज़ा मन पर क़ाबू करें।

पहले श्रीकृष्ण बता आये हैं कि बातिल का बुजूद नहीं है और हक़ की तीनों दौर में कमी नहीं है। वह हक़ है रूह। रूह ही नाक़ाबिले तब्दील, दाइमी, अबदी और ग़ैरमर्ई है। मुबस्सिरीन ने रूह को इन ख़ास सिफ़ात से मुज़ैयन देखा। न दस ज़बानों के जानने वालों ने देखा, न किसी दौलतमन्द ने देखा, बल्कि मुबस्सिरीन ने देखा। श्रीकृष्ण ने आगे बताया कि उंसुर है ख़ुदा। मन पर क़ाबू रखने के वक़्त में रियाज़ती उसका दीदार और उसमें दाख़िलः पाता है। वक़्ते हुसूल में मा'बूद मिलते हैं और दूसरे ही पल वह अपनी रूह को ख़ुदाई सिफ़ात से आरास्तः पाता है। वह देखता है कि रूह ही हक़, अबदी और मुकम्मल है। यह रूह बईदुलक़ियास है। यह बेऐब या'नी नाक़ाबिले तब्दील कही जाती है। लिहाज़ा अर्जुन! रूह को ऐसा समझकर तू ग़म करने लाइक़ नहीं है।

अब श्रीकृष्ण अर्जुन के ख़यालात में तज़ाद दिखाते हैं, जो आम दलील है-

अथ चैनं नित्यजातं नित्यं वा मन्यसे मृतम्।
तथापि त्वं महाबाहो नैवं शोचितुमर्हसि।।२६।।

अगर तू इसे हमेशः जनम लेने वाली और हमेशः मरने वाली समझे तब भी तुझे ग़मज़दः नहीं होना चाहिए; क्योंकि-

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि।।२७।।

ऐसा समझ लेने पर भी जनम लेने वाले की यक़ीनी मौत और मरने वाले की यक़ीनी पैदाइश साबित होती है, इस वज्ह से भी तर्कीब से ख़ाली तू इस मामले में ग़म करने क़ाबिल नहीं है। जिसका कोई इलाज नहीं, उसके लिए ग़मज़द होना एक दूसरी तक्लीफ़ को दावत देना है।

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत।
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना।।२८।।

अर्जुन! सभी जानदार पैदा होने से पहले बिला जिस्म वाले और मरने के बा'द भी बिला जिस्मवाले हैं। पैदाइश के पहले और बा'द भी दिखायी नहीं पड़ते। सिर्फ़ पैदाइश और मौत के बीच में ही जिस्म हासिल किये हुए दिखायी देते हैं। लिहाज़ा इस तब्दीली के लिए बेकार की फ़िक्र क्यों करता है? इस रूह को देखता कौन है? इस पर इर्शाद फ़र्माते हैं।

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेन-
माश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः।
आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति
श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित्।।२९।।

पहले श्रीकृष्ण ने कहा था कि इस रूह को मुबस्सिरीन ने देखा है, अब उंसुरबीनी की कमयाबी पर रोशनी डालते हैं कि कोई नादिर अज़ीम इंसान ही इस रूह को तअज्जुब की नज़र से देखता है। सुनता नहीं, ज़ाहिर तौर पर देखता है और ठीक उसी तरह दूसरा कोई अज़ीम इंसान ही हैरतअंगेज़ की तरह इसके उंसुर का बयान करता है। जिसने देखा है, वही इसकी हक़ीक़त का बयान कर सकता है। दूसरा कोई नादिर रियाज़ती इसे बतौर हेरत सुनता है; सब सुनते भी नहीं क्योंकि यह अह्ल के लिए ही है। ऐ अर्जुन! कोई-कोई तो सुनकर भी इस रूह की हक़ीक़त को नहीं जान पाते, क्योंकि वसीलः पूरा नहीं होता। आप लाख इल्म की बातें सुनें, समझें, बाल की खाल निकालकर समझें, ख़्वाहिशमन्द भी रहें, लेकिन फ़िरेफ़्तगी में बहुत बड़ी ताक़त है, थोड़ी देर बा'द ही आप अपने दुन्यवी इंतिज़ामात में मश्गुल मिलेंगे। आख़िर में श्रीकृष्ण फ़ैसलः देते हैं-

देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत।
तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि।।३०।।

अर्जुन! यह रूह सबके जिस्म में हमेशः नाक़ाबिले हलाक है, नाक़ाबिले तराश है। लिहाज़ा सभी जानदारों के लिए तू ग़मजदः होने के क़ाबिल नहीं है।

'रूह ही अबदी है'- इस हक़ीक़त की ता'मील करके, इसकी अज़्मतों के साथ बयान करके यह सवाल यहीं पूरा हो जाता है। अब सवाल खड़ा होता है कि इसका हुसूल कैसे हो? पूरी गीता में इसके लिए दो ही रास्ते हैं- पहला रास्तः बेग़रज़ अमली जोग (निष्काम कर्मयोग) और दूसरा इल्मी जोग (ज्ञानयोग)। दोनों ही राहों में किया जाने वाला अमल एक ही है। वह अमल कितना ज़रूरी है इसकी अहम्मीयत पर ज़ोर देते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण इल्मी जोग के मुतअल्लिक़ बयान करते हैं-

स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि।
धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते।। ३१।।

अर्जुन! फ़र्ज़े मंसबी के मद्दे नज़र भी तू ख़ौफ़ करने के क़ाबिल नहीं है; क्योंकि फ़र्ज़ से मुज़ैयन जंग से बढ़कर दूसरा कोई आ'ला इफ़ादी रास्तः क्षत्री के लिए

नहीं है। अभी तक तो 'रूह दाइमी है', 'रूह अबदी है', 'वही वाहिद दीन है'- ऐसा कहा गया है, अब यह फ़र्ज़े मसबी क्या? दीन तो वाहिद रूह ही है। वह तो मुस्तहकम क़ाइम है, तो फ़र्ज़गुज़ारी क्या? दरहक़ीक़त इस राहे-रूहानियत में लगने की सलाहीयत हर इंसान की अलग-अलग होती है। ख़स्लत से पैदा इस सलाहीयत को फ़र्ज़ेमंसबी कहा गया है।

इसी एक बरहक़ रूहानी राह पर चलने वाले रियाज़तकशों को अज़ीम इंसान ने फ़ित्री तौर पर उनकी सलाहीयत के मुताबिक़ चार दर्जात में तक़्सीम किया- शूद्र, वैश्य, क्षत्री और बर्हमन। रियाज़त के इब्तिदाई दौर में हर एक रियाज़ती शूद्र या'नी कम इल्मवाला होता है। घंटों यादे इलाही में बैठने पर वह दस मिनट भी अपने मक़्सद के मुताबिक़ नहीं हो पाता। वह कुद्रती लौसेदुन्या से जुदा नहीं हो पाता। इस हालत में अज़ीम इंसान की ख़िद्मत से उसकी फ़ित्रत में नेक सिफ़ात आ जाती है। वह वैश्य दर्ज़ः का मालिक बन जाता है। रूहानी दौलत ही मुस्तक़िल दौलत है। धीरे-धीरे वह इस दौलत को इकट्ठा करता हुआ हवास की हिफ़ाज़त करने की सलाहीयत वाला हो जाता है। ख़्वाहिश, ग़ुस्सः वग़ैर से हवास का तशद्दुद होता है और इर्फ़ान व बैराग से इनकी हिफ़ाज़त होती है, लेकिन क्रुदत को ख़त्म करने की हैसियत उसमें नहीं होती। रफ़्तः-रफ़्तः तरक़्क़ी करते-करते रियाज़ती के बातिन में तीनों सिफ़ात को ख़त्म करने की कुव्वत या'नी क्षत्रीपन आ जाता है। इसी सत्ह पर क्रुदत और उसके उयूब को ख़त्म करने की सलाहीयत आ जाती है। लिहाज़ा जंग यहीं से शुरू होती है। बासिल्सिलः वसीलः करके रियाज़ती बर्हमन वाली सलाहीयत के दर्जः में बदल जाता है। इस वक़्त मन पर क़ाबू, नफ़्सकुशी, मुसल्सल ग़ौरो-फ़िक्र, सीधापन, तज्रिबः, इल्म वग़ैरः निशानात रियाज़ती में अपने आप ज़ारी होते हैं। इन्हीं के इरादे के मुताबिक़ चलकर सिल्सिलःवार वह मा'बूद में ख़ुद को ज़म कर लेता है, जहाँ वह बर्हमन भी नहीं रह जाता।

जिस्म की पर्वा न करने वाले (विदेह) शाह जनक के दरबार में वली याज्ञवल्क्य ने चाक्रायण, उषस्ति, कहोल, आरुणि, उद्दालक और गार्गी के सवालात को हल करते हुए फ़र्माया कि ख़ुदशनासी की पूरी तरह से ता'मील करने वाला ही बर्हमन होता है। यह रूह ही आलम व आलमेबाला और तमाम जानकारों को भीतर से मुनज़्ज़म करती है। सूरज, चांद, ज़मीन, पानी, हवा, आग, तारे, ख़ला, आस्मान और हर एक लम्हः इस रूह की ही ज़ेरे है। यह रूह आलिमलग़ैब नौशाब है। रूह लाफ़ानी

है, इससे जुदा सब कुछ फ़ानी है। जो इंसान इसी आलम में इस 'लाफ़ानी' की हक़ीक़त को न समझकर हवन करता है, रियाज़त करता है, हज़ारों साल तक यग करता है, उसके ये सारे आ'माल फ़ानी है। जो भी इस लाफ़ानी को जाने बग़ैर इस दुन्या से फ़ना होकर जाता है वह क़ाबिले रह्म है, तंग दिल है, और जो इस लाफ़ानी को जान और समझकर इस दुन्या से फ़ना होकर जाता है, वह बर्हमन है। (बृहदारण्यकोपनिषद्, तृतीय अध्याय, अष्टम ब्राह्मण)

अर्जुन क्षत्री दर्जः का रियाज़तकश है। श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं कि क्षत्री दर्जः के रियाज़तकश के लिए जंग के इलावः कोई इफ़ादी रास्तः है ही नहीं। सवाल उठता है। कि क्षत्री है क्या? आमतौर से लोग इसका मत्लब समाज में जन्म से पैदा हुए बर्हमन, क्षत्री, वैश्य, शुद्र ज़ातों से लेते हैं। इन्हें ही चार नस्ल (वर्ण) मान लिया जाता है। लेकिन नहीं, शरीअ़त के मुसन्निफ़ ने ख़ुद बताया है कि क्षत्री क्या है, नस्ल क्या है? यहाँ के उन्होंने सिर्फ़ क्षत्री का नाम लिया और आगे अट्ठारहवें बाब तक इस सवाल का हल पेश किया कि दरहक़ीक़त ये नस्लें हैं क्या, और कैसे इनमें तब्दीली होती है? श्रीकृष्ण ने फ़र्माया- **'चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टम्'**- चार दर्जात (नस्लों) की तख़्लीक़ मैंने की तो क्या इंसानों को बाँटा? श्रीकृष्ण कहते हैं कि नहीं, **'गुणकर्म विभागशः'**- ख़ूबियों के वसीलः से अमल को चार हिस्सों में बाँटा। यह देखना है कि वह अमल क्या है, जिसे तक़्सीम किया गया? ये ख़ूबियाँ क़ाबिले रद्दो-बदल है। रियाज़त के मा'क़ूल तरीक़ः के ज़रीअः मलकाते मज़मूमी से मलकाते रदीयः और मलकाते रदीयः से मलकाते फ़ाज़िल में दाखिलः मिलता जाता है। आख़िरकार मिज़ाज-ए-बर्हमन बन जाता है। उस वक़्त मा'बूद में दाखिलः दिला देने वाली सारी सलाहीयतें उस रियाज़तकश में मौजूद रहती हैं। नस्ल से वाबस्तः सवाल यहाँ से शुरू होकर अठारहवें बाब में जाकर मुकम्मल होता है।

श्रीकृष्ण का मानना है- **'श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्'**- कुद्रत से पैदा इस दीन में लगने की सलाहीयत जिस सत्ह की हो, भले ही वह बिना किसी ख़ासियत वाली शूद्र दर्जः की हो, तब भी बेहद फ़ाइदः पहुँचाती है; क्योंकि आप सिल्सिलःवार वहीं से तरक़्क़ी करते हुए आगे बढ़ते हैं। उससे ऊपर वालों की नक़्ल करके रियाज़तकश बरबाद हो जाता है। अर्जुन क्षत्री दर्जः का रियाज़ती था। लिहाज़ा श्रीकृष्ण कहते हैं कि- अर्जुन! अपनी फ़ित्रत से पैदा होने वाली इस जंग में लगने की अपनी ताक़त को देखकर भी तू खौफ करने के क़ाबिल नहीं है। इससे बढ़कर

दूसरा कोई इफ़ादी काम क्षत्री के वास्ते नहीं है। इसी पर रोशनी डालते हुए जोग के मालिक फिर इर्शाद फ़र्माते हैं-

यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्।
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम्।।३२।।

ख़ाकी जिस्म को ही रथ बनाकर बेख़ता निशानेबाज़ अर्जुन! ख़ुद-ब-ख़ुद हासिल, जन्नत के खुले हुए दरवाज़े वाली इस जंग का मौक़ा ख़ुशक़िस्मत क्षत्री ही हासिल करते हैं। क्षत्री दर्जः के रियाज़ती में तीनों सिफ़ात को काट देने की सलाहीयत रहती है। उसके लिए जन्नत का दरवाज़ः खुला है; क्योंकि उसमें रूहानी दौलत पूरी तौर से मौजूद रहती है, सौत (स्वर) में सफ़र करने की उसमें सलाहीयत रहती है। यही खुला हुआ जन्नत का दरवाज़ः है। मैदान और आलिमे मैदाँ की इस जंग को ख़ुशक़िस्मत क्षत्री ही हासिल करते हैं, क्योंकि उनमें ही इस तरह की टक्कर लेने की ताक़त मौजूद है।

दुन्या में लड़ाइयाँ होती हैं। पूरी दुन्या सिमटकर लड़ती है, हर एक क़ौम लड़ती है; लेकिन दाइमी फ़त्ह, फ़त्ह हासिल करने वाले को भी नहीं मिलती। यह तो इंतिक़ाम है। जो जिसको जितना दबाता है, इम्तिदादे-ज़मानः में उसे भी उतना ही दबना पड़ता है। यह कैसी फ़त्ह है, जिसमें हवास को सुखाने वाला ग़म बना ही रहता है, आख़िर में जिस्म भी ख़त्म हो जाता है? हक़ीक़ी जंग तो मैदान और आलिमे मैदाँ की है, जिसमें एक बार कामयाबी मिल जाने पर कुद्रत पर हमेशः-हमेशः के लिए बंदिश और आ'ला इंसान रूहे मुत्लक़ का हुसूल हो जाता है। यह ऐसी फ़त्ह है, जिसके पीछे शिकस्त नहीं है।

अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं सङ्ग्रामं न करिष्यसि।
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि।।३३।।

और अगर तू इस 'दीन ये मुज़ैयन जंग' या'नी दाइमी, अबदी, आ'ला दीन रूहे मुत्लक़ में दाखिलः दिलाने वाला जिहाद नहीं करेगा तो 'फ़र्ज़ेमंसबी' या'नी फ़ित्रत से पैदा होने वाली जंग करने की कुव्वत, अमल पैरा होने की सलाहीयत खोकर गुनाह या'नी आमदोरफ़्त और रुस्वाई को हासिल करेगा। रुस्वाई पर रोशनी डालते हैं-

अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम्।
सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते।।३४।।

तमाम लोग बहुत दिनों तक तेरी रुस्वाई का ज़िक्र करेंगे। आज भी माजूल होने वाले आबिदों में विश्वामित्र, पराशर, निमि, शृंगी वग़ैरः का शुमार होता है। बहुत से रियाज़ती अपने फ़र्ज़ पर ग़ौर करते हैं, सोचते हैं कि लोग हमें क्या कहेंगे? ऐसा ख़याल भी रियाज़त में मददगार होता है। इससे रियाज़त में लगे रहने की तर्ग़ीब मिलती है। कुछ हद तक ख़याल भी साथ देता है। क़ाबिले एहतिराम इंसानों के लिए रुस्वाई मौत से भी बढ़कर होती है।

भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः।
येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम्।।३५।।

जिन अज़ीम सिपहसालारों की निगाह में तेरी बहुत ज़ियादः क़द्रो मंज़िलत थी, अब उनकी नज़र में तू गिर जायेगा, वे अज़ीम सिपहसालार तुझे ख़ौफ़ की वज्ह से जंग से भाग खड़ा हुआ मानेंगे। अज़ीम सिपहसालार कौन? इस राह पर बेहद मेहनत से आगे बढ़ने वाले रियाज़ती अज़ीम सिपहसालार हैं। इसी तरह इतनी ही मेहनत से लाइल्मी की तरफ़ खींचने वाले ख़्वाहिश, गुस्सः, लालच, फ़िरेफ़्तगी वग़ैरः भी अज़ीम सिपहसालार हैं। जो तुझे बहुत इज़्ज़त देते थे कि रियाज़ती क़ाबिले ता'रीफ़ है, तू उनकी नज़र से गिर जायेगा। सिर्फ़ इतना ही नहीं बल्कि-

अवाच्यवादांश्च बहून्वदिष्यन्ति तवाहिताः।
निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतरं नु किम्।।३६।।

दुश्मन लोग तेरी बहादुरी की बुराई करते हुए बहुत-सी न कहने के क़ाबिल बातों को कहेंगे। एक बुराई आती है, तो चारों तरफ़ से मज़म्मत और बुराइयों की झड़ी लग जाती है। लोग न कहने लाइक़ बातें भी कहना शुरू कर देते हैं। इससे बड़ी तक्लीफ़ क्या होगी? लिहाज़ा-

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः।।३७।।

इस जंग में तू मरेगा तो जन्नत हासिल करेगा- सौत में सफ़र करने की सलाहीयत रहेगी। साँस के बाहर कुद्रत में सफ़र करने का बहाव रुक जायेगा। आ'लातरीन मा'बूद में दाख़िलः दिलाने वाली रूहानी दौलत दिल में पूरी तरह रवा रहेगी या इस जंग में कामयाबी मिलने पर मक़ामे आ'ला के मर्तबः को हासिल करेगा। लिहाज़ा अर्जुन! जिहाद के लिए मज़्बूत इरादः करके खड़ा हो जा।

आमतौर से लोग इस श्लोक का मत्लब लगाते हैं कि, इस जंग में मरोगे, तो जन्नत हासिल करोगे और कामयाबी मिलेगी तो दुन्यवी ऐशोइश्रत का लुत्फ़ उठाओगे; लेकिन आपको याद होगा, अर्जुन कह चुका है- बन्दःपर्वर! दुन्यवी ऐशो इश्रत ही नहीं, बल्कि तीनों अवालिम की हुकूमत और देवताओं का मालिकानः या'नी इन्द्र का ओहदः हासिल होने पर भी मुझे वह तर्क़ीब नज़र नहीं आती जो मेरे हवास को सुखाने वाले ग़म को दूर कर सके। अगर इतना ही हासिल होना है तो गोविन्द! मैं जंग हरगिज़ नहीं करूँगा। अगर इतने पर भी श्रीकृष्ण कहते कि- अर्जुन! जंग कर। फ़त्ह हासिल करेगा तो ज़मीन का इक़्तिदार हासिल करेगा, शिकस्त मिलेगी तो रहने के लिए जन्नत नसीब होगी, तो श्रीकृष्ण देते ही क्या हैं? अर्जुन इससे आगे की हक़ीक़त शरफ़ (आ'ला इफ़ादः) की ख़्वाहिश वाला शागिर्द था, जिसे मुर्शिदेकामिल श्रीकृष्ण ने बताया कि मैदान और आलिमे मैदाँ की इस टक्कर में अगर जिस्म का वक़्त पूरा हो जाता है और मंज़िल तक नहीं पहुँच सका तो जन्नत हासिल करेगा या'नी सौत में ही सफ़र करने की सलाहीयत हासिल कर लेगा। रूहानी दौलत दिल में ढल जायेगी और इस जिस्म के रहते-रहते तू जंग में कामयाब हो जाता है तो 'हुजूरेआ'ला' सबसे आ'ला मा'बूद के मर्तबः का शरफ़ हासिल करेगा, हुजूरेआ'ला का मक़ाम हासिल कर लेगा। फ़त्ह हासिल करेगा तो सब कुछ, क्योंकि फ़ज़ीलते-आ'ला को हासिल करेगा और हारेगा तो देवता की हैसियत - दोनों हाथों में लड्डू रहेंगे। फ़ाइदः में भी फ़ाइदः और नुक़्सान में भी फ़ाइदः ही है। फ़िर इस पर ज़ोर देते हैं-

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि।।३८।।

इस तरह आराम व तक्लीफ़, नफ़ा व नुक़्सान, कामयाबी व नाकामयाबी को बराबर समझकर तू जंग के लिए तैयार हो जा। जंग करने से तू गुनाहगार नहीं होगा या'नी आराम में सब कुछ और तक्लीफ़ में भी देवता का मर्तबः है। फ़ाइदः में हुजूरे आ'ला की हालत या'नी सब कुछ और नुक़्सान में देवता का मर्तबः है। फ़त्ह में हुजूरेआ'ला का मक़ाम और शिकस्त में भी रूहानी दौलत पर इख़्तियार हासिल है। इस तरह अपने नफ़ा और नुक़्सान को अच्छी तरह ख़ुद समझकर तू जंग के लिए तैयार हो जा। जंग में ही दोनों चीज़ें हैं। जंग करेगा तो गुनाह या'नी आमदोरफ़्त को हासिल नहीं करेगा। लिहाज़ा तू जंग के लिए तैयार हो जा।

एषा तेऽभिहिता साङ्ख्ये बुद्धिर्योगे त्विमां शृणु।
बुद्धया युक्तो यया पार्थ कर्मबन्धं प्रहास्यसि।।३९।।

पार्थ! ये अक़्ल की बातें तेरे लिए इल्मी जोग के मार्फ़त कही गई हैं। कौन-सी अक़्ल? यही कि जंग कर। इल्मी जोग में इतना ही है कि अपनी हैसियत को देखकर नफ़ा, नुक़्सान का अच्छी तरह ख़याल करके कि फ़त्ह हासिल करेंगे तो हुज़ूरे आ'ला का मक़ाम और हारेंगे तो देवता का मर्तबः, फ़त्ह में सब कुछ और शिकस्त में भी देवता का मर्तबः - दोनों तरह फ़ाइदः है। जंग नहीं करेंगे तो सभी हमें ख़ौफ की वज्ह से जंग से भागने वाला मानेंगे, रुस्वाई होगी, इस तरह अपने वुजूद को सामने रखकर ख़ुद ग़ौरतलब होकर जंग में आगे बढ़ना ही इल्मी जोग है।

आमतौर से लोगों में यह ग़लतफ़हमी है कि इल्म की राह में अमल (जंग) नहीं करना पड़ता। वे कहते हैं कि राहे इल्म में अमल नहीं है। मैं तो 'ख़ालिस हूँ', 'अक़्लमंद हूँ', 'बाहोश हूँ', अनलहक़ (अहं ब्रह्मास्मि)। सिफ़ात ही सिफ़ात में बरताव करती हैं (गुन ही गुन में बरतते हैं)- ऐसा मानकर हाथ पर हाथ रखकर बैठ जाते हैं। जोग के मालिक श्रीकृष्ण के मुताबिक़ यह इल्मी जोग नहीं है। इल्मी जोग में भी वही अमल करना है, जो बेग़रज़ अमली जोग में किया जाता है। दोनों में सिर्फ़ समझ का, नज़रीयः का फ़र्क़ है। इल्म की राह वाला अपनी हैसियत समझकर ख़ुद पर मुन्हसिर होकर अमल करता है जबकि बेग़रज़ अमल का जोगी इलाह पर मुन्हसिर होकर अमल करता है। अमल करना दोनों राहों में है और वह अमल भी एक ही है, जिसे दोनों राहों में किया जाना है। सिर्फ़ अमल करने के नज़रीयात दो हैं।

अर्जुन! इसी अक़्ल को अब तू बेग़रज़ अमली जोग के मुतअल्लिक़ सुन, जिससे मुज़य्यन होकर तू दुन्यवी आ'माल की बन्दिश का अच्छी तरह ख़ातिमः करेगा। यहाँ श्रीकृष्ण ने 'अमल' का नाम पहली मर्तबः लिया, लेकिन इसका ख़ुलासः नहीं किया कि अमल है क्या? अब अमल के बारे में न बताकर पहले अमल की सिफ़ात पर रोशनी डालते हैं-

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्।।४०।।

इस बेग़रज़ अमली जोग में इब्तिदा का या'नी तुख़्म (बीज) का ख़ातिमः नहीं होता। वक़्ती फ़ाइदे वाली बुराई नहीं है, लिहाज़ा इस बेग़रज़ अमल की, इस अमल के ज़रीअः की गयी दीन की थोड़ी भी मश्क़ जनम और मौत की शक्ल वाले बहुत

बड़े ख़ौफ से आज़ाद कर देती है। आप इस अमल को समझें और उस पर दो क़दम चल भर दें (जो घर-बार के काम-काज वाली हालत में रहक़र भी चला जा सकता है, रियाज़तकश तो चलते ही हैं) तुख़्म भर डाल दें, तो अर्जुन! तुख़्म का ख़ातिम नहीं होता। कुद्रत में ऐसी कोई ताक़त नहीं, ऐसा कोई अस्लिहः नहीं जो उस हक़ीक़त के वुजूद को मिटा दे। कुद्रत महज़ पर्दः डाल सकती है, कुछ वक़्त के लिए रुकावट डाल सकती है, लेकिन वसीलः की शुरुआत को मिटा नहीं सकती।

आगे श्रीकृष्ण ने बताया कि सारे गुनाहगारों से भी गुनाहगार ही क्यों न हो, इल्म की कश्ती के ज़रीअः बेशक कनारा पा जायेगा। ठीक उसी बात को यहाँ कहते हैं कि- अर्जुन! बेग़रज़ अमली जोग की तुख़्म भर कर दें, तो उस तुख़्म का कभी ख़ातिमः नहीं होता। बरख़िलाफ़ नतीजः वाला ऐब भी इसमें नहीं होता कि आपको जन्नत, धन-दौलत या कामयाबियों तक पहुँचाकर छोड़ दें। आप यह वसीलः भले ही छोड़ दें, लेकिन यह वसीलः आप को नजात दिलाकर ही छोड़ेगा। इस बेग़रज़ अमली जोग का थोड़ा-सा भी वसीलः पैदाइश और मौत के बहुत बड़े ख़ौफ़ से आज़ाद कर देता है। **'अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्।'** (गीता, ६/४५) अमल की यह तुख़्मरेज़ी मुख़्तलिफ़ पैदाइशों के बा'द वहीं खड़ा कर देगी जहाँ आ'ला मक़ाम है, आ'ला नजात है। इसी तसल्सुल में आगे इर्शाद फ़र्माते हैं-

व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन।
बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम्।।४१।।

अर्जुन! इस बेग़रज़ अमली जोग में मुतहर्रिक समझ एक ही है, तरीक़ः एक है और नतीजः एक ही है। रूहानी दौलत ही हमेशः क़ाइम रहने वाली दौलत है। इस दौलत को कुद्रती बबाल से धीरे-धीरे हासिल करना रोज़गार है। यह रोज़गार ग़ैर मुश्तब्ह तरीक़ः भी एक ही है। तब तो जो लोग बहुत से तरीक़े बताते हैं, क्या वे यादे इलाही नहीं करते? श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं- ''हाँ, वे यादे इलाही नहीं करते। उन इंसानों की अक़्ल बेशुमार शाख़ों वाली होती है, इस वास्ते बेशुमार तरीक़ों का फ़ैलाव कर लेते हैं।''

यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चितः।
वेदवादरताः पार्थ नान्यदस्तीति वादिनः।।४२।।
कामात्मानः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम्।
क्रियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिं प्रति।।४३।।

पार्थ! वे **'कामात्मानः'**– ख़्वाहिशात से मुजय्यन, **'वेदवादरताः'**– वेद के जुम्लों में डूबे हुए, **'स्वर्गपराः'**– जन्नत को ही मंजिले मक्सूद मानते हैं कि इससे आगे कुछ है ही नहीं, ऐसा कहने वाले नासमझ लोग जनम और मौत की शक्ल में समरः देने वाली, ऐशोइशत और शानो-शौकत को हासिल करने के लिए तमाम सारे आ'माल का फैलाव कर लेते हैं। दिखावटी खूबसूरत अल्फ़ाज़ में इसका इजहार भी करते हैं। या'नी नासमझ लोगों की अक़्ल बेशुमार किस्मों वाली होती है। ये समरः वाले जुम्लों में ही डूबे रहते हैं, वेद के जुम्लों को ही सुबूत मानते हैं, जन्नत को ही अफजल मानते हैं। उनकी समझ बहुत-सी किस्मों वाली होती है, लिहाज़ा बेशुमार तरीक़ों का ईजाद कर लेते हैं। वे नाम तो उंसुरे आ'ला मा'बूद का ही लेते हैं, लेकिन उसके पर्दः में बेशुमार तरीक़ों का फ़ैलाव कर लेते हैं, तो क्या ये बेशुमार तरीक़े अमल नहीं हैं? श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं- नहीं, ये बेशुमार तरीक़े अमल नहीं हैं। तो वह एक मुक़र्ररः तरीक़ः है क्या? श्रीकृष्ण अभी इसका ख़ुलासः नहीं करते। अभी तो सिर्फ़ इतना कहते हैं कि नासमझ लोगों की अक़्ल लामह्दूद शाख़ों वाली होती है, लिहाज़ा वे बेशुमार तरीक़ों का फ़ैलाव कर लेते हैं। ये सिर्फ़ फ़ैलाव ही नहीं करते, बल्कि मुरस्सा अंदाज़ में उसका बयान भी करते हैं। उसका असर क्या होता है?

भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम्।
व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते।।४४।।

उनके अल्फ़ाज़ का असर जिन-जिन लोगों के दिलो-दिमाग़ पर पड़ जाता है, अर्जुन! उनकी भी अक़्ल गुम हो जाती है, न कि वे कुछ हासिल करते हैं। उन अल्फ़ाज़ के ज़रीअः ठगे हुए दिलो-दिमाग़वालों और दुन्यवी ऐशो-इश्रत में डूबे हुए इंसानों के बातिन में अमली अक़्ल नहीं रह जाती; इलाह में मर्कूज़ करने वाला ग़ैरमुश्तब्ह तरीक़ः उनमें नहीं होता।

ऐसे नासमझ लोगों की बातें सुनता कौन है? ऐशो-इश्रत में डूबे हुए लोग ही सुनते है, अह्ल इंसान नहीं सुनता। ऐसे इंसानों में मुसावी और अबदी उंसुर में दाख़िलः दिलाने वाली ग़ैर मुश्तब्ह तरीक़ः से मुज़य्यन अक़्ल नहीं होती।

सवाल उठता है कि **'वेदवादरताः'**- जो वेद के जुम्लों में डूबे हुए हैं, क्या वे भी ग़लती करते हैं? इस पर श्रीकृष्ण कहते हैं-

त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।
निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्।।४५।।

अर्जुन! **'त्रैगुण्यविषया वेदा'**- वेद तीनों सिफ़ात तक ही रोशनी डालते हैं। इससे आगे की हक़ीक़त वे नहीं जानते। लिहाज़ा **'निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन'**- अर्जुन! तू तीनों सिफ़ात से ऊपर उठ या'नी वेदों के अमली हल्क़ः से आगे बढ़। कैसे बढ़ा जाय? इस पर श्रीकृष्ण कहते हैं- **'निर्द्वन्द्वः'**- आराम व तक्लीफ़ के वबालों से दूर हमेशः सच्चाई की राह पर क़ाइम अपने भले-बुरे की ख़्वाहिश न रखते हुए ख़ुदसाज़ बन। इस तरह ऊपर उठ। सवाल उठता है कि सिर्फ़ हम ही उठें या कोई वेदों से ऊपर उठा भी है? श्रीकृष्ण बताते हैं कि ऊपर जो भी उठता है, पर्वर्दगार को जानता है और जो पर्वर्दगार को जानता है, वह बर्हमन है (या'नी खुसूसी इल्म वाला है)।

यावानर्थ उदपाने सर्वतः सम्प्लुतोदके।
तावान्सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः।।४६।।

हर तरफ़ से लबरेज़ तालाब को हासिल करने के बा'द इंसान का छोटे तालाब से जितना मत्लब रहता है, अच्छी तरह मा'बूद को जानने वाले बर्हमन को वेदों से उतना ही तअल्लुक़ होता है। मत्लब यह कि जो वेदों से ऊपर उठता है, वह मा'बूद (ब्रह्म) को जानता है, वही बर्हमन है। या'नी तू वेदों से ऊपर उठ, बर्हमन बन।

अर्जुन क्षत्री था। श्रीकृष्ण कहते हैं कि बर्हमन बन। बर्हमन, क्षत्री वग़ैरः नस्लें ख़साइल की कुव्वतों के नाम हैं। इनका तअल्लुक़ अमल से है, न कि जनम से मुक़र्रर होने वाली कोई क़दामत। जिसे गंगा (एक पाक नदी है) की धारा हासिल है, उसे नाचीज़ तालाब से क्या मत्लब? कोई उसमें आबदस्त लेता है, तो कोई जानवरों को गुस्ल करा देता है। इसके आगे उसका कोई इस्ते'माल नहीं है। इसी तरह मा'बूद को मुजस्सम जानने वाले उस बर्हमन अज़ीम इंसान का, उस बर्हमन का वेदों से उतना ही तअल्लुक़ रह जाता है। तअल्लुक़ रहता ज़रूर है, वेद रहते हैं, क्योंकि ताबेईन के लिए उनका इस्ते'माल है। वहीं से तफ़्सरा शुरू होगा। इसके बा'द जोग के मालिक श्रीकृष्ण 'अमल' करते वक़्त बरती जाने वाली एहतियात की इज़्ज़ा करते हैं-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।४७।।

अमल करने में ही तेरा इख़्तियार हो, समरः में कभी नहीं। ऐसा समझ कि समरः है ही नहीं। समरः का ख़्वाहिशमन्द भी न हो और अमल करने में तू अक़ीदत से मुर्बरा भी न हो।

अब तक जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने ३९वें श्लोक में पहली बार अमल का नाम लिया, मगर यह नहीं बताया कि वह अमल है क्या और उसे करें कैसे? उस अमल की सिफ़ात पर रोशनी डाला कि-

१. अर्जुन! इस अमल के ज़रीअः तू आ'माल की बंदिश से अच्छी तरह आज़ाद हो जायेगा।

२. अर्जुन! इसमें शुरुआत का या'नी तुख़्म का ख़ातिमः नहीं है। शुरुआत कर भर दें तो कुद्रत के पास ऐसी कोई तर्क़ीब नहीं कि उसे ख़त्म कर दे।

३. अर्जुन! इसमें महदूद समरः वाला ऐब भी नहीं है कि जन्नत, हुसूले मालोज़र कामयाबियों में फँसाकर खड़ा कर दे।

४. अर्जुन! इस अमल की मुख़्तसर रियाज़त भी जनम-मौत के ख़ौफ से नजात दिलाने वाली होती है।

लेकिन अभी तक उन्होंने इसका ख़ुलासः नहीं किया कि वह अमल है क्या? किया कैसे जाय? इसी बाब के इकतालीसवें श्लोक में उन्होंने बताया-

५. अर्जुन! इसमें ग़ैरमुश्तब्द अक़्ल एक ही है, अमल एक ही है। तो क्या बहुत से आ'माल वाले याद नहीं करते? श्रीकृष्ण कहते हैं- वे अमल नहीं करते। इसकी वज्ह बताते हुए वे कहते हैं कि नासमझों की अक़्ल बेशुमार शाख़ों वाली होती है। लिहाज़ा वे बेशुमार अमली राहों का फ़ैलाव कर लेते हैं। वे दिखावटी आरास्तः ज़बान में इन तरीक़ों का बयान भी करते हैं। उनकी तक़्रीर का असर जिनके दिलो-दिमाग़ पर पड़ जाता है, उनकी भी अक़्ल गुम हो जाती है। लिहाज़ा ग़ैरमुश्तब्ह तरीक़ः एक ही है, लेकिन यह नहीं बताया कि वह तरीक़ः कौन-सा है?

सैंतालीसवें श्लोक में उन्होंने कहा- अर्जुन! अमल करने में ही तेरा इख़्तियार है, समरः में कभी नहीं। समरः का ख़्वाहिशमन्द भी मत बन और अमल करने में तू अक़ीदत से मुबर्रा भी न हो, या'नी मुसल्सल तौर से करने के लिए उसी में महव होकर कर, लेकिन यह नहीं बताया कि वह अमल है क्या? अमूमन इस श्लोक की नज़ीर देकर लोग कहते हैं कि कुछ भी करो; सिर्फ़ समरः की ख़्वाहिश मत करो, हो गया बेग़रज़ अमली जोग; लेकिन अभी तक श्रीकृष्ण ने बताया ही नहीं कि अमल है कौन-सा, जिसे करें? यहाँ पर सिर्फ़ अमल के ख़ुसूसियात पर रोशनी डाली कि अमल अता क्या करता है और अमल को करते वक़्त जेहन में रखे जाने वाले एहतियात

क्या हैं? उन पर रोशनी डाली। सवाल जैसा-का-तैसा बना हुआ है, जिसे जोग के मालिक आगे बाब-३ और ४ में साफ़ करेंगे। फिर इसी पर ज़ोर देते हैं-

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।।४८।।

धनञ्जय! रग़बत और सुहूबत के असर को तर्ककर, कामयाबी और नाकामयाबी में मुसावी ख़याल रखकर, जोग में साबित क़दम होकर अमल कर! कौन-सा अमल? बेग़रज़ अमल कर। **'समत्वं योग उच्यते'**- यह मुसावी एहसास ही जोग कहलाता है। ग़ैरमुसावात जिसमें न हो, ऐसा एहसास मुसावी कहलाता है। हुसूले ज़र और कामयाबियाँ ग़ैर मुसावी बनाती है, रग़बत हमें ग़ैर मुसावी बनाती है, समरः की ख़्वाहिश ग़ैरमुसावात पैदा करती है, लिहाज़ा समरः की ख़्वाहिश न हो, फ़िर भी अमल करने में अक़ीदत से मुबर्रा न हो। देखी-सुनी सभी चीज़ों में रग़बत को तर्क करके हुसूल और ग़ैर हुसूल के मुतअल्लिक़ न सोचकर सिर्फ़ जोग में क़ाइम रहते हुए अमल कर। जोग से मन मुतहर्रिक न हो।

जोग एक इतिहा की हालत है और एक इब्तिदाई हालत भी होती है। इब्तिदा में भी हमारी नज़र मंज़िले मक़्सूद पर ही रहनी चाहिए। लिहाज़ा जोग पर निगाह रखते हुए अमल का बरताव करना चाहिए। मुसाबी ख़याल या'नी कामयाबी और नाकामयाबी में मुसावात का ख़याल ही जोग कहलाता है। जिसको कामयाबी और नाकामयाबी मुतज़ल्ज़िल नहीं कर पातीं, ग़ैरमुसावात जिसमें पैदा नहीं होती, ऐसा ख़याल होने की वजह से यह मुसावी जोग कहलाता है। यह मा'बूद से मुसावात दिलाता है, लिहाज़ा इसे मुसावी जोग कहते हैं। ख़्वाहिशात का पूरी तौर से ईसार है, लिहाज़ा इसे बेग़रज़ अमली जोग कहते हैं। अमल करना है, इस वास्ते इसे अमली जोग कहते हैं। पर्वर्दगार से मेल कराता है, लिहाज़ा इसका नाम जोग या'नी मीज़ान है। इसमें अक़्लियत की सत्ह पर नज़र रखनी पड़ती है कि कामयाबी और नाकामयाबी में मुसावात का ख़याल रहे, रग़बत न हो, समरः की ख़्वाहिश न आने पाये। लिहाज़ा यही बेग़रज़ अमली जोग अक़्ली जोग भी कहा जाता है।

दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनञ्जय।
बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः।।४९।।

धनञ्जय! **'अवरं कर्म'**- हयासोज़ अमल, ख़्वाहिशात से मुज़ैयन अमल अक़्ली जोग से बहुत दूर हैं। समरः की ख़्वाहिश रखने वाले बख़ील हैं। वे रूह के साथ

रवादारी नहीं करते; लिहाज़ा मुसावात वाले अक़्ली जोग का सहारा लेकर, जैसी ख़्वाहिश है, वैसा मिल भी जाये तो उसके तलज़्ज़ुज़ के लिए जिस्म हासिल करना पड़ेगा, जनम और मौत का सिल्सिलः क़ाइम है तो भलाई कैसी? रियाज़तकश को तो नजात की भी ख़्वाहिश नहीं रखनी चाहिए, क्योंकि ख़्वाहिशात से आज़ादी पा लेना ही तो नजात है। समरः के हुसूल की फ़िक्र करने से रियाज़ती का वक़्त बिला वज्ह बरबाद हो जाता है और समरः हासिल होने पर वह उसी समरः में उलझ जाता है। उसकी रियाज़त ख़त्म हो जाती है। आगे वह यादे रब क्यों करे? वहाँ से वह गुमराह हो जाता है। लिहाज़ा अक़्ले मुसावात से जोग का बरताव करें।

राहे इल्म को भी श्रीकृष्ण ने अक़्ली जोग कहा था कि अर्जुन! यह अक़्ल तेरे लिये इल्मी जोग के मुतअल्लिक़ कही गयी और यहाँ बेग़रज़ अमली जोग को भी अक़्ली जोग कहा गया। दरहक़ीक़त दोनों में समझ का, नज़रीयात का ही फ़र्क़ है। उसमें नफ़ा-नुक़्सान का हिसाब-किताब रखकर, उसकी तह्क़ीक़ करके चलना पड़ता है। इसमें भी अक़्लियत की सत्ह पर मुसावात बनाये रखना पड़ता है, लिहाज़ा उसे अक़्ले मुसावात जोग कहा जाता है। इस वास्ते धनञ्जय! तू अक़्ले मुसावात जोग की पनाह हासिल कर, क्योंकि समरः के ख़्वाहिशमन्द लोग बेइंतिहा बखील हैं।

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्।।५०।।

अक़्ले मुसावात से मुज़ैयन इंसान अज़ाब और सवाब दोनों को ही इसी दुन्या में तर्क कर देता है, उसमें मुलव्वस नहीं होता। लिहाज़ा अक़्ले मुसावात जोग के लिए कोशिश कर। **'योगः कर्मसु कौशलम्'** अक़्ले मुसावात के साथ आ'माल करने की होशयारी ही जोग है।

दुन्या में अमल करने के दो नज़रिये राइज़ हैं। लोग अमल करते हैं, तो समरः भी ज़रूर चाहते हैं या समरः न हासिल हो, तो अमल करना ही नहीं चाहते; मगर जोग के मालिक श्रीकृष्ण इन आ'माल को बन्दिश में रखनेवाले हैं- ऐसा बताते हुए 'इबादत' को ही अमल मानते हैं। इस बाब में उन्होंने अमल का मह्ज़ नाम लिया। बाब ३ के नौवें श्लोक में उसकी तश्बीह दी और चौथे बाब में अमल की शक्ल पर तफ़्सील से रोशनी डाली। पेशकर्दः श्लोक में श्रीकृष्ण ने दुन्यवी रिवाजों से अलग हट कर अमल करने का फ़न बताया कि अमल तो कर, अक़ीदत के साथ कर; लेकिन समरः के इख़्तियार को अपनी खुशी से तर्कःकर दे। समरः जायेगा कहाँ? यही

आ'माल का अंजाम देने का फ़न है। बेग़रज़ रियाज़तकश की पूरी ताक़त इस तरह अमल में लगी रहती है। इबादत के लिये ही तो जिस्म है फिर भी तजस्सुस फ़िक्री है कि क्या हमेशः अमल ही करते रहना है या इसका कुछ नतीजः भी निकलेगा? इसे देखें-

कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः।
जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम्।।५१।।

अक़्ली जोग से मुज़ैयन आलिम हज़्रात आ'माल से पैदा होने वाले समरः को तर्ककर जनम और मौत की बन्दिश से आज़ाद हो जाते हैं। वे मुक़द्दस लाफ़ानी आ'ला मक़ाम को हासिल करते हैं।

यहाँ तीन अक़्लियात का तज़्किरः है। (श्लोक ३१-३९) सांख्य फ़ल्सफ़ः वाली अक़्ल में दो नतीजे हैं- जन्नत और शरफ़ (श्लोक (३९-५१) अमली जोग में लगने वाली अक़्ल का एक ही नतीजः है- आमदोरफ़्त से नजात, शफ़्फ़ाफ़, लाफ़ानी मक़ाम का हुसूल। बस, ये दो ही जोग के तरीक़े हैं। इसके इलावः अक़्ल जहालत से मुज़ैयन, बेइन्तिहा शाख़ों वाली है, जिसका समरः अपने फ़े'ल के ऐश के लिए बारहा जनम और मौत में है।

अर्जुन की नज़र तीनों अवालिम के इक़्तिदार और देवताओं (फ़िरिश्तों) के मालिकानः तक ही मह्दूद थी। इतने तक के लिए भी वह जंग की तरफ़ राग़िब नहीं हो रहा था। यहाँ श्रीकृष्ण उसके सामने एक नई हक़ीक़त ज़ाहिर करते हैं कि बेग़रज़ अमल के ज़रीअः मुक़द्दस मक़ाम हासिल होता है। बेग़रज़ अमली जोग आ'ला मक़ाम को दिलाता है, जहाँ मौत का दख़्ल नहीं होता। इस अमल की तरफ़ झुकाव कब होगा?

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति।
तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च।।५२।।

जिस दौर में तेरी (हर एक रियाज़तकश की) अक़्ल फिरेब की शक्ल वाले दलदल को पूरी तरह पार कर लेगी, ज़रा भी फ़िरेफ़्तगी न रह जाय- न औलाद में, न दौलत में, न इज़्ज़त में- इन सबसे लगाव टूट जायेगा, उस वक़्त जो सुनने लाइक़ है, उसे तू सुन सकेगा और सुने हुए के मुताबिक़ बैराग को हासिल कर पायेगा या'नी उसे अपनी ज़िंदगी में ढाल सकेगा। अभी तो जो सुनने लाइक़ है, उसे न तो तू सुन

पाया है और बरताव का तो सवाल ही नहीं खड़ा होता। इसी सलाहीयत पर फिर रोशनी डालते हैं-

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला।
समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि।।५३।।

मुख़्तलिफ़ क़िस्म के वेद के जुमलों को सुनकर मुतज़ल्ज़िल हुई तेरी अक़्ल जब मा'बूद में मुराक़िब होकर अटल, साकिन होकर ठहर जायेगी तब तू जोग-ए-मुसावात को हासिल कर लेगा। मुकम्मल मुसावात की हालत को हासिल करेगा जिसे 'मुक़द्दस आ'ला मक़ाम' कहते हैं। यही जोग का आख़िरी अन्जाम है और यही ग़ैरहुसूल का हुसूल है। वेदों से तो सबक़ ही मिलता है, लेकिन श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं- **'श्रुतिविप्रतिपन्ना'-** सहीफ़एआस्मानी (श्रुतियों) के तमाम उसूलों को सुनने से अक़्ल मुतज़ल्ज़िल हो जाती है। उसूल तो तमाम सुने; लेकिन जो सुनने के क़ाबिल है, लोग उससे दूर ही रहते हैं।

यह मुतज़ल्ज़िल अक़्ल जिस वक़्त मुराक़बः में क़ाइम हो जायेगी, उस वक़्त तू जोग इन्तिहा, लाफ़ानी मक़ामे आ'ला को हासिल करेगा। इस बात पर अर्जुन का तजस्सुस लाज़िमी था कि वे अज़ीम इंसान कैसे होते हैं, जो मुक़द्दस मक़ामे आ'ला में क़ाइम हैं, मुराक़बः में जिनकी अक़्ल क़ाइम है? उसने सवाल किया-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव।
स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम्।।५४।।

'समाधीयते चित्तम् यस्मिन् स आत्मा एव समाधिः'- जिसमें तबीअ़त का इजालः किया जाय, वह रूह ही मुराकबः है। दाइमी उंसुर में जो मुसावात हासिल कर ले उसे मुराक़िब कहते हैं। अर्जुन ने सवाल किया- केशव! मुराक़िब, साकिन अक़्लवाले अज़ीम इंसान के क्या निशानात हैं? मुस्तकिल मिज़ाज इंसान कैसे बोलता है? वह कैसे बैठता है? वह कैसे चलता है? चार सवालात अर्जुन ने खड़े किये। इस पर श्रीकृष्ण ने मुस्तकिल मिज़ाज इंसान की निशानी बताते हुए कहा-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले)

प्रजहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान्।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते।।५५।।

पार्थ! जब इंसान मन में मौजूद तमाम ख़्वाहिशात को तर्क देता है, तब वह रूह से ही रूह में मुल्मइन हुआ मुस्तक़िल मिज़ाज वाला कहा जाता है। ईसार पर ही रूह का मुकम्मल दीदार होता है। ऐसा रूह में रमने वाला (आत्माराम) ख़ुदइत्मीनान अज़ीम इंसान ही मुस्तक़िल मिज़ाज है।

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते।।५६।।

जिस्मानी, ख़ुदाई और माद्दी तक्लीफ़ों के बिना पर जिसका दिल बेक़रार नहीं होता, सुखों के हुसूल में जिसकी आर्ज़ू ख़त्म हो गयी है और जिसके लगाव, ख़ौफ और गुस्सः ख़त्म हो गये हैं, ग़ौरो-फ़िक्र की आखिरी हद पर पहुँचा हुआ सूफ़ी मुस्तक़िल मिज़ाज कहा जाता है। उसकी दूसरी पहचान बताते हैं-

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम्।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।५७।।

जो इंसान हर जगह शफ़क़त से खाली हुआ, मुबारक और नामुबारक को हासिल करने के बा'द न तो ख़ुश होता है और न दुश्मनी ही करता है, उसकी अक़्ल मुस्तक़िल है। मुबारक वह है जो मा'बूद की शक्ल की तरफ़ राग़िब करता है। नामुबारक वह है जो दुन्या की ओर जाने वाला होता है; लेकिन मुस्तक़िल मिज़ाज इंसान मुनासिब हालात से न ख़ुश होता है और न ग़ैरमुनासिब हालात से नफ़्रत करता है; क्योंकि क़ाबिले हुसूल चीज़ न उससे जुदा है और न गुमराह करने वाले उयूब ही उसके लिए हैं या'नी अब वसीलः से उसका ख़ुद का कोई मत्लब नहीं रहा। ऐसा इंसान मुस्तक़िल मिज़ाज कहा जाता है।

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।५८।।

जिस तरह कछुआ अपने सारे आ'ज़ा को समेट लेता है, ठीक वैसे ही यह इंसान जब हर तरफ़ से अपने हवास को समेट लेता है, तब उसकी अक़्ल मुस्तकिल होती है। ख़तरे को देखते ही जिस तरह कछुआ अपने सर और पैर समेट लेता है, ठीक इसी तरह जो इंसान मौजूआत में मुतहर्रिक हवास को सब ओर से समेटकर दिल की दुन्या में क़ैद कर लेता है, उस दौर में उस इंसान की अक़्ल रासिख़ होती है; लेकिन यह तो मह्ज़ एक नज़ीर है। ख़तरे का एहसास ख़त्म होते ही कछुआ तो

अपने आ'जा को फिर फ़ैला देता है, क्या इसी तरह मुस्तक़िल मिज़ाज इंसान भी मौजूआत में लुत्फ़ लेने लगता है? इस पर फ़र्माते हैं-

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते।।५९।।

हवास के ज़रीअः मौजूआत को न हासिल करने वाले इंसानों के मौजूआत तो ख़त्म हो जाते हैं, क्योंकि वे क़बूल ही नहीं करते लेकिन उनका लगाव ख़त्म नहीं होता, हवस बनी रहती है। सारे हवास को मौजूआत से समेटने वाले बेग़रज़ आमिल की उंसियत भी **'परं दृष्ट्वा'**- उंसूरे आ'ला पर्वर्दगार का दीदार करके नजात पा लेती है।

अज़ीम इंसान कछुए की तरह अपनी हवास को मौजूआत में नहीं फ़ैलाता। एक बार जब हवास सिमट गये तो तअस्सुरात भी मिट जाते हैं। फिर वे दुबारः पैदा नहीं होते। बेग़रज़ अमली जोग के बरताव के ज़रीअः मा'बूद के रू-ब-रू दीदार के साथ उस इंसान का मौजूआत से लगाव भी ख़त्म हो जाता है। आमतौर से लोग राहे रियाज़त में हठ करते हैं (या'नी हठ एक जोग है)। हठ से हवास रोककर वे मौजूआत से छुटकारा पा लेते हैं लेकिन मन में उनकी फ़िक्र, लगाव बना रहता है। यह लगाव **'परं दृष्ट्वा'**- मा'बूद का दीदार करने के बा'द ही ख़त्म होता है, इसके पहले नहीं।

क़ाबिले एहतिराम महाराजजी इसके मुतअल्लिक़ अपना एक वाकिअः बताया करते थे। घर छोड़ने से पहले उन्हें तीन बार निदा-ए-ग़ैब हुई थी। हमने अर्ज किया- ''महाराजजी! आपको निदा-ए-ग़ैब क्यों हुई? हमलोगों को तो नहीं हुई।'' तब इस पर महाराजजी ने इर्शाद फ़र्माया- ''हो! ई शंका मोहू के भई रही'' या'नी यह शुब्हः मुझे भी हुआ था। तब तज़्रिबः में आया कि मैं सात जनम से लगातार साधू हूँ। चार जनम तो साधुओं-सा लिबास पहने, तिलक लगाये, कहीं भभूती पोते, कहीं कशकोल लिए घूम रहा हूँ। जोग का तरीक़ः मालूम नहीं था। लेकिन गुज़श्तः तीन जनम से बेह्तर साधू हूँ, जैसा होना चाहिए। मुझमें रियाज़ते जोग बेदार थी। पिछले जनम में नजात के क़रीब पहुँच चुका था, छुटकारा मिल चला था, लेकिन दो ख़्वाहिशात बाक़ी रह गई थीं- एक औरत और दूसरी गाँजा। ज़मीर में ख़्वाहिशात थीं, लेकिन बाहर से मैंने जिस्म को रासिख़ रखा। मन में हवस लगी थी, लिहाज़ा जनम लेना पड़ा। जनम लेते ही मा'बूद ने थोड़े ही वक़्त में सब दिखा-सुनाकर छुट्टी दिला दी। दो-तीन तमाचा दिया और साधू बना दिया। फिर यही बात श्रीकृष्ण कहते हैं कि हवास के

ज़रीअः मौजूआत का असर न कुबूल करने वाले इंसान के भी मौजूआत तो ख़त्म हो जाते हैं; लेकिन रियाज़त के ज़रीअः अज़ीमुलमर्तबत इंसान मा'बूद का दीदार कर लेने पर वह मौजूआत के लगाव से भी छुटकारा पा लेता है। लिहाज़ा जब तक दीदार न हो, 'अमल' करते रहना है।

उर कछु प्रथम बासना रही। प्रभु पद प्रीति सरित सो बही।।

(रामचरित मानस, ५/४८/६)

हवास को मौजूआत से समेटना मुश्क़िलतलब है। इस पर रोशनी डालते हैं-

यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः।।६०।।

कौन्तेय! कोशिश करने वाले ज़की इंसान की बेक़ाबू हवास उसके दिल पर ज़बरदस्ती क़ब्ज़ कर लेते हैं, मुतज़लज़िल कर देते हैं। लिहाज़ा-

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।६१।।

उन तमाम हवास पर क़ाबू हासिल करके, जोग से मुज़य्यन और ख़ुद सुपुर्दगी के साथ मेरी पनाह में आ; क्योंकि जिस इंसान के हवास क़ाबू में होते हैं, उसी की अक़्ल रासिख़ होती है। यहाँ जोग के मालिक श्रीकृष्ण वसीले के मम्नूअः आ'जा के साथ उसके सहीह उसूलवाले पहलू पर ज़ोर देते हैं। सिर्फ़ नफ़्सकुशी और मम्नूआत से हवास क़ाबू में नहीं होते। ख़ुद सुपुर्दगी के साथ मा'बूद की फ़िक्र ज़रूरी है। मा'बूद की फ़िक्र की कमी की वजह से दुन्यवी फ़िक्र हावी होगी, जिसके बुरे नताइज श्रीकृष्ण के ही अल्फ़ाज़ में देखें-

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते।
सङ्गात्सञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते।।६२।।

मौजूआत की फ़िक्र करने वाले इंसान की उन मौजूआत में उंसीयत हो जाती है। उंसीयत से ख़्वाहिशात पैदा होती है। ख़्वाहिशात पूरी होने में ख़लल पड़ने से गुस्सः पैदा होता है। गुस्सः किसे पैदा करता है?-

क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।६३।।

गुस्सः से ख़ास तरह की जहालत या'नी बदअक़्ली पैदा होती है। दाइमी और

वक़्ती चीज़ों की समझ नहीं रह जाती। बदअक़्ली से याददाश्त ग़लतफ़हमी में पड़ जाती है, [जैसा अर्जुन को हुआ था- **'भ्रमतीव च मे मनः।' (१/३०)** गीता के अख़ीर में उसने कहा- **'नष्टो मोहः स्मृर्तिलब्धा' (१८/७३)** क्या करें, क्या न करें?- इसका फैसलः नहीं हो पाता।] याददास्त ग़लतफ़हमी में पड़ जाने से जोग की हामिल अक़्ल बरबाद हो जाती है और अक़्ल गुम होने से यह इंसान अपने शरफ़ के वसीलः से गिर जाता है।

यहाँ श्रीकृष्ण ने ज़ोर दिया कि मौजूआत की फ़िक्र नहीं करनी चाहिए। रियाज़तकश को नाम, शक्ल, फ़ित्रते हक़ (लीला) और मक़ाम में ही कहीं लगे रहना चाहिए। यादे इलाही में कोताही करने पर मन दुन्यवी मौजूआत में उलझ जायेगा। दुन्यवी मौजूआत की फ़िक्र से रग़बत हो जाती है। रग़बत से उस दुन्यवी मौजूअ की ख़्वाहिश रियाज़ती के तह्त ज़मीर में होने लगती है। ख़्वाहिश पूरी होने में ख़लल पड़ने पर गुस्सः, गुस्सः से बदअक़्ली, बदअक़्ली से याददाश्त में ग़लतफ़हमी और ग़लतफ़हमी से अक़्ल गुम हो जाती है। बेग़रज़ अमली जोग को अक़्ली जोग कहा जाता है; क्योंकि अक़्ली सतह पर इस पर नज़र रखनी चाहिए कि ख़्वाहिशात पैदा ही न होने पायें, समरः है ही नहीं। ख़्वाहिश पैदा होने से यह अक़्ली जोग बरबाद हो जाता है। **'साधन करिय बिचारहीन, मन सुद्ध होय नहिं तैसे।'** (विनयपत्रिका, पद संख्या ११५/३)। ख़याल रखना जरूरी है। ख़याल न करने वाला इंसान शरफ़ के वसीले से नीचे गिर जाता है। रियाज़त का तसल्सुल टूट जाता है, पूरे तौर से ख़त्म नहीं होता। इस्ते'माल के बा'द रियाज़त वहीं से फिर शुरू होती है, जहाँ पर रुकावट आयी थी।

यह तो मौजूआत की तरफ़ राग़िब रियाज़तकश की हालत है। ख़ुदमुख़्तार ज़मीर वाला रियाज़तकश किस अंजाम को हासिल करता है?-इस पर श्रीकृष्ण कहते हैं-

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन्।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति।।६४।।

रूह को हासिल करने वाले तरीक़ों से बाख़बर बदीही दीदार करने वाला अज़ीम इंसान ख़्वाहिश और हसद से ख़ाली क़ाबू में किये गये अपने हवास के ज़रीअः **'विषयान् चरन्'**- दुन्यवी मौजूआत में सफ़र करता हुआ भी **'प्रसादमधिगच्छति'**- ज़मीर की पाकीज़गी को हासिल करता है। उसकी नज़र अपने ऊपर पूरी तरह रहती है। अज़ीम इंसान के लिए मुक़र्ररः तरीक़ः की पाबन्दी नहीं रह जाती। उसके लिए

कहीं नामुबारक नहीं रहता जिससे वह ख़ुद की हिफ़ाज़त करे और उसके लिए कोई मुबारक चीज़ बाक़ी नहीं रह जाती जिसकी वह ख़्वाहिश करे।

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते।।६५।।

रब के मुकम्मल रहमोकरम 'रब्बानियत' से मुज़ैयन होने पर अज़ीम इंसान की सारी तक्लीफ़ें ख़त्म हो जाती हैं, **'दुखालयम् अशाश्वतम्'**- दुन्यवी मौजूआत की ज़रूरीयात ख़त्म हो जाती है और उस ख़ुशमिज़ाज इंसान की अक़्ल जल्द ही अच्छी तरह साकिन हो जाती है। लेकिन जो जोग से मुज़य्यन नहीं है, उसकी हालत पर रोशनी डालते हैं-

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना।
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम्।।६६।।

जोग की रियाज़त से ख़ाली इंसान के बातिन में बेग़रज़ अमल वाली अक़्ल नहीं होती। उस नाअह्ल के ज़मीर में एहसास भी नहीं होता। एहसास से ख़ाली इंसान को सुकून कहाँ, और बिना सुकून वाले इंसान को आराम कहाँ? जोग की रियाज़त करने से कुछ दिखाई पड़ने पर ही ख़याल बनता है- **'जाने बिनु न होइ परतीती।' (रामचरितमानस, ७/८८ ख/७)**- सोच के बग़ैर सुकून नहीं मिलता और सुकून से ख़ाली इंसान को आराम या'नी दाइमी, अबदी का हुसूल नहीं होता।

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनु विधीयते।
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि।।६७।।

पानी में कश्ती को जिस तरह हवा अपने क़ब्ज़ में लेकर उसकी मंज़िल से दूर कर देती है, ठीक उसी तरह दुन्यवी मौजूआत में मुब्तला हवास में, जिस हिस के साथ मन रहता है, वह एक ही हिस उस नाअह्ल इंसान की अक़्ल को इग़्वा कर लेती है। लिहाज़ा जोग का अमल लाज़िमी है। अमली बरताव पर श्रीकृष्ण फिर ज़ोर देते हैं-

तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।६८।।

लिहाज़ा ऐ बाज़ू-ए-अज़ीम! जिस इंसान के हवास, हवास के मौजूआत से पूरी तरह क़ाबू में किये हुए होते हैं, उसकी अक़्ल मुस्तकिल होती है। 'बाज़ू' अमली दाइरः

की अलामत है। मा'बूद बाजू-ए-अज़ीम और बाजू-ए-तवील कहे जाते हैं। वे बिला दस्तोपा के सभी जगह काम करते हैं। उनमें जो दाखिलः पाता है या जो उसी रब्यानियत की जानिब बढ़ रहा है, वह भी बाजू-ए-अज़ीम है। श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों को बाजू-ए-अज़ीम कहा गया है।

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः।।६९।।

तमाम माद्दी जानदारों के लिए वह मा'बूद शब की तरह हैं, क्योंकि दिखायी नहीं देता, न सोच ही काम करती है- लिहाज़ा शब की तरह है। उस शब में, मा'बूद में, नफ़्सकुश इंसान अच्छी तरह देखता है, चलता है, जागता है; क्योंकि वहाँ उसकी पकड़ है। जोगी नफ़्सकुशी के ज़रीअः उसमें दाख़िलः पा जाता है। जिन फ़ानी दुन्यवी ऐशो-इश्रत के लिए तमाम जानदार शबो-रोज़ मेहनत करते हैं, जोगी के लिए वही शब है।

रमा बिलासु राम अनुरागी। तजत बमन जिमि जन बड़भागी।।
(रामचरित मानस, २/३२३/८)

जो जोगी नेक अमल की राह में मुसल्सल चौकन्ना और माद्दीयाती अस्रात से हर तरह आरी होता है, वही उस मा'बूद में दाख़िलः पाता है। वह रहता तो दुन्या में ही है, लेकिन उस पर दुन्या का असर नहीं पड़ता। अज़ीम इंसान की बूंदो-बाश की अक्कासी देखें-

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं
समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे
स शान्तिमाप्नोति न कामकामी।।७०।।

जिस तरह हर जानिब से लबरेज़ अटल अज़्मत वाले समन्दर में नदियों का पानी बिना उसमें हलचल पैदा किये बड़ी तेजी से उसमें समा जाता है, ठीक उसी तरह मा'बूद में क़ाइम, मुस्तक़िल मिज़ाज इंसान में सारे ऐश बिना कोई ख़राबी पैदा किये समा जाते हैं। ऐसा इंसान आ'ला सुकून को हासिल करता है, न कि ऐशो-इश्रत को चाहने वाला।

ख़ौफ़नाक बहाव वाली हज़ारों नदियों की धाराएँ फ़सल को तबाह करती हुई,

दुश्मने-जाँ बनती हुई, शहूरों को गर्क़ करती हुई, तहूलकः मचाती हुई बड़ी तेजी से समन्दर में गिरती हैं; मगर समन्दर को न इक इंच ऊपर उठा पाती हैं और न गिरा ही पाती हैं, बल्कि उसी में ज़म हो जाती है- ठीक इसी तरह मुस्तक़िल मिज़ाज अज़ीम इंसान की तरफ़ तमाम ऐशो-इश्रत की चीज़ें उतने ही ज़ोरदार ढंग से आती हैं लेकिन उसी में ज़म हो जाती हैं। उन अज़ीम इंसानों में मुबारक ख़्वाह नामुबारक तअस्सुरात नहीं हो पाते। जोगी के अमल न 'शफ़्फ़ाफ़' होते हैं न 'सियाह'। क्योंकि जिस तबीअ़त पर तअस्सुरात असर अन्दाज़ होते हैं, वह पाबन्द और तहूलील हो गयी। इसके साथ ही रब्बानियत की हालत आ गयी। अब तअस्सुर पड़े भी तो कहाँ? इस एक ही श्लोक में श्रीकृष्ण ने अर्जुन के कई सवालात का हल निकाल दिया। उसका तजस्सुस था कि मुस्तक़िल मिज़ाज अज़ीम इंसान की पहचान क्या है? वह कैसे बोलता है, कैसे बैठता है, कैसे चलता है? श्रीकृष्ण ने एक ही लफ़्ज़ में जवाब दिया कि वे समन्दर के मानिन्द होते हैं। उनके लिए क्या करना चाहिए, क्या नहीं करना चाहिए के उसूल की पाबन्दी नहीं होती कि ऐसे उठो-बैठो और ऐसे चलो। वे ही आ'ला सुकून को हासिल करते हैं क्योंकि वे नफ़्सकुश हैं। ऐशो-इश्रत की ख़्वाहिशात वाला सुकून हासिल नहीं करता। इसी पर फिर ज़ोर देते हैं-

विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः।
निर्ममो निरहङ्कारः स शान्तिमधिगच्छति।।७१।।

जो इंसान सारे ख़्वाहिशात को तर्क कर **'निर्ममः'**- संगदिल या'नी मैं और मेरे एहसास व ग़ुरूर और दुन्यवी लगाव से मुबर्रा होकर बरताव करता है, वह उस आ'ला सुकून को हासिल करता है, जिसके बा'द कुछ भी पाना बाकी नहीं रह जाता।

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति।
स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति।।७२।।

पार्थ! मज़्कूरएबाला हालत मा'बूद को हासिल कर लेने वाले इंसान की हालत है। समन्दर की तरह उन अज़ीम इंसानों में दुन्यवी मौजूआत नदियों की तरह ज़म हो जाते हैं। वे पूरी तौर से मुत्तक़ी और मा'बूद का बदीही दीदार करने वाले हैं। सिर्फ़ 'अनल हक़' (**'अहं ब्रह्मास्मि'**) पढ़ लेने से या रट लेने से यह हालत नहीं मिलती। बज़रीअः अमल ही इस मा'बूद की हालत को हासिल किया जाता है। ऐसा अज़ीम इंसान ख़ुदाई अक़ीदत पर क़ाइम रहते हुए जिस्म के आख़िरी वक़्त में भी ख़ुदाई मसर्रत को ही हासिल करता है।

मग़्ज़े सुख़न :-

आमतौर से कुछ लोग कहते हैं कि दूसरे बाब में गीता तक्मील को पहुँच गयी, लेकिन सिर्फ़ अमल का महज़ नाम लेने से अमल पूरा हो जाता हो, तब तो गीता का अख़ीर माना जा सकता है। इस बाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने यही बताया कि- अर्जुन! बेग़रज़ अमली जोग के बारे में सुन, जिसे जानकर तू दुन्यवी बन्दिश से आज़ाद हो जायेगा। अमल करना तेरे इख़्तियार में है, समरः में कभी नहीं। अमल करने में तू लाअक़ीदत भी न हो। मुसल्सल तौर पर करने के लिए तैयार हो जा। इसके समरः में तू **'परं दृष्ट्वा'**- आ'ला इंसान (मा'बूद) का दीदार कर मुस्तकिल मिज़ाज बनेगा, आ'ला सुकून हासिल करेगा इंसान लेकिन इसका खुलासः नहीं किया कि अमल है क्या?

यह 'सांख्ययोग' (इल्मी जोग) नाम का बाब नहीं है। यह नाम शरीअ़त के मुसन्निफ का नहीं बल्कि शर्हनवीसों की देन है। वे अपनी अक़्ल के मुताबिक़ ही बातों को समझते हैं तो तअज्जुब क्या है?

इस बाब में अमल की अहम्मीयत, उसको अंजाम देने में बरती जाने वाली होशयारी और बाख़बर (मुस्तक़िल मिज़ाज) की पहचान बताकर श्रीकृष्ण ने अर्जुन के दिलो-दिमाग़ में अमल के मुतअल्लिक़ दिलचस्पी पैदा की है, उसे कुछ सवालात दिये हैं। रूह दाइमी है, अबदी है, उसका इल्म हासिल कर रम्ज़शनास बन। इसके हुसूल के दो तरीक़े हैं- इल्मी जोग और बेग़रज़ अमली जोग।

अपनी कुव्वत को समझकर, नफ़ा-नुक़्सान का खुद फैसलः लेकर अमल में लग जाना राहे इल्म है और इलाह पर मुन्हसिर होकर खुद सुपुर्दगी के साथ उसी अमल में लग जाना राहे बेग़रज़ अमल ख़्वाह राहे अक़ीदत है। गोस्वामी तुलसीदास ने दोनों का इज़्हार इस तरह किया है-

मोरें प्रौढ़ तनय सम ग्यानी। बालक सुत सम दास अमानी।।
जनहि मोर बल निज बल ताही। दुहु कहँ काम क्रोध रिपु आही।।

(रामचरित मानस, ३/४२/८-९)

दो तरह के लोग मुझे याद करने वाले हैं- एक राहे इल्म वाले, दूसरे राहे अक़ीदत वाले। बेग़रज़ अमल का राही या राहे अक़ीदत का राही मेरी पनाह लेकर, मेरे सहारे चलता है, इल्म का जोगी अपनी सलाहीयत के मद्देनज़र, अपने नफ़ा-नुक़्सान

पर ग़ौर करके अपने भरोसे चलता है, जबकि दोनों के दुश्मन एक ही हैं। इल्म के ही को ख़्वाहिश, गुस्सः वग़ैरः दुश्मनों पर फ़त्ह हासिल करनी है और बेग़रज़ अमल के जोगी को भी इन्हीं से जंग करनी है। ख़्वाहिशात का ईसार दोनों करते हैं और दोनों राहों में किया जाने वाला अमल भी एक ही है। ''इस अमल के समरः में आ'ला सुकून को हासिल कर लेगा।'' लेकिन यह नहीं बताया कि अमल है क्या? अब आपके भी सामने 'अमल' एक सवाल है। अर्जुन के मन में भी अमल के लिए तजस्सुस पैदा हुआ। तीसरे बाब के शुरू में ही उसने अमल के मुतअल्लिक़ सवाल पेश किया। लिहाज़ा–

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'कर्मजिज्ञासा' नाम द्वितीयोऽध्यायः।।२।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की शक्ल में उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'कर्म जिज्ञासा' (अमली तजस्सुस) नाम का दूसरा बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'कर्मजिज्ञासा' नाम द्वितीयोऽध्यायः।।२।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'कर्म जिज्ञासा' (अमली तजस्सुम) नाम का दूसरा बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ तृतीयोऽध्यायः।।
(तीसरा बाब)

बाब दो में श्रीकृष्ण ने बताया कि यह अक़्ल तेरे लिए राहे इल्म के मुतअल्लिक़ कही गयी। कौन-सी अक़्ल? यही कि जंग कर। जीतोगे तो आ'ला मर्तबः का मक़ाम हासिल कर लोगे और हारोगे तो देवता का मर्तबः है। फ़त्ह में सब कुछ और शिकस्त में भी देवता का मर्तबः है, कुछ हासिल ही होता है। लिहाज़ा इस लिहाज़ से फाइदः और नुक़्सान दोनों हालत में कुछ न कुछ हासिल ही है। ज़रा-सा भी नुक़्सान नहीं है। फिर कहा, अब इसी को तू बेग़रज़ अमली जोग के बारे में सुन। जिस अक़्ल से मुज़ैयन होकर तू आ'माल की जंजीरों से अच्छी तरह आज़ाद हो जायेगा। फिर उसकी सिफ़ात पर रोशनी डाली। अमल करते वक़्त ज़रूरी एहतियातों पर ज़ोर दिया कि समरः की ख़्वाहिशवाला न हो, ख्वाहिशात से दूर होकर अमल में लग और अमल करने में तू बेअक़ीदः भी न हो, जिससे तू अमल की ज़ंजीरों से आज़ाद हो जायेगा। आज़ाद तो होगा, लेकिन रास्ते में अपने हालात का एहसास ही नहीं होगा।

लिहाज़ा अर्जुन को बेग़रज़ अमली जोग के मुक़ाबले में राहे इल्म आसान और हासिल होने वाला महसूस हुआ। उसने सवाल किया- जनार्दन! बेग़रज़ अमल के मुक़ाबले में राहे इल्म आपकी नज़र में अफ़्ज़ल है, तो मुझे ख़ौफ़नाक अमल में क्यों लगाते हैं? सवाल फ़ित्री था। मान लें, एक ही मंज़िल पर जाने के दो रास्ते हैं। अगर आपको दरहक़ीक़त जाना है, तो आप ज़रूर सवाल करेंगे कि इनमें आसान कौन है? अगर नहीं करते तो आप राहरौ नहीं। ठीक इसी तरह अर्जुन ने भी सवाल खड़ा किया-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन।
तत्किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव।।१।।

लोगों पर रहम करने वाले जनार्दन! अगर बेग़रज़ अमली जोग के मुकाबले में इल्मी जोग का रास्तः आपकी नज़र में बेहतर है, तो हे केशव! आप मुझे इतने

ख़ौफनाक अमली जोग में क्यों लगाते हैं?

बेग़रज़ अमली जोग में अर्जुन को खौफनाक मंजर दिखायी पड़ा क्योंकि इसमें अमल करने में ही तेरा इख़्तियार है, समरः हासिल करने में कभी नहीं। अमल करने में बेअक़ीदः भी न हो और मुसलसल ख़ुदसुपुर्दगी के साथ, जोग पर नज़र रखते हुए अमल में लगा रह। जबकि राहे इल्म में शिकस्त खाओगे तो देवता का मर्तबः है, फ़त्ह में हासिल करने पर हुज़ूरे आ'ला का मक़ाम है। अपना नफ़ा-नुक़्सान ख़ुद देखते हुए आगे बढ़ना है। इस तरह अर्जुन को बेग़रज़ अमली जोग के मुक़ाबले में राहे इल्म आसान नज़र आयी। लिहाज़ा उसने गुज़ारिश की-

व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे।
तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम्।।२।।

आप इन उलझे हुए बयानात से मेरी अक़्ल को फ़िरेफ़्तः-सी कर देते हैं। आप तो मेरी अक़्ल की फ़िरेफ़्तगी दूर करने में लगे हुए हैं। लिहाज़ा इनमें से एक तय करके बताइए, जिससे मैं 'श्रेय' (शरफ़) आ'ला इफ़ादी नजात को हासिल कर लूँ। इस पर श्रीकृष्ण ने कहा-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

लोकेऽस्मिन्द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ।
ज्ञानयोगेन साङ्ख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम्।।३।।

बेगुनाह अर्जुन! इस दुन्या में तह्क़ीक़-ए-हक़ के दो रास्ते मेरे ज़रीअः पहले ही बताये गये हैं। पहले का मत्लब कभी सतजुग या त्रेता में नहीं, बल्कि अभी जिसे बाब दो में कह आये हैं। आलिमों के लिए राहे इल्म और जोगियों के लिए बेग़रज़ अमली राह बतायी गयी। दोनों ही राहों के मुताबिक़ अमल तो करना ही पड़ेगा। 'अमल' ज़रूरी है।

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते।
न च सन्न्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति।।४।।

अर्जुन! इंसान न तो आ'माल को न शुरू करने से अमल की बंदिश से आज़ाद होने की आख़िरी हालत को हासिल होता है, और न शुरू किये हुए अमल को मह्ज़ छोड़ने से रब्बानियत को हासिल करने वाले मक़्सदे आ'ला को ही हासिल करता है। अब तुझे राहे इल्म अच्छी लगे या राहे बेग़रज़ अमल, दोनों में अमल तो करना ही पड़ेगा।

अमूमन ऐसी हालत में लोग राहेरब में मुख़्तसर राह और बचाव तलाश करने लगते हैं। 'अमल' शुरू ही न करें, हो गये बेग़रज़ अमल करने वाले, कहीं ऐसी ग़लतफ़हमी न रह जाय लिहाज़ा श्रीकृष्ण ज़ोर देते हैं कि आ'माल की शुरुआत न करने से कोई बेग़रज़ अमल के एहसास को नहीं हासिल कर पाता। मुबारक-नामुबारक आ'माल का जिस जगह इख़्तिताम है, आ'ला बेग़रज़ अमल की उस हालत को अमल करके ही हासिल किया जा सकता है। इसी तरह बहुत से लोग कहते हैं, ''हम तो इल्म के राही हैं, राहे इल्म में अमल है ही नहीं।'' ऐसा मानकर आ'माल को तर्क करने वाले इल्मी नहीं होते। शुरू किये हुए अमल को महज़ तर्क करने से कोई दीदारे रब की तम्सील आ'ला कामयाबी को हासिल नहीं कर पाता; क्योंकि,

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।।५।।

कोई भी इंसान किसी दौर में एक लम्हः भी अमल किये बग़ैर नहीं रहता क्योंकि सभी इंसान कुद्रत से पैदा हुई सिफ़ात के ज़रीअः मज्बूर होकर अमल करते हैं। कुद्रत और कुद्रत से पैदा हुई सिफ़ात जब तक जिंदः हैं, तब तक कोई भी इंसान काम किये बग़ैर रह ही नहीं सकता।

बाब चार के तैंतीसवें और सैंतीसवें श्लोक में श्रीकृष्ण कहते हैं कि जितने भी अब तक किये गये अमल हैं वे सब इल्म में मुज़्मिर हो जाते हैं। इल्म की तम्सीली आग सारे आ'माल को ख़ाक कर देती है। यहाँ वे कहते हैं कि- अमल किये बग़ैर कोई रहता ही नहीं। आख़िरकार वे अज़ीम इंसान कहते क्या हैं? उनका मतलब है कि यग करते-करते तीनों सिफ़ात से मुबर्रा हो जाने पर मन की तह्लील और बदीही दीदार के साथ यग का समरः निकल जाने पर अमल की ज़रूरत ख़त्म हो जाती है। उस मुकर्ररः तरीक़ः की तक्मील से पहले अमल ख़त्म होते नहीं, कुद्रत पीछा नहीं छोड़ती।

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते।।६।।

इतने पर भी ख़ासतौर से जाहिल लोग जो काम करने वाले हवासे ज़ाहिरी पर बज़िद बंदिश लगाकर हवास के मौजूआत को मन से याद करते रहते हैं, वे पुरफ़रेब हैं, रियाकार हैं, न कि इल्मदाँ। इससे ज़ाहिर होता है कि श्रीकृष्ण के दौर

में भी ऐसी क़दामतें थीं। लोग किये जाने के लाइक़ तरीक़ः को छोड़कर हवास को हठ से रोककर बैठ जाते थे और कहने लगते थे कि 'मैं इल्मदाँ हूँ', 'मैं कामिल हूँ'; लेकिन श्रीकृष्ण कहते हैं कि वे धोकेबाज़ हैं। राहे इल्म अच्छा लगे या बेग़रज़ अमली जोग, दोनों ही राहों में अमल तो करना ही पड़ेगा।

यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन।
कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते।।७।।

अर्जुन! जो इंसान मन से हवास को क़ाबू में करके, जब मन में भी ख़्वाहिशात सर न उठाती हों, हर तरह से लगाव से मुबर्रा हुआ हवासे ज़ाहिरी से अमली जोग का बरताव करता है, वह अज़ीम है। ठीक है, समझ में आया कि अमल का बरताव करें: लेकिन यह सवाल खड़ा होता है कि कौन-सा अमल करें। इस पर कहते हैं-

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः।।८।।

अर्जुन! तू मुअय्यन किये हुए अमल का हामिल बन। या'नी आ'माल तो बहुत से हैं, उनमें से कोई एक चुना हुआ है, उसी मुअय्यन अमल को कर। अमल न करने के मुक़ाबले में अमल करना ही बेहूतर है; लिहाज़ा अगर करते रहोगे, थोड़ी भी दूरी तय कर लोगे, तो जैसा कि पहले बता आये हैं- आमदो-रफ़्त के बहुत बड़े ख़ौफ़ से नजात दिलाने वाला है, इस वास्ते बेहूतर है। अमल न करने से तेरा जिस्मानी सफ़र भी कामयाब नहीं होगा। जिस्मानी सफ़र का मा'ना लोग लगाते हैं- 'जिस्मानी पर्वरिश'। कैसी जिस्मानी पर्वरिश? क्या आप जिस्म है? यह इंसान तमाम जनमों से, तमाम ज़मानों से जिस्म का सफ़र ही तो करता चला आ रहा है। जैसे लिबास बोसीदः हुआ तो दूसरा-तीसरा पहन लिया, इसी तरह हशरातुलअर्ज़ से इंसान तक, ख़ालिक़ से लेकर सारी दुन्या क़ाबिले तब्दील है। ऊपर-नीचे योनियों (शक्लों) में बराबर यह ज़ीरूह जिस्मानी सफ़र ही तो करती चली आ रही है। 'अमल कोई ऐसी चीज़ है, जो इस सफर को साबित कर देती है, मुकम्मल कर देती है। मान लें, एक ही जनम लेना पड़ा तो सफ़र जारी है, अभी तो राही चल ही रहा है। वह दूसरे जिस्मों का सफर कर रहा है। सफ़र मुकम्मल तब होता है जब मंज़िल आ जाय।' मा'बूद में मक़ाम पाने के बा'द इस रूह को जिस्मानी सफर नहीं करना पड़ता या'नी जिस्म को तर्क करने और उसे क़बूल करने वाला सिल्सिलः ख़त्म हो जाता है। लिहाज़ा अमल

कोई ऐसी चीज़ है कि इस इंसान को फ़िर जिस्मानी सफ़र नहीं करना पड़ता। **'मोक्ष्यसेऽशुभात्'**- (बाब ४/१६) अर्जुन! इस अमल को करके तू दुन्यवी बंदिश 'नामुबारक' से आज़ाद हो जायेगा। अमल कोई ऐसी चीज़ है जो दुन्यवी बंदिश से छुटकारा दिलाती है। अब सवाल खड़ा होता है कि वह मुअय्यनः अमल है क्या? इसकी वज़ाहत करते हैं-

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।
तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर।।९।।

अर्जुन! यग का तरीक़-ए-कार ही अमल है। वह हरकत अमल है जिससे यग पूरा हो। साबित है कि अमल एक मुअय्यनः तरीक़-ए-कार है। इसके इलावः जो अमल होते हैं, क्या वे अमल नहीं हैं? श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं- नहीं, वे अमल नहीं हैं। **'अन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः'**- इस यग के तरीक़-ए-कार के इलावः दुन्या में जो कुछ भी किया जाता है, सारी दुन्या जिसमें रात-दिन मश्गूल है, वह सब कुछ इसी दुन्या की एक बंदिश है, न कि अमल। अमल तो **'मोक्ष्यसेऽशुभात्'**- नामुबारक या'नी दुन्यवी बंदिश से छुटकारा दिलाने वाला है। मह्ज़ यग का तरीक़-ए-कार ही अमल है। वह हरकत अमल है जिससे यग पूरा होता है। लिहाज़ा अर्जुन! उस यग की तक्मील के लिए सुह्बतेअसर से अलग रहकर अच्छी तरह अमल पर कारबन्द हो। सुह्बते असर से अलग हुए बग़ैर यह अमल होता ही नहीं।

अब हम समझ गये कि 'यग का तरीक़-ए-कार ही अमल है'; लेकिन यहाँ फिर एक नया सवाल खड़ा हो गया कि वह यग क्या है जिसे किया जाय? इसे समझने के लिए पहले यग को न बताकर श्रीकृष्ण बताते हैं कि यग आया कहाँ से? वह देता क्या है? उसकी ख़ुसूसियात पर रोशनी डाली और चौथे बाब में जाकर ख़ुलासः किया कि यग क्या है, जिसे हम अमली जामः पहना दें और हमसे अमल होने लगे। जोग के मालिक श्रीकृष्ण के अन्दाज़े बया'नी से ज़ाहिर है कि जिस चीज़ की अक्कासी करनी है, वे पहले उसकी ख़ुसूसियात की मुसव्विरी करते हैं जिसके बिना पर अक़ीदत पैदा हो। उसके बा'द वे उसमें बर्ते जाने वाले एहतियात पर रोशनी डालते हैं और आख़िर में अस्ल उसूल की वज़ाहत करते हैं।

याद रहे कि यहाँ पर श्रीकृष्ण ने अमल के दूसरे पह्लू पर रोशनी डाली कि अमल एक मुअय्यनः तरीक़-ए-कार है। जो कुछ किया जाता है, वह अमल नहीं है।

बाब दो में पहली बार अमल का नाम लिया, उसकी ख़ुसूसियात पर ज़ोर दिया, उसमें बरते जाने वाले एहतियात पर रोशनी डाली; लेकिन यह नहीं बताया कि अमल है क्या? यहाँ बाब तीन में बताया कि कोई इंसान अमल किये बग़ैर नहीं रहता। कुद्रत का गुलाम होकर इंसान अमल करता है। इसके बावुजूद भी जो लोग हवास पर हठ के ज़रीअः बंदिश लगाकर मन से उसके मौजूआत की फ़िक्र करते हैं, वे घमण्डी हैं, घमण्ड का बरताव करने वाले हैं। लिहाज़ा अर्जुन तू क़रारेवाक़ई हवास को क़ाबू में करके अमल कर। लेकिन सवाल जैसे का तैसा बना है कि कौन-सा अमल करे? इस बात पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा- अर्जुन! तू मुअय्यनः अमल को कर।

अब सवाल उठता है कि मुअय्यनः अमल क्या है, जिसे हम करें? तब बताया कि यग को अमली जामः पहनाना ही अमल है। अब सवाल उठता है कि वह यग क्या है? यहाँ यग की पैदाइश, ख़ुसूसियात बयान करके ख़ामोश हो जायेंगे और आगे बाब चार में यग की निखरी हुई शक्ल मिलेगी, जिसे करना 'अमल' है। अमल की यह तश्रीह गीता को समझने की कुंजी है। यग के इलावः दुन्या में लोग कुछ-न-कुछ करते ही रहते हैं। कोई खेती करता है, तो कोई रोज़गार। कोई हाकिम है तो कोई ख़ादिम। कोई अपने को अक़्लबसरी कहता है, तो कोई मज़दूर। कोई ख़िद्मते मुआशरः को अमल मानता है, तो कोई ख़िद्मते मुल्क को और इन्हीं आ'माल में लोग बाग़रज़ और बेग़रज़ अमल की तम्हीद बनाये पड़े हैं। लेकिन श्रीकृष्ण कहते हैं- ये आ'माल नहीं हैं। **'अन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः'**- यग के तरीक़-ए-कार के सिवा जो कुछ भी किया जाता है, वह इसी दुन्या की बंदिश में डालने वाला अमल है, न कि नजात दिलाने वाला अमल। दरअस्ल यग का तरीक़-ए-कार ही अमल है। अब यग न बताकर पहले यह बताते हैं कि यग आया कहाँ से?

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक्।।१०।।

काइनात की तख़्लीक़ करने वाले ख़ालिक़ (ब्रह्मा) ने अज़ल की शुरुआत में यग के साथ ख़ल्क़ की तख़्लीक़ कर के कहा कि इस यग के ज़रीअः इज़ाफ़ः को हासिल करो। यह यग तुम लोगों को **'इष्टकामधुक्'**- जिसमें हमारे मा'बूद के बरख़िलाफ़ न के हो, बिला नुक़्सान के मा'बूद के मुतअल्लिक़ ख़्वाहिशात को पूरा करेगा।

यग के साथ ख़ल्क़ की किसने तख़्लीक़ की? ख़ल्क़ के मालिक ख़ालिक़ ने।

ख़ालिक़ (ब्रह्मा) कौन? क्या चार मुँह और आठ आँखों वाला ब्रह्मा, जैसा कि मशहूर है। नहीं, श्रीकृष्ण के मुताबिक़ ब्रह्मा नाम का कोई अलग इक़्तिदार है ही नहीं। फिर काइनात की तख़्लीक़ करने वाला कौन है? दरहक़ीक़त जिसमें ख़ल्क़ के बुन्यादी मख़ज मा'बूद में दाख़िलः पा लिया है वह अज़ीम इंसान ख़ालिक़ है। अक़्ल ही ख़ालिक़ है- **'अहंकार सिव बुद्धि अज, मन ससि चित्त महान।'** (रामचरितमानस, ६/१५ क)- उस वक़्त अक़्ल मह्ज़ मशीन होती है, उस इंसान की ज़बान में मा'बूद ही बोलता है।

यादे इलाही का हक़ीक़ी अमल शुरू हो जाने पर अक़्ल में रोज़-ब-रोज़ इज़ाफ़ः होता चला जाता है। शुरू में वह अक़्ल इल्मे तसव्वुफ़ से मुज़ैयन होने की वज्ह से **'ब्रह्मवित्'** (हक़शनास) कही जाती है। एक के बा'द एक उयूब का ख़ातिमः होने के बा'द इल्मे तसव्वुफ़ में अफ़्ज़ल होने के बिना पर यह आ'ला हक़शनास (ब्रह्मविद्वर) कही जाती है। उरुज और लतीफ़ हो जाने पर अक़्ल की हालत में तरक़्क़ी हो जाती है। ऐसी हालत में वह 'आ'लातर हक़शनास' (ब्रह्म विद्वरीयान्) कहलाती है। उस हालत में हक़शनास इंसान दूसरों को भी तरक़्क़ी के रास्तः पर लाने का इख़्तियार हासिल कर लेता है। अक़्ल का आख़िरी अंजाम है- 'आ'लातरीन हक़शनास' (ब्रह्म विद्वरिष्ट) या'नी हक़शनास की वह हालत जिसमें मा'बूद का दख़्ल है। ऐसी हालत वाले अज़ीम इंसान ख़ल्क के बुन्यादी मख़ज़ मा'बूद में दाख़िल और क़ाइम रहते हैं। ऐसे अज़ीम इंसानों की अक़्ल मह्ज़ मशीन है। वे ही ख़ालिक़ कहलाते हैं। वे क़ुद्रत के वबाल की तह्क़ीक़ कर तरीक़-ए-रियाज़त की तख़्लीक़ करते हैं। यग के मुताबिक़ तअस्सुरात का देना ही ख़ल्क़ की तख़्लीक़ है। इससे पहले समाज बेहिस, बेतर्तीब रहता है। काइनात अबदी है। तअस्सुरात पहले से ही हैं; लेकिन बेतर्तीब और बदशक्ल है। यग के मुताबिक़ उन्हें ढालना ही तख़्लीक़ करना या सजाना है।

ऐसे अज़ीम इंसान ने कल्प (बदलाव) की शुरुआत में यग के साथ ख़ल्क़ की तख़्लीक़ की। कल्प रोग से नजात दिलाता है। हक़ीम कल्प देते हैं, कोई जिस्मानी बदलाव कराता है। यह लम्हाती अज्साम का कल्प 'बदलाव' है। हक़ीक़ी कल्प (बदलाव) तो तब है, जब दुन्यवी आज़ार से नजात मिल जाय। इबादत की शुरुआत इस कल्प (बदलाव) की शुरुआत है। इबादत पूरी हुई, तो आपका कल्प (बदलाव) पूरा हो गया।

इस तरह आ'ला रूह की शक्ल में क़ाइम अज़ीम इंसानों ने यादे रब की शुरुआत में यग के साथ तअस्सुरात को अच्छी तरह से तर्तीब देकर कहा कि इस

यग से तुम तरक़्क़ी हासिल करो। कैसी तरक़्क़ी? क्या मकान कच्चे से पक्का बन जायेगा? आमदनी ज़ियादः होने लगेगी? नहीं, यग **'इष्टकामधुक्'**– मत्लूब से मुतअल्लिक़ ख़्वाहिश को पूरा करेगा। मत्लूब है मा'बूद। उस मा'बूद के मुतअल्लिक़ ख़्वाहिश को पूरा करने वाला है। सवाल फ़ित्री है कि यग सीधे उस मा'बूद को हासिल करा देगा या क़दम-ब-क़दम चलकर?

देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ।।११।।

इस यग के ज़रीअः मलाइक का उरुज करो या'नी रूहानी दौलत का इज़ाफ़ः करो। वे मलाइक तुम लोगों को तरक़्क़ी अता करेंगे। इस तरह आपस में तरक़्क़ी करते हुए आ'ला शरफ़, जिसके बा'द कुछ भी पाना बाकी न रहे, ऐसे आ'ला इफ़ादः को हासिल कर लो। जैसे-जैसे हम यग में दाख़िल होंगे (आगे यग का मा'ना होगा, तरीक़-ए-इबादत), वैसे-वैसे दिल की दुन्या में रूहानी दौलत हासिल होती चली जायेगी। 'आ'ला मलक' वाहिद पर्वर्दगार है, उस आ'ला मलक में दाखिलः दिला देने वाली जो दौलत है, बातिन की जो हमज़ात ख़सूलत है, उसी को 'रूहानी दौलत' कहते हैं। वह उस आ'ला मलक के हुसूल को मुम्किन बनाती है, लिहाज़ा रूहानी दौलत कही जाती है, न कि बाहर पाये जाने वाले मलाइक-पत्थर-पानी जैसा कि लोग तसव्वुर कर लेते हैं। जोग के मालिक श्रीकृष्ण के अल्फ़ाज़ में उनका कोई वजूद नहीं है। आगे फ़र्माते हैं-

इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः।।१२।।

यग के ज़रीअः तरक़्क़ीशुदा मलाइक (रूहानी दौलत) आपको **'इष्टान् भोगान् हि दास्यन्ते'**– मत्लूब या'नी क़ाबिले इबादत (आराध्य) से मुतअल्लिक़ ने'मतों से नवाज़ेंगे, दूसरा कुछ नहीं। **'तैः दत्तान्'**– वे ही वाहिद फ़ैयाज़ हैं। मत्लूब को हासिल करने का दूसरा कोई रास्तः नहीं है। इन मलकूती ख़ुसूसियात में इज़ाफ़ः किये बग़ैर जो इस हालत का ऐश करता है, वह यक़ीनी तौर पर चोर है। जब उसने हासिल ही नहीं किया, तो ऐश करेगा क्या? लेकिन कहता ज़रूर है कि हम तो कामिल हैं, रम्ज़शनास हैं। ऐसी लम्बी-चौड़ी बातें करने वाला इस राह से मुँह छुपाने वाला है। वह यक़ीनी तौर पर चोर है, न कि हुसूलयाफ़्तः, लेकिन हुसूल वाले क्या हासिल करते हैं?

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्।।१३।।

यग से बचे हुए अजनास को खाने वाले आबिद हज़्रात सारे गुनाहों से आज़ाद हो जाते हैं। रूहानी दौलत में इज़ाफ़ः करते-करते बतौर नतीजः दौर-ए-हुसूल ही दौर-ए-तक्मील है। जब यग पूरा हो गया, तो बाक़ी बचा हुआ रब ही अनाज है। इसी को श्रीकृष्ण ने दूसरे अल्फ़ाज़ में कहा- **'यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम्'**- यग जिसकी तख़्लीक़ करता है उस ख़ुराक को खाने वाला मा'बूद में दाख़िल हो जाता है। यहाँ वे फ़र्माते हैं कि यग से बाक़ी बची हुई ख़ुराक (रहमानी अमरित) को खाने वाला सारे गुनाहों से छुटकारा पा जाता है। आबिद हज़्रात तो आज़ाद हो जाते हैं; लेकिन गुनाहगार लोग फ़िरेफ़्तगी के ज़रीअः पैदा होने वाले अज्साम के लिए पकाते हैं। वे अज़ाब खाते हैं। उन्होंने यादे इलाही भी की, इबादत को समझा, आगे भी बढ़े, लेकिन बदले में एक मीठी-सी चाहत पैदा हो गई कि, **'आत्मकारणात्'**- जिस्म की ख़ुशी के लिए और जिस्म के मुतअल्लिक़ात को लेकर कुछ हासिल हो। उसे हासिल तो हो जायेगा; लेकिन उतनी ऐशो इश्रत का लुत्फ़ उठाने के बा'द अपने को वहीं खड़ा पायेगा, जहाँ से चलना शुरू किया था। इससे बड़ा नुक़्सान और क्या होगा? जब जिस्म ही फ़ानी है, तब उसके साथ जुड़े तअय्युशात कब तक साथ देंगे? वे इबादत तो करते हैं, किन्तु उसके बदले में अज़ाब ही खाते हैं- **'पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं।'** (रा०मा०, ७/४३/२) वह ख़त्म तो नहीं होगा लेकिन आगे भी नहीं बढ़ेगा। लिहाज़ा श्रीकृष्ण बेग़रज़ ख़याल से अमल (यादे रब) करने पर ज़ोर देते हैं।

अभी तक श्रीकृष्ण ने बताया कि यग आ'ला शरफ़ देता है और उसकी तख़्लीक़ अज़ीम इंसानों के ज़रीअः होती है; लेकिन वे अज़ीम इंसान ख़ल्क़ की तख़्लीक़ में क्यों मश्ग़ूल होते हैं? इस बारे में कहते हैं-

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः।।१४।।
कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम्।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्।।१५।।

तमाम जानदार अनाज से पैदा होते हैं। **'अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्'** (तैत्तरीयोपनिषद, भृगुवल्ली २)- अनाज पर्वर्दगार ही है। उस रहमानी अमरित को ही मक़्सद बनाकर इंसान यग की ओर आगे बढ़ता है। अनाज की पैदावार बारिश से होती है।

बादलों से होने वाली बारिश नहीं बल्कि इनायत की बारिश। पहले से इकट्ठा यग का अमल ही इस जनम में जहाँ से वसीलः छूटा था, वहीं से रहमते रब की शक्ल में बरस पड़ता है। आज की इबादत कल इनायत की शक्ल में हासिल होगी। लिहाज़ा बारिश यग से होती है। यग करते समय 'स्वाहा' लफ़्ज़ का तलफ़्फ़ुज़ करने और तिल, जौ, घी वग़ैरः जलाने से ही बारिश होती तो तमाम दुन्या की ज़ियादःतर रेगिस्तानी ज़मीन बंजर क्यों रहती? ज़रख़ेज़ बन जाती। यहाँ रहमत की बारिश यग की तौफ़ीक़ है। यह यग आ'माल से ही पैदा होने वाला है, अमल से यग की तक्मील होती है।

उस अमल को तू वेद से पैदा हुआ समझ। वेद रौशन ज़मीर अज़ीम इंसानों का कलाम है। जो उंसुर नामालूम है, उसके रू-ब-रू एहसास का नाम वेद है, न कि कुछ मंत्र का मज्मूअः। तू ऐसा समझ कि वेद लाफ़ानी पर्वर्दगार की तख़्लीक़ है। निकला तो मर्देख़ुदा हज़्रात की ज़बान से, लेकिन वे पर्वर्दगार के हमशबीह हैं, उनके वसीले से लाफ़ानी पर्वर्दगार बोलता है। लिहाज़ा वेद दाइरा-ए-इंसानी कुव्वत से बाहर कहे जाते हैं। अज़ीम इंसान वेद कहाँ से पा गये? वेद तो लाफ़ानी मा'बूद से पैदा हुआ। वे अज़ीम इंसान उसके हमशबीह है, वे मह्ज़ मशीन हैं, इसवास्ते उनके वसीले से वही बोलता है। क्योंकि यग के ज़रीअः ही मन को क़ाबू करने के दौर में वह ज़ाहिर होता है। इससे आलमगीर आ'ला लाफ़ानी पर्वर्वगार हमेशः यग में ही बामर्तबः मौजूद है। यग ही उसे पाने का वाहिद तरीक़ः है। इसी पर ज़ोर देते हैं-

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति।।१६।।

पार्थ! जो इंसान इसी दुन्या में इंसानी जिस्म हासिल करके इस तरीक़-ए-अमल के मुताबिक़ नहीं चलता है या'नी रूहानी दौलत का इज़ाफ़ः, देवताओं का इज़ाफ़ः और एक दूसरे के इज़ाफ़ः के ज़रीअः लाफ़ानी मक़ाम को हासिल करना - इस तर्तीब के मुताबिक़ जो नहीं बर्ताव करता, हवास का आराम चाहने वाला वह 'गुनाहगार इंसान' बेकार ही जीता है।

भाइयो! जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बाब दो में अमल का नाम लिया और इस बाब में बताया कि मुअय्यनः अमल पर कारबन्द हो। यग का तरीक़-ए-कार ही अमल है। इसके इलावः जो कुछ किया जाता है, वह इसी दुन्या की बंदिश है। लिहाज़ा सुह्बतेअसर से अलग रहक़र उस यग की तक्मील के लिए अमल का बरताव कर।

उन्होंने यग की सिफ़ात पर रोशनी डाली और बताया कि यग की तख़्लीक़ ख़ालिक़ से है। इंसान अनाज को मक़्सद बनाकर उस यग में लगता है। यग अमल से और अमल इंसानी कुव्वत के अहाते से बाहर वेद से पैदा होते हैं, जबकि वेद के जुम्लों के आलिम अज़ीम इंसान ही थे। उनका इंसान ख़त्म हो चुका था। हुसूल के साथ लाफ़ानी मा'बूद ही बाक़ी बचा था। लिहाज़ा वेद मा'बूद की तख़्लीक़ हैं। आलमगीर मा'बूद यग में हमेशः क़ाइम है। इस ज़राए' के तर्तीब के मुताबिक़ जो अमल नहीं करता, वह गुनाहगार इंसान हवास का ऐश चाहने वाला है, बेकार ही जीता है। या'नी यग ऐसा ख़ास तरीक़ः है, जिसमें हवास का आराम नहीं है, बल्कि लाफ़ानी आराम है। नफ़्सकुशी के साथ इसमें लगने का तरीक़ः है। हवास का सुख चाहने वाला गुनाहगार है। अभी तक श्रीकृष्ण ने नहीं बताया कि यग है क्या? लेकिन क्या यग करते ही रहेंगे या इसका कभी आख़िर भी होगा?-इस पर जोग के मालिक कहते हैं-

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः।
आत्मन्येव च सन्तुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते।।१७।।

लेकिन जो इंसान ख़ुदकफ़ील, ख़ुद इत्मीनान और ख़ुदमुत्मइन है, उसके लिए कोई फ़र्ज़ नहीं रह जाता। यही तो मक़्सद था। जब ग़ैरमर्ई, अबदी, लाफ़ानी, रूहानी उंसुर हासिल हो गया तो आगे तलाश करें किसे? ऐसे इंसान के लिए न अमल की ज़रूरत है, न किसी की इबादत की। रूह और रूहेमुत्लक़ एक दूसरे के मुतरादिफ़ हैं। इसी की फिर अक्कासी करते हैं-

नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन।
न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः।।१८।।

इस दुन्या में उस इंसान के ज़रीअः किये जाने वाले अमल से उस इंसान का न कोई फ़ाइदः है और न छोड़ देने से कोई नुक़्सान है, जबकि पहले अमल करना जरूरी था। उसका तमाम जानदारों के साथ कोई ख़ुदग़रजी का तअल्लुक़ नहीं रह जाता। रूह ही तो हक़ीक़ी, अबदी, लाबयान, लामुतबादिल और लाफ़ानी है। जब उसी को हासिल कर लिया, उसी से मुतमइन, उसी से आसूदः, उसी में महूव और मर्क़ूज़ है, आगे कोई इक़्तिदार ही नहीं, तो किसकी तलाश करें? हासिल होगा क्या? उस इंसान के लिए अमल छोड़ देने से कोई नुक़्सान भी नहीं; क्योंकि उयूब जिस पर नक़्श होते हैं, वह मन ही न रहा। उसका तमाम जानदारों में, ख़ारिजी दुन्या और दाख़िली इरादों की परत से ज़रा-सा भी मत्लब नहीं रहता। सबसे बड़ा मत्लब

तो था मा'बूद, जब वही हासिल है तो दूसरों से उसका क्या मत्लब होगा?

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः।।१९।।

इस मक़ाम को हासिल करने के लिए तू बेलौस हुआ मुसल्सल **'कार्यं कर्म'**– जो क़ाबिले अमल है, उस अमल को अच्छी तरह कर। क्योंकि बेलौस इंसान अमल पैरा होने से मा'बूद को हासिल कर लेता है। 'मुअय्यनः अमल', 'क़ाबिले अमल' यकसाँ हैं। अमल की तर्ग़ीब देते हुए वे फिर कहते हैं–

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसङ्ग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि।।२०।।

जनक का मा'ना राजा जनक नहीं, जनक पैदा करने वाले को कहते हैं। जोग ही जनक है जो आपकी शक्ल को जनम देता है, ज़ाहिर करता है। जोग से मुज़ैयन हर एक अज़ीम इंसान जनक (वालिद) है। ऐसे जोग से मुज़ैयन बहुत से आरिफ़ हज़्रात **'जनकादयः'**–जनक वग़ैरः सालिक अज़ीम इंसान भी **'कर्मणा एव हि संसिद्धिम्'**– आ'माल के ज़रीअः ही आ'ला कामयाबी को हासिल करने में कामयाब हुए हैं। आ'ला कामयाबी का मतलब है, उंसुरे आ'ला मा'बूद का हुसूल। जनक वग़ैरः जितने भी पहले होने वाले वली हुए हैं, इस 'क़ाबिले अमल' के ज़रीअ जो यग का तरीक़-ए-कार है, इस अमल के मुताबिक़ चल करके ही **'संसिद्धिम्'**– तक्मीली मक़ाम को हासिल करने में कामयाब हुए हैं। लेकिन हुसूल के बा'द वे भी इज्तिमाई मफ़ाद को देखकर अमल करते हैं, इज्तिमाई भलाई को चाहते हुए अमल करते हैं। लिहाज़ा तू भी हुसूल के लिए और हुसूल के बा'द रहनुमाई के लिए करने लाइक़ काम करने के ही क़ाबिल है। क्यों?

अभी श्रीकृष्ण ने फ़र्माया था कि हुसूल के बा'द अज़ीम इंसान का अमल करने से न कोई फ़ाइदः और न छोड़ने से कोई नुक़्सान है। फिर भी इज्तिमाई मफ़ाद अवामी फ़लाह के इंतिज़ाम के वास्ते वे अच्छी तरह मुअय्यनः अमल पर ही कारबन्द रहते हैं।

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते।।२१।।

मुअज़्ज़िज़ इंसान जैसा बरताव करता है, दूसरे इंसान भी उसी के मुताबिक़ करते

हैं। वह अज़ीम इंसान जैसा नक़्शे क़दम छोड़ता है, दुन्या उसी की पैरवी करती है।

पहले श्रीकृष्ण ने शक्ल में क़ाइम, ख़ुदइत्मीनान अज़ीम इंसान की बूदोबाश पर रोशनी डाली कि उसके अमल करने से न कोई फ़ाइदः है और न छोड़ने से कोई नुक़्सान, फिर भी जनक वग़ैरः अमल का अच्छी तरह बरताव करते थे। यहाँ उन अज़ीम इंसानों से श्रीकृष्ण आहिस्तः से अपना मुआज़नः कर देते हैं कि मैं भी एक अज़ीम इंसान हूँ।

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन।
नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि।।२२।।

पार्थ! मेरे लिए तीनों अवालिम में कोई फ़र्ज़ बाकी नहीं है। पहले कह आये हैं, उस अज़ीम इंसान का सारे जानदारों के मुतअल्लिक़ कोई फ़र्ज़ नहीं है। यहाँ कहते हैं- तीनों अवालिम में मेरा कुछ भी बाकी नहीं है और थोड़ी भी ऐसी चीज़ नहीं बची है जो मुझे हासिल करने के लाइक हो और हासिल न हो, तब भी मैं अमल में अच्छी तरह लगा हूँ। क्यों?

यदि ह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।।२३।।

क्योंकि अगर मैं पूरी होशयारी के साथ कभी अमल पैरा न रहूँ, तो इंसान जैसा मैं कर रहा हूँ उसी के मुताबिक़ बरताव करने लग जायेंगे। तो क्या आपका इत्तिबाअ भी बुरा है? श्रीकृष्ण कहते हैं- हाँ,

उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम्।
सङ्करस्य च कर्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः।।२४।।

अगर मैं पूरे एहतियात के साथ अमल न करूँ, तो ये सारे अवालिम बदउन्वान हो जायें और मैं **'संकरस्य'**- दोग़लः पैदा करने का मुर्तकिब बनूँ और इन सारी मख़्लूक़ात का ख़ातिमः करने वाला, मारने वाला बनूँ। ख़ुदशनास अज़ीम इंसान पूरी एहतियात के साथ अगर मुसल्सल तौर पर इबादत में न लगे रहें, तो मुआशरः उनकी इत्तिबाअ करके गुमराह हो जायेगा। अज़ीम इंसान ने तो इबादत पूरी करके अमल करने की ज़रूरत से ऊपर वाले आ'ला मक़ाम को हासिल कर लिया है। वह न करे तो उसको कोई नुक़्सान नहीं है, लेकिन मुआशरः ने तो इबादत की शुरुआत ही नहीं की। पीछे आने वाली नस्ल की रहनुमाई के लिए ही अज़ीम इंसान अमल करते हैं,

मैं भी करता हूँ या'नी श्रीकृष्ण भी एक अज़ीम इंसान थे, न कि बिहिश्त से आये हुए कोई ख़ास मा'बूद। उन्होंने कहा कि अज़ीम इंसान आम आदमी की भलाई के लिए अमल करता है, मैं भी करता हूँ। अगर न करूँ तो लोगों में गिरावट आ जाय, सभी अमल करना छोड़ देंगे।

मन बड़ा शोख़ है। यह सब कुछ चाहता है, सिर्फ़ यादे रब में नहीं लगना चाहता। अगर रौशन ज़मीर अज़ीम इंसान हज़्रात अमल न करें तो देखा-देखी पीछे वाले भी फ़ौरन अमल करना छोड़ देंगे। उन्हें बहाना मिल जायेगा कि ये यादे इलाही में मश्गूल नहीं हैं, पान खाते हैं, इत्र लगाते हैं, आम बातें करते हैं फ़िर भी अज़ीम इंसान कहलाते हैं- ऐसा सोचकर वे भी इबादत से हट जाते हैं, गुमराह हो जाते हैं। श्रीकृष्ण कहते हैं- अगर मैं अमल न करूँ तो सब बरबाद हो जायें और मैं दोग़लः पैदा करने का मुर्तकिब बनूँ।

औरतों के नाक़िस होने से दोग़लः पैदा होना तो देखा-सुना जाता है। अर्जुन भी इसी ख़ौफ़ से बेक़रार था कि औरतें नाक़िस होंगी तो दोग़लः पैदा होंगे; लेकिन श्रीकृष्ण कहते हैं- अगर मैं एहतियात के साथ इबादत में लगा न रहूँ, तो दोग़लः पैदा करने का मुर्तकिब बनूँ। दरअस्ल रूह की ख़ालिस नस्ल है- रूहे मुत्लक़। अपनी दाइमी शक्ल की राह से भटक जाना दोग़लःपन है। अगर मा'बूद से निस्बत बना लेने वाला अज़ीम इंसान अमल में मश्गूल नहीं रहता, तो लोग उसकी इत्तिबाअ में अमल से मुबर्रा हो जायेंगे। रूहानी राह से भटक जायेंगे, दोग़लः हो जायेंगे। वे दुन्यादारी में खो जायेंगे।

औरतों की इस्मत और नस्ल की पाकीज़गी एक मुआशराती इंतिज़ाम है, इख़्तियारात का सवाल है। मुआशरः के लिए उसकी इफ़ादीयत भी है, लेकिन वालिदैन की ग़लतियों का औलाद की रियाज़त पर कोई असर नहीं पड़ता। **'आपन करनी पार उतरनी'**। हनुमान, व्यास, वशिष्ठ, नारद, शुकदेव, कबीर, ईसा वग़ैरः जैसे अज़ीम इंसान हुए, जबकि मुआशराती ख़ानदानी शराफ़त से इनका तअल्लुक़ नहीं है। रूह अपने पहले जनम के सिफ़ात को लेकर आती है। श्रीकृष्ण कहते हैं- **'मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति'**- (१५/७) मन के साथ हवास के ज़रीअः जो काम इस जनम में होते हैं, उनके तअस्सुरात लेकर ज़ीरूह पहले वाले बोसीदः जिस्म को तर्क करके नये जिस्म में दाख़िल हो जाती है। इसमें जनम देने वालों का क्या लगा? उनकी तरक़्क़ी में कोई फ़र्क़ नहीं आया। लिहाज़ा औरतों के नाक़िस होने से

दोग़लः पैदा नहीं होता। औरतों के नाक़िस होने और दोग़लः से कोई वास्तः नहीं है। हक़ीक़ी शक्ल की जानिब न बढ़कर दुन्यादारी में बिखर जाना ही दोग़लः है।

अगर अज़ीम इंसान पूरी एहतियात के साथ मुअय्यनः अमल ख़ुद करते हुए लोगों से उस अमल को न कराये तो वह सारी मख़्लुक़ात का ख़ातिमः करने वाला, मारने वाला बने। रियाज़त के तसल्सुल में चलकर उस बुन्यादी लाफ़ानी का हुसूल ही ज़िंदगी है और दुन्यादारी में बिखरे रहना, भटक जाना मौत है; लेकिन यह अज़ीम इंसान इन सारे लोगों को राहे अमल पर नहीं चलाता, सारे लोगों को बिखराव से रोककर सिराते मुस्तक़ीम पर नहीं चलाता, तो वह सारे लोगों का ख़ातिमः करने वाला क़ातिल है, पुरतशद्दुद है और क़दम-ब-क़दम चलते हुए जो चला देता है, वह ख़ालिस अदमतशद्दुद वाला है। गीता के मुताबिक़ जिस्म की मौत, फ़ानी अज्साम की वफ़ात महज़ क़ालिब की तब्दीली है, तशद्दुद नहीं।

सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसङ्ग्रहम् ।।२५।।

ऐ भारत! अमल में महव हुए जाहिल लोग जैसे अमल करते हैं वैसे ही बिना लगाव वाले अह्ले इल्म, मुकम्मल आलिम भी अवामुन्नास के दिल में तर्ग़ीब देने के लिए और फ़लाहे अवाम के ख़्वाहिश के साथ अमल करें। यग का तौर-तरीक़ः जानते हुए और उसे करते हुए भी हम नासमझ हैं। इल्म का मत्लब है- रू-ब-रू इल्म। जब तक ज़रा-सा भी हम अलग हैं, मा'बूद अलग है, तब तक जहालत मौजूद है। जब तक जहालत है, तब तक अमल में रग़बत रहती है। जाहिल जितनी रग़बत के साथ इबादत करता है, उसी तरह बेग़रज़ आमिल। जिसे आ'माल से मतलब नहीं है तो उसे लगाव क्यों होगा, ऐसा मुकम्मल आलिम अज़ीम इंसान भी फ़लाहे अवाम के लिए अमल करे, रूहानी दौलत की तरक़्क़ी करे, जिससे समाज उस पर चल सके।

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसङ्गिनाम्।
जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान्युक्तः समाचरन्।।२६।।

इल्मदाँ इंसानों को चाहिए कि आ'माल में रग़बत रखने वाले कजफ़हम लोगों की अक़्ल में शको-शुब्हः न पैदा करें या'नी रौशन ज़मीर अज़ीम इंसान ख़याल रखें कि उनके किसी बरताव से उनके ताबेईन के मन में अमल के मुतअल्लिक़ अक़ीदत में कोई कमी न पैदा हो जाय। उंसुरे आ'ला से मुज़य्यन अज़ीम इंसान को भी चाहिए कि ख़ुद अच्छी तरह मुअय्यनः अमल करता हुआ उनसे भी कराये।

यही वजह थी कि क़ाबिले एहतिराम 'महाराजजी' ज़ईफ़ी के आलम में भी रात के दो बजे ही उठकर बैठ जायें, खाँसने लगे। तीन बजे बोलने लगे- ''उठो, मिट्टी के पुतलो!'' सब उठकर याद में लग जायें, तो ख़ुद थोड़ा लेट जायें। कुछ देर बा'द फिर उठकर बैठ जायें, कहें- ''तुम लोग सोचते हो कि महाराज जी सो रहे हैं लेकिन मैं सोता नहीं, साँस में याद कर रहा हूँ। ज़ईफ़ी का जिस्म है, बैठने में तक्लीफ़ होती है, यही वजह है कि मैं लेटा रहता हूँ। लेकिन तुम लोगों को तो साकिन और सीधे बैठकर रियाज़त में लगना है। जब तक तेल की धारा की तरह साँस की डोरी न लग जाय, तसल्सुल न टूटे, दूसरे इरादे बीच में अड़चन पैदा न कर सकें, तब तक मुसल्सल लगे रहना रियाज़तकश का फ़र्ज़ है। मेरी साँस तो बाँस की तरह साकिन खड़ी है। यही वज्ह है कि ताबेईन को अमल पैरा कराने के लिए वह अज़ीम इंसान अच्छी तरह अमल का बरताव करता है। **'जिस गुन को सिखावै, उसे करके दिखावै।'**

इस तरह साबित क़दम अज़ीम इंसान को भी चाहिए कि ख़ुद अमल करता हुआ रियाज़तकशों को भी इबादत में लगाये रहे। रियाज़तकश भी अक़ीदत के साथ इबादत में लगे; लेकिन चाहे इल्मी जोगी हो या ख़ुदसुपुर्दगी के ख़याल वाला बेग़रज़ अमली जोगी हो, रियाज़तकश में रियाज़त का गुरूर नहीं आना चाहिए। अमल किसके ज़रीअः होते हैं, उसके होने में कौन-से वजूहात है? इस पर श्रीकृष्ण रोशनी डालते हैं-

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।
अहङ्कारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते।।२७।।

इब्तिदा से लेकर तक्मील तक अमल क़ुदत की सिफ़ात के ज़रीअः किये जाते हैं फिर भी गुरूर से ख़ास क़िस्म का कम अक़्ल इंसान 'मैं करने वाला हूँ'- ऐसा मान लेता है। यह कैसे माना जाय कि रियाज़त कुद्रत के सिफ़ात के ज़रीअ होती है? ऐसा किसने देखा?-इस पर फ़र्माते हैं-

तत्त्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः।
गुणा गुणेषु वर्तन्त इति मत्वा न सज्जते।।२८।।

ऐ बाजू-ए-अज़ीम अर्जुन! सिफ़ात और अमल के बाबेजुज़ को **'तत्त्ववित्'**- उंसुरे आ'ला पर्वर्दगार की जानकारी रखनेवाले अज़ीम इंसानों ने देखा और सारी सिफ़ात, सिफ़ात के ही मुताबिक़ बरताव कर रही हैं - ऐसा मानकर वे सिफ़ात और आ'माल के कारकुन होने में रग़बत नहीं रखते।

यहाँ उंसुर का मतलब उंसुरे आ'ला मा'बूद है, न कि पाँच या पचीस अनासिर, जैसा कि लोग शुमार करते हैं। जोग के मालिक श्रीकृष्ण के अल्फ़ाज़ में उंसुर वाहिद रूहे-मुत्लक़ है, दूसरा कोई उंसुर है ही नहीं। सिफ़ात के दाइरे से बाहर निकल करके उंसुरे आ'ला मा'बूद में क़ाइम अज़ीम इंसान सिफ़ात के मुताबिक़ आ'माल की तक़्सीम देख पाते हैं। मलकाते मज़मूम रहेगा, तो उसका काम होगा- काहिली, नींद, मद्होशी, अमल में न लगने की फ़ित्रत, मलकाते रदीयः रहेंगे तो रियाज़त से पीछे न हटने की फ़ित्रत, बहादुरी शाहाना ख़याल से अमल होगा और मलकाते फ़ाज़िलः अमल पैरा होने पर तसव्वुर, मुराक़बः, तज्रिबाती हुसूल, लगातार ग़ौरो-फ़िक्र और फ़ित्रत में सीधापन होगा। सिफ़ात तग़य्युरपज़ीर हैं। बदीही दीदार करने वाला इल्मदाँ इंसान ही देख पाता है कि सिफ़ात के मुताबिक़ आ'माल की तरक़्क़ी और तनज़्ज़ुली होती है। सिफ़ात अपना काम करा लेती हैं, या'नी सिफ़ात, सिफ़ात के ज़ेरे साया बरताव करती हैं- ऐसा समझकर वह रू-ब-रू दीदःवर अमल में राग़िब नहीं होता। लेकिन जिन्होंने सिफ़ात का क़रारेवाक़ई इल्म हासिल नहीं किया, जो अभी रास्ते में हैं, उन्हें तो अमल में बारब्त रहना ही है। लिहाज़ा,

प्रकृतेर्गुणसम्मूढाः सज्जन्ते गुणकर्मसु।
तानकृत्स्नविदो मन्दान्कृत्स्नविन्न विचालयेत्।।२९।।

क़ुद्रत की सिफ़ात से फ़िरेफ़्तः हुए इंसान सिफ़ात और आ'माल में तद्रीज पाक व साफ़ की तरफ़ उरुज देखकर उनमें राग़िब होते हैं। अच्छी तरह न समझने वाले उन **'मन्दान्'**- कमज़ोर कोशिश वालों को अच्छी समझ रखने वाले आलिम मुतहर्रिक न करें। उन्हें पस्तहिम्मत न करें, बल्कि हौसलःअफ़्ज़ाई करें; क्योंकि अमल करके ही उन्हें आ'ला बेग़रज़ अमल की हालत को पहुँचना है। अपनी कुव्वत और हालत का तख़्मीनः करके अमल में लगने वाले राहे इल्म के कामिलों को चाहिए कि अमल को सिफ़ात का वज़ीफ़ः मानें। अपने को कारकुन मानकर घमण्डी न बन जायँ, मुतबर्रिक़ सिफ़ात के हासिल होने पर भी उनमें बारब्त न हों। लेकिन बेग़रज़ अमली जोगी को अमल और सिफ़ात के तह्क़ीक़ में वक़्त देने की कोई ज़रूरत नहीं है। उसे तो सिर्फ़ ख़ुदसुपुर्दगी के साथ अमल करते जाना है। कौन-सी सिफ़ात आ जा रही है, यह देखना मा'बूद की जिम्मःदारी हो जाती है। सिफ़ात की तब्दीली और सिल्सिलःवार तरक़्क़ी को वह मा'बूद का ही करम मानता है और अमल होने को भी उन्हीं की इनायत समझता है। लिहाज़ा कारकुन होने का घमण्ड या सिफ़ात में बारब्त होने की

दिक़्क़त उसके लिए नहीं रहती, जबकि अमल में मुसल्सल तौर पर लगा रहता है। इसी के मद्देनज़र और साथ ही साथ जंग की शक्ल बताते हुए श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं-

मयि सर्वाणि कर्माणि सन्न्यस्याध्यात्मचेतसा।
निराशीर्निर्ममो भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः।।३०।।

लिहाज़ा अर्जुन! तू **'अध्यात्मचेतसा'-** अपने बातिन में दिलो-दिमाग़ पर क़ाबू करके, तसब्बुर को मर्कूज़ कर तमाम आ'माल को मुझे सुपुर्द करके बिला उम्मीद, बिला लगाव और तक्लीफ़ से आरी होकर जंग कर। जब तबीअ़त तसव्वुर में क़ाइम है, ज़रा भी कहीं उम्मीद नहीं, अमल में लगाव नहीं है, नाकामयाबी की तक्लीफ़ नहीं है, तो वह इंसान कौन-सी जंग करेगा? जब हर तरफ़ से तबीअ़त सिमट कर दिल के अहाते में क़ैद होती जा रही है तो वह जंग करेगा किसके लिए, किससे और वहाँ है कौन? हक़ीक़त में जब आप तसव्वुर में दाख़िल होंगे, तभी जंग की सहीह शक्ल खड़ी होती है, तो ख़्वाहिश, ग़ुस्सः, लगाव, हिर्स, उम्मीद, लालच वग़ैरः बुराइयों का अम्बोह ग़ैरनस्ली ख़साइल जो 'कुरु' कहलाती हैं, दुन्यादारी में फँसाती ही रहती हैं। अड़चनों की शक्ल में ख़ौफ़नाक हम्लः करती हैं। मह्ज़ इन पर फ़त्ह हासिल करने की कोशिश ही जंग है। इनको ख़त्म करते हुए बातिन में सिमटते जाना, मुराक़िब होते जाना ही हक़ीक़ी जंग है। इसी पर फिर ज़ोर देते हैं-

ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवाः।
श्रद्धावन्तोऽनसूयन्तो मुच्यन्ते तेऽपि कर्मभिः।।३१।।

अर्जुन! जो इंसान ख़ामख़याली से आरी होकर, अक़ीदत के साथ ख़ुद सुपुर्दगी से मुज़य्यन हुआ, हमेशः मेरे इस ख़याल के मुताबिक़ बरताव करते हैं कि 'जंग कर' वे इंसान भी सारे आ'माल से नजात पा लेते हैं।

जोग के मालिक की यह यक़ीन देहानी किसी हिन्दू, मुसल्मान या ईसाई के लिए नहीं, बल्कि तमाम इंसानों के लिए है। उनका ख़याल है कि जंग कर। इससे ऐसा मालूम होता है कि यह नसीहत जंग करने वालों के लिए थी। ख़ुशकिस्मती से अर्जुन के सामने आलमी जंग का ताना-बाना था, आपके सामने तो कोई जंग नहीं है। आप गीता के पीछे क्यों पड़े हैं, क्योंकि आ'माल से बचने का तरीक़ः तो जंग करने वालों के लिए है। लेकिन ऐसा कुछ नहीं है। दरहक़ीक़त यह दिल की दुन्या की जंग है। मैदान और आलिमे मैदाँ की, इल्म और जहालत की, मैदाने दीन और मैदाने अमल की जंग है। आप जैसे-जैसे तसव्वुर में तबीअ़त की बंदिश करेंगे,

ग़ैरनस्ली ख़साइल ख़लल की शक्ल में सामने आते हैं, जबरदस्त हम्लः करते हैं। उनका ख़ातिमः करते हुए तबीअ़त को क़ाबू में करते जाना ही जंग है। जो नज़रीयाती कजफ़हमी से अलग हटकर अक़ीदत के साथ इस जंग में लगता है, वह आ'माल की क़ैद से, आमदोरफ़्त से अच्छी तरह नजात हासिल कर लेता है। जो इस जंग में शामिल नहीं होता, उसका क्या अंजाम होता है?-इस पर कहते हैं-

ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतम्।
सर्वज्ञानविमूढांस्तान्विद्धि नष्टानचेतसः।।३२।।

जो बदनज़र **'अचेतसः'**- लगाव की तारीकी में बेहोश लोग मेरे इस ख़याल के मुताबिक़ अमल नहीं करते या'नी मुराक़िब होकर उम्मीद, शफ़क़त, रंजो-ग़म से ख़ाली होकर ख़ुद सुपुर्दगी के साथ जंग नहीं करते, **'सर्वज्ञान विमूढान्'**- राहे इल्म में हर तरह से मोह की जाल में फँसे ऐसे लोगों को तू ऐसा समझ कि वे राहे नेक से गुमराह हो गये हैं। जब यही सही है, तो लोग करते क्यों नहीं?-इस पर कहते हैं-

सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति।।३३।।

सभी जानदार अपनी ख़स्लत को हासिल होते हैं, अपनी ख़स्लत से मज़्बूर होकर अमल में हिस्सः बँटाते हैं। रू-ब-रू दीदार करने वाला आलिम भी अपनी ख़स्लत के मुताबिक़ कोशिश करता है। जानदार अपने आ'माल में बरताव करते हैं और आलिम अपनी ख़ुद की शक्ल में। जैसी जिसकी ख़स्लत का दबाव है, वैसा ही काम करता है। यह अपने आप साबित है। इसका हल कोई क्या देगा? यही वज्ह है कि सभी लोग मेरी सोच के मुताबिक़ अमलपैरा नहीं हो पाते। वे उम्मीद, शफ़क़त, रंजो-ग़म का दूसरे अल्फ़ाज़ में हसद-अदावत को तर्क नहीं कर पाते, जिससे मुनासिब तरीक़े से अमल नहीं हो पाता। इसी को और साफ़ करते हैं और दूसरी वजह बताते हैं-

इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ।
तयोर्न वशमागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ।।३४।।

हवास और हवास के तअय्युशात में हसद और अदावत के जज़्बात मौजूद हैं। इन दोनों के क़ाबू में नहीं होना चाहिए, क्योंकि इस इफ़ादी-राह में आ'माल से छूट जाने वाले तरीक़े के अन्दर ये हसद और अदावत ऐसे ज़ोरआवर दुश्मन है; इबादत को इग्वाकर ले जाते हैं। जब दुश्मन भीतर हैं तो बाहर कोई किसी से क्यों

जंग करेगा? दुश्मन तो हवास और तअय्युशात की सुहबत में है, बातिन में है। लिहाज़ा यह जंग भी बातिनी जंग है; क्योंकि जिस्म ही मैदाने जंग है जिसमें हमज़ात और ग़ैरनस्ली दोनों ख़साइल, इल्म और जहालत रहते हैं, जो लौसेदुन्या के दो हिस्से हैं। इन्हीं ख़साइल पर क़ाबू पाना, हमज़ात ख़सूलत को सँभाल कर ग़ैरनस्ली ख़सूलत का ख़ातिमः करना जंग है। ग़ैरनस्ली ख़सूलत का ख़ातिमः होने पर हमज़ात ख़सूलत का इस्ते'माल ख़त्म हो जाता है। ख़ुदशनासी का इल्म हासिल करके हमज़ात ख़सूलत का भी उसी में तहलील हो जाना, इस तरह कुद्रत पर क़ाबू पाना जंग है, जो तसव्वुर में ही मुम्किन है।

हसद-अदावत को ख़त्म करने में वक़्त लगता है लिहाज़ा बहुत से आमिल रियाज़त को तर्ककर यक ब यक अज़ीम इंसान की नक़्ल करने लग जाते हैं। श्रीकृष्ण इससे ख़बरदार करते हैं-

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।।३५।।

एक आमिल दस साल से रियाज़त में लगा हुआ है और दूसरा आज रियाज़त में दाख़िलः ले रहा है, दोनों की सलाहीयत एक जैसी नहीं होगी। शुरुआती आमिल अगर उसकी नक़्ल करता है तो ख़त्म हो जायेगा। इसी पर श्रीकृष्ण कहते हैं कि, अच्छी तरह बरताव किये हुए दूसरे के फ़र्ज़ से कमतर भी फ़र्ज़ेमंसबी बेहतर है। ख़ुद की ख़सूलत से पैदा अमल में लगने की सलाहीयत फ़र्ज़ेमंसबी है। अपनी सलाहीयत के मुताबिक़ अमल में लगे रहने से आमिल एक न एक दिन नजात हासिल कर लेता है। लिहाज़ा फ़र्ज़ेमंसबी का बरताव करते हुए मरना भी आ'ला-इफ़ादी है। जहाँ से रियाज़त छूटेगी, नया जिस्म हासिल होने पर वहीं से फिर शुरुआत हो जायेगी। रूह तो मरती नहीं। (जिस्म) लिबास बदलने से आपकी अक़्ल और ख़याल बदल तो नहीं जाते? रम्ज़शनास अज़ीम इंसानों की तरह रियाकारी से रियाज़तकश को दहशत का सामना करना पड़ेगा। दहशत कुद्रत में होती है, रूहेमुत्लक़ में नहीं। कुद्रत का पर्दः और घना हो उठेगा।

इस राहे रब में नक़्ल की इफ़्रात है। 'क़ाबिले एहतिराम महाराजजी' को जब इल्हाम हुआ कि 'अनुसुइया' नाम की जगह पर जाकर रहे तो आप जम्मू से चित्रकूट आये और अनुसूइया के घने जंगल में रहने लगे। तमाम मर्दे कामिल हज़्रात उधर से आते-जाते थे। एक ने देखा कि परमहंस जी नंग-धड़ंग रहते हैं, उनकी इज़्ज़त है,

तो फौरन उन्होंने लँगोटी, अ'सा (डण्डा) और कश्कोल एक दूसरे साधू को दे दिया और नंग-धड़ंग हो गये। कुछ वक़्त बा'द आये तो देखा कि परमहंसजी लोगों से बातें भी करते हैं, गालियाँ भी देते हैं। (महाराज जी को हुक्म हुआ था कि बन्दों की भलाई के लिए कुछ सख़्ती किया करें, इस राह के राहगीरों पर निगरानी रखें।) महाराज जी की नक़्ल कर वे साधू जनाब भी गालियाँ देने लगे; लेकिन बदले में लोग भी कुछ-न-कुछ कह बैठते थे। साधू महाराज कहने लगे- वहाँ कोई बोलता नहीं, यहाँ तो जवाब देते हैं। दो-एक साल बा'द दुबारः लौटे तो देखा, परमहंस जी गद्दे पर बैठे हैं, लोग पंखा झल रहे हैं, चँवर डुला रहे हैं। उन्होंने जंगल के ही एक खण्डहर में एक तख़्त मँगवाया, गद्दे बिछवाये, दो आदमियों को चँवर डुलाने के लिए मुक़र्रर कर दिया। हर रोज़े-पीर को भीड़ भी लगवाने लगे कि लड़का चाहिए तो पचास रुपये, लड़की चाहिए तो पचीस रुपये। लेकिन **'उघरहिं अन्त न होइ निबाहू।'** (रामचरितमानस, १/६/६)- एक महीने में ही कौड़ी के दो होकर चल दिये। इस राहे ख़ुदा में नक़्ल साथ नहीं देता। रियाज़तकश को फ़र्ज़ेमंसबी का ही बरताव करना चाहिए।

फ़र्ज़ेमंसबी क्या है? बाब दो में श्रीकृष्ण ने फ़र्ज़ेमंसबी का नाम लिया था कि फ़र्ज़ेमंसबी को भी देखकर तू जंग करने के क़ाबिल है। क्षत्री के लिए इससे बढ़कर इफ़ादी रास्तः नहीं। फ़र्ज़ेमंसबी में अर्जुन क्षत्री पाया जाता है। इशारः किया कि अर्जुन! जो बर्हमन हैं, वेदों की नसीहतें उनके लिए उथले तालाब की तरह हैं। तू वेदों से ऊपर उठ और बर्हमन बन। या'नी फ़र्ज़ेमंसबी में तब्दीली मुम्किन है। वहाँ उन्होंने फिर कहा कि हसद व अदावत के क़ाबू में न हो, इन्हें ख़त्म कर। फ़र्ज़ेमंसबी इम्तियाज़ बख़्शनेवाला है- इसका यह मतलब नहीं है कि अर्जुन किसी बर्हमन की नकल करके उसी जैसी शक्ल-सूरत बना ले।

एक ही राहे अमल को अज़ीम इंसान ने चार दर्जात में बाँट दिया- बदतर, औसत, बेहूतर और बेहूतरीन। इन दर्जात के रियाज़तकशों को बतसल्सुल शूद्र, वैश्य, क्षत्री और बर्हमन का नाम दिया। शूद्र वाली सलाहीयत से अमल की शुरुआत होती है और रियाज़त के तसल्सुल में वही रियाज़तकश बर्हमन बन जाता है। इससे भी आगे जब वह मा'बूद में दाख़िलः पा जाता है तो- **'न ब्राह्मणो न क्षत्रियः न वैश्यो न शूद्रः, चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्',** वह नस्लों से ऊपर उठ जाता है। यही श्रीकृष्ण भी कहते हैं कि **'चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टम्'**- चार नस्लों की तख़्लीक़ मैंने की। तो क्या जनम की बुन्याद पर इंसानों को बाँटा? नहीं, **'गुणकर्म विभागशः'**- सिफ़ात

की बुन्याद पर अमल को बाँटा गया। कौन-सा अमल? क्या दुन्यवी अमल? श्रीकृष्ण कहते हैं- नहीं, मुअय्यनः अमल मुअय्यनः अमल क्या है? वह है यग का तरीक़-ए-कार, जिसमें होता है- नफ़से आमद में नफ़से ख़ारिज का हवन और नफ़से ख़ारिज का नफ़से आमद में हवन, नफ़्सकुशी वग़ैरः, जिसका ख़ालिस मत्लब है- जोग की रियाज़त, इबादत। मा'बूद तक पहुँचाने वाला ख़ास तरीक़-ए-कार ही इबादत है। इस इबादत वाले अमल को ही चार दर्ज़ों में बाँटा गया। जैसी सलाहीयत वाला इंसान हो, उसे उसी दर्जः से अमल की शुरुआत करनी चाहिए, यही सबका फ़र्ज़ेमंसबी है। अगर वह पहुँचे हुए लोगों की नक़्ल करेगा, तो ख़ौफ़ज़दः होगा। पूरे तौर से बरबाद तो नहीं होगा, क्योंकि इस राह में तुख़्म का ख़ातिमः तो नहीं होता; हाँ, वह कुद्रत के दबाव से दह्शतज़दः, हक़ीर ज़रूर हो जायेगा। शिशु इब्तिदाई दर्जा का तालिबे इल्म, फ़ज़ीलत (Graduate) दर्जः में बैठने लगे, तो ग्रेजुएट क्या बनेगा?, वह शुरू के हुरूफ़ से भी मह्रूम रह जायेगा। अर्जुन सवाल खड़ा करता है कि इंसान फ़र्ज़ेमंसबी का बरताव क्यों नहीं कर पाता?

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

अथ केन प्रयुक्तोऽयं पापं चरति पूरुषः।
अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितः।।३६।।

ऐ श्रीकृष्ण! फिर यह इंसान जबरदस्ती घसीटकर लगाये जाने वाले की तरह ख़ाहिशमंद न होता हुआ भी किसकी तर्ग़ीब से गुनाह का बरताव करता है? आपकी सोच के मुताबिक़ क्यों नहीं चल पाता? इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः।
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम्।।३७।।

अर्जुन! मलकाते रदीयः से पैदा होने वाली यह ख़्वाहिश और यह गुस्सः आग की तरह ऐशोःइश्रत का लुत्फ उठाने से कभी आसूदः न होने वाले बड़े गुनाहगार हैं। ख़्वाहिश गुस्सः, हसद व अदावत के ही तक्मिलः है, अभी मैंने जिसका जिक्र किया था, इसके मुतअल्लिक़ तू उनका ही दुश्मन जान। अब इनको अस्रात का बयान करते हैं-

धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च।
यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम्।।३८।।

जैसे धुएँ से आग और गढ़ से आईनः ढँक जाता है, जैसे ग़िर्स से हम्ल ढँका हुआ है, ठीक वैसे ही ख़्वाहिश, गुस्सः वग़ैरः उयूब से यह इल्म ढँका हुआ है। भींगी लकड़ी जलाने पर धुआं-ही-धुआं होता है। आग रहकर भी लपट की शक्ल इख़्तियार नहीं कर पाती। गर्द से ढँके आईनः पर जिस तरह अक्स साफ़ नहीं होता, ग़िर्स की वज्ह से जिस तरह हम्ल ढँका रहता है, वैसे ही इन उयूब के रहते मा'बूद का रू-ब-रू इल्म नहीं हो पाता।

आवृतं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा।
कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानलेन च।।३९।।

कौन्तेय! आग की तरह ऐशो-इश्रत से आसूदः न होने वाली, आलिमों का हमेशः दुश्मन इस ख़्वाहिश से इल्म ढँका हुआ है। अभी तो श्रीकृष्ण ने ख़्वाहिश और गुस्सः दो दुश्मन बताये। पेशक़र्दः श्लोक में वे सिर्फ़ एक दुश्मन ख़्वाहिश का नाम लेते हैं। हक़ीक़तन ख़्वाहिश में गुस्सः का ख़याल मुज़्मिर है। काम पूरा होने पर गुस्सः ख़त्म हो जाता है, लेकिन ख़्वाहिश ख़त्म नहीं होती। ख़्वाहिश पूरी होने में ख़लल पड़ते ही गुस्सः फिर उभर आता है। ख़्वाहिश के अस्ना में गुस्सः भी मुज़्मिर है। इस दुश्मन का मक़ाम कहाँ है? इसकी तलाश कहाँ करें? मक़ाम जान लेने पर इसे जड़ से ख़त्म करने में आसानी रहेगी। इस पर श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं-

इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते।
एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम्।।४०।।

हवास, मन और अक़्ल इसके रहने वाले मक़ानात कहे जाते हैं। यह ख़्वाहिशा इन मन और हवास के ज़रीअः ही इल्म को ढँक करके ज़ीरूह को फ़िरेफ़्तगी में डालती है।

तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ।
पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम्।।४१।।

लिहाज़ा अर्जुन! तू पहले हवास को **'नियम्य'**- क़ाबू में कर; क्योंकि दुश्मन तो इसके माबैन छुपा है। वह तेरे जिस्म के अन्दर है। बाहर तलाश करने से वह कहीं नहीं मिलेगा। यह दिल की दुन्या की बातिनी जंग है। हवास को क़ाबू में करके, इल्म और ख़ुसूसी इल्म (विज्ञान) का ख़ातिमः करने वाले इस गुनाहगार ख़्वाहिश को ही मार। ख़्वाहिश सीधे पकड़ में नहीं आयेगी। लिहाज़ा उयूब के मक़ाम का ही घेराव कर ले, हवास को ही क़ाबू में कर ले।

लेकिन हवास और मन को क़ाबू में करना तो बड़ा मुश्किल है। क्या यह काम हम कर पायेंगे? इस पर श्रीकृष्ण आपकी कुव्वत का इज़्हार करते हुए हिम्मत अफ़्ज़ाई करते हैं-

इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः।
मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः।।४२।।

अर्जुन! इस जिस्म से तू हवास को मावरा या'नी लतीफ़ और ताक़तवर समझ। हवास से मावरा मन है। यह उनसे भी ताक़तवर है। मन से मावरा अक़्ल है और जो अक़्ल से भी मावरा है, वह तेरी रूह है। वही है तू, लिहाज़ा हवास, मन और अक़्ल पर क़ाबू पाने में तू क़ादिर है।

एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना।
जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम्।।४३।।

इस तरह अक़्ल से मावरा या'नी लतीफ़ और ताक़तवर अपनी रूह को समझकर, अपनी कुव्वत का अंदाज़ः लगाकर, अक़्ल के ज़रीअः अपने मन को क़ाबू में करके अर्जुन! इस ख़्वाहिश की शक्ल वाले असीरुलफ़त्ह दुश्मन को मार। अपनी ताक़त को समझकर इस असीरुलफ़त्ह दुश्मन को मार। ख़्वाहिश एक असीरुलफ़त्ह दुश्मन है। हवास के ज़रीअः यह रूह को फ़िरेब में डालती है, तो अपनी ताक़त समझकर, रूह को मज़्बूत जानकर तम्सीलेख़्वाहिश दुश्मन को मार। कहने की ज़रूरत नहीं है कि यह दुश्मन दाख़िली है और 'जंग' भी दिल की दुन्या की है।

मग़्ज़े सुख़न :-

अक्सर गीता से दिलचस्पी रखने वाले शर्हनवीसों ने इस बाब को 'अमली जोग' (कर्मयोग) नाम दिया है, लेकिन यह मुनासिब नहीं है। दूसरे बाब में जोग के मालिक ने अमल का नाम लिया। उन्होंने अमल की अहम्मीयत क़ाइम कर उसमें अमली तजस्सुस को बेदार किया और इस बाब में उन्होंने अमल की तश्रीह की कि यग का तरीक़-ए-कार ही अमल है। साबित है कि यग कोई तयशुदः सम्त है। इसके इलावः जो कुछ भी किया जाता है, वह इसी दुन्या की बन्दिश है। श्रीकृष्ण जिसे कहेंगे, वह अमल **'मोक्ष्यसेऽशुभात्'**-दुन्या की क़ैद से आज़ाद कराने वाला अमल है।

श्रीकृष्ण ने यग की तख़्लीक़ बतायी। यग देता क्या है? उसकी ख़ुसूसियात की अक्कासी की यग करने पर ज़ोर दिया। उन्होंने फ़र्माया, इस यग का तरीक़-ए-कार

ही अमल है। जो नहीं करते, वे गुनाहगार, आरामतलब, बेकार जीते हैं। गुज़श्तः दौर में होने वाले वली हज़्रात ने भी इसे करके ही आ'ला बेग़रज़ अमल की कामयाबी को हासिल किया। वे ख़ुद मुतमईन है, उनके लिए अमल की ज़रूरत नहीं है। फिर भी पीछे वालों की रहनुमाई के लिए वे भी अमल में अच्छी तरह लगे रहते थे। उन अज़ीम इंसानों से श्रीकृष्ण ने अपना मुआज़नः किया कि मेरा भी अब अमल करने से कोई वास्तः नहीं है; लेकिन मैं भी अपने बा'द वालों की भलाई के लिए ही अमल में लगा रहता हूँ। श्रीकृष्ण ने साफ़तौर पर अपना तअर्रुफ़ कराया कि वे एक जोगी थे।

उन्होंने अमल में लगे हुए रियाज़तकशों को मुतज़ल्ज़िल न होने को कहा, क्योंकि अमल करके ही उस रियाज़तकश को मक़ाम हासिल करना है। अगर नहीं करेंगे तो बरबाद हो जायेंगे। इस अमल के लिए मुराक़िब होकर जंग करनी है। आँखें बंद है, हवास के ज़ेरे असर तबीअ़त पर क़ाबू हो गया तो जंग कैसी? उस वक़्त ख़्वाहिश, गुस्सः, हसद, अदावत, ख़लल डालते हैं। इन ग़ैरनस्ली ख़साइल का कनारः पाना ही जंग है। दुन्यवी दौलत, मैदाने अमल, ग़ैरनस्ली ख़साइल को धीरे-धीरे छाँटते हुए मुराक़िब होते जाना ही जंग है। दरहक़ीक़त तसव्वुर में ही जंग है। यही इस बाब का लुब्बे-लुवाब है, जिसमें न अमल बताया, न यग। अगर यग समझ में आ जाय तो अमल समझ में आये। अभी तो अमल समझाया ही नहीं गया।

इस बाब में सिर्फ़ रौशनज़मीर अज़ीम इंसान के तर्बियती पहलू पर ज़ोर दिया गया। यह तो मुर्शिद हज़्रात के लिए हिदायत है। वे न भी करें तो उन्हें कोई नुक़्सान नहीं और न ऐसा करने में उनका अपना कोई फ़ाइदः ही है, लेकिन जिन रियाज़तकशों को आ'ला नजात मत्लूब है, उनके लिए ख़ास कुछ कहा नहीं, तो यह 'अमली जोग' कैसे है? अमल की शक्ल भी साफ़ नहीं है, जिसे किया जाय; क्योंकि 'यग का तरीक़-ए-कार ही अमल है'- अभी तक उन्होंने इतना ही बताया। यग तो बताया नहीं। अमल की शक्ल साफ़ कहाँ हुई? हाँ, जंग की हक़ीक़ी अक्कासी गीता में यहीं पायी जाती है।

पूरी गीता पर नज़र दौड़ायें, तो बाब दो में कहा कि जिस्म फ़ानी है, लिहाज़ा जंग कर। गीता में जंग के लिए यही ठोस वज्ह बतायी गयी। आगे इल्मी जोग के मुतअल्लिक़ क्षत्री के लिए जंग ही भलाई का वाहिद ज़रीअः बताया गया और कहा कि यह अक़्ल तेरे लिए इल्म के जोग के बारे में कही गयी। कौन-सी अक़्ल? यही कि फ़त्ह और शिकस्त दोनों लिहाज़ से फाइदः ही है- ऐसा समझ कर जंग कर।

फिर बाब चार में कहा कि जोग में क़ाइम रहकर दिल में मौजूद अपने इस शको-शुब्हः को इल्म की तम्सीली तलवार से काट। वह तलवार जोग में है। बाब पाँच से दस तक जंग का जिक्र तक नहीं है। ग्यारहवें बाब में सिर्फ़ इतना कहा कि ये दुश्मन मेरे ज़रीअः पहले से ही मारे गये हैं, तू मह्ज़ वसीलः बनकर खड़ा भर हो जा। नेकनामी को हासिल कर। ये तेरे बग़ैर भी मारे हुए हैं। मुहर्रिक ख़ुद करा लेगा। तू इन मुर्दों को ही मार।

बाब पन्द्रह में दुन्या को मज़्बूत जड़वाला पीपल के दरख़्त जैसा कहा गया, जिसे बिला लगाव वाले अस्लिहः के ज़रीअः काटकर उस आ'ला मक़ाम की तलाश करने की हिदायत मिली। आगे के अबवाब में जंग का तज़्किरः नहीं है। हाँ, बाब सोलह में शैतानों की अक्कासी ज़रूर है, जो जहन्नुमी हैं। बाब तीन में ही जंग का तफ़्सीली बयान है। श्लोक तीस से लगात श्लोक ४३ तक, जंग की शक्ल, उसका ज़रूरी होना, जंग न करने वालों की बर्बादी, जंग में मारे जाने वाले दुश्मनों के नाम, उन्हें मारने के लिए अपनी ताक़त को दावत और यक़ीनी तौर पर इन्हें काटकर फेंकने पर ज़ोर दिया। इस बाब में दुश्मन और दुश्मन की अन्दरूनी शक्ल साफ़ है, जिनके ख़ातिमः की तर्ग़ीब दी गई है, लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'शत्रुविनाशप्रेरणा' नाम तृतीयोऽध्यायः।।३।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'शत्रु-विनाश-प्रेरणा' (तर्ग़ीबे इख़्तितामे अदू) नाम का तीसरा बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'शत्रुविनाशप्रेरणा' नाम तृतीयोऽध्यायः।।३।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'शत्रुविनाशप्रेरणा' (तर्ग़ीबे इख़्तितामे अदू) नाम का तीसरा बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ चतुर्थोऽध्यायः।।
(चौथा बाब)

बाब तीन में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने पुरयक़ीन किया था कि कोताह नज़री से अलग हटकर जो भी इंसान अक़ीदत के साथ मेरे उसूल के मुताबिक़ चलेगा, वह आ'माल की बंदिश से अच्छी तरह आज़ाद हो जायेगा। अमल की कैद से आज़ादी दिलाने की सलाहीयत जोग (इल्मी जोग ख़्वाह अमली जोग, दोनों) में है। जोग में ही जंग की तह्रीक़ मुज़्मिर है। पेशक़र्द बाब में वे बताते हैं कि इस जोग का तख़्लीक़कार कौन है? इसकी बसिल्सिलः तरक़्क़ी कैसे होती है?

श्रीभगवानुवाच-

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्।।१।।

अर्जुन! मैंने इस जोग को कल्प (बदलाव) के शुरुआती दौर में विवस्वान् (सूरज) के मुतअल्लिक़ कहा, विवस्वान् ने मूरिसे अव्वल मनु से और मूरिसे अव्वल मनु ने इक्ष्वाकु से कहा। किसने कहा? मैंने कहा। श्रीकृष्ण कौन थे? एक जोगी। उंसुर में क़ाइम अज़ीम इंसान ही इस लाफ़ानी जोग को कल्प (बदलाव) के शुरूआती दौर में या'नी यादे इलाही के शुरुआती दौर में विवस्वान् या'नी जो विवश (मज़्बूर) हैं, ऐसे लोगों से कहता है। साँस में मुतहर्रिक कर देता है। यहाँ सूरज एक अलामत है, क्योंकि साँस (सुरा) में ही वह बशक्ले नूर है और वहीं उसके पाने कर तरीक़ः है। हक़ीक़ी नूर अता करने वाला (सूरज) वहीं है।

यह जोग लाफ़ानी है। श्रीकृष्ण ने कहा था, इसमें शुरुआत का ख़ातिमः नहीं होता। इस जोग की शुरुआत भर कर दें, तो यह कामिल बनाकर ही दम लेता है। जिस्म का कल्प (बदलाव) दवाओं के ज़रीअः होता है लेकिन रूह का कल्प यादेइलाही से होता है। यादेइलाही की शुरुआत ही रूहानी कल्प की इब्तिदा है। यह रियाज़ती याद भी किसी अज़ीम इंसान की ही देन है। लगाव की तारीकी में बेहोश इब्तिदाई इंसान जिसमें यादेइलाही का तअस्सुर (संस्कार) नहीं है, जोग के बारे में जिसने कभी

सोचा तक नहीं, ऐसा इंसान किसी अज़ीम इंसान को देखता है तो मह्ज़ उसके दीदार से, उसकी पाक ज़बान से, मामूली ख़िद्मत और कुर्बत से जोग के तअस्सुरात उसमें मुतहर्रिक हो जाते हैं। गोस्वामी तुलसीदासजी इसी को कहते हैं- **'जे चितए प्रभु जिन्ह प्रभु हेरे।', 'ते सब भये परम पद जोगू।'** (रामचरितमानस, २/२१६/१-२)।

श्रीकृष्ण कहते हैं कि इस जोग के मुतअल्लिक़ मैंने शुरू में सूरज से कहा। **'चक्षोः सूर्यो अजायत'**- अज़ीम इंसान की मह्ज़ नज़र पड़ जाने से जोग के तअस्सुरात सुरा (साँसों) में मुतहर्रिक हो जाते हैं। रौशनज़मीर क़ादिरेमुत्लक़ का मक़ाम सबके दिल में है। साँसों पर क़ाबू पाने के बा'द ही उसके हुसूल का तरीक़ः है। साँस में तअस्सुरात की तख़्लीक़ ही सूरज के मुतअल्लिक़ कहना है। वक़्त आने पर यह तअस्सुर मन में हरकत में होगा। यही सूरज का मूरिसे अव्वल मनु से कहना है। मन हरकतअंदाज़ होने पर अज़ीम इंसान के उस जुम्लः के मुतअल्लिक़ ख़्वाहिश जाग जायेगी। अगर मन में कोई बात है तो उसे पाने की ख़्वाहिश ज़रूर होगी, यही मूरिसेअव्वल का इक्ष्वाकु से कहना है। चाहत होगी कि वह मुअय्यनः अमल करे जो लाफ़ानी है, जो अमल की बंदिश से नजात दिलाता है- ऐसा है तो किया जाय और इबादत रफ़्तार पकड़ लेती है। रफ़्तार पकड़कर यह जोग कहाँ पहुँचाता है? इस पर फ़र्माते हैं-

एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः।
स कालेनेह महता योगो नष्टः परन्तप।।२।।

इस तरह किसी अज़ीम इंसान के ज़रीअः तअस्सुरात से ख़ाली इंसानों की साँस में, साँस से मन में, मन से ख़्वाहिश में और ख़्वाहिश तेज़ होकर अमली जामः में ढलकर यह जोग सिल्सिलेवार तरक़्क़ी करते-करते शाही आरिफ़ (राजर्षि) के दर्जः तक पहुँच जाता है, उस हालत में पहुँचकर ज़ाहिर होता है। इस सत्ह के रियाज़तकश में मालोज़र के ज़ख़ीरों और कामयाबियों (ऋद्धियों-सिद्धियों) की हरकत होती है। वह जोग इस अहम दौर में इसी आलम (जिस्म) में अमूमन बरबाद हो जाता है। इस हद्दे में लकीर को कैसे पार किया जाय? क्या इस ख़ास मक़ाम पर पहुँचकर सभी ख़त्म हो जाते हैं? श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं- नहीं, जो मेरी पनाह में है, मेरा मंजूरे नज़र है, लाशरीक दोस्त है, वह ख़त्म नहीं होता।

स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः।
भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम्।।३।।

वही यह कदीमी जोग अब मैंने तेरे वास्ते बयान किया है, क्योंकि तू मेरा बन्दः और दोस्त है और यह जोग बेहूतरीन और पुरअसार है। अर्जुन क्षत्री दर्जः का रियाज़ती था, शाही आरिफ की हालतवाला था, जहाँ मालो-ज़र की खुशहाली और कामयाबियों के थपेड़े में रियाज़तकश बरबाद हो जाता है। इस दौर में भी जो इफ़ादी हालत में ही है; लेकिन आम तौर पर रियाज़तकश यहाँ पहुँचकर लड़खड़ा जाते हैं। ऐसे लाफ़ानी लेकिन राज़बस्तः जोग के बारे में श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा, क्योंकि बरबाद होने की हालत में अर्जुन था ही। क्यों कहा? इसलिए कि तू मेरा बन्दः है, लाशरीक ख़याल से मेरी पनाह में है, मंजूरे नज़र है, दोस्त है।

जिस मा'बूद की हमें चाहत है, वह मुर्शिद रूहेमुत्लक़, रूह से यकसाँ होकर हिदायत देने लगे, तभी हक़ीक़ी यादे इलाही की शुरुआत होती है। यहाँ मुहर्रिक की हालत में मा'बूद और मुर्शिद एक दूसरे के मुतरादिफ़ हैं। जिस सत्ह पर हम खड़े हैं, उसी सत्ह पर जब खुद मा'बूद दिल में उतर आयें, रोकथाम करने लगें, डगमगाने पर सँभालें, तभी मन क़ाबू में हो पाता है- **'तुलसिदास (मन) बस होइ तबहिं जब प्रेरक प्रभु बरजै'** (विनयपत्रिका, ८९)। जब तक मा'बूद रथवान होकर, रूह से यकसाँ होकर मुहर्रिक की शक्ल में खड़े नहीं हो जाते, तब तक सही मा'ना में दाख़िल ही नहीं होता। वह रियाज़तकश उम्मीदवार ज़रूर है, लेकिन उसके पास यादे इलाही कहाँ?

'क़ाबिले एहतिराम गुरुदेव भगवान' कहा करते थे- ''हो! हम कई मर्तबः बरबाद होते-होते बच गये। पर्वर्दगार ने ही बचा लिया। पर्वर्दगार ने इस तरह समझाया, यह कहा।'' हमने पूछा- महाराज जी! क्या पर्वर्दगार भी बोलते हैं, बातचीत करते हैं? जवाब दिया- ''हाँ हो। पर्वर्दगार ऐसे बात-चीत करते हैं, जैसे हम तुम बातचीत करें, घंटों बातें हो और सिल्सिलः न टूटे।'' हमें उदासी हुई और तअज्जुब भी हुआ कि पर्वर्दगार कैसे बोलते होंगे, यह तो बड़ी नई बात है। कुछ देर बा'द महाराज जी बोले- ''क्यों घबड़ाता है? तुमसे भी बातें करेंगे।'' लफ़्ज़-ब-लफ़्ज़ सच था उनका कहना और यही दोस्ताना ख़याल का तसव्वुर है। दोस्त की तरह वे मसाइल का हल करते रहें, तभी इस बरबाद होने वाली हालत से रियाज़तकश बच पाता है।

अभी तक जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने किसी अज़ीम इंसान के ज़रीअः जोग की इब्तिदा, इसमें आने वाली अड़चने, उससे बचने का रास्तः बताया। इस पर अर्जुन ने सवाल किया-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः।
कथमेतद्विजानीयां त्वमादौ प्रोक्तवानिति।।४।।

बन्दःपर्वर! आपकी पैदाइश तो **'अपरम्'**- अब हुई है, और मेरे अन्दर साँसों की तह्रीक पारीनःमुद्दत है तो मैं कैसे मान लूँ कि इस जोग को यादे इलाही के शुरुआती दौर में आपने ही कहा था? इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण बोले-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप।।५।।

अर्जुन! मेरे और तेरे तमाम जनम हो चुके हैं। ऐ आ'ला रियाज़तकश! उन सबको तू नहीं जानता; लेकिन मैं जानता हूँ। रियाज़तकश नहीं जानता। वलीयुल्लाह अज़ीम इंसान जानता है, ग़ैरमर्ई के मर्तबः वाला जानता है। क्या आप सबकी तरह पैदा होते हैं? श्रीकृष्ण कहते हैं- नहीं, हक़ीक़ी शक्ल का हुसूल जिस्मानी हुसूल से जुदा है। मेरी पैदाइश इन आँखों से नहीं देखी जा सकती। मैं न पैदा होने वाला ग़ैरमर्ई, दाइमी होते हुए भी जिस्म की बुन्याद वाला हूँ।

'अवधू! जीवत में कर आसा।
मुए मुक्ति गुरु कहे स्वार्थी, झूठा दे विश्वासा।।'

जिस्म के रहते ही उस उंसूरे आ'ला में दाख़िलः हासिल किया जाता है। ज़रा-सी भी कमी है, तो जनम लेना पड़ता है। अभी तक अर्जुन श्रीकृष्ण को अपनी ही तरह जिस्म वाला ही समझता है। वह बरमहल सवाल रखता है- क्या आपका जनम वैसा ही है जैसा सबका है? क्या आप भी अज्साम की तरह पैदा होते हैं? श्रीकृष्ण कहते हैं-

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया।।६।।

मैं लाफ़ानी, बार-बार पैदा होने से आज़ाद और सारे जानदारों की आवाज़ में मुतहर्रिक होने पर भी ख़स्लत को क़ाबू में करके ख़ुद की कारसाज़ी से ज़ाहिर होता हूँ। एक फ़ित्रत (माया) तो जहालत है, जो क़ुद्रत में ही यक़ीन दिलाती है, बदज़ात शक्लों (योनियों) की ही वज्ह बनती है। दूसरी फ़ित्रत है- ख़ुद की फ़ित्रत,

जो रूह में दाख़िलः दिलाती है, ख़ुद के शक्ल की पैदाइश की वज्ह बनती है। इसी को जोग की फ़ित्रत (योगमाया) भी कहते हैं। जिससे हम अलग हैं, उस बरहक़ आ'ला शक्ल से यह जोड़ती है, मुलाक़ात कराती है। उस रूहानी तरीक़-ए-कार के ज़रीअः मैं अपनी तीनों सिफ़ात वाली कुद्रत को क़ाबू में करके ही ज़ाहिर होता हूँ। आमतौर से लोग कहते हैं कि मा'बूद का इक़्तिबास (अवतार) होगा, तो दीदार कर लेंगे। श्रीकृष्ण कहते हैं कि ऐसा कुछ नहीं होता कि कोई दूसरा देख ले। हक़ीक़ी शक्ल की पैदाइश जिर्म की शक्ल में नहीं होती। श्रीकृष्ण कहते हैं- जोग की रियाज़त के ज़रीअः, ख़ुद की फ़ित्रत के वसीले से अपनी तीनों सिफ़ात वाली ख़सलत को अपने क़ाबू में करके मैं बतसल्सुल ज़ाहिर होता हूँ। लेकिन किन हालात में?

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।७।।

ऐ अर्जुन! जब-जब हक़ीक़ी दीन पर्वर्दगार के लिए दिल कलाल से भर जाता है, जब बेदीनी (अधर्म) के इज़ाफ़ः से अक़ीदतमंद इंसान अपने आपको बचता हुआ नहीं देख पाता, तब मैं रूह की तख़्लीक़ करने लगता हूँ। ऐसी ही बेक़रारी मूरिसेअव्वल (मनु) को हुई थी-

हृदयँ बहुत दुख लाग, जनम गयउ हरिभगति बिनु। (रामचरित मानस)

जब आपका दिल इश्क़े हक़ीक़ी से लबरेज़ हो जाय, उस दाइमी हक़ीक़ी दीन के लिए **'गदगद गिरा नयन बह नीरा।'** की हालत आ जाय, जब लाख कोशिशों के बावुजूद भी आशिक़ बेदीनी से बच नहीं पाता, ऐसी हालत में मैं अपनी हक़ीक़ी शक्ल की तख़्लीक़ करता हूँ। या'नी पर्वर्दगार का इक़्तिबास सिर्फ़ उसके तलबगार के लिए है- **'सो केवल भगतन हित लागी।'** (रामचरितमानस १/१२/५)।

यह अवतार किसी ख़ुशक़िस्मत रियाज़तकश के बातिन में होता है। आप ज़ाहिर होकर करते क्या हैं?

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।८।।

अर्जुन! **'साधूनां परित्राणाय'**-मत्लूबेकुल्ली वाहिद मा'बूद है, जिसे हासिल कर लेने पर कुछ भी हासिल करना बाक़ी नहीं रहता। उस मत्लूबः में दाख़िल दिलाने वाले इर्फ़ान, तर्के दुन्या, सरकोबी, नफ़्सकुशी वग़ैरः रूहानी दौलत को बिल्ला ख़लल मुतहर्रिक

करने के लिए और **'दुष्कृताम्'**- जिससे बुरे काम सरज़द होते हैं, उन ख़्वाहिश, गुस्सः, हसद व अदावत वग़ैरः ग़ैरनस्ली ख़साइल को जड़ से ख़त्म करने के लिए और दीन को अच्छी तरह क़ाइम करने के लिए मैं हर दौर में ज़ाहिर होता है।

दौर (युग) का मत्लब सतजुग, त्रेता, द्वापर में नहीं; दौर के फ़राइज़ का उतार-चढ़ाव इंसानों के ख़साइल पर मुन्हसिर है। दौरे फ़राइज़ हमेशः रहे हैं। रामचरितमानस में इशारः है-

नित जुग धर्म होहिं सब केरे। हृदयँ राम माया के प्रेरे।।

(रामचरितमानस, ७/१०३ ख/१)

दौरे फ़राइज़ सभी के दिल में हमेशः पैदा होते रहते हैं। जहालत से नहीं बल्कि इल्म से, राममाया या'नी राम की तौफ़ीक़ से दिल में होते हैं, जिसे पेशक़र्दः श्लोक में ख़ुद की फ़ित्रत (आत्ममाया) कहा गया है, वही है राममाया (कारसाज़ी) दिल में राम का मक़ाम हासिल कराने वाला राम से तर्ग़ीबयाफ़्तः है वह इल्म। कैसे समझा जाय कि अब कौन-सा दौर काम कर रहा है, तो **'सुद्ध सत्व समता बिग्याना। कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना।।'** (मानस ७/१०३ ख/२) जब दिल में पाक मलकाते फ़ाज़िलः ही मुतहर्रिक हो मलकाते रदीयः और मलकाते मज़मूम दोनों ख़ामोश हो जायँ, ग़ैरमुसावात ख़त्म हो गयी हों, जिसकी किसी से अदावत न हो, इल्मे आ'ला हो या'नी मा'बूद से हिदायत लेने और उस पर क़ाइम रहने की सलाहीयत हो, मन में पूरी तरह ख़ुशी हो- जब ऐसी सलाहीयत आ जाय तब दौरे हक़ीक़ी (सतजुग) में दाख़िल मिल गया। इसी तरह दूसरे दो दौरों का बयान किया, और आख़िर में,

तामस बहुत रजोगुन थोरा। कलि प्रभाव बिरोध चहुँ ओरा।।

(रामचरितमानस, ७/१०३ ख/५)

मलकाते मज़मूमी लबरेज़ हो, थोड़े मलकाते रदीयः भी उसमें हों, चारों तरफ़ दुश्मनी और मुख़ालफ़त हो तो ऐसा इंसान दौरे गुनाह का (कलियुगीन) है। जब मलकाते मज़मूम काम करता है तो इंसान में काहिली, नींद, मद्होशी की ज़ियादती होती है। वह अपना फ़र्ज़ जानते हुए भी उसमें नहीं लग सकता, मम्नूअ कामों को जानते हुए भी उनसे बच नहीं सकता।

इसी तरह दौरे फराइज़ का उतार-चढ़ाव इंसानों की बातिनी लियाक़त पर मुन्हसिर है। किसी ने इन सलाहीयतों को चार दौर (युग) कहा है, तो कोई इन्हें ही चार नस्लों (वर्ण) का नाम देता है, तो कोई इन्हें ही बेह्तरीन, बेह्तर, औसत और

बदतरीन चार दर्जात के रियाज़तकश कहकर मुख़ातब करता है। हर दौर में मा'बूद साथ देते हैं। हाँ, ऊँचे दर्जे में मुताबक़त पूरी तौर से ज़ाहिर होती है, नीचे के दर्जात (युगों) में मदद की कमी महसूस होती है।

मुख़्तसर में श्रीकृष्ण कहते हैं कि मा'बूद का दीदार अता कराने वाले इर्फ़ान, तर्के दुन्या वग़ैरः को बिला किसी ख़लल के मुतहर्रिक करने के लिए और बुराइयों के वजूहात ख़्वाहिश, गुस्सः, हसद, अदावत वग़ैरः का पूरी तौर से ख़ातिमः करने के लिए, आ'ला दीन मा'बूद में साकिन रखने के लिए मैं हर दौर में या'नी हर हालत में, हर दर्जात में ज़ाहिर होता हूँ। बशर्ते कि इंसान में बेक़रारी हो- जब तक मा'बूद ताईद न करे, तब तक आप समझ ही नहीं सकेंगे कि उयूब का ख़ातिमः हुआ ख़्वाह अभी कितना बाकी है? इब्तिदा से इन्तिहा तक मा'बूद हर सतह पर अपनी हर सलाहीयत के साथ रहते हैं। उनका जुहूर आशिक के दिल में होता है। मा'बूद ज़ाहिर होते हैं, तब तो सभी दीदार करते होंगे? श्रीकृष्ण कहते हैं- नहीं,

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन।।९।।

अर्जुन! मेरी वह पैदाइश या'नी कि बेक़रारी के साथ आ'ला शक्ल की तख़्लीक़ और मेरा अमल या'नी बुरे कामों के वुजूह का खातिमः, मत्लूबः मक़्सद को हासिल कराने वाली सलाहीयतों की बेऐब हरकत, फ़र्ज़ का इस्तिक़्लाल यह अमल और पैदाइश रौशनजदः या'नी मावराई है, दुन्यवी नहीं है। इन आम आँखों से क़ाबिले नज़ारः नहीं है। दिलो-दिमाग से उसे मापा नहीं जा सकता। जब इतना दक़ीक़ है, तो उसे देखता कौन है? **'यो वेत्ति तत्त्वतः'**- महज़ अह्लेबसीरत ही मेरे इस जनम और अमल को देखता है और मेरा दीदार करके उसे बार-बार जनम लेने की ज़रूरत नहीं पड़ती बल्कि मुझमें ज़म हो जाता है।

जब अह्लेबसीरत ही मा'बूद के जनम और काम को देख पाता है, तो लोग लाखों की ता'दाद में हुजूम में क्यों खड़े हैं कि कहीं अवतार होगा, तो दीदार करेंगे? क्या आप अह्ले बसीरत हैं? आबिद की शक्ल में आज भी मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से, ख़ास तौर पर आबिदों की लिबास के पर्दे में बहुत से लोग इश्तिहार करते-फिरते हैं कि वे अवतार हैं या उनके दलाल इश्तिहार कर देते हैं। लोग भेड़ की तरह अवतार को देखने के लिए टूट पड़ते हैं; लेकिन श्रीकृष्ण कहते हैं कि सिर्फ़ अह्लेबसीरत ही देख पाता है। अब अह्लेबसीरत किसे कहते है?

बाब दो में हक़ और बातिल का फैसलः करते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया था कि, अर्जुन! बातिल का वुजूद नहीं है और हक़ की तीनों दौरों में कभी कमी नहीं है। तो क्या आप ऐसा कहते हैं? उन्होंने बताया- 'नही, अह्लेबसीरत हज़्रात ने इसे देखा।' न किसी अह्लेज़बान ने देखा, न किसी अमीर ने देखा। यहाँ फिर ज़ोर देते हैं कि मेरा ज़ुहूर तो होता है लेकिन उसे अह्लेबसीरत ही देख पाता है। अह्लेबसीरत एक सवाल है। ऐसा कुछ नहीं कि पाँच अनासिर हैं, पचीस अनासिर हैं- इनकी शुमारी सीख ली और हो गए अह्लेबसीरत। श्रीकृष्ण ने आगे बताया कि रूह ही आ'ला उंसुर है। रूह आ'ला से मुज़य्यन होकर रूहे मुत्लक़ हो जाती है। ख़ुदशनास ही इस ज़ुहूर को समझ पाता है। साबित है कि अवतार किसी बेक़रार आशिक़ के दिल में होता है। शुरू में वह उसे समझ नहीं पाता कि हमें इशारः देने वाला कौन है? कौन रहनुमाई करता है? लेकिन उंसुरे आ'ला मा'बूद के दीदार के साथ ही वह देख पाता है, समझ पाता है और फिर जिस्म को तर्क करने के बा'द दुबारः जन्म लेने से मुबर्रा हो जाता है।

श्रीकृष्ण ने कहा कि मेरी पैदाइश मावराई है, इसे देखने वाला मुझे हासिल होता है, तो लोगों ने उनका बुत बना लिया, इबादत करने लगे, आस्मान में कहीं उनके रहने की जगह का तसव्वुर कर लिया। ऐसा कुछ नहीं है। उन अज़ीम इंसानों का मत्लब सिर्फ़ इतना था कि अगर आप मुअय्यनः अमल करें, तो पायेंगे कि आप भी पुरनूर या'नी मावराई है। आप जो हो सकते हैं, वह में हो गया हूँ। मैं आपका इम्कान हूँ, आपका ही मुस्तक़्बिल हूँ। अपने अन्दर आप जिस दिन ऐसी तक्मील पा लेंगे, तो आप भी वही होंगे, जो श्रीकृष्ण हैं। जो श्रीकृष्ण का मक़ाम है, वही मक़ाम आपका भी हो सकता है। अवतार कहीं बाहर नहीं होता। हाँ, अगर उंसीयत से लबरेज़ दिल हो तो आपके अन्दर भी अवतार का एहसास मुम्किन है। वे आपकी हौसलः अफ़्ज़ाई करते हैं कि बहुत से लोग इस राहे हक़ीक़ी पर चलकर मेरे मक़ाम को हासिल कर चुके हैं।

वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः।
बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः।।१०।।

उंसीयत और बैराग दोनों से लातअल्लुक़ बेग़रज़ (वीतराग) और इसी तरह ख़ौफ़-बेख़ौफ़, ख़फ़गी और बेख़फ़गी दोनों से मावरा, लाशरीक एहसास के साथ या'नी बिला ग़ुरूर के मेरी पनाह में आये बहुत से लोग इल्म और रियाज़त की बरकत से

पाक होकर मेरे मक़ाम को हासिल कर चुके हैं। अब ऐसा होने लगा हो, ऐसी बात नहीं है। यह उसूलः हमेश से रहा है। बहुत से इंसान इसी तरह से मेरे मक़ाम को हासिल कर चुके हैं। किस तरह? जिन-जिन लोगों का दिल बेदीनी का इज़ाफ़ः देखकर मा'बूद के लिए बेक़रारी से भर गया, उस हालत में मैं अपने मक़ाम की तख़्लीक़ करता हूँ। वे मेरे मक़ाम को हासिल करते हैं। जिसे जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने रम्ज़शनासी कहा था, उसे ही अब 'इल्म' कहते हैं। उंसुरे आ'ला है मा'बूद, उसे बदीही दीदार के साथ जानना इल्म है। इस तरह का इल्म रखने वाले आलिम मेरे मक़ाम को हासिल करते हैं। यहाँ यह सवाल पूरा हो गया। अब वे सलाहीयत की बुन्याद पर यादे इलाही में मस्रूफ़ होने वाले लोगों का दर्जः बाँटते हैं।

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।।११।।

पार्थ! जो मुझे जितनी लगन के साथ जैसे याद करते हैं, मैं भी उनको वैसे ही याद करता हूँ। उसी के मुताबिक़ उतनी ही तादाद में मदद मुहैया करता हूँ। रियाज़कश की अक़ीदत ही मेरी इनायत की शक्ल में उसे हासिल होती है। इस राज़ को समझकर बाहोश लोग पूरे ख़ुलूस के साथ मेरे उसूलों की इत्तिबाअ करते हैं। जिन उसूलों पर मैं ख़ुद अमल पैरा हूँ, जो मुझे मह्बूब है, वैसा ही बरताव करते हैं। जो मैं कराना चाहता हूँ, वही करते हैं।

मा'बूद कैसे याद करते हैं? वे रथबान बनकर खड़े हो जाते हैं, साथ चलने लगते हैं, यही उनका याद करना है। जिनसे बुराइयाँ पैदा होती हैं, उनका ख़ातिमः करने के लिए वे खड़े हो जाते हैं। हक़ीक़त में दाखिलः दिलाने वाली नेक ख़साइल की हिफ़ाज़त करने के लिए वे खड़े हो जाते हैं। जब तक मा'बूद दिल से पूरी तरह रथबान न हों और हर क़दम पर होशवार न करें, तब तक चाहे जैसा भी यादे इलाही का लुत्फ़ उठाने वाला क्यों न हो, लाख तसव्वुर करे, लाख कोशिश करे, वह इस कुद्रत के फ़साद से आज़ाद नहीं हो सकता। वह कैसे समझेगा कि हम कितना फ़ासिलः तय कर चुके? कितना बाक़ी है? मा'बूद ही रूह से जुड़कर खड़े हो जाते हैं और उसकी रहनुमाई करते हैं कि तुम इस जगह पर हो, इस तरह करो, इस तरह चलो। इस तरह दुन्या की खाइयों को पाटते हुए, धीरे-धीरे आगे बढ़ाते हुए मक़ाम तक पहुँचा देंगे। इबादत तो रिवाज़तकश को ही करनी पड़ती है, लेकिन उसके ज़रीअः इस राह में जो फासिलः तय होता है, वह मा'बूद की इनायत है। ऐसा जानकर सारे

इंसान पूरे ख़ुलूस के साथ मेरी इत्तिबाअ करते हैं। किस तरह वे बरताव करते हैं?

काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः।
क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा।।१२।।

वे इंसान इस जिस्म में आ'माल की कामयाबी चाहते हुए मलाइक की इबादत करते हैं। कौन-सा अमल? श्रीकृष्ण ने कहा- 'अर्जुन! तू मुअय्यनः अमल कर।' मुअय्यनः अमल क्या है? यग का तरीक़-ए-कार ही मुअय्यनः अमल है। यग क्या है? रियाज़त का ख़ास तरीक़ः; जिसमें तनफ़्फ़ुस की आमेज़िश, हवास के ख़ारिजी रवानी को नफ़्शकुशी की आग में हवन किया जाता है, जिसका समरः है- मा'बूद। अमल का ख़ालिस मत्लब है इबादत, जिसकी हक़ीक़ी शक्ल इसी बाब में आगे मिलेगी। इस इबादत का नतीजः क्या है? **'संसिद्धिम्'**- आ'ला कामयाबी मा'बूद, **'यान्ति ब्रह्म सनातनम्'**- दाइमी रब में दाख़िलः, बेग़रज़ आ'ला अमल की हालत। श्रीकृष्ण कहते हैं- मेरे मुताबिक़ बरताव करने वाले लोग इस दुन्या में अमल के नतीजः आ'ला बेग़रज़ अमल की कामयाबी के लिए मलाइक की इबादत करते हैं या'नी रूहानी दौलत को मज़्बूत बनाते हैं।

तीसरे बाब में उन्होंने बताया था कि इस यग के ज़रीअः तू मलाइक का इज़ाफ़ः कर, रूहानी दौलत को मज़्बूत बना। जैसे-जैसे दिल की दुन्या में रूहानी दौलत का इज़ाफ़ः होगा, वैसे-वैसे तेरी तरक़्क़ी होगी। इस तरह एक दूसरे की तरक़्क़ी करते हुए आ'ला शरफ़ को हासिल कर। आख़िर तक तरक़्क़ी करते जाने का यह बातिनी अमल है। इसी पर ज़ोर देते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं कि मेरे मुआफ़िक़ बरताव करने वाले लोग इस इंसानी जिस्म में अमल की कामयाबी चाहते हुए रूहानी दौलत को ताक़तवर बनाते हैं, जिससे वह बेग़रज़ अमल वाली कामयाबी जल्द मिल जाती है। वह नाकामयाब नहीं होती; कामयाब ही होती है। जल्द का क्या मतलब? क्या अमल में लगते ही फ़ौरन उसी वक़्त यह आ'ला कामयाबी हासिल हो जाती है? श्रीकृष्ण कहते हैं- नहीं, इस ज़ीना पर बतद्रीज चढ़ने का तरीक़ः है। कोई छलाँग मारकर एहसास से मुबर्रा मुराकबः जैसा मो'जिज़ः नहीं होता। इस पर देखें-

चातुर्वर्णयं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम्।।१३।।

अर्जुन! **'चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं'**- चार नस्लों की तख़्लीक़ मैंने की। तो क्या इंसानों को चार हिस्सों में बाँट दिया? श्रीकृष्ण कहते हैं- नहीं, **'गुणकर्म विभागशः'**-

सिफ़ात के मद्देनज़र अमल को चार हिस्सों में बाँटा। सिफ़ात एक पैमानः है, कसौटी है। मलकाते मज़मूम होगा तो काहिली, नींद, मद्मस्ती, अमल में न लगने की ख़सूलत, जानते हुए भी मम्नूआत से न बच पाने की मज़्बूरी रहेगी। ऐसी हालत में रियाज़त शुरू कैसे करें? दो घंटे आप इबादत में बैठते हैं, इस अमल के लिए कोशिश करना चाहते हैं, लेकिन दस मिनट भी अपने मुआफ़िक़ नहीं पाते। जिस्म ज़रूर बैठा है; लेकिन जिस मन को बैठना चाहिए, वह हवा से बातें कर रहा है, दलीले नाक़िस का जाल बुन रहा है। पिनक पर पिनक छायी है, तो आप बैठे क्यों हैं? वक़्त क्यों बरबाद करते हैं? उस वक़्त सिर्फ़ **'परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम्'**- जो अज़ीम इंसान ग़ैरमर्ई की हालत वाले हैं, लाफ़ानी उंसुर में क़ाइम हैं, उनकी और उस राह पर चलने वाले ख़ुद से बेहतर लोगों की ख़िद्मत में लग जा। इससे नाक़िस तअस्सुरात ख़त्म होते जायेंगे, रियाज़त में दाखिलः दिलाने वाले तअस्सुरात मज़्बूत होते जायेंगे।

धीरे-धीरे मलकाते मज़मूम कम होने पर मलकाते रदीयः की अहम्मीयत और मलकाते फ़ाज़िलः की मामूली तह्रीक के साथ रियाज़तकश की सलाहीयत वैश्य दर्जः की हो जाती है। उस वक़्त वही रियाज़तकश ज़ब्ते नफ़्स, रूहानी दौलत का हुसूल क़ुद्रती तौर पर करने लगेगा। अमल करते-करते उसी रियाज़तकश में मलकाते फ़ाज़िलः की इफ़्रात हो जायेगी, मलकाते रदीयः कम रह जायेंगे, मलकाते मज़मूम ख़ामोश रहेंगे। उस वक़्त वही रियाज़तकश क्षत्री दर्जः में दाख़िल पा लेगा। बहादुरी, अमल में लगे रहने की सलाहीयत, पीछे न हटने की ख़सूलत, सारे एहसासात पर मालिकानः एहसास, क़ुद्रत के तीनों सिफ़ात को काटने की सलाहीयत उसकी फ़ित्रत में ढल जायेगी। वही अमल और लतीफ़ होने पर मह्ज़ मलकाते फ़ाज़िलः मुतहर्रिक रह जाने पर मन पर क़ाबू, नफ़्सकुशी, यकसुई, सीधापन, तसव्वुर, मुराक़बः, ख़ुदाई हिदायत, दीनदारी वग़ैर; पर्वर्दगार से निस्बत दिलाने वाली फ़ित्री सलाहीयत के साथ वही रियाज़तक़श बर्हमन दर्जः का कहा जाता है। यह बर्हमन दर्जः के अमल की सत्ही हद है। जब वही रियाज़तकश मा'बूद के साथ निस्बत पा लेता है, उस आख़िरी हद में वह ख़ुद में न बर्हमन रहता है, न क्षत्री, न वैश्य, न शुद्र, लेकिन दूसरों की रहनुमाई के लिए वही बर्हमन है। अमल एक ही है- मुअय्यनः अमल, इबादत। हालात के फ़र्क़ से इसी अमल को ऊँचे-नीचे चार दर्जात में बाँटा। किसने बाँटा? किसी जोग के मालिक ने बाँटा, ग़ैरमर्ई मक़ाम वाले अज़ीम इंसान ने बाँटा। उसके करने वाले मुझ लाफ़ानी को न करने वाला ही जान। क्यों?

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा।
इति मां योऽभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते।।१४।।

क्योंकि आ'माल के समरः में मेरी ख़्वाहिश नहीं है। आ'माल का समरः क्या है? श्रीकृष्ण ने पहले बताया था कि यग जिससे पूरा होता है, उस हरकत का नाम अमल है और दौरे तक्मील में यग जिसकी तख़्लीक़ करता है, उस इल्मी नोशाब को हासिल करने वाला दाइमी, अबदी, ख़ुदा में दाख़िलः पा लेता है। अमल का समरः है- रूहे-मुत्लक़। उस रूहे मुत्लक़ की चाह भी अब मुझे नहीं है, क्योंकि वह मुझसे जुदा नहीं है। मैं ग़ैरमर्ई शक्ल हूँ, उसी के मक़ाम वाला हूँ। अब आगे कोई इक़्तिदार नहीं, जिसके लिए इस अमल से दिलचस्पी रखूँ। लिहाज़ा आ'माल मेरे साथ मुलव्वस नहीं होते और इसी सत्ह से जो भी मुझे जानता है या'नी जो आ'माल के समरः रूहे-मुत्लक़ को हासिल कर लेता है, उसे भी आ'माल नहीं बांधते। जैसे श्रीकृष्ण, वैसे उस सत्ह से जानने वाला अज़ीम इंसान।

एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैरपि मुमुक्षुभिः।
कुरु कर्मैव तस्मात्त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम्।।१५।।

अर्जुन! पहले गुज़रने वाले नजात के तलबगार इंसानों के ज़रीअः भी यही समझकर अमल किया गया। क्या समझकर? यही कि जब आ'माल का समरः रूहेमुत्लक़ अलग न रह जाय, आ'माल के समरः रूहे मुत्लक़ की आर्ज़ू न रह जाने पर उस इंसान को आ'माल नहीं बाँधते। श्रीकृष्ण इसी मक़ाम वाले हैं, लिहाज़ा वे अमल में मुलव्वस नहीं होते और उसी सत्ह से हम जान लेंगे, तो हमें भी अमल नहीं बाँधेगा। या'नी हमारे लिये भी अमल की बंदिश नहीं होगी। जैसा श्रीकृष्ण, ठीक उसी सतह से जो भी जान लेगा, वैसा ही वह इंसान भी अमल की बंदिश से आज़ाद हो जायेगा। अब श्रीकृष्ण 'मा'बूद', 'मर्देख़ुदा', 'ग़ैरमर्ई', मालिके जोग ख़्वाह आ'लाजोग के मालिक जो भी रहे हों, वह मक़ाम सबके लिए है। यही समझकर पहले के नजात की ख़्वाहिश रखने वाले इंसानों ने अमल के रास्ते पर क़दम रखा। लिहाज़ा अर्जुन! तू भी आबा-व-अन्दाद के ज़रीअः हमेशः से किये हुए इसी अमल को कर। यही वाहिद इफ़ादी रास्तः है।

अभी तक जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने अमल करने पर ज़ोर दिया, लेकिन यह साफ़ नहीं किया कि अमल क्या है? बाब दो में उन्होंने महज़ अमल का नाम लिया कि अब इसी को तू बेग़रज़ अमल के बारे में सुन। उसकी सिफ़ात का बयान

किया कि यह जनम और मौत के बहुत बड़े ख़ौफ़ से हिफ़ाज़त करता है। अमल करते वक़्त एहतियात का बयान किया, लेकिन यह नहीं बताया कि अमल क्या है? बाब तीन में उन्होंने कहा कि, राहे इल्म अच्छा लगे या बेग़रज़ अमली जोग, अमल तो करना ही पड़ेगा। आ'माल को तर्ककर देने से न कोई आलिम होता है और अमल को न शुरू करने से बेअमल। बज़िद होकर जो नहीं करते, वे घमण्डी हैं। लिहाज़ा मन से हवास को क़ाबू में करके अमल कर। कौन-सा अमल करे? तो जवाब दिया, मुअय्यनः अमल कर। अब यह मुअय्यनः अमल है क्या? तो बोले- यग का तरीक़-ए-कार ही मुअय्यनः अमल है। एक नया सवाल खड़ा किया कि यग क्या है, जिसे करें तो अमल हो जाय? वहाँ भी यग की तख़्लीक़ बतायी, उसकी सिफ़ात का बयान किया; लेकिन यग नहीं बताया, जिससे अमल को समझा जा सके। अभी तक यह साफ़ नहीं हुआ कि अमल क्या है? अब कहते हैं कि, अर्जुन! कर्म (अमल) क्या है?, अकर्म (लाअमल) क्या है?-इस बारे में बड़े-बड़े आलिम भी गुमराह है, उसे अच्छी तरह समझ लेना चाहिए।

किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः।
तत्ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्।।१६।।

कर्म (अमल) क्या है और अकर्म (लाअमल) क्या है?-इसके मुतअल्लिक़ दानिशमंद इंसान भी फ़िरेफ़्त है। लिहाज़ा में उस अमल के बारे में तुझे अच्छी तरह बताऊँगा, जिसे जानकर तू **'अशुभात् मोक्ष्यसे'**- नामुबारक या'नी दुन्यवी बंदिश से अच्छी तरह आज़ाद हो जायेगा। अमल कोई ऐसी चीज है जो दुन्यवी बंदिश से आज़ादी दिलाती है। इसी अमल को जानने के लिए श्रीकृष्ण फिर ज़ोर देते हैं-

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः।।१७।।

कर्म (अमल) की हक़ीक़ी शक्ल भी जाननी चाहिए, लाअमल (अकर्म) की बेमली शक्ल भी समझनी चाहिए और विकर्म (ख़ुसूसी अमल) या'नी बरअक्स तसव्वुर से ख़ाली ख़ुसूसी अमल, जो कामिल इंसानों के ज़रीअः सरज़द होता है, उसे भी जानना चाहिए; क्योंकि अमल की रफ़्तार दुश्वार गुज़ार होती है। चंद लोगों ने विकर्म (ख़ुसूसी अमल) का मत्लब 'निषिद्ध कर्म' (मम्नूअ अमल), 'मन लगाकर किया गया अमल' वग़ैरः लगाया है। दरहक़ीक़त यहाँ 'वि' साबिकः (उपसर्ग) ख़ासियत का इज़्हार करने के लिए है। हुसूल के बा'द अज़ीम इंसानों के अमल बरअक्स तसव्वुर होते

हैं। ख़ुदकफ़ील, ख़ुद मुत्मइन, ख़ुदआसूदः अज़ीम इंसानों को न तो अमल करने से कोई फ़ाइदः और न छोड़ने से कोई नुक़्सान ही है; फिर भी वे अपने फ़र्माबदारों की भलाई के लिए अमल करते हैं। ऐसा अमल बरअक्स तसव्वुर से ख़ाली है, ताहिर है और यही अमल ख़ुसूसी अमल (विकर्म) कहलाता है।

गीता में यहाँ लगा 'वि' उपसर्ग (साबिक़ः) उसकी ख़ासियत को ज़ाहिर करने वाला है, ख़राबियों का नहीं। जैसे **'योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः।'** (गीता, ५/७)- जो जोग से मुज़य्यन है, वह ख़ास तरह से मुक़द्दस रूहवाला, ख़ासतौर से क़ाबूयाफ़्तः वग़ैरः ख़ासियात का बातिन वाला इज़्हार करने वाले हैं। इसी तरह गीता में जगह-जगह पर तमाम अल्फ़ाज़ के पहले 'वि' साबिक़ः का इस्ते'माल हुआ है, जो तक़्मीले ख़ास की अलामत है। इसी तरह 'विकर्म' (ख़ुसूसी अमल) भी मख़्सूस अमल की निशानी है, जो के बा'द अज़ीम इंसानों के ज़रीअः सरज़द होता है, जो मुबारक या नामुबारक हुसूल तअस्सुर नहीं डालता। अभी आपने विकर्म (ख़ुसूसी अमल) देखा। रहा कर्म (अमल) और अकर्म (लाअमल), जिसे अगले श्लोक में समझने की कोशिश करें। अगर यहाँ अमल और लाअमल का फ़र्क़ नहीं समझ सके तो कभी नहीं समझ सकेंगे।

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः।
स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत्।।१८।।

जो इंसान अमल में लाअमल देखे; अमल का मतलब है इबादत या'नी इबादत करे और यह भी समझे कि करने वाला मैं नहीं हूँ बल्कि सिफ़ात की हालत ही हमें ग़ौरोफ़िक्र में लगाती है, 'मैं मा'बूद की तंज़ीम में हूँ'-ऐसा समझे और जब इस तरह लाअमल (या'नी अमल का अदम एहसास) देखने की सलाहीयत आ जाय और मुसल्सल अमल होता रहे, तभी समझना चाहिए कि अमल सही तरह से हो रहा है। वही इंसान इंसानों में अक़्लमन्द है, इंसानों में जोगी है, जोग से मुज़य्यन अक़्लवाला है और सारे आ'माल का कारकुन है। उसके ज़रीअः अमल करने में ज़रा-सी भी ख़ामी नहीं रह जाती।

लुब्बे-लुवाब यह कि इबादत ही अमल है, उस अमल को करें और करते हुए लाअमल देखें कि मैं तो महज़ मशीन हूँ, कराने वाला तो मा'बूद है और मैं सिफ़ात से पैदा होने वाली हालत के मुताबिक़ ही कोशिश कर पाता हूँ। जब लाअमल की यह सलाहीयत आ जाय और मुसल्सल अमल होता रहे, तभी आ'ला इफ़ादः की

हालत दिलाने वाला अमल हो पाता है। क़ाबिले एहतिराम 'महाराज जी' कहा करते थे कि, ''जब तक मा'बूद रथबान न हो जायँ, रोकथाम न करने लगे, तब तक सहीह तौर से रियाज़त की शुरुआत ही नहीं होती।'' इसके पहले जो कुछ भी किया जाता है, अमल में दाख़िलः पाने की कोशिश से ज़ियादः कुछ भी नहीं है। हल का सारा वज़्न बैलों के कन्धों पर ही रहता है, फिर भी खेत की जुताई हलवाहे (हल चलाने वाले) की देन है। ठीक इसी तरह रियाज़त का सारा वज़्न रियाज़तकश के ऊपर ही रहता है; लेकिन हक़ीक़ी रियाज़तकश तो मा'बूद है, जो उसके पीछे लगा हुआ है, जो उसकी रहनुमाई करता है। जब तक मा'बूद फैसलः न दें, तब तक आप समझ ही नहीं सकेंगे कि हम से हुआ क्या? हम दुन्या में भटक रहे हैं या मा'बूद में? इस तरह मा'बूद की रहनुमाई में जो रियाज़तकश इस रूहानी राह पर आगे बढ़ता है, खुद को न करने वाला समझकर मुसल्सल अमल करता है, वही अक़्लमंद है, उसकी जानकारी हक़ीक़ी है, वही जोगी है।

श्रीकृष्ण के मुताबिक़ जो कुछ किया जाता है, अमल नहीं है। अमल एक मुअय्यन किया हुआ तरीक़ः है। **'नियतं कुरु कर्म त्वम्'**– अर्जुन! तू मुअय्यनः अमल को कर। मुअय्यनः अमल है क्या? तब बताया– **'यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः'**– यग को अमली जामा पहनाना ही अमल है। तो इसके इलावः जो कुछ किया जाता है, क्या वह अमल नहीं है? श्रीकृष्ण कहते हैं– **'अन्यत्र लोकोऽयं कर्म-बन्धनः'**– इस यग को अमली शक्ल देने के सिवा जो कुछ भी किया जाता है, वह इसी दुन्या की बन्दिश है, न कि अमल। **'तदर्थं कर्म'**– अर्जुन! उस यग की तक्मील के लिए अच्छी तरह कारबन्द हो। जहाँ तक यग की शक्ल की बात है, तो वह ख़ालिस तौर पर इबादत का एक ख़ास तरीक़ः है, जो उस मा'बूद तक पहुँचाकर उसमें मुनासबत दिला देता है।

इस यग में ज़ब्तेनफ़्स, मन पर क़ाबू, रूहानी दौलत का हुसूलः वग़ैरः बताते हुए आख़िर में कहा– बहुत से जोगी जान और रियाह की हरकत पर क़ाबू करके हव्सेदम के हामिल हो जाते हैं, जहाँ न भीतर से कोई इरादः सर उठाता है और न बाहरी माहौल से पैदा होने वाले इरादों का मन के अन्दर दाख़िलः हो पाता है। ऐसी हालत में तबीअ़त की हर तरह से घेराबन्दी और घेराबन्दीशुदा तबीअ़त के भी तह्लीली दौर में वह इंसान **'यान्ति ब्रह्म सनातनम्'**– दाइमी, अबदी मा'बूद में दाख़िलः पा जाता है। यही सब यग है, जिसे अमली जामः पहनाने का नाम अमल है। लिहाज़ा

अमल का ख़ालिस मा'ना है 'इबादत'। अमल का मा'ना है 'यादे इलाही', अमल का मा'ना है 'जोग की रियाज़त' को अच्छी तरह पूरा करना, जिसका तफ़्सीली बयान इसी बाब में आगे आ रहा है। यहाँ अमल और लाअमल को मह्ज़ एक दूसरे से अलग किया गया, जिससे अमल करते वक़्त उसे सही शक्ल दी जा सके और उस पर चला जा सके।

तजस्सुस फ़ित्री है कि अमल करते ही रहेंगे या कभी आ'माल से छुटकारा भी मिलेगा? इस पर जोग के मालिक कहते हैं-

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसङ्कल्पवर्जिताः।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः।।१९।।

अर्जुन! **'यस्य सर्वे समारम्भाः'-** जिस इंसान के ज़रीअः मुकम्मल तौर से शुरू किया गया अमल (जिसे गुज़श्तः श्लोक में कहा कि- लाअमल देखने की सलाहीयत आ जाने पर अमल में लगा हुआ इंसान सारे आ'माल का करने वाला है, जिसके करने में ज़रा-सी भी ख़ामी नहीं है।) **'कामसङ्कल्पवर्जिताः'-** सिल्सिलेवार तरक़्क़ी होते-होते इतना लतीफ़ हो गया कि हवास और मन के अज़्मोतसव्वुर से ऊपर उठ गया। (ख़्वाहिश और इरादों पर क़ाबू पा लेना मन की फ़त्हयाबी की हालत है। लिहाज़ा अमल कोई ऐसी चीज़ है, जो इस मन को ख़्वाहिश और अज़्मो तसव्वुर से ऊपर उठा देता है), उस वक़्त **'ज्ञानाग्निदग्धकर्माणम्'-** आख़िरी इरादे की भी बंदिश के साथ, जिसे हम नहीं जानते, जिसे जानने के लिए हम ख़्वाहिशमंद थे, उस मा'बूद का रू-ब-रू इल्म हो जाता है। अमली राह पर चलकर मा'बूद की रू-ब-रू जानकारी का नाम ही 'इल्म' है। उस इल्म के साथ ही **'दग्धकर्माणम्'-** आ'माल हमेशः के लिए नज़्रे आतश हो जाते हैं। जिसे हासिल करना था हासिल कर लिया, आगे कोई इक़्तिदार नहीं जिसकी तह्क़ीक़ करें। लिहाज़ा अमल करके तलाश भी करें तो किसे? उस जानकारी के साथ अमल की ज़रूरत ख़त्म हो जाती है। ऐसे मक़ाम वालों को ही रम्ज़शनास अज़ीम इंसानों ने 'पंडित' (आलिम) कहकर मुख़ातब किया है। उनकी जानकारी मुकम्मल है। ऐसे मक़ाम पर पहुँचा हुआ अज़ीम इंसान करता क्या है?, रहता कैसे है? उसकी बूदोबाश पर रोशनी डालते हैं-

त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित्करोति सः।।२०।।

अर्जुन! वह इंसान दुन्यावी पनाह से आज़ाद होकर, दाइमुलवुजूद, रूहे मुत्लक़ में ही आसूदः रहक़र, आ'माल के समरः रूहेमुत्लक़ की रग़बत को भी तर्ककर (क्योंकि रूहे मुत्लक़ भी अब अलग नहीं है।) अमल में अच्छी तरह मस्रूफ़ रहकर भी कुछ नहीं करता।

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम्।।२१।।

जिसने बातिन और जिस्म पर क़ाबू पा लिया है, ऐशो इश्रत की तमाम चीज़ें जिसने तर्ककर दी है, ऐसे बेलौस इंसान का जिस्म सिर्फ़ अमल करता दिखायी भर पड़ता है। दरहक़ीक़त वह करता-धरता कुछ नहीं; लिहाज़ा गुनाह का मुर्तकिब नहीं होता। वह कामिल है, लिहाज़ा आमदो-रफ़्त से मुर्बरा होता है।

यदृच्छालाभसन्तुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते।।२२।।

ख़ुद-ब-ख़ुद जो कुछ भी हासिल हो जाय, उसी में मुत्मइन रहने वाला; आराम तक्लीफ़, हसद-अदावत और ख़ुशी व ग़म वग़ैरः के फ़साद से मावरा **'विमत्सरः'**- हसद से ख़ाली और कामयाबी व नाकामयाबी में मुसाबी ख़याल वाला इंसान आ'माल को करते हुए भी उससे वाबस्तः नहीं होता। कामयाबी या'नी जिसे हासिल करना था, वह अब जुदा नहीं है और वह कभी जुदा भी नहीं होगा, लिहाज़ा नाकामयाबी का भी ख़ौफ़ नहीं है; इस तरह कामयाबी और नाकामयाबी में मुसाबी ख़याल वाला इंसान अमल करके भी उससे वाबस्तः नहीं होता। कौन-सा अमल वह करता है? वही मुअय्यनः अमल। यग का तरीक़-ए-कार। इसी को दुबारः कहते हैं-

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते।।२३।।

अर्जुन! **'यज्ञायाचरतः कर्म'**- यग का बरताव ही अमल है और बदीही दीदार का नाम ही इल्म है। इस यग का बरताव करके बदीही दीदार के साथ इल्म में क़ाइम, सुह्बते असर और लगाव से मावरा आज़ाद इंसान के तमाम आ'माल अच्छी तरह तह्लील हो जाते हैं। वे आ'माल कोई समरः नहीं दे पाते; क्योंकि आ'माल का समरः रूहे मुत्लक़ उनसे जुदा नहीं रह गया। अब समरः में कौन-सा समरः लगेगा? लिहाज़ा उन आज़ाद इंसानों को अपने लिए अमल की ज़रूरत ख़त्म हो जाती है। फिर भी

अवामुन्नास के लिए वे अमल करते ही हैं और अमल करते हुए भी वे इन आ'माल में मुलब्बस नहीं होते। जब अमल करते हैं, तो मुलव्वस क्यों नहीं होते?-इस पर कहते हैं-

ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम्।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना।।२४।।

ऐसे आज़ाद इंसान की खुद सुपुर्दगी मा'बूद है, नज़्रे आतश के सामानों (हवि) मा'बूद है, आतश भी 'मा'बूद' ही है। या'नी मा'बूद की तम्सील आतश में मा'बूद की शक्ल वाले कारकून के ज़रीअः जो हवन (नज़्रे आतश) किया जाता है, वह भी मा'बूद है। **'ब्रह्मकर्म समाधिना'**- जिसके अमल मा'बूद से मुन्सलिक होकर मुराक़िब हो चुके हैं, उसमें ज़म हो चुके हैं, ऐसे अज़ीम इंसान के लिए जो क़ाबिले हुसूल है, वह भी मा'बूद ही है। वह करता-धरता कुछ नहीं, सिर्फ़ अवामुन्नास के लिए अमल में मश्गूल रहता है।

यह तो हासिल करने वाले अज़ीम इंसान की निशानियाँ हैं; लेकिन अमल में दाखिल होने वाले इब्तिदाई दौर के रियाज़तकश कौन-सा यग करते हैं?

गुज़श्तः बाब में श्रीकृष्ण ने कहा था- अर्जुन! अमल कर। कौन सा अमल? उन्होंने बताया- 'मुअय्यनः अमल'- मुअय्यन किये हुए अमल को कर। मुअय्यन अमल कौन-सा है? तो **'यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।'** (३/९)- अर्जुन! यग का तरीक़-ए-कार ही अमल है। इस यग के इलावः जहाँ कहीं जो कुछ किया जाता है, वह इसी दुन्या की बंदिश है, न कि अमल। अमल तो दुन्यवी बंदिश से नजात दिलाता है। लिहाज़ा **'तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर।'**- उस यग की तक्मील के लिए सुह्बत के असर से अलग रहकर अच्छी तरह यग का बरताव कर। यहाँ जोग के मालिक ने एक नया सवाल खड़ा किया कि वह यग है क्या जिसे करें और अमल हमसे सहीह तौर से हो सके? उन्होंने अमल की सिफ़ात पर ज़ोर दिया, बताया कि यग आया कहाँ से? यग देता क्या है? उसकी सिफ़ात की अक्कासी की, लेकिन अभी तक यह नहीं बताया कि यग है क्या? अब यहाँ उसी यग को साफ़ करते हैं-

दैवमेवापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते।
ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति।।२५।।

गुज़श्तः श्लोक में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने रूहे मुत्लक़ में क़ाइम अज़ीम इंसान के यग का तफ़्सील के साथ बयान किया, लेकिन दूसरे जोगी जो अभी उस

उंसुर में क़ाइम नहीं हुए हैं, अमल में दाख़िलः लेने वाले हैं, वे शुरुआत कहाँ से करें?-इस पर कहते हैं कि दूसरे जोगी हज़्रात **'दैवम् यज्ञम्'**- या'नी रूहानी दौलत को अपने दिल में मज़्बूती देते हैं। जिसके लिए ख़ालिक़ की हिदायत थी कि इस यग के ज़रीअः तुम लोग अपने अन्दर रूहानियत की तरक़्क़ी करो। जैसे-जैसे दिल की दुन्या में रूहानी दौलत हासिल होगी, वही तुम्हारी तरक़्क़ी होगी और बतद्रीज़ बाहम तरक़्क़ी करके आ'ला शरफ़ को हासिल करो। रूहानी दौलत को दिल की दुन्या में मज़्बूत बनाना इब्तिदाई दर्जः के जोगियों का यग है।

उस रूहानी दौलत का बाब सोलह के शुरू के तीन श्लोकों में बयान है, जो मौजूद तो सबमें है, सिर्फ़ अहम् फ़र्ज़ समझकर उन्हें जगायें, उनमें लगें। इन्हीं की तरफ़ इशारः करते हुए जोग के मालिक ने कहा कि- अर्जुन! तू ग़म मत कर, क्योंकि तू रूहानी दौलत का हामिल है, तू मुझमें मक़ाम करेगा, मेरे ही दाइमी मक़ाम को हासिल करेगा क्योंकि यह रूहानी दौलत इंतिहाई फ़लाह के लिए ही है और इसके बरख़िलाफ़ दुन्यवी दौलत नीच और बदज़ात शक्लों (योनियों) की वज्ह है। इसी दुन्यवी दौलत का हवन (नज़्रे आतश) होने लगता है। लिहाज़ा यह यग है और यहीं से यग की इब्तिदा है।

दूसरे जोगी **'ब्रह्माग्नौ'**- आ'ला मा'बूद बशक्ले रूहे मुत्लक़ आतश में यग के ज़रीअः ही यग का अज़्म करते हैं। श्रीकृष्ण ने आगे बताया कि इस जिस्म में 'मख़्यूस यग' (अधियज्ञ) मैं हूँ। यगों का निगराँ या'नी यग जिसमें तह्लील होते हैं, वह इंसान मैं हूँ। श्रीकृष्ण एक जोगी थे, मुर्शिदे कामिल थे। इस तरह दूसरे जोगी हज़्रात ब्रह्म की तम्सील आतश में यग या'नी यग की तम्सील मुर्शिद को मक़्सूद बनाकर यग का अज़्म करते हैं, लुब्बे-लुवाब मुर्शिद की शक्ल का तसव्वुर करते हैं।

श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्वति।
शब्दादीन्विषयानन्य इन्द्रियाग्निषु जुह्वति।।२६।।

दूसरे जोगी हज़्रात 'श्रोत्रादिक' (कान, आँख, जिल्द, ज़बान, नाक) सारे हवास का जब्तेनफ़्स की आग में हवन करते है या'नी हवास को उनके मौजूआत से समेटकर उन पर क़ाबू कर लेते हैं। यहाँ आग नहीं जलती। जैसे सुपुर्दे आतश होने पर हर चीज़ जलकर ज़ेरे ख़ाक हो जाती है, ठीक उसी तरह ज़ब्तेनफ़्स भी एक आग है, जो हवास के सारे ख़ारिजी असरात को जला डालती है। दूसरे जोगी हज़्रात 'शब्दादिक' (लफ़्ज़, लम्स, शक्ल, रस, महक) मौजूआत को हवास की तम्सीली आग में हवन

कर देते हैं या'नी उनकी माहीयत बदल कर क़ाबिले रियाज़त बना लेते हैं।

आमिल को दुन्या में रहकर ही तो यादे इलाही करनी है, दुन्यवी लोगों के नेकोबद अल्फ़ाज़ उससे टकराते ही रहते हैं। मौजूआत को जगाने वाले ऐसे अल्फ़ाज़ को सुनते ही रियाज़तकश उनकी माहीयत को जोग, बैराग में मददगार, बैराग को बेदार करने वाले जज़्बात में बदलकर हवास की तम्सीली आग में जला देते हैं। मिसाल के तौर पर एक दफ़अः अर्जुन अपने ग़ौरोफ़िक्र में मशगूल था, दफ़अतन उसके कानों के पर्दों में मूसीक़ी की आवाज़ झनझना उठी। जब उसने सर उठाकर देखा तो 'उर्वशी' (एक हूर) खड़ी थी, जो एक क़स्बी (वेश्या) थी। सभी उसके हुस्न के आशिक़ होकर झूम रहे थे, लेकिन अर्जुन ने उसे अक़ीदत की नज़र से वालिदः की तरह देखा। उस आवाज़ और शक्ल से पैदा होने वाले उयूब खत्म हो गये, हवास के भीतर ही ज़म हो गये।

यहाँ हवास ही आग है। आग में सुपुर्द की हुई चीज़ जिस तरह ज़ेरे ख़ाक हो जाती है, उसी तरह माहीयत बदलकर मा'बूद के मुआफ़िक़ ढाल लेने पर मौजूआत के मुहर्रिक शक्ल, रस, महक़, लम्स और लफ़्ज़ भी जल जाते हैं, रियाज़तकश पर बुरा असर नहीं डाल पाते। रियाज़तकश इन लफ़्ज़ वग़ैरः में दिलचस्पी नहीं रख पाता, इन्हें क़बूल नहीं करता।

इन श्लोकों में 'अपरे' (दीगर), 'अन्ये' (दूसरे) अल्फ़ाज़ एक ही रियाज़तकश के ऊँचे-नीचे हालात हैं, एक ही यग करने वाले की ऊँची-नीची सत्ह है; न कि 'अपरे', 'अन्ये' कहने से कोई जुदा-जुदा यग।

सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे।
आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते।।२७।।

अभी तक जोग के मालिक ने जिस यग का ज़िक्र किया, उसमें सिल्सिलःवार रूहानी दौलत को हासिल किया जाता है, हवास की सारी कोशिशों की एहतियात की जाती है (या'नी हवास की सरकशी पर क़ाबू पाया जाता है।); ज़बरदस्ती हवस पैदा करने वाले हवासे बातिनी के टकराने पर भी उनकी माहीयत बदलकर उनसे बचा जाता है। इसकी अगली मंज़िल आने पर दूसरे जोगी हज़्रात तमाम हवास की हरकतों और साँस के कारोबार को रू-ब-रू दीदार के साथ इल्म से रौशन आ'ला रूहे मुत्लक़ की हम मर्तबः जोग की आग में जलाते हैं। जब ज़ब्तेनफ़्स की पकड़ रूह के साथ उसी के मुआफ़िक़ हो जाती है, साँस और हवास का कारोबार भी साकिन हो जाता

है, उस वक़्त मौजूआत को नुमूपज़ीर करने वाली और मा'बूद से मुनासबत दिलाने वाली दोनों ही धारें रूह में महूब हो जाती हैं। रूहे मुत्लक़ में मक़ाम मिल जाता है। यग का समरः निकल आता है। यह है यग की इंतिहा। जिस रूहे मुत्लक़ को हासिल करना था, उसी में मक़ाम मिल गया तो बाक़ी क्या बचा? फिर जोग के मालिक श्रीकृष्ण यग को अच्छी तरह समझाते हैं-

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे।
स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः।।२८।।

तमाम लोग माद्दी चीज़ों से यग करते हैं या'नी रूहानी राह में, अज़ीम इंसानों की ख़िद्मत में अक़ीदत के साथ जो कुछ बन पड़ता है, नज़्र करते हैं। वे ख़ुद सुपुर्दगी के साथ अज़ीम इंसानों की ख़िद्मत में धन-दौलत लगाते हैं। श्रीकृष्ण आगे कहते हैं कि जो कोई अक़ीदत के साथ फूल-पत्ते, फल, पानी वग़ैरः जो कुछ भी मुझे नज़्र करता है, उसे मैं क़बूल करता हूँ और उसकी आ'ला रिफ़ाह की तख़्लीक़ करने वाला होता हूँ- यह भी यग है। हर रूह की ख़िद्मत करना, गुमराह को रूहानी राह पर लाना माद्दी चीज़ों का यग है। क्योंकि क़ुद्रती तअस्सुरात (संस्कारों) को जलाने में क़ादिर है।

इसी तरह तमाम इंसान **'तपोयज्ञा'**- फ़र्ज़े मंसबी के ता'मील में नफ़्सकुशी करते हैं या'नी फ़ित्रत से पैदा सलाहीयत के मुताबिक़ यग के अद्ना और आ'ला हालात के बीच रियाज़त करते हैं। इसी राह की कजफ़हमी में रिवाज़तकश शूद्र- पहला दर्ज़ः ख़िद्मत के ज़रीअः, वैश्य- रूहानी दौलत इकट्ठा करके, क्षत्री- ख़्वाहिश, गुस्सः वग़ैरः के ख़ातिमः के ज़रीअः और बर्हमन मा'बूद में दाखिलः पाने की सलाहीयत की सत्ह से हवास को तपाता है। सबको एक जैसी मशक़्क़त करनी पड़ती है। दरहक़ीक़त यग एक ही है। हालात के मुताबिक़ ऊँचे-नीचे दर्जात से गुज़रना पड़ता है।

क़ाबिले एहतिराम 'महाराजजी' कहते थे- ''मन के साथ हवास और जिस्म को मक़्सूद के मुताबिक़ मशक़्क़त ही रियाज़त कही जाती है। ये मक़्सद से दूर भागेंगे, इन्हें समेट कर उधर ही लगाओ।''

तमाम इंसान जोग के यग का बरताव करते हैं। दुन्या में भटकती हुई रूह का दुन्या से मावरा रूहे मुत्लक़ से मुलाक़ात का नाम 'जोग' है। जोग की इस्तिलाह बाब ६/२३ में दीदनी है। आमतौर पर दो चीज़ों का मिलन जोग (मीज़ान) कहलाता

है। कागज़ से क़लम मिल गया, थाली और मेज़ मिल गये तो क्या जोग हो गया? नहीं, ये तो पाँच अनासिर (आग, पानी, हवा, मिट्टी, आस्मान) से बनी चीज़ें हैं। एक ही हैं, दो कहाँ? दो तो क़ुद्रत (प्रकृति) और रब (पुरुष) हैं। क़ुद्रत में क़ाइम रूह अपनी ही दाइमी शक्ल रूहे मुत्लक़ में दाख़िलः पा जाती है, तो क़ुद्रत रब (पुरुष) में ज़म हो जाती है, यही जोग है। लिहाज़ा कई इंसान इस मीज़ान में मददगार सरकोबी, नफ़्सकुशी वग़ैरः उसूलों का अच्छी तरह बरताव करते हैं। जोग का यग करने वाले और अदमतशद्दुद वग़ैरः मुश्किल तलब इरादों से मुज़य्यन कोशाँ इंसान **'स्वाध्याय ज्ञानयज्ञाश्च'**– ख़ुद का मुतालअः, हक़ीक़ी शक्ल का मुतालअः करने वाले इल्म का यग करने वाले हैं। यहाँ जोग के हिस्सों यम (वसीलः), नियम (तरीक़ः), आसन (आसनी), प्राणायाम (हब्से दम), प्रत्याहार (नफ़्सकुशी), धारणा (अक़ीदः), ध्यान (तसव्वुर), समाधि (मुराक़बः) को अदम तशद्दुद वग़ैरः शदीद इरादों से बताया गया है। तमाम लोग मुतालअः करते हैं। किताब पढ़ना तो मुतालअः की मह्ज़ इब्तिदाई सत्ह है, ख़ालिस मुतालअः है– ख़ुद का मुतालअः जिससे हक़ीक़ी शक्ल का हुसूल होता है, जिसका समरः है इल्म या'नी बदीही दीदार। यग का अगला क़दम बताते हैं–

अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे।
प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः।।२९।।

तमाम जोगी हज़्रात जान का रियाह में हवन करते हैं और उसी तरह रियाह का जान में हवन करते हैं। इससे लतीफ़ हालत हो जाने पर दूसरे जोगी हज़्रात जान और रियाह दोनों की हरकत को रोककर हब्से दम के हामिल हो जाते हैं।

जिसे श्रीकृष्ण जान और रियाह कहते हैं, उसी को महात्मा बुद्ध 'अनापान' तनफ़्फ़ुस कहते हैं। इसी को उन्होंने नफ़्से आमद और नफ़्से ख़ारिज भी कहा है। जान वह साँस है जिसे आप भीतर खींचते हैं, और रियाह वह साँस है जिसे आप बाहर छोड़ते हैं। जोगियों का तज्रिबः है कि आप साँस के साथ बाहरी माहौल के इरादे भी क़बूल करते हैं और नफ़्से ख़ारिज में इसी तरह बातिनी नेक व बद ख़यालात की लहर फ़ेंकते रहते हैं। बाहरी किसी अज़्म को क़बूल न करना जान का हवन है और भीतर इरादों को सरज़द न होने देना रिवाह का हवन है। न भीतर से किसी अज़्म का इज़्हार हो और न ही बाहरी दुन्या में चलने वाली सोच अन्दर इज़्तिराब पैदा कर पाये। इस तरह जान और रियाह दोनों की हरकत मुसावी हो जाने पर साँसों का ठहराव या'नी घेराव हो जाता है, यही हब्से दम है। यह मन पर क़ाबू पाने

की हालत है। साँसों का ठहरना और मन का ठहरना एक ही बात है।

हर एक अज़ीम इंसान ने इस मौजूअ को लिया है। वेदों में इसका बयान है- **'चत्वारि वाक् परिमिता पदानि'** (ऋग्वेद १/१६४/४५, अथर्ववेद ९/१५/२७)। इसी को 'क़ाबिले एहतिराम 'महाराज जी' कहा करते थे- हो! एक ही नाम का चार दर्जात में विर्द किया जाता है- बैखरी, मध्यमा, पश्यन्ती और परा। 'बैखरी' उसे कहते हैं जो ज़ाहिर हो जाय। नाम का इस तरह विर्द हो कि आप सुनें और बाहर कोई बैठा हो तो उसे भी सुनाई पड़े। 'मध्यमा' या'नी धीमी आवाज में बिर्द, जिसे सिर्फ़ आप ही सुने, बगल में बैठा हुआ शख्स भी उस आवाज़ को न सुन सके। इसका तलफ़्फ़ुज हल्क़ से होता है। धीरे-धीरे नाम की धुन बन जाती है, डोर लग जाती है। रियाज़त और लतीफ़ हो जाने पर 'पश्यन्ती' या'नी नाम देखने की हालत आ जाती है, फिर नाम का विर्द नहीं किया जाता। यही नाम साँस में ढल जाता है। मन को नाज़िर बनाकर खड़ा कर दें, देखते भर रहें कि साँस कहती क्या है?, साँस आती है कब?, बाहर निकलती है कब?, कहती है क्या? अज़ीम इंसानों का कहना है कि यह साँस नाम के सिवा और कुछ कहती ही नहीं। रियाज़तकश नाम का विर्द नहीं करता, सिर्फ़ उससे उठने वाली धुन को सुनता है, साँस को देखता भर है, लिहाज़ा इसे 'पश्यन्ती' कहते हैं।

'पश्यन्ती' में मन को नाज़िर की शक्ल में खड़ा करना पड़ता है; लेकिन वसीलः और ज़ियादः बलन्द हो जाने पर सुनना भी नहीं पड़ता। एक बार सुरत (लव) लगा भर दे, ख़ुद-ब-ख़ुद सुनाई देगा। **'जपै न जपावै, अपने से आवै'**- न ख़ुद विर्द करो, न मन को सुनने के लिए मज़्बूर करो और विर्द चलता रहे- इसी का नाम है 'अजपा'। ऐसा नहीं है कि विर्द की शुरुआत ही न करें और आ गई 'अजपा'। अगर किसी ने विर्द नहीं शुरू किया, तो अजपा नाम की कोई चीज़ भी उसके पास नहीं होगी। अजपा का मा'ना है, हम विर्द न करें, लेकिन विर्द हमारा साथ न छोड़े। एक बार सुरत (याद) का काँटा लगा भर दें, तो विर्द जारी हो जाय और लगातार चलता रहे। इस कुद्रती विर्द (जप) का नाम है 'अजपा', और यही है मावराई विर्द (परावाणी का जप)। यह दुन्या से मावरा उंसुर रूहे मुत्लक़ में दाख़िलः दिलाती है। इसके आगे विर्द (वाणी) में कोई बदलाव नहीं है। आ'ला मा'बूद का दीदार कराकर उसी में मह्व हो जाती है, लिहाज़ा इसे 'भावरा' (परा) कहते हैं।

पेशक़र्दः श्लोक में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने सिर्फ़ साँस पर नज़र रखने

की हिदायत दी, जबकि आगे खुद 'ओम्' के विर्द पर ज़ोर देते हैं। गौतम बुद्ध भी 'आनापानसती' में तनफ़्फ़ुस का ही जिक्र करते हैं। बिल आख़िर वे अज़ीम इंसान कहना क्या चाहते हैं? दरअस्ल शुरू में बैखरी, उससे मध्यमा और इससे बलन्द होने पर विर्द की पश्यन्ती वाली हालत में साँस पकड़ में आती है। उस वक़्त विर्द तो साँस में ढला मिलेगा, फिर विर्द करें क्या? फिर तो साँस को देखना भर है। लिहाज़ा मह्ज़ जान-रियाह कहा, 'नाम का विर्द करो'- ऐसा नहीं कहा, वजह यह कि कहने की ज़रूरत ही नहीं है। अगर कहते हैं, तो गुमराह होकर नीचे के दर्ज़ात में चक्कर काटने लगेगा। महात्मा बुद्ध, 'मुर्शिदेकामिल महाराज' और हर अज़ीम इंसान, जो इस रास्ते से गुज़रे हैं, सभी एक ही बात कहते हैं। बैखरी और मध्यमा नाम का विर्द करने के मह्ज़ दाख़िल होने के दरवाज़े हैं। पश्यन्ती से ही नाम में दाखिलः मिलता है। परा में नाम का विर्द मुसल्सल रवा हो जाता है जिसमें विर्द साथ नहीं छोड़ता।

मन साँस के साथ जुड़ा है। जब साँस पर नज़र है, साँस में नाम ढल चुका है, भीतर से न तो किसी अज़्म का उरुज है और न ख़ारिजी माहौल के इरादे अन्दर दाख़िल हो पाते हैं, यही मन पर फ़त्ह हासिल करने वाली हालत है। इसी के साथ यग का समरः निकल आता है।

अपरे नियताहाराः प्राणान्प्राणेषु जुह्वति।
सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः।।३०।।

दूसरे लोग जो मुनज़्ज़म ख़ुराक लेने वाले हैं, जान का जान में ही हवन करते हैं। 'काबिले एहतिराम महाराज जी' कहा करते थे कि- ''जोगी की ख़ुराक रासिख, आसन मज़्बूत और नींद मुस्तहकम होनी चाहिए।'' खान-पान और तफ़्रीह पर क़ाबू रखना बहुत ज़रूरी है। ऐसे तमाम जोगी जान का जान में ही हवन कर देते हैं, या'नी नफ़्से आमद पर ही पूरा ख़याल मर्कूज़ रखते हैं, नफ़्से ख़ारिज पर ग़ौर नहीं करते। नफ़्से आमद हुई तो सुना 'ओम्', फिर नफ़्से आमद हुई तो 'ओम्' सुनते रहें। इस तरह यगों के ज़रीअः मुतबर्रिक (जिनके गुनाह ख़त्म हो गये हैं) ये सभी इंसान यग का इल्म रखने वाले हैं। इन हिदायतशुदा तरीक़ों में से अगर कहीं से भी अमल करते हैं तो वे सभी यग का इल्म रखने वाले हैं। अब यग का समरः बताते हैं-

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम्।
नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम।।३१।।

अश्रफुलअश्रफ़ अर्जुन! **'यज्ञशिष्टामृतभुजो'**– यग जिसकी तख़्लीक़ करता है, जिसे बाक़ी छोड़ता है, वह है आबेहयात। उसकी रू-ब-रू जानकारी इल्म है। उस इल्मे जावेदाँ का लुत्फ़ लेने या'नी उसे हासिल करने वाले जोगी हज़्रात **'यान्ति ब्रह्म सनातनम्'**- दाइमी, अबदी पर्वर्दगार को हासिल करते हैं। यग कोई ऐसी चीज़ है, जो पूरी होते ही अबदी पर्वर्दगार में दाख़िलः दिला देती है। यग न करें, तो ए'तराज़ क्या है? श्रीकृष्ण कहते हैं कि यग से आरी इंसान को दुबारः यह इंसानी दुन्या या'नी इंसानी जिस्म भी हासिल नहीं होता, फिर दीगर अवालिम कैसे आरामदेह होंगे? उसके लिये तो ग़ैर इंसानी शक्लें (योनियाँ) मह्फ़ूज़ हैं, इससे ज़ियादः कुछ नहीं। लिहाज़ा यग करना तमाम इंसानों के लिए बेहद ज़रूरी है।

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे।
कर्मजान्विद्धि तान्सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे।।३२।।

इस तरह मज़्कूरएबाला तमाम तरह के यग वेद की ज़बान में कहे गये हैं, मा'बूद की ज़बान से जिनकी तफ़्सीलात का बयान किया गया है। हुसूल के बा'द अज़ीम इंसानों के जिस्म को पर्वर्दगार क़बूल कर लेता है। मा'बूद से जुड़ी हुई हालत वाले उन आबिदों की अक़्ल मह्ज़ एक मशीन होती है। उनके वसीले से वह मा'बूद ही बोलता है। उनकी ज़बान में इन यगों की तफ़्सील की गयी है।

इन सब यगों को तू **'कर्मजान् विद्धि'**– अमल से पैदा हुआ समझ। यही पहले भी कह आए हैं। **'यज्ञः कर्मसमुद्भवः'** (३/१४)। उन्हें इस तरह अमली राह पर चलकर इल्म हासिल कर लेने पर (अभी बताया था, यग करके जो गुनाह से आज़ाद हो चुका हो, वही यग का हक़ीक़ी इल्म रखने वाला है) अर्जुन! तू **'विमोक्ष्यसे'**– दुन्यवी क़ैद से पूरी तरह आज़ाद हो जायेगा। यहाँ जोग के मालिक ने अमल की पूरी शक्ल को साफ़-साफ़ बता दिया। वह हरकत अमल है, जिससे मज़्कूरएबाला यग मुकम्मल होते हैं।

अब अगर रूहानी दौलत का हुसूल, मुर्शिद का तसव्वुर, ज़ब्ते नफ़्स, नफ़्से आमद का नफ़्से ख़ारिज में हवन, नफ़्से ख़ारिज का नफ़्से आमद में हवन, जान व रियाह की हरकत पर क़ाबू खेती करने से होता हो, तिजारत, नौकरी या सियासत करने से होता हो तो आप कीजिए। यग तो ऐसा तरीक़-ए-कार है, जो पूरा होते ही उसी वक़्त पर्वर्दगार में दाख़िलः दिला देता है। बाहरी किसी भी काम से आप फ़ौरन मा'बूद में दाख़िलः पा जाते हों तो कीजिए।

दरहक़ीक़त ये सब-के-सब यग ग़ौरो-फ़िक्र के बातिनी आ'माल हैं, इबादत की अक्कासी है, जिनके ज़रीअः क़ाबिले इबादत मा'बूद ज़ाहिर होता है। यग उस क़ाबिले परस्तिश मा'बूद तक की दूरी तय करने का मुअय्यनः खुसूसी तरीक़-ए-कार है। यह यग तनफ़्फ़ुस, हब्से दम वग़ैरः जिस तरीक़े से मुकम्मल होते हैं, उस तरीक़-ए-कार का नाम अमल है। 'अमल' का खालिस मा'ना है 'इबादत', 'ग़ौरो-फ़िक्र'।

आमतौर से लोगों का कहना है कि दुन्या में जो कुछ किया जाय, हो गया अमल। ख़्वाहिशात से मुबर्रा होकर कुछ भी करते जाओ, हो गया बेग़रज़ अमली जोग। कोई कहता है कि ज़ियादः मुनाफ़अः के लिए बेरुनी कपड़ा बेचते हैं, तो आप बाग़रज़ हैं। मुल्क की ख़िद्मत के लिए आप अगर अपने मुल्क का कपड़ा बेचें, तो हो गया बेग़रज़ अमली जोग। पूरी लगन से नौकरी करें, नफ़ा नुक़्सान की फ़िक्र से आज़ाद होकर तिजारत करें, तो हो गया बेग़रज़ अमली जोग। हार-जीत की फ़िक्र से आज़ाद होकर जंग करें, इन्तिख़ाब में हिस्सः लें, हो गये बेग़रज़ रियाज़तकश? वफ़ात होगी तो नजात मिल जायेगी? दरहक़ीक़त ऐसा कुछ भी नहीं है। जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने साफ़ अल्फ़ाज़ में बताया कि इस बेग़रज़ अमल में मुअय्यनः तरीक़ः एक ही है- **'व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन।'**- अर्जुन! तू मुअय्यनः अमल को कर। यग का तरीक़-ए-कार ही अमल है। यग क्या है? तनफ़्फ़ुस का हवन, ज़ब्तेनफ़्स, यग की तम्सील अज़ीम इंसान का तसव्वुर, हब्सेदम अन्फ़ास पर क़ाबू। यही मन की फ़त्हयाबी की हालत है। मन की बुरुअत ही दुन्या है। श्रीकृष्ण के ही अल्फ़ाज़ में **'इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः।'** (५/१९)- उन इंसानों के ज़रीअः मुतहर्रिकोसाकिन दुन्या पर यहीं फ़त्ह हासिल कर ली गयी, जिसका मन मुसावात में क़ाइम है। नेक मन के मुसावात और दुन्या पर फ़त्ह हासिल कर लेने से क्या निस्बत है? अगर दुन्या पर फ़त्ह ही हासिल कर ली तो क़याम कहाँ पर किया? इसके बनिस्बत कहते हैं, वह मा'बूद बेऐब और मुसावात का हामिल है। इधर मन भी बेऐब और मुसावात की हालत वाला हो गया, लिहाज़ा वह मा'बूद के अन्दर मक़ाम बनाने वाला हो जाता है।

लुब्बे-लुवाब यह कि मन की वुस्अत ही दुन्या है। मुतहर्रिको साकिन दुन्या ही हवन की चीज़ों की शक्ल में है। मन पर पूरी तरह बंदिश होते ही दुन्या की बंदिश हो जाती है। मन पर क़ाबू होने के साथ ही यग का समरः निकल आता है। यग जिसकी तख़्लीक़ करता है, उस इल्मेजावेदाँ को हासिल करने वाला इंसान अबदी

मा'बूद में दाख़िल हो जाता है। इन सारे यगों के बारे में मा'बूद में क़ाइम अज़ीम इंसानों के ज़रीअः बताया गया है। ऐसा नहीं कि अलग-अलग फ़िर्क़ों के रियाज़तकश अलग-अलग तरह के यग करते हैं, बल्कि ये सभी यग एक ही रियाज़तकश के अद्ना व आ'ला हालात हैं। यह यग जिससे होने लगे, उस तरीक़ः का नाम 'अमल' है। पूरी गीता में एक भी श्लोक ऐसा नहीं है, जो दुन्यवी तौर-तरीक़ों (कारोबार) की तरफ़दारी करता हो।

अक्सर यग का नाम आने पर लोग बाहर एक यग का चबूतरा (यग-वेदी) बनाकर, तिल, जौ लेकर 'स्वाहा' बोलते हुए नज़्रे आतश (हवन) शुरू कर देते हैं। यह एक धोका है। सामान का यग (द्रव्य-यज्ञ) दूसरा है, जिसे श्रीकृष्ण ने तमाम मर्तबः कहा। जानवरों की कुर्बानी (पशुबलि), चीज़ों को नज़्रेआतश करना (वस्तु-दाह) वग़ैरः से इसका कोई तअल्लुक़ नहीं है।

श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परन्तप।
सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते।।३३।।

अर्जुन! दुन्यावी मालोमताअ' से पूरा होने वाले यग के मुक़ाबिले इल्म का यग [जिसका समरः इल्म (रू-ब-रू दीदार) है, यग जिसकी तख़्लीक़ करता है, उस लाफ़ानी उंसुर की समझ का नाम इल्म है, ऐसा यग] अफ़्ज़ल है, आ'ला इफ़ादी है। ऐ पार्थ! तमाम आ'माल इल्म में ख़त्म हो जाते हैं, **'परिसमाप्यते'**- अच्छी तरह ज़म हो जाते हैं। इल्म यग का आख़िरी अंजाम है। उसके बा'द अमल करने से न कोई फ़ाइदः है और न छोड़ देने से उस अज़ीम इंसान को कोई नुक़्सान ही होता है।

इस तरह माद्दी मालोमताअ' से होने वाले यग भी यग हैं, लेकिन उस यग के मुक़ाबलः में, जिसका समरः रू-ब-रू दीदार है, उस इल्म के यग के बनिस्बत बेहद कम हैं। आप करोड़ का हवन करें, सैकड़ों यग के चबूतरे बना लें, सहीह राह पर मालो मताअ' लगायें, आबिद-आरिफ़-अज़ीम इंसानों की ख़िद्मत में खर्च करें, लेकिन इस इल्म के यग के मुकाबलः बेहद कम हैं। दरहक़ीक़त यग तनफ़्फ़ुस का है, ज़ब्तेनफ़्स का है, मन पर क़ाबू पाने का है, जैसा श्रीकृष्ण अभी बता आये हैं। इस यग को हासिल कहाँ किया जाय?, उसका तरीक़ः कहाँ से सीखे? मन्दिरों, मस्जिदों, गिरजाघरों (चर्चों) में मिलेगा या किताबों में? मुक़द्दस मुक़ामात के सफ़र ज़ियारत में मिलेगा या पाक नदियों, तालाबों में गुस्ल करने से मिलेगा? श्रीकृष्ण कहते हैं- नहीं, उसका तो एक ही मख़्रज है- उंसुर में क़ाइम अज़ीम इंसान।

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः।।३४।।

लिहाज़ा अर्जुन! तू रम्ज़शनास अज़ीम इंसान की कुर्बत में जाकर अच्छी तरह बाअदब झुककर (जबीसाई और आदाब करके, गुरूर से आरी हो, पनाह में जाकर) अच्छी तरह ख़िद्मत करके, छल-कपट से दूर, सवाल करके उस इल्म को समझ। वे उंसुर को जानने वाले आलिम हज़्रात तुझे उस इल्म की नसीहत देंगे, राहे अमल पर चला देंगे। ख़ुद सुपुर्दग़ी के एहसास के साथ ख़िद्मत करने के बा'द ही इस इल्म को सीखने की सलाहीयत आती है। रम्ज़शनास अज़ीम इंसान उंसुरे आ'ला रूहे मुत्लक़ का बदीही दीदार करने वाले हैं। वे यग के ख़ास तरीक़े का इल्म रखने वाले हैं और वही आपको भी तालीम देंगे। अगर यग कुछ और होता, तो आलिम-रम्ज़शनास की क्या ज़रूरत थी।

ख़ुद मा'बूद के सामने ही तो अर्जुन खड़ा था। मा'बूद उसे रम्ज़शनास के पास क्यों भेजते हैं? दरहक़ीक़त श्रीकृष्ण एक जोगी थे। उनका ख़याल है कि आज तो तलबगार अर्जुन मेरे सामने मौजूद मुस्तक़्बिल में तलबगारों को कहीं शक न हो जाय कि श्रीकृष्ण तो चले गये, अब किसकी पनाह में जायें? लिहाज़ा उन्होंने साफ़ किया कि रम्ज़आस्ना के पास जा, वे आलिम हज़्रात तुझे नसीहत देंगे। और,

यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यसि पाण्डव।
येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि।।३५।।

उस इल्म को उनके ज़रीअः समझकर तू इस तरह फिर कभी फ़िरेफ़्तगी से नहीं पड़ेगा। उनसे दी गयी जानकारी के ज़रीअः, उस पर चलते हुए तू अपनी रूह के माबैन सभी जानदारों को देखेगा या'नी सभी जानदारों में इसी रूह को देखने की तुझमें सलाहीयत आ जायेगी। जब हर जगह एक ही रूह का नज़ारः करने की सलाहीयत आ जायेगी, उसके बा'द तू मुझमें दाख़िल होगा। लिहाज़ा उस रूहे मुत्लक़ को हासिल करने का ज़रीअः रम्ज़शनास अज़ीम इंसान के वसीले से है। इल्म के मुतअल्लिक़, दीन और दाइमी हक़ीक़त के बारे में श्रीकृष्ण के मुताबिक़ किसी रम्ज़शनास से ही पूछने का तरीक़ः है।

अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः।
सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं सन्तरिष्यसि।।३६।।

अगर तू सारे गुनाहगारों से भी ज़ियादः गुनाह करने वाला है, तब भी इल्म की कश्ती के ज़रीअः सभी गुनाहों के समन्दर को बिलाशक अच्छी तरह पार कर कनारः पा लेगा। इसका मत्लब आप यह न लगा लें कि ज़ियादः गुनाह करके कभी भी नजात हासिल कर लेंगे। श्रीकृष्ण का मत्लब सिर्फ़ यही है कि कहीं आप इस शक में न रहें कि 'हम तो बड़े गुनाहगार हैं', 'हमें नजात नहीं मिलेगी' ऐसी कोई गुंज़ाइश न निकालें, लिहाज़ा श्रीकृष्ण हिम्मतअफ़्ज़ाई और यक़ीन दिलाते हैं कि सारे गुनाहगारों के गुनाहों के अम्बोह से भी ज़ियादः गुनाह करने वाला है, फिर भी रम्ज़आश्नाओं से हासिल इल्म की कश्ती के ज़रीअः तू बेशक सारे गुनाहों से अच्छी तरह कनारः पा जायेगा। किस तरह?

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन।
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा।।३७।।

अर्जुन! जिस तरह आग के शोले ईंधन को ख़ाक कर देते हैं, ठीक उसी तरह इल्म की आग सारे आ'माल को जलाकर ख़ाक कर देती है। यह इल्म का इब्तिदाई मक़ाम नहीं है, जहाँ से यग में दाख़िलः मिलता है। बल्कि यह इल्म या'नी बदीही दीदार के आख़िरी अंजाम की अक्कासी है, जिसमें पहले ग़ैरनस्ली आ'माल जलकर ख़ाक होते हैं और फिर हुसूल के साथ ग़ौरो-फ़िक्र के आ'माल भी उसी में तह्लील हो जाते हैं। जिसे हासिल करना था, हासिल कर लिया। अब आगे ग़ौरो-फ़िक्र करके किसकी तलाश करें? ऐसा बदीही दीदार करने वाला आलिम सारे मुबारक, नामुबारक आ'माल का इख़्तिताम कर लेगा। वह बदीही दीदार होगा कहाँ? बाहर होगा या बातिन में? इस पर कहते हैं-

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।
तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति।।३८।।

इस दुन्या में इल्म के मुक़ाबिले पाक करने वाला बेशक कुछ भी नहीं है। उस इल्म (बदीही दीदार) को तू ख़ुद (दूसरा नहीं) जोग की तक्मीली हालत में (शुरू में नहीं) अपनी रूह के अन्दर, दिल की दुन्या में ही महसूस करेगा, बाहर नहीं। इस इल्म के लिए कौन-सी सलाहीयत दरकार है? जोग के मालिक के ही अल्फ़ाज़ में-

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति।।३९।।

अक़ीदतमन्द मुस्तइद और नफ़्सकुश इंसान ही इल्म हासिल कर पाता है। बाअक़ीदत तजस्सुस नहीं है, तो रम्ज़ शनास की पनाह में जाने पर भी इल्म नहीं हासिल होता। सिर्फ़ अक़ीदत ही काफी नहीं है। अक़ीदतमन्द कमज़ोर कोशिशवाला भी हो सकता है। लिहाज़ा अज़ीम इंसान के ज़रीअः हिदायतक़र्द रास्ते पर मुस्तइद होकर आगे बढ़ने की लगन ज़रूरी है। इसके साथ ही सारे हवास की एहतियात लाज़िमी है। जो ख़्वाहिशात से अलग नहीं है, उसके लिए बदीही दीदार (इल्म का हुसूल) मुश्किल तलब है। सिर्फ़ अक़ीदतमन्द, अमल में लगा हुआ, नफ़्सकुश इंसान ही इल्म हासिल करता है। इल्म को हासिल कर वह उसी वक़्त हक़ीक़ी सुकून को हासिल कर लेता है, जिसके बा'द कुछ भी पाना बाकी नहीं रहता। यही सुकून की आखिरी मंजिल है, फिर वह कभी बेसुकून नहीं होता और जहाँ अक़ीदत नहीं है-

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति।
नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः।।४०।।

जाहिल जो यग के ख़ुसूसी तौर-तरीक़े से नावाक़िफ़ है और बिला अक़ीदत व शको-शुब्हः वाला इंसान इस रूहानी रास्ते से भटक जाता है, उनमें भी शको-शुब्हः में पड़े हुए इंसान के लिए न तो सुख है, न दुबारः इंसानी जिस्म है और न रूहे मुत्लक़ ही। लिहाज़ा रम्ज़शनास अज़ीम इंसान के पास जाकर इस रास्ते के शको-शुब्हा का इज़ालः कर लेना चाहिए वर्न वे हक़ीक़त से रू-ब-रू कभी नहीं हो पायेंगे। फिर हो कौन पाता है?

योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्नसंशयम्।
आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय।।४१।।

जिसके आ'माल जोग के ज़रीअः मा'बूद में ज़म हो चुके हैं, जिसके तमाम शको-शुब्हात मा'बूद के रू-ब-रू इल्म के ज़रीअः ख़त्म हो गये हैं, मा'बूद से जुड़े हुए ऐसे इंसान को अमल अपनी बंदिश में नहीं ले पाते। जोग के ज़रीअ ही आ'माल का खातिमः होगा। इल्म से ही शक मिटेगा। लिहाज़ा श्रीकृष्ण कहते हैं-

तस्मादज्ञानसम्भूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनात्मनः।
छित्त्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत।।४२।।

भरत के ख़ानदानवाले अर्जन! तू जोग में अपना मक़ाम बना और जहालत से पैदा हुए दिल में मौजूद अपने इस शक को इल्म की तलवार से काट। जंग के

लिए खड़ा हो। जब बदीही दीदार में ख़लल डालने वाला शक का तम्सीली दुश्मन दिल के भीतर है, तो बाहर कोई किसी से क्यों लड़ेगा? दरहक़ीक़त जब आप ग़ौरो-फ़िक्र के रास्ते पर आगे बढ़ते हैं, तब शक से पैदा ख़ारिजी ख़साइल का ख़लल की शक्ल में होना फ़ित्री हैं। ये दुश्मन की शक्ल में ख़ौफ़नाक हम्लः करते हैं। एहतियात के साथ यग के ख़ुसूसी तरीक़ः का अमल करते हुए इन उयूब से छुटकारा पाना ही जंग है, जिसका समरः आ'ला सुकून है। यही आख़िरी फ़त्ह है, जिसके पीछे शिकस्त नहीं है।

मग़्ज़े सुख़न :-

इस बाब के शुरू में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा कि इस जोग को शुरू में मैंने सूरज के लिए कहा। सूरज ने मूरिसे अव्वल मनु से और मूरिसे अव्वल मनु ने इक्ष्वाकु से कहा और शाही आरिफ़ हज़्रात ने जाना। मैंने ख़्वाह ग़ैरमर्ई मक़ाम वाले ने कहा। अज़ीम इंसान भी ग़ैरमर्ई शक्ल वाला ही है। जिस्म तो उसके रहने का महज़ मकान है। ऐसे अज़ीम इंसान की ज़बान में मा'बूद ही इज़्रा होता है। ऐसे किसी अज़ीम इंसान से जोग सूरज के ज़रीअः मुतहर्रिक होता है। उस आ'ला नूर की शक्ल का नश्रियः साँस के अन्दर होता है, लिहाज़ा सूरज से कहा। साँस में मुतहर्रिक होकर वे तअस्सुरात की शक्ल में आ गये। साँस में अन्दोख़्तः रहने पर, वक़्त आने पर वही मन में अज़्म बनकर आ जाता है। उसकी अज़्मत समझने पर मन में उस जुम्ले के बनिस्बत ख़्वाहिश बेदार हो जाती है और जोग अमली शक्ल ले लेता है। बतद्रीज तरक़्क़ी करते-करते यह जोग मालोज़र और कामयाबियों वाले शाही आरिफ़ाना दर्जः तक पहुँचने पर ख़त्म होने की हालत में जा पहुँचा है; लेकिन जो महबूब बन्दः है, लाशरीक दोस्त है, उसे अज़ीम इंसान ही सँभाल लेते हैं।

अर्जुन के सवाल करने पर कि, आपकी पैदाइश तो अब हुई है। जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया कि ग़ैरमर्ई, लाफ़ानी, पैदाइश से मुबर्रा और सभी जानदारों में जल्वःग़र होने पर भी अपनी कारसाज़ी, जोग के अमल के ज़रीअः अपनी तीनों सिफ़ात वाली कुद्रत को क़ाबू में करके में ज़ाहिर होता हूँ। ज़ाहिर होकर करते क्या हैं? क़ाबिले अमल चीज़ों की हिफ़ाज़त करने और जिनसे ख़राबियों पैदा होती हैं, उनका ख़ातिमः करने के लिए, आ'ला दीन रूहे मुत्लक़ को मुस्तहकम करने के लिये मैं अज़अब्बलताआख़िर पैदा होता हूँ। मेरी वह पैदाइश और अमल पुरनूर है। उसे सिर्फ़ रम्ज़आश्ना ही जान पाते हैं। मा'बूद का अवतार तो कलयुग की हालत से ही

हो जाता है, अगर सच्ची लगन हो। लेकिन शुरुआती रियाज़तकश समझ ही नहीं पाता कि यह मा'बूद बोल रहे हैं या यों ही इशारे मिल रहे हैं। आस्मान से कौन बोलता है? 'महाराजजी' बताते थे कि जब मा'बूद मेह्बान होते हैं, रूह से रथबान हो जाते हैं तो खम्भे से, दरख़्त से, पत्ते से, ख़ला से, हर जगह से बोलते और सँभालते हैं। तरक़्क़ी होते-होते जब उंसुरे आ'ला रूहेमुत्लक़ ज़ाहिर हो जाय, तभी निस्बत हासिल कर लेने के साथ यह साफ़ तौर से समझ पाता है। लिहाज़ा अर्जुन! मेरी उस शक्ल को रम्ज़शनासों ने देखा और मुझे जानकर वे उसी वक़्त मुझमें ही दाख़िल हो जाते है, आमादो-रफ़्त से मुबर्रा हो जाते हैं।

इस तरह उन्होंने मा'बूद के अवतार का तरीक़ः बताया कि वह किसी आशिक़ के दिल में होता है; बाहर हरगिज़ नहीं। श्रीकृष्ण ने बताया कि मुझे आ'माल नहीं बाँधते या'नी मेरे साथ अमल की बंदिश नहीं है और इस सत्ह से जो जानता है, उसके लिए भी अमल की बंदिश नहीं है। यही समझकर नजात के तलबगार इंसानों ने अमल की शुरुआत की थी कि, उस सत्ह से जानेंगे, तो जैसे श्रीकृष्ण, वैसा ही उस सत्ह से जानने वाला वह इंसान और इल्म हासिल कर लेने पर वैसा ही तालिबे नजात अर्जुन। यह हुसूलयाबी हत्मी (तय) है; अगर यग किया जाय। यग की शक्ल बतायी; यग का समरः आ'ला उंसुर, आ'ला सुकून (दाइमी सुकून) बताया। इस इल्म को हासिल कहाँ से किया जाय? इस पर किसी रम्ज़ शनास की क़ुर्बत में जाने और उन्हीं तरीक़ों से पेश आने को कहा, जिससे वे अज़ीम इंसान मेह्बान हो जायें।

जोग के मालिक ने साफ़ किया कि वह इल्म तू ख़ुद अमल करके पायेगा, दूसरे के अमल से तुझे नहीं मिलेगा। वह भी जोग की कामयाबी के दौर में हासिल होगा, शुरू में नहीं। वह इल्म (बदीही दीदार) दिल की दुन्या में होगा, बाहर नहीं। अक़ीदतमन्द, मुस्तइद, नफ़्सकुश और शको-शुब्हः से आरी इंसान ही इसे हासिल करता है। लिहाज़ा दिल में मौजूद अपने शक को बैराग की तलवार से काट। यह दिल की दुन्या की जंग है। ख़ारिज़ी जंग से गीता में बयान की गई जंग का कोई वास्तः नहीं है।

इस बाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने ख़ास तौर से यग की शक्ल को साफ़ किया और बताया कि यग जिससे पूरा होता है, उसे करने (तरीक़-ए-कार) का नाम अमल है। अमल को अच्छी तरह इसी बाब में साफ़ किया, लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'यज्ञकर्मस्पष्टीकरण' नाम चतुर्थोऽध्यायः।।४।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'यज्ञ कर्म स्पष्टीकरण' (अमली जोग की तश्रीह) नाम का चौथा बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'यज्ञकर्मस्पष्टीकरण' नाम चतुर्थोऽध्यायः।।४।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'यज्ञ कर्म स्पष्टीकरण' (अमली जोग की तश्रीह) नाम का चौथा बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ पञ्चमोऽध्यायः।।
(पाँचवाँ बाब)

बाब तीन में अर्जुन ने सवाल खड़ा किया था कि- बन्दःपर्वर जब इल्मी लोग आपके नज़रीयः के मुताबिक़ अफ़्ज़ल है, तो आप मुझे ख़ौफ़नाक आ'माल में क्यों लगाते हैं? अर्जुन को बेग़रज़ अमली जोग के मुक़ाबले में इल्मी जोग कुछ आसान मह्सूस हुआ लगता है; क्योंकि इल्मी जोग में शक़स्त मिलने पर देवता का मर्तबः और फ़त्ह में 'हुज़ूरे आ'ला का मक़ाम', दोनों ही हालात में फ़ाइदः ही फ़ाइदः मह्सूस हुआ। लेकिन अब तक अर्जुन ने अच्छी तरह समझ लिया था कि दोनों ही रास्तों में अमल (कर्म) तो करना ही पड़ेगा। (जोग के मालिक उसे शको-शुब्हः से आरी रम्ज़आश्ना अज़ीम इंसान की पनाह लेने के लिए भी तर्ग़ीब देते हैं, क्योंकि समझने के लिए वही एक जगह है।) लिहाज़ा दोनों रास्तों में से एक चुनने से पहले उसने अर्ज़ की-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

संन्यासं कर्मणां कृष्ण पुनर्योगं च शंससि।
यच्छ्रेय एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम्।।१।।

ऐ श्रीकृष्ण! आप कभी तर्के दुन्या के ज़रीअः किये जाने वाले अमल की और कभी बेग़रज़ वाले नज़रीयः से किये जाने वाले अमल की ता'रीफ़ करते हैं। इन दोनों में से एक जिसे आप बिल्कुल ठीक समझते हैं, जो आ'ला इफ़ादी हो, उसे मुझे बताइये। कहीं पहुँचने के लिए आपको दो रास्ते बताये जायँ, तो आप आसान रास्तः ज़रूर पूछेंगे। अगर नहीं पूछते, तो आपका इरादः जाने का नहीं है। इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा-

श्रीभगवानुवाच (श्रीभगवान बोले) -

संन्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ।
तयोस्तु कर्मसन्न्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते।।२।।

अर्जुन! तर्के दुन्या के वसीलः से किये जाने वाले आ'माल या'नी इल्म के रास्ते से किये जाने वाले आ'माल और **'कर्मयोगः'**-बेग़रज़ ख़याल से किये जाने वाले

आ'माल ये दोनों ही आ'ला शरफ़ को दिलाने वाले हैं। लेकिन इन दोनों रास्तों से तर्के दुन्या इल्मी नज़रीयः से किये जाने वाले आ'माल की बनिस्बत बेग़रज़ अमली जोग अफ़्ज़ल है। सवाल फ़ित्री है कि अफ़्ज़ल क्यों है?

ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति।
निर्द्वन्द्वः हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते।।३।।

बाजू-ए-अज़ीम अर्जुन! जो न किसी से नफ़्रत करता है, न किसी चीज़ की ख़्वाहिश रखता है, वह हमेशः ज़ाहिद ही समझने लाइक़ है। चाहे वह इल्म के रास्ते से या बेग़रज़ अमल के रास्ते से ही क्यों न हो। हसद व अदावत वग़ैरः वबालों से मुबर्रा वह इंसान आराम के साथ दुन्यवी बंदिश से आज़ाद हो जाता है।

साङ्ख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः।
एकमप्यास्थितः सम्यगुभयोर्विन्दते फलम्।।४।।

बेग़रज़ अमली जोग और इल्मी जोग इन दोनों को वे ही लोग अलग-अलग बताते हैं, जिनकी समझ इस राह में अभी बहुत सत्ही है, न कि आलिम फ़ाज़िल लोग; क्योंकि दोनों में से किसी एक में भी अच्छी तरह क़ाइम हुआ इंसान दोनों के बतौर समरः रूहे मुत्लक़ को हासिल करता है। दोनों का समरः एक है, लिहाज़ा दोनों एक ही बराबर हैं।

यत्साङ्ख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते।
एकं साङ्ख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति।।५।।

जहाँ सांख्य (फ़ल्सफ़ः) की नज़र से अमल करने वाला पहुँचता है, वही बेग़रज़ अमल के वसीलः से अमल करने वाला भी पहुँचता है। लिहाज़ा जो दोनों को समरः की नज़र से एक देखता है, वही हक़ीक़ी इल्म वाला है। जब दोनों एक ही जगह पर पहुँचते हैं, तो बेग़रज़ अमली जोग ख़ास क्यों? श्रीकृष्ण बताते हैं-

संन्यासस्तु महाबाहो दुःखमाप्तुमयोगतः।
योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म नचिरेणाधिगच्छति।।६।।

अर्जुन! बेग़रज़ अमली जोग का बरताव किये बग़ैर **'संन्यासः'**- या'नी सब कुछ वक़्फ़ कर देना तक़्लीफ़देह है; जब जोग का बरताव शुरू ही नहीं किया तो ग़ैर-मुम्किन-सा है। लिहाज़ा जल्वःगर मा'बूद के तसव्वुर में मश्ग़ूल रहने वाला सूफ़ी, जिसकी मन के साथ हवास ख़ामोश है, बेग़रज़ अमली जोग का अमल करके पर्वर्दगार रूहे मुत्लक़ को जल्द ही हासिल कर लेता है।

ज़ाहिर है कि इल्मी जोग में बेग़रज़ अमली जोग का ही बरताव करना पड़ेगा, क्योंकि तरीक़ः दोनों में एक ही है। वही यग का तरीक़ः है, जिसका हक़ीक़ी मा'ना है- 'इबादत'। दोनों रास्तों में फ़र्क़ महज़ कारकुन के नज़रीये का है। एक अपनी कुव्वत को समझकर नफ़ा-नुक़्सान देखते हुए इसी अमल में लगा होता है और दूसरा बेग़रज़ अमली जोगी मा'बूद पर मुन्हसिर होकर इसी अमल में लगा होता है। मिसाल के तौर पर एक ख़ुद-ब-ख़ुद तालीम हासिल करता है, दूसरा किसी मदरसे में दाख़िलः लेकर। दोनों का निसाबे ता'मील एक ही है, इम्तिहान एक ही है, मुम्तहिन, नाज़िर दोनों में एक ही हैं। ठीक इसी तरह दोनों के मुर्शिद रम्ज़आश्ना हैं और ख़िताब (डिग्री) एक ही है। सिर्फ़ दोनों के ता'लीम लेने का नज़रीयः अलग है। हाँ, इदारः में पढ़ने वाले तालिबे इल्म को सहूलतें ज़ियादः रहती हैं।

इससे पहले श्रीकृष्ण ने कहा कि ख़्वाहिश और ग़ुस्सः असीरुलफ़त्ह दुश्मन हैं! अर्जुन! इन्हें तू मार। अर्जुन को लगा कि यह तो बहुत मुश्किल है, लेकिन श्रीकृष्ण ने कहा- नहीं, जिस्म से मावरा हवास, हवास से मावरा मन है, मन से मावरा अक़्ल है, अक़्ल से मावरा तेरी हक़ीक़ी शक्ल है। तू वहीं से आमादः हो। इस तरह अपना वुजूद समझकर, अपनी कुव्वत को सामने रखकर, ख़ुदमुख़्तार होकर अमल में लग जाना इल्मी जोग है। श्रीकृष्ण ने कहा था, मन को मर्कूज़ करते हुए आ'माल को मेरे हवाले करके उम्मीद-शफ़क़त और ग़म से आरी होकर जंग कर। सुपुर्दगी के साथ मा'बूद पर मुन्हसिर होकर उसी अमल में लगना बेग़रज़ अमली जोग है। दोनों का तरीक़ः एक है और समरः भी एक है।

इसी पर ज़ोर देकर जोग के मालिक श्रीकृष्ण यहाँ फ़र्माते हैं कि, जोग का बरताव किये बग़ैर तर्के दुन्या या'नी मुबारक-नामुबारक आ'माल के आख़िरी मक़ाम को हासिल करना ग़ैरमुम्किन है। श्रीकृष्ण के मुताबिक़ ऐसा कोई जोग नहीं है कि हाथ पर हाथ रखकर बैठे-बैठे कहो कि "मैं रूहे मुत्लक़ हूँ, ताहिर हूँ, अक़्लमंद हूँ। मेरे लिए न तो अमल है, न उसकी बंदिश। मैं नेक-बद कुछ करता दिखायी देता भी हूँ, तो हवास अपनी ख़स्लत के मुताबिक़ काम कर रहे हैं।" ऐसी रियाकारी श्रीकृष्ण के अल्फ़ाज़ में बिल्कुल नहीं है। ख़ुद-ब-ख़ुद जोग के मालिक भी अपने लाशरीक दोस्त अर्जुन को बिला अमल के यह मक़ाम नहीं दे सके। अगर ऐसा वे कर सकते तो गीता की ज़रूरत ही क्या थी? अमल तो करना ही पड़ेगा। अमल करके ही तर्के दुन्या की हालत को हासिल किया जा सकता है और जोग से मुज़य्यन इंसान जल्द

ही रूहे मुत्लक़ में ज़म हो जाता है। जोग से मुज़ैयन इंसान के निशानात क्या हैं?- इस पर फ़र्माते हैं-

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः।
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते।।७।।

'विजितात्मा'- ख़ास तौर से फ़त्ह कर लिया गया है जिस्म जिसका, **'जितेन्द्रियः'**- फ़त्ह कर लिये गये हैं हवास जिसके, और **'विशुद्धात्मा'**- ख़ुसूसी तौर से जिसका बातिन पाक है, ऐसा इंसान **'सर्वभूतात्मभूतात्मा'**- तमाम माद्दी जानदारों की रूह के अस्ल मख़्रज, रूहेमुत्लक़ से यकसाँ हुआ जोग से मुज़य्यन है। वह अमल करता हुआ भी उसमें मुलव्वस नहीं होता। तो करता क्यों है? अपने ताबेईन के लिए बेइंतिहा, इफ़ादी तुख़्म को इकट्ठा करने के लिए। मुलव्वस क्यों नहीं होता? क्योंकि तमाम जानदारों का जो बुन्यादी मख़्रज है, जिसका नाम उंसुरे आ'ला है, उस उंसुर में वह क़ाइम हो गया। आगे कोई चीज़ नहीं, जिसकी तह्क़ीक़ करे। पीछे वाली चीजें छोटी पड़ गयीं, तो भला रग़्बत किसमें पैदा करे? लिहाज़ा वह आ'माल से घिरा हुआ नहीं होता। यह जोग से मुज़य्यन इंसान के आख़िरी अंजाम की अक्कासी है। फिर जोग के हामिल इंसान की बूदोबाश का ख़ुलासः करते हैं कि वह अमल करते हुए भी उसमें मुलव्वस क्यों नहीं होता?

नैव किञ्चित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्त्ववित्।
पश्यञ्शृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपञ्श्वसन्।।८।।
प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु वर्तन्त इति धारयन्।।९।।

उंसुरे आ'ला रूहे मुत्लक़ को बदीही दीदार के साथ जानने वाले जोग से मुज़य्यन इंसान की यह मन की हालत या'नी एहसास है कि मैं ज़र्रः के बराबर भी कुछ नहीं करता हूँ। यह उसका तख़य्युल नहीं, बल्कि यह हालत उसने बज़रीयः अमल हासिल की है, जैसे- **'युक्तो मन्येत'**- अब हुसूल के बा'द वह सब कुछ देखता हुआ, सुनता हुआ, छूता, सूँघता, खाना खाता, चलता-फिरता, सोता-जागता, साँस लेता, छोड़ता, बोलता, क़बूल करता, आँखों को खोलता और उन्हें मींचता हुआ भी 'हवास अपनी ख़स्लत के मुताबिक़ मुतहर्रिक हैं'- ऐसी सोचवाला होता है। रूहे मुत्लक़ से बढ़कर कुछ है ही नहीं और जब उसमें वह क़ाइम ही है, तो उससे बेह्तर किस आराम की ख़्वाहिश से वह किसी को लम्स वग़ैरः करेगा? अगर कोई अफ़्जल चीज़

आगे होती, तो रग़्बत ज़रूर रहती, लेकिन हुसूल के बा'द अब और आगे जायेगा कहाँ? और पीछे तर्क क्या करेगा? लिहाज़ा जोग से मुज़य्यन इंसान मुलव्वस नहीं होता। इसी को एक नज़ीर के ज़रीअः पेश करते हैं-

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा।।१०।।

कमल कीचड़ में होता है, उसका पत्ता पानी के ऊपर तैरता है। लहरें रात-दिन उसके ऊपर से गुज़रती हैं, लेकिन आप पत्ते को देखें, सूखा मिलेगा। पानी की एक बूँद भी उसके ऊपर नहीं टिक पाती। कीचड़ और पानी में रहते हुए भी वह उनसे मुलव्वस नहीं होता। ठीक इसी तरह, जो इंसान अपने सारे आ'माल को रूहेमुत्लक़ में ज़म करके (बदीही दीदार के साथ ही आ'माल ज़म होते हैं, इससे पहले नहीं) रग़्बत को तर्क करके (अब आगे कोई चीज़ नहीं, लिहाज़ा रग़्बत नहीं रहती, लिहाज़ा रग़्बत को तर्ककर) अमल करता है, वह भी इसी तरह मुलव्वस नहीं होता। फिर वह करता क्यों है? आप लोगों के लिए, मुआशरः के फ़लाही वसीलः के लिए, ताबेईन की रहनुमाई के लिए। इसी पर ज़ोर देते हैं-

कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिन्द्रियैरपि।
योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्गं त्यक्त्वात्मशुद्धये।।११।।

जोगी हज़्रात सिर्फ़ हवास, मन, अक़्ल और जिस्म के ज़रीअः भी लगाव का ईसार करके रूहानी तहारत के लिए अमल करते हैं। जब अमल मा'बूद में ज़म हो चुके तो क्या अब भी रूह नापाक ही है? नहीं, वे **'सर्वभूतात्मभूतात्मा'** (तमाम अर्वाह की रूह) हो चुके हैं। या'नी तमाम जानदारों में वे अपनी ही रूह का जल्वः देखते हैं। उन तमाम अर्वाह की तहारत के लिए, आप सबकी रहनुमाई के लिए वे अमली ज़िंदगी गुज़ारते हैं। जिस्म, मन, अक़्ल और सिर्फ हवास से वह अमल करता है, ब-ज़ाते ख़ुद वह कुछ भी नहीं करता, ख़ुदकफ़ील है। बाहर से मुतहर्रिक दिखाई देता है, लेकिन भीतर उसमें बेइंतिहा सुकून है। रस्सी जल चुकी, सिर्फ़ ऐंठन (शक्ल) बाक़ी है, जिससे बँध नहीं सकता।

युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम्।
अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते।।१२।।

'योगयुक्त' या'नी (जोग से मुज़य्यन) जोग के समरः को हासिल कर चुका

इंसान जो सारे जानदारों के रूह के मख़्रज रूहे मुत्लक़ में क़ाइम है, ऐसा जोगी अमल के समरः को तर्ककर (आ'माल का समरः मा'बूद उससे अलग नहीं है।) लिहाज़ा अब अमल के समरः को तर्ककर) **'नैष्ठिकीम् शान्तिम् आप्नोति'**- सुकून के आख़िरी अंजाम को हासिल होता है, जिसके आगे किसी तरह का सुकून बाक़ी नहीं है, जिसके बा'द वह कभी सुकून से ख़ाली नहीं होता। लेकिन ग़ैरमुनासिब इंसान, जो जोग के समरः से जुड़ा हुआ नहीं है, अभी रास्ते में है- ऐसा इंसान समरः में राग़िब हुआ (समरः है रूहे मुत्लक़, उसमें उसका राग़िब होना ज़रूरी है। लिहाज़ा समरः में राग़िब होने पर भी) **'कामकारेण निबध्यते'**- ख़्वाहिश करके बँध जाता है। या'नी शुरू से लेकर आख़िर तक ख़्वाहिशात बेदार होती हैं, लिहाज़ा रियाज़तकश को मंजिले-मक़्सूद को हासिल करने तक ख़बरदार रहना चाहिए। क़ाबिले एहतिराम 'महाराज जी' कहा करते थे- ''हो! ज़रा-सा हम अलग, मा'बूद अलग हैं तो लौसे-दुन्या (माया) कामयाब हो सकती है।'' कल ही हुसूल होना हो लेकिन आज तो वह जाहिल ही है। लिहाज़ा आख़िरी मंज़िल तक रियाज़तकश को ग़ाफ़िल नहीं होना चाहिए। इसी पर आगे नज़र डालें-

सर्वकर्माणि मनसा संन्यस्यास्ते सुखं वशी।
नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन्।।१३।।

जो पूरी तरह अपने क़ाबू में है, जो जिस्म, मन, अक़्ल और दुन्या से अलग ख़ुद से कफ़ील है, ऐसा ख़ुद इख़्तियार इंसान बिला शक कुछ न करता है, न कराता है। अपने ताबेईन से कराना भी उसके बातिनी सुकून का लम्स नहीं कर पाता। ऐसा ख़ुदकफ़ील इंसान लफ़्ज़ वग़ैरः मौजूआत को हासिल कराने वाले नौ दरवाजों (दो कान, दो आँखें, नाक के दो सुराख़, एक मुँह, एक उज्बे तनासुल, मक़अद) वाले जिस्मानी मकान में सारे आ'माल को मन से तर्ककर अपने रूहानी लुत्फ़ में ही डूबा रहता है, हक़ीक़तन वह न कुछ करता है और न कराता है।

इसी बात को फिर श्रीकृष्ण दूसरे अल्फ़ाज़ में बयान करते हैं कि वह मा'बूद न करता है, न कराता है। मुर्शिद, मा'बूद, रब, ख़ुदकफ़ील अज़ीम इंसान, ज़ैयन वग़ैरः एक दूसरे के मुतरादिफ़ हैं। अलग से कोई पर्वर्दगार कुछ करने नहीं आता। वह जब करता है, तो इन्हीं मक़ाम पर पहुँचे हुए अज़ीम इंसान के वसीलः से कराता है। अज़ीम इंसान के लिए जिस्म सिर्फ़ मकान है। लिहाज़ा रूहेमुत्लक़ का करना और अज़ीम इंसान का करना एक ही बात है, क्योंकि वह उनके ज़रीअः है। दरहक़ीक़त

वह इंसान करते हुए भी कुछ नहीं करता। इसी पर अगला श्लोक देखें-

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते।।१४।।

न वह मा'बूद न तो माद्दी जानदारों के इस एहसास को कि वे ही करने वाले हैं, न आ'माल को और न आ'माल के समरात को इत्तिफ़ाक ही मानता है, बल्कि ख़सूलत में मौजूद कुद्रत के दबाव के मुताबिक़ ही सभी बरताव करते हैं। जैसी जिसकी ख़सूलत मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः ख़्वाह मलकाते मज़मूम वाली है, उसी सत्ह से वह बरताव करता है। कुद्रत तो लम्बी-चौड़ी है, लेकिन आपके ऊपर उतना ही असर डाल पाती है, जितनी आपकी फ़ित्रत बदनुमा या तरक़्क़ीयाफ़्तः है। आमतौर से लोग कहते हैं, कि करने-कराने वाले तो मा'बूद हैं, हम तो महज़ मशीन हैं। हमसे वे नेक करायें ख़्वाह बद। लेकिन जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं कि, न वह मा'बूद ख़ुद करता है, न कराता है और न वह तर्कीब ही बैठाता है। लोग अपनी ख़सूलत में मौजूद फ़ित्रत के मुताबिक़ बरताव करते हैं। ख़ुद-ब-ख़ुद काम करते हैं। वे अपनी आदत से मज़्बूर होकर करते हैं, मा'बूद नहीं करते। तब लोग कहते क्यों हैं कि मा'बूद करते हैं? इस पर जोग के मालिक बताते हैं-

नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः।
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः।।१५।।

जिसे अभी मा'बूद कहा, उसी को यहाँ अक्बर (विभु) कहा गया है, क्योंकि वह तमाम शौकतों से मुज़य्यन है। अज़्मत और शौकत से मुज़य्यन वह रूहे मुत्लक़ न किसी के अमलेबद से और न किसी के अमले नेक से ही मुतअस्सिर होता है; फिर भी लोग कहते क्यों हैं? इसवास्ते कि इल्म पर जहालत का पर्दः पड़ा हुआ है। उन्हें अभी बदीही दीदार के साथ इल्म तो हुआ नहीं। वे अभी ज़ीरूह हैं। लगाव के ज़ेरे असर वे कुछ भी कह सकते हैं। इल्म से क्या होता है? इसे बयाँ करते हैं-

ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः।
तेषामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम्।।१६।।

जिसके बातिन की वह जहालत (जिसने इल्म को ढँक रखा था), बदीही दीदार के ज़रीअः ख़त्म हो गई है और इस तरह जिसने इल्म हासिल कर लिया है, उसका वह इल्म सूरज के मानिन्द उस उंसुरे आ'ला रूहे मुत्लक़ को रौशन करता है। तो

क्या रूहे मुत्लक़ किसी तारीकी का नाम है? नहीं, वह तो **'परम प्रकास रूप दिन राती।'** (रामचरितमानस, ७/११९/३)- ख़ुदनूरे मुजस्सम है। है तो, लेकिन हमारे इस्ते'माल के लिए तो नहीं है, दिखायी तो नहीं देता? जब इल्म के ज़रीअः जहालत का पर्दः हट जाता है, तो उसका वह इल्म सूरज के मानिन्द मा'बूद को अपने में रवाँ कर लेता है। फिर उस इंसान के लिए कहीं तारीकी नहीं रह जाती। उस इल्म की शक्ल क्या है?

तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः।।१७।।

जब उस उंसुरे आ'ला रूहे मुत्लक़ के मुताबिक़ अक़्ल हो, उंसुर के मुताबिक़ मन का बहाव हो, उंसुरे आ'ला मा'बूद में दुई से मावरा उसकी बूदोबाश हो और उसी का हामिल हो, इसी का नाम इल्म है। इल्म कोई बकवास या बहस नहीं है। इस इल्म के ज़रीअः गुनाह से खाली इंसान बार-बार जनम लेने और मरने के बबाल से दूर होकर आ'ला नजात को हासिल कर लेता है। आ'ला नजात को हासिल करने वाला, मुकम्मल इल्म से मुज़ैयन इंसान ही आलिम (पंडित) कहलाते हैं। आगे देखें-

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः।।१८।।

इल्म के ज़रीअ जिनका गुनाह मिट चुका है, जो ऐसे मक़ाम पर पहुँच चुके हैं, जो आमदो-रफ़्त से मुबरा (अपुनरावर्ती) है, परमगति मक़ाम को हासिल कर चुके हैं, ऐसे आलिम मुल्कसिर मिज़ाज बर्हमन और चाण्डाल (एक ग़लीज़ जात) में, गाय कुत्ते और हाथी में मुसावी नज़र वाले होते हैं। उनकी नज़र में इल्म व ख़ाकसारी से मुज़य्यन बर्हमन न तो कोई सिफ़ात वाला होता है और न चाण्डाल में कोई हक़ारत होती है। न गाय दीन है, न कुत्ता बेदीनी और न हाथी अज़्मत ही रखता है। ऐसे आलिम हज़्रात यक़बीन और हमसर होते हैं। उनकी नज़र जिस्म (चमड़ी) पर नहीं रहती, बल्कि रूह पर पड़ती है। फ़र्क़ सिर्फ़ इतना है कि, आलिम मुन्कसिरुलमिज़ाज मा'बूद के करीब है और बाकी कुछ पीछे हैं। कोई एक मंज़िल आगे है तो कोई पिछले पड़ाव पर। जिस्म तो लिबास है। उनकी नज़र लिबास को तर्जीह नहीं देती बल्कि उनके मन में मौजूद रूह पर पड़ती है। लिहाज़ा वे कोई फ़र्क़ नहीं रखते।

श्रीकृष्ण ने गाय की ख़िद्मत की थी। उन्हें गाय को अहम्मीयत का बयान करना चाहिए था, लेकिन उन्होंने ऐसा कुछ भी नहीं किया। श्रीकृष्ण ने गाय को दीन

में कोई मक़ाम नहीं दिया। उन्होंने महज़ इतना माना कि दूसरे ज़ीरूहों की तरह उसमें भी रूह है। गाय की माली अहम्मीयत जो भी हो, उसकी दीनी ख़ूबी बा'द के लोगों की देन है। श्रीकृष्ण ने इसके पहले बताया कि जाहिलों की अक़्ल लामह्दूद शाख़ों वाली होती है, लिहाज़ा वे लामह्दूद अमल के तरीक़ों का फ़ैलाव कर लेते हैं। दिखावटी आरास्तः ज़बान में वे उसे ज़ाहिर भी करते हैं। उनके बातों की छाप जिनकी तबीअ़त पर पड़ती है, उनकी भी अक़्ल गुम हो जाती है। वे कुछ हासिल नहीं कर पाते, बर्बाद हो जाते हैं। जबकि बेग़रज़ अमली जोग में अर्जुन! मुअय्यनः अमल एक ही है- यग का तरीक़-ए-कार 'इबादत'। गाय, कुत्ते, हाथी, पीपल, नदी की दीनी अहम्मीयत इन लामह्दूद शाख़ों वालों की देन है। अगर इनकी कोई दीनी अहम्मीयत होती तो श्रीकृष्ण ज़रूर ज़िक्र करते। हाँ, मन्दिर, मस्जिद वग़ैरः इबादत के मक़ाम शुरुआती दौर में जरूर हैं। वहाँ इस्ते'माई तौर पर तर्ग़ीब देने वाले वाज़ोपन्द हैं, तो उनकी अहम्मीयत ज़रूर है, वे दीनी वाज़ोपन्द के मर्कज़ हैं।

पेशक़र्दः श्लोक में दो आलिम हज़्रात (पंडितों) का जिक्र है। एक आलिम (पंडित) तो वह है, जो मुकम्मल आलिम है और दूसरा वह जो इल्म और ख़ाकसारी से लबरेज़ है। वे दो कैसे? दरहक़ीक़त हर दर्जे की दो हदें होती हैं- एक तो आ'ला हद- आख़िरी अंजाम और दूसरी इब्तिदाई या अद्ना दर्जे की हद। मिसाल के तौर पर बन्दगी की अद्नाहद वह है, जहाँ से बन्दगी शुरू की जाती है; इर्फ़ान, बैराग और लगन के साथ जब इबादत करते हैं और आ'ला हद वह है, जहाँ बन्दगी अपना समरः देने की हालत में होती है। ठीक इसी तरह बर्हमन दर्जः है। जब मा'बूद में दाखिलः दिलाने वाली सलाहीयतें आती हैं, उस वक़्त इल्म होता है, ख़ाकसारी होती है। मन पर क़ाबू नफ़्सकुशी, इब्तिदा करने वाले तज्रिबात का इज़्रा, मुसल्सल फ़िक्र, तसव्वुर और मुराक़बः वग़ैरः मा'बूद में दाखिल दिलाने वाली सारी सलाहीयतें उसके अन्दर फ़ित्री तौर पर काम करती रहती हैं। यह बर्हमन दर्जे की अद्ना हद है। आ'ला हद तब आती है, जब बतसल्सुल तरक़्क़ी करते-करते वह मा'बूद का दीदार करके उसमें ज़म हो जाता है। जिसे जानना था, जान लिया। वह मुकम्मल आलिम है। आमदोरफ़्त से मुबर्रा ऐसा अज़ीम इंसान उस इल्म और मुन्कसिरुलमिज़ाज बर्हमन, चाण्डाल, कुत्ते, हाथी और गाय मुसावी नज़र वाला होता है, क्योंकि उसकी नज़र मन में मौजूद अपनी ही शक्ल पर पड़ती है। ऐसे अज़ीम इंसान को आ'ला नजात में क्या मिला है और कैसे? इस पर रोशनी डालते हुए जोग के मालिक बताते हैं-

इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि ते स्थिताः।।१९।।

उन इंसानों के ज़रीअः ज़िंदः हालत में ही तमाम दुन्या पर फ़त्ह हासिल कर ली गयी, जिनका मन मुसावात में क़ाइम है। मन के मुसावात की दुन्या पर फ़त्ह करने से क्या तअल्लुक़? दुन्या मिट गई तो वह इंसान रहा कहाँ? श्रीकृष्ण कहते हैं, **'निर्दोषं हि समं ब्रह्म'**–वह मा'बूद बेऐब और मुसावात वाला है, इधर उनका मन भी बेऐब और मुसावी हालतवाला हो गया। **'तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिताः'**– लिहाज़ा वह मा'बूद में ज़म हो जाता है। इसी का नाम बार-बार जनम न लेने वाली आ'ला-नजात (अपुनरावर्ती परम गति) है। यह कब मिलती है? जब यह दुन्या की शक्ल वाला दुश्मन क़ाबू में आ जाय। दुन्या कब फ़त्ह करने में है? जब मन पर क़ाबू हो जाय, मुसावात में दाख़िल हासिल हो जाय (क्योंकि मन का फ़ैलाव ही दुन्या है।) जब वह मा'बूद में ज़म हो जाता है, उस वक़्त मा'बूद को जानने वाले की पहचान क्या है? उसकी बूदो-बाश पर रोशनी डालते हैं–

न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम्।
स्थिरबुद्धिरसम्मूढो ब्रह्मविद्ब्रह्मणि स्थितः।।२०।।

उसका कोई पसन्दीद, नापसन्दीदः होता नहीं। लिहाज़ा जिसे लोग पसन्दीदः समझते हैं, उसे हासिल करके वह ख़ुश नहीं होता और जिसे लोग नापसन्दीदः समझते है, (जैसी दीनदार लोग पहचान बताते हैं), उसे हासिल कर वह बेक़रार नहीं होता। ऐसा क़ाइमुल अक़्ल **'असम्मूढ'**– शक़ो-शुब्हः से खाली **'ब्रह्मविद्'**– मा'बूद से मुज़य्यन, मा'बूद को जानने वाला, **'ब्रह्मणि स्थितः'**– आ'ला ब्रह्म में हमेशः क़ाइम है।

बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनि यत्सुखम्।
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते।।२१।।

बाहरी दुन्या के मौजूआत में दिलचस्पी न रखने वाला इंसान बातिन में मौजूद जो सुकून है, उस सुकून को हासिल करता है। वह इंसान **'ब्रह्मयोगयुक्तात्मा'**– आ'ला मा'बूद रूहे मुत्लक़ के साथ मुनासबत क़ाइम करने वाली रूहवाला है, लिहाज़ा वह लाफ़ानी मसर्रत का एहसास करता है, जिस मसर्रत की कभी फ़ना नहीं होती। इस मसर्रत का इस्ते'माल कौन कर सकता है? जो बाहर के मौजूआत के तअय्युशात से दिलचस्पी नहीं रखता है। तो क्या तअय्युशात ख़लल पैदा करने वाले हैं? बन्दःपर्वर श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं–

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः।।२२।।

सिर्फ़ ख़ाल ही नहीं, सभी हवास लम्स करते हैं। देखना आँख का लम्स है, सुनना कान का लम्स है। इसी तरह हवास और उनके मौजूआत के तअल्लुक़ से पैदा होने वाले सारे तअय्युशात अगरचे लुत्फ़ उठाने में अच्छे लगते हैं; लेकिन बिला शको-शुब्हः वे सब **'दुःखयोनयः'**- तक्लीफ़देह शक्लों (योनियों) के ही वजूहात हैं। ये तअय्युशात ही शक्लों (योनियों) के वजूहात हैं। इतना ही नहीं, वे तअय्युशात पैदा होने और मिटने वाले हैं, फ़ानी हैं। लिहाज़ा कौन्तेय! साहिबेइर्फ़ान इंसान उनमें नहीं फँसते। हवास के इन अस्नात में रहता क्या है? ख़्वाहिश और ग़ुस्सः, हसद व अदवत। इस पर श्रीकृष्ण कहते हैं-

शक्नोतीहैव यः सोढुं प्राक्शरीरविमोक्षणात्।
कामक्रोधोद्भवं वेगं स युक्तः स सुखी नरः।।२३।।

लिहाज़ा जो इंसान जिस्म के फ़ना होने से पहले ही ख़्वाहिश और ग़ुस्सः से पैदा होने वाली रफ़्तार को बरदाश्त करने में (मिटा देने में) क़ादिर है, वह इंसान नर (न रमण करने वाला मुलव्वस न रहने वाला) है। वही इस दुन्या में जोग से मुज़य्यन और वही पुरसुकून है। जिसके पीछे तक्लीफ़ नहीं है, उस सुकून में या'नी रूहेमुत्लक़ में क़ाइम रहने वाला है। ज़िंदगी रहते ही इसके हुसूल का तरीक़ः है, मौत होने पर नहीं। संत कबीर ने इसी का खुलासः किया- **'अवधू! जीवत में कर आसा।'** तो क्या मौत के बा'द नजात नहीं होती? वे कहते हैं- **'मुए मुक्ति गुरु कहे स्वार्थी, झूठा दे विश्वासा।'** यही जोग के मालिक श्रीकृष्ण का क़ौल है कि जिस्म रहते, मौत से पहले ही जो ख़्वाहिश, ग़ुस्सः की रफ़्तार को ख़त्म कर देने में क़ादिर हो गया, वही इंसान इस दुन्या में जोगी है, वही पुरसुकून है। ख़्वाहिश, ग़ुस्सः, बाहरी लम्स ही दुश्मन है। इन पर फ़त्ह हासिल करें। इसी इंसान की पहचान फिर बता रहे हैं-

योऽन्तःसुखोऽन्तरारामस्तथान्तर्ज्योतिरेव यः।
स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति।।२४।।

जो इंसान बातिनी तौर पर पुरसुकून है, **'अन्तरारामः'**- जो बातिनी तौर से मुत्मइन है और जिनका बातिन मुनव्वर (बदीही दीदार वाला) है, वही जोगी **'ब्रह्मभूत'**- मा'बूद के साथ एक होकर **'ब्रह्मनिर्वाणम्'**- ग़ैरमर्ई मा'बूद, दाइमी रब में ज़म होता है। या'नी पहले उयूब (ख़्वाहिश, ग़ुस्सः) का ख़ातिमः फिर दीदार, इसके बा'द दाख़िलाः।

आगे गौर फ़र्मायें-

लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षीणकल्मषाः।
छिन्नद्वैधा यतात्मानः सर्वभूतहिते रताः।।२५।।

रूहे मुत्लक़ का बंदीही दीदार करके जिनका गुनाह ख़त्म हो गया है, जिनके कशमकश वाले हालात ख़त्म हो गये हैं, तमाम जानदारों के रिफ़ाह में जो लगे हुए हैं (हुसूल वाले ही ऐसा कर सकते हैं। जो ख़ुद गड्ढे में पड़ा है, दूसरों को क्या बाहर निकालेगा? लिहाज़ा रह्म दिल अज़ीम इंसान की कुद्रती सिफ़त हो जाती है) और **'यतात्मानः'-** ज़ब्ते नफ़्स के हामिल रब को जानने वाले इंसान पुरसुकून आ'ला मा'बूद को हासिल करते हैं। उसी अज़ीम इंसान की हालत पर फिर रोशनी डालते हैं-

कामक्रोधवियुक्तानां यतीनां यतचेतसाम्।
अभितो ब्रह्मनिर्वाणं वर्तते विदितात्मनाम्।।२६।।

ख़्वाहिश और गुस्सः से आरी, तबीअ़त पर क़ाबू रखने वाले, रूहे मुत्लक़ का बदीही दीदार करने वाले अह्ले इल्म इंसानों के लिए हर जानिब से पुरसुकून आ'ला मा'बूद ही हासिल है। बार-बार जोग के मालिक श्रीकृष्ण उस इंसान की बूदोबाश पर ज़ोर दे रहे हैं, जिससे तर्ग़ीब मिले। सवाल तक़रीबन पूरा हुआ। अब वे फिर पुरज़ोर तरीक़े से कहते हैं कि इस मक़ाम को हासिल करने का ज़रूरी हिस्सः, 'तनफ़्फ़ुस का ग़ौरो-फ़िक्र' है। यग के तरीक़-ए-कार में जान का रिवाह में हवन, रिवाह का जान में हवन, जान-रिवाह दोनों के रफ़्तार की बंदिश उन्होंने बताया था। उसी को समझा रहे हैं-

स्पर्शान्कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरे भ्रुवोः।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ।।२७।।
यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः ।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः।।२८।।

अर्जुन! बाहर के मौजूआत, मनाज़िर का ग़ौरोफ़िक्र न करते हुए, उन्हें तर्ककर, आँखों की नज़र को अब्रू के बीच में साकिन करके ['भ्रुवोः अन्तरे' का ऐसा मत्लब नहीं कि आँखों के बीच या अब्रू के बीच कहीं देखने के ख़याल से नज़र जमायें। अब्रू के बीच का ख़ालिस मा'ना सिर्फ़ इतना है कि सीधे बैठने पर नज़र अब्रू के ठीक बीच से सीधे सामने पड़े। दाहिने बाँए, इधर-उधर चक-पक न देखें। नाक की

नोक पर सीधी नज़र रखते हुए (कहीं नाक ही न देखने लगें)] नाक के अन्दर हरकत करने वाले जान और रियाह दोनों को एक बराबर करके या'नी नज़र तो वहाँ क़ाइम करें और सुरत को साँस में लगा दें कि कब साँस भीतर गयी? कितनी देर तक भीतर रुकी? तकरीबन आधा सेकेण्ड रुकती है, कोशिश करके न रोकें। कब साँस बाहर निकली? कितनी देर तक बाहर रही? कहने की ज़रूरत नहीं कि साँस में उठने वाली नाम की आवाज़ सुनाई पड़ती रहेगी। इस तरह तनफ़्फ़ुस पर सुरत साकिन हो जायेगी, तो धीरे-धीरे साँस अटल, साकिन होकर ठहर जायेगी, मुसावी हो जायेगी। न भीतर कोई इरादः पैदा होगा और न बाहरी इरादे अन्दर टकराव कर पायेंगे। बाहर के तअय्युशात की फ़िक्र तो बाहर ही तर्क कर दी गई थी, भीतर भी इरादे नहीं बेदार होंगे। सुरत एक़दम साकिन हो जाती है, तेल के धार की तरह। तेल की धारा पानी की तरह टप-टप नहीं गिरती, जब तक गिरेगी, धार की ही तरह गिरेगी। इसी तरह जान और रियाह के रफ़्तार बिल्कुल मुसावी साकिन करके हवास, मन और अक़्ल पर जिसने क़ाबू पा लिया है, ख़्वाहिश, ख़ौफ और ग़ुस्सः से आरी, ग़ौरो-फ़िक्र की आख़िरी हद तक पहुँचा हुआ, नजात का हामिल, सूफ़ी हमेशः (मुक्त) आज़ाद ही है या'नी नजात वाला ही है। नजात पाकर वह कहाँ जाता है?, क्या हासिल करता है?-इस पर कहते हैं-

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम्।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति।।२९।।

वह नजातयाफ़्तः इंसान मुझे यग और रियाज़त का सारिफ़ तमाम अवालिम का रब्बुलअर्बाब, सारे जानदारों का बेग़रज़ ख़ैरख़्वाह (हमदर्द)- ऐसा मुजस्सम जानकर पूरी तरह से सुकून हासिल कर लेता है। श्रीकृष्ण कहते हैं कि उस इंसान के तनफ़्फ़ुस के यग और रियाज़त का सारिफ़ में हूँ। यग और रियाज़त आखिर में जिसमें ज़म होते हैं, वह मैं हूँ। वह मुझे हासिल होता है। यग के आख़िर में जिसका नाम सुकून है, वह मेरी ही हक़ीक़ी शक्ल है। वह नजातयाफ़्तः इंसान मुझे जानता है और जानते ही मेरे मक़ाम पर पहुँच जाता है। इसी का नाम सुकून है। जैसे मैं रब्बुलअर्बाब हूँ, वैसे ही वह भी है।

मग़्ज़े सुख़न :-

इस बाब के शुरू में अर्जुन ने सवाल किया था कि, कभी तो आप बेग़रज़ अमली जोग की ता'रीफ़ करते हैं और कभी आप तर्के दुन्या के रास्ते से अमल

करने की ता'रीफ़ करते हैं। लिहाज़ा दोनों में से एक को, जिसे आपने तय कर रखा हो, आ'ला इफ़ादी हो, उसे बताइये। श्रीकृष्ण ने बताया- अर्जुन! आ'ला इफ़ादः तो दोनों में है। दोनों में वही मुअय्यनः यग का अमल ही किया जाता है; फिर भी बेग़रज़ अमली जोग ख़ुसूसी है। इसे किये बग़ैर तर्के दुन्या (मुबारक-नामुबारक आ'माल का ख़ातिमः) नहीं होता। तर्के दुन्या रास्तः नहीं, मंज़िल का नाम है। जोग से मुज़य्यन ही तारीकुद्दुन्या है। जोग के हामिल इंसान की पहचान बतायी कि वही रब है। वह न करता है, न कुछ कराता है; बल्कि ख़स्लत में कुद्रत के दबाव के मुताबिक़ लोग मश्गूल हैं। जो मुजस्सम मुझे जान लेता है, वही आलिम है, वही पण्डित है। यग के समरः में लोग मुझे जानते हैं। तनफ़्फ़ुस का विर्द और यग व रियाज़त जिसमें तह्लील होते हैं, वह में ही हूँ। यग के समर की शक्ल में मुझे जानकर वे जिस सुकून को हासिल करते है, वह भी मैं ही हूँ या'नी श्रीकृष्ण जैसी अज़ीम इंसान जैसी शक्ल उस हासिल करने वाले को भी मिलती है। वह भी रब्बुलअर्बाब, बशक्ले रूह हो जाता है, उस रूहे मुत्लक़ के साथ यकसाँ हो जाता है (यकसाँ होने में जनम चाहे जितने लगें)। इस बाब में अयाँ कर दिया कि यग और रियाज़तों का सारिफ़ अज़ीम इंसानों के भी अन्दर रहने वाली ताक़त रब्बुलअर्बाब (महेश्वर) है, लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'यज्ञभोक्तामहापुरुषस्थमहेश्वरः' नाम पञ्चमोऽध्यायः।।५।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'यज्ञभोक्ता महापुरुषस्थ महेश्वर' (सारिफ़-ए-यग रब्बुल अर्बाब) नाम का पाँचवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'यज्ञभोक्तामहापुरुषस्थमहेश्वरः' नाम पञ्चमोऽध्यायः।।५।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'यज्ञभोक्ता महापुरुषस्थ महेश्वर' (सारिफ़-ए-यग रब्बुल अर्बाब) नाम का पाँचवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ षष्ठोऽध्यायः।।
(छठा बाब)

दुन्या में दीन के नाम पर रस्मो-रिवाज, इबादत के तौर-तरीक़े, फ़िक्रों की इफ़्रात होने पर बद रिवाजों का ख़ातिमः करके एक मा'बूद को क़ाइम करने और उसके हुसूल के तरीक़-ए-कार को हमवार करने के लिए किसी अज़ीम इंसान का अवतार होता है। आ'माल को छोड़कर बैठ जाने और आलिम कहलाने की क़दामत श्रीकृष्ण के दौर में बेहदतारी थी। लिहाज़ा इस बाब के शुरू में ही जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने इस सवाल को चौथी बार ख़ुद खड़ा किया कि इल्मी जोग और बेग़रज़ अमली जोग दोनों के मुताबिक़ अमल करना ही होगा।

बाब दो में उन्होंने कहा था- अर्जुन! क्षत्री के लिए जंग से बढ़कर इफ़ादी कोई रास्तः नहीं है। इस जंग में हारोगे, तो भी देवता का मर्तबः है और फ़त्हयाब होने पर हुजूरे आ'ला का मक़ाम ही है- ऐसा समझकर जंग कर। अर्जुन! यह अक़्ल तेरे लिए इल्मी जोग के मुतअल्लिक़ बतायी गयी। कौन-सी अक़्ल? यही कि जंग कर। इल्मी जोग ऐसा नहीं है कि हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहें। इल्मी जोग में सिर्फ़ अपने नफ़ा-नुक़्सान का ख़ुद फ़ैसलः करके, अपनी ताक़त समझकर अमल में लगना है, जबकि मुहर्रिक अज़ीम इंसान ही है। इल्मी जोग में जंग करनी लाज़िमी है।

बाब तीन में अर्जुन ने सवाल किया कि बन्दःपर्वर बेग़रज़ अमली जोग के मुक़ाबलः इल्मी जोग आपको अफ़्ज़ल और क़ाबिले ता'ज़ीम है, तो मुझे ख़ौफ़नाक आ'माल में क्यों लगाते हैं? अर्जुन को बेग़रज़ अमली जोग मुश्किल तलब महसूस हुआ। इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा कि दोनों अक़ीदतों का बयान मेरे ज़रीअः किया गया है; लेकिन किसी भी रास्ते के मुताबिक़ अमल को तर्ककर चलने का उसूल नहीं है। न तो ऐसा ही है कि अमल को न शुरू करने से कोई बेग़रज़ वाली आ'ला कामयाबी को हासिल कर ले और न शुरू किये हुए अमल को तर्ककर देने से कोई उस आ'ला कामयाबी को हासिल करता है। दोनों रास्तों में मुअय्यनः अमल यग के तरीक़-ए-कार पर अमलपैरा होना ही पड़ेगा।

अब अर्जुन ने अच्छी तरह समझ लिया कि इल्मी जोग अच्छा लगे या बेग़रज़ अमली जोग, दोनों नज़रीयात में अमल करना ही है; फिर भी पाँचवें बाब में उसने सवाल किया कि- समरः के नजरीयः से कौन अफ़्ज़ल है? कौन आसान है? श्रीकृष्ण ने कहा- अर्जुन! दोनों ही आ'ला शरफ़ को अता करने वाले हैं। एक ही मक़ाम पर दोनों पहुँचाते हैं फिर भी सांख्य (इल्मी जोग) की बनिस्वत बेग़रज़ अमली जोग अफ़्ज़ल है; क्योंकि बेग़रज़ अमल का बरताव किये बग़ैर कोई कामिल नहीं हो सकता। दोनों में अमल एक ही है। लिहाज़ा साफ़ ज़ाहिर है कि वह मुअय्यनः अमल किये बग़ैर कोई कामिल नहीं हो सकता और न कोई जोगी ही हो सकता है। सिर्फ़ इस राह पर चलने वाले राहगीरों के दो नज़रीयात हैं, जिन्हें पीछे बताया गया है।

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।
स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः।।१।।

श्रीकृष्ण बोले- अर्जुन! अमल के समरः की पनाह से आरी होकर या'नी अमल करते वक़्त किसी तरह की ख़्वाहिश न रखते हुए जो **'कार्यम् कर्म'**- करने लाइक़ ख़ास तरीक़-ए-कार को अमल में लाता है, वही कामिल है, वही जोगी है। सिर्फ़ आग को तर्क करने वाला और सिर्फ़ अमल को तर्क करने वाला न कामिल है, न जोगी। आ'माल बहुत से हैं। उनमें से **'कार्यम् कर्म'**- करने के क़ाबिल अमल (नियत कर्म) मुअय्यनः अमल **'नियतकर्म'**- मुअय्यन किया हुआ कोई तरीक़-ए-ख़ास है। वह है यग का तरीक़-ए-कार जिसका ख़ालिस मत्लब है- इबादत, जो क़ाबिले इबादत मा'बूद में दाख़िल दिला देने वाला तरीक़-ए-ख़ास है। उसको अमली शक्ल देना अमल है। जो उस अमल को करता है, वही कामिल है, वही जोगी होता है। सिर्फ़ आग को तर्क करने वाला कि 'हम आग नहीं छूते' या अमल तर्क करने वाला कि 'मेरे लिए आ'माल हैं ही नहीं, मैं तो ख़ुदशनास हूँ' सिर्फ़ ऐसा कहे और अमल की शुरुआत ही न करे, अमल करने लाइक तरीक़-ए-ख़ास पर अमलपैरा न हो, तो वह न कामिल है, न जोगी। इस पर और देखें-

यं संन्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव।
न ह्यसंन्यस्तसङ्कल्पो योगी भवति कश्चन।।२।।

अर्जुन! जिसे 'तर्के दुन्या' (संन्यास) ऐसा कहते हैं, उसी को तू जोग जान, क्योंकि इरादों का ईसार किये बग़ैर कोई भी इंसान जोगी नहीं होता या'नी ख़्वाहिशात

का ईसार दोनों ही रास्तों पर चलने वालों के लिए ज़रूरी है। तब तो बहुत आसान है कि कह दें कि हम इरादः नहीं करते और हो गये जोगी और राहिब। श्रीकृष्ण कहते हैं, ऐसा बिल्कुल नहीं है-

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते।
योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते।।३।।

जोग पर कमरबस्तः होने की ख़्वाहिश वाले मुफ़क्क़िर इंसान के लिए जोग के हुसूल में अमल करना ही एक वज्ह है और जोग का अज़्म करते-करते जब वह समरः देने की हालत में आ जाय, उस जोग की कमरबस्तगी में **'शमः कारणम् उच्यते'**- तमाम इरादों की कमी एक वज्ह है। इससे पहले इरादे पीछा नहीं छोड़ते, और-

यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषज्जते।
सर्वसङ्कल्पसंन्यासी योगारूढस्तदोच्यते।।४।।

जिस दौर में इंसान न तो हवास के तअय्युशात में राग़िब होता है और न आ'माल में ही राग़िब है, (जोग की तक्मिलः हालात में पहुँच जाने पर आगे अमल करके तलाश किसकी करें? लिहाज़ा मुअय्यनः अमल-इबादत की ज़रूरत नहीं रह जाती। इसी वास्ते वह आ'माल में भी राग़िब नहीं है), उस दौर में **'सर्वसंकल्प संन्यासी'**- तमाम इरादों की कमी है। वही तर्केदुन्या है, वही जोग की कमरबस्तगी है। रास्ते में तर्के दुन्या नाम की कोई चीज़ नहीं है। इस जोग की कमरबस्तगी से फ़ाइदः क्या है?

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।।५।।

अर्जुन इंसान को चाहिए कि अपने ज़रीअः अपनी नजात हासिल करे, अपनी रूह को जहन्नुम रसीद न करे, क्योंकि यह ज़ीरूह ख़ुद ही अपनी दोस्त और दुश्मन भी है। कब यह दुश्मन होती है और कब दोस्त?-इस पर कहते हैं-

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्।।६।।

जिस ज़ीरूह के ज़रीअः मन और हवास के साथ जिस्म पर फ़त्ह हासिल कर ली गई है, उसके लिए उसी की ज़ीरूह दोस्त है और जिसके ज़रीअः मन और हवास

के साथ जिस्म पर फ़त्ह हासिल नहीं की गई है, उसके लिए वह ख़ुद दुश्मनी का सुलूक करती है।

इन दो श्लोकों में श्रीकृष्ण एक ही बात कहते हैं कि अपने ज़रीअः अपने रूह की नजात करें, उसे जहन्नुम में न ठेलें; क्योंकि रूह ही दोस्त है। काइनात में न दूसरा कोई दुश्मन है न दोस्त। किस तरह? जिसके ज़रीअः मन के साथ हवास पर क़ाबू पाया गया है, उसके लिए उसी की रूह दोस्त बनकर दोस्ती का सुलूक करती है, आ'ला इफ़ादी होती है और जिसके ज़रीअः मन के साथ हवास पर क़ाबू नहीं पाया गया है, उसके लिए उसी की रूह दुश्मन बनकर दुश्मनी का सुलूक करती है, लामह्दूद शक्लो (योनियों) और तक़्लीफ़ों की जानिब ले जाती है। अमूमन लोग कहते है- 'मैं तो रूह हूँ'। गीता में लिखा है- 'न इसे अस्लिहः काट सकता है, न आग जला सकती है, न हवा सुखा सकती है। यह अबदी है, लाफ़ानी है, न बदलने वाली है, दाइमी है और वह रूह मुझमें है ही।' वे गीता की इन सुतूर पर ख़याल नहीं करते कि वह जहन्नुम में भी जाती है। रूह को नजात भी मिलती है, जिसके लिए **'कार्यम् कर्म'**- करने लाइक़ ख़ास तरीक़ः से अमल करके ही हुसूल बताया गया है। अब मुनासबत वाली रूह की पहचान देखें-

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः।
शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः।।७।।

सर्दी-गर्मी, आराम-तक्लीफ़ और इज़्ज़त-ज़िल्लत में जिसके बातिन के ख़साइल अच्छी तरह ख़ामोश हैं, ऐसे आज़ाद रूह वाले इंसान में रूहे मुत्लक़ हमेशः मौजूद है, कभी जुदा नहीं होता। **'जितात्मा'** या'नी जिसने मन के साथ हवास को क़ाबू में कर लिया है, ख़स्लत सुकूनेकुल्ली में रवाँ हो गई है। (यही रूह के नजात की हालत है।) आगे कहते हैं-

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः।
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः।।८।।

जिसका बातिन इल्म और ख़ुसूसी इल्म से आसूदः है, जिसकी हालत अटल, क़ाइम और बेऐब है, जिसने हवास पर ख़ास तौर से क़ाबू पा लिया है, जिसकी नज़र में मिट्टी, पत्थर, सोना एक जैसा है- ऐसा जोगी- 'युक्त' (मुज़ैयन) कहा जाता है। 'युक्त' का मतलब है- जोग से मुजैयन। यह जोग का आख़िरी अंजाम है, जिसे जोग के मालिक पाँचवें बाब में श्लोक सात से बारह तक बयान कर आये हैं। उंसुरे आ'ला

मा'बूद का बंदीही दीदार और उसके साथ होने वाली जानकारी का नाम इल्म है। ज़रा सी भी मत्लूब से दूरी है, जानने की ख़्वाहिश बनी है, तब तक वह जाहिल है। वह मुहर्रिक कैसे हर जगह मौजूद है? कैसे तर्ग़ीब देता है? कैसे तमाम अर्वाह की एक साथ रहनुमाई करता है? कैसे वह माज़ी, मुस्तक़्बिल और हाल का इल्म रखने वाला है? उस मुहर्रिक मा'बूद के तरीक़-ए-कार का इल्म ही ख़ुसूसी इल्म (विज्ञान) है। जिस दिन से दिल में मा'बूद का ज़ुहूर हो जाता है, उसी दिन से वह हिदायत देने लगता है, लेकिन शुरू में रियाज़तकश समझ नहीं पाता। दौरे इतिहा में ही जोगी उनके बातिनी तरीक़-ए-कार को पूरी तरह समझ पाता है। यही समझ ख़ुसूसी इल्म है। जोग में आमादः या जोग के हामिल इंसान का बातिन, इल्म और ख़ुसूसी इल्म से मुतमईन रहता है। इसी तरह जोग से मुज़ैयन इंसान की हालत की वज़ाहत करते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण फिर कहते हैं-

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते।।९।।

हुसूल के बा'द अज़ीम इंसान यकबीन और हमसर होता है। जैसे गुजश्तः श्लोक में उन्होंने बताया कि, जो मुकम्मल आलिम या पंडित है, वह इल्म और इन्किसारी रखने वाला अज़ीम इंसान बर्हमन में, चाण्डाल में, गाय, कुत्ता, हाथी में मुसावी नज़र वाला होता है- उसी का तक्मिलः यह श्लोक है। वह दिल से मदद करने वाले मेह्बान, दोस्तों, दुश्मनों, ग़ैरजानिबदारों कीनावरों, क़राबतदारों, दीनदारों और गुनाहगारों में भी मुसाबी नज़र वाला जोग का हामिल इंसान बेहद अफ़्ज़ल है। वह उनके कामों पर नज़र नहीं डालता, बल्कि उनके भीतर रूह की हरकत पर ही उसकी नज़र पड़ती है। इन सबमें वह सिर्फ़ इतना फ़र्क़ देखता है कि कोई कुछ नीचे के ज़ीने पर खड़ा है, तो कोई पाकीज़गी के करीब, लेकिन वह सलाहीयत सब में है। यहाँ जोग के हामिल की पहचान फिर दुहराई गयी।

कोई जोग का हामिल कैसे बनता है? वह कैसे यग करता है? यग की जगह कैसी हो? आसनी कैसी हो? उस वक़्त कैसे बैठा जाय? कारकुन के ज़रीअः अपनाये जाने वाले उसूल, खान-पान और तफ़्रीह, सोने-जागने का एहतियात और अमल पर कैसी कोशिश हो? वग़ैरः नुक़्तों पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने अगले पाँच श्लोकों में रोशनी डाली है, जिससे आप भी उस यग को अंजाम दे सकें।

बाब तीन में उन्होंने यंग का नाम लिया और बताया कि यग का तरीक़-ए-कार

ही वह मुअय्यनः अमल है। बाब चार में उन्होंने यग की शक्ल का तफ़्सील के साथ बयान किया। जिसमें जान का रियाह में हवन, रियाह का जान में हवन, जान और रियाह की हरकत को रोककर मन पर क़ाबू वग़ैरः किया जाता है। सब मिलाकर यग का ख़ालिस मत्लब है- इबादत और उस क़ाबिले इबादत मा'बूद तक की दूरी तय कराने वाला तरीक़-ए-कार, जिस पर पाँचवें बाब में भी कहा। लेकिन उसके लिए आसनी, ज़मीन, अमल करने का तरीक़ः वग़ैरः का बयान बाक़ी था। उसी पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण यहाँ रोशनी डालते हैं-

योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः।
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः।।१०।।

तबीअ़त पर क़ाबू करने में लगा हुआ जोगी मन, हवास और जिस्म को क़ाबू में रखकर, हवस और ख़्वाहिशात से मुर्बरा होकर, तन्हाई में लेटी तबीअ़त को (रूह का इल्म कराने वाली) जोग के अमल में लगाये। उसके लिए जगह कैसी हो? आसनी कैसी हो?-

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम्।।११।।

पाक ज़मीन पर कुश की चटाई, हिरन, शेर, बाघ वग़ैरः की खाल, कपड़ा या इनसे भी बेहतर (रेशमी, ऊनी, तख़्त कुछ भी) बिछाकर अपने आसन को न ज़ियादः ऊँचा न नीचा, ग़ैरमुताहर्रिक बनावें। पाक ज़मीन का मत्लब उसे झाड़ने-बुहारने, सफ़ाई करने से है। ज़मीन पर कुछ बिछा लेना चाहिए- चाहे हिरन की ख़ाल हो या चटाई ख़्वाह कोई भी साफ़ कपड़ा, तख़्त वग़ैरः जो भी मिल जाय, कोई एक चीज बिछा लेनी चाहिए। आसन हिलने-डुलने वाला न हो। न ज़मीन से बहुत ऊँचा हो और न बहुत नीचा हो। क़ाबिले एहतिराम महाराज जी तक़रीबन पाँच इंच ऊँचे आसन पर बैठते थे। एक बार अक़ीदतमन्दों ने तक़रीबन एक फुट ऊँचा संगमरमर का एक तख़्त मँगा दिया। महाराज जी एक दिन तो बैठे फिर बोले- ''नहीं हो, बहुत ऊँचा हो गया। ऊँचे नहीं बैठना चाहिए, साधू को गुरूर हो जाया करता है। नीचे भी नहीं बैठना चाहिए। हक़ारत पैदा होती है, ख़ुद से नफ़्रत होने लगती है।'' बस, उसको उठवाया और जंगल में एक बाग़ था, वहाँ रखवा दिया। वहाँ न कभी महाराज जाते थे और न अब भी कोई जाता है। यह थी उन अज़ीम इंसान की अमली तर्बियत। इसी तरह रियाज़तकश के लिए भी बहुत ऊँचा आसन नहीं होना चाहिए, नहीं तो यादे-इलाही

की तमील बा'द में होगी, गुरूर पहले चढ़ बैठेगा। इसके बा'द,

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये।।१२।।

उस आसन पर बैठकर (बैठकर ही तसव्वुर करने का उसूल है) मन को यकसुई करके, तबीअ़त और हवास के मुतहर्रिकात को क़ाबू में रखते हुए बातिन की तहारत के लिए जोग की मश्क़ः करें। अब बैठने का तरीक़ः बताते हैं-

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः।
सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन्।।१३।।

जिस्म, गर्दन और सर को सीधा, अटल, साकिन करके (जैसे कोई पटरी खड़ी कर दी गयी हो) इस तरह सीधा, मुस्तह्कम होकर बैठ जाय और अपनी नाक के अगले हिस्से को देखकर (नाक की नोंक देखते रहने की हिदायत नहीं है बल्कि सीधे बैठने पर नाक के सामने जहाँ नज़र पड़ती है, वहाँ नज़र रहे। दाहिने-बायें देखते रहने की शोख़ी न रहे) दूसरी सिम्तों को न देखता हुआ, साकिन होकर बैठे, और-

प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः।।१४।।

अज़्मे रहबानित (ब्रह्मचर्यव्रत) में क़ाइम होकर (आमतौर से लोग कहते हैं कि उज़्चेतनासुल (जननेंद्रिय) की एहतियात रहबानियत है, लेकिन अज़ीम इंसानों का तज्रिबः है कि मन से मौजूआत की याद करके, आँखों से वैसे मंज़र देखकर, ख़ाल से लम्स कर कानों से शह्वतअफ़्ज़ा के अल्फ़ाज़ सुनकर उज़्चेतनासुल की एहतियात मुम्किन नहीं है। ब्रह्मचारी का सहीह मा'ना है- **'ब्रह्म आचरति स ब्रह्मचारी'**- ज़ातेमुत्लक़ का अमल है मुअय्यनः अमल, यग का तरीक़-ए-कार, जिसे करने वाले **'यान्ति ब्रह्म सनातनम्'**-अबदी मा'बूद में दाख़िलः हासिलः कर लेते हैं। इसे करते वक़्त **'स्पर्शान्कृत्वा बहिर्बाह्यान्'**- ख़ारिज़ी लम्स, मन और हवास के लम्स बाहर ही तर्ककर तबीअ़त को मा'बूद के ग़ौरो-फ़िक्र में तनफ़्फ़ुस में तसव्वुर में लगाना है। मन मा'बूद में लगा है, तो बाहरी चीज़ों को याद कौन करें? अगर बाहरी चीज़ें याद में आती हैं, तो अभी मन लगा कहाँ? उयूब जिस्म में नहीं, मन की मौज में रहते हैं। मन मा'बूद के अमल में लगा है, तो उज़्चे-तनासुल पर बन्दिश ही नहीं, तमाम हवास पर बंदिश तक क़ुद्रतन हो जाती है। लिहाज़ा मा'बूद के अमल में क़ाइम रहक़र बेख़ौफ और अच्छी तरह

पुरसुकून बातिन वाला, मन को क़ाबू में रखते हुए, मुझमें लगी हुई तबीअ़त से मुज़ैयन, मेरा हामिल होकर क़ाइम हो। ऐसा करने का समरः क्या होगा?

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः।
शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति।।१५।।

इस तरह ख़ुद-ब-ख़ुद मुसल्सल उसी ग़ौरो फ़िक्र में मश्गूल रखता हुआ, मो'तदिल जोगी मेरे अन्दर मौजूद आख़िरी अंजाम वाले आ'ला सुकून को हासिल करता है। लिहाज़ा ख़ुद को मुसल्सल अमल में लगायें। यहाँ यह सवाल तक़रीबन मुकम्मल ही है। अगले दो श्लोकों में वे बताते हैं कि आ'ला मसर्रत देने वाले सुकून के लिए जिस्मानी एहतियात, मुनासिब ख़ुराक, तफ़्रीह भी जरूरी है-

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः।
न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन।।१६।।

अर्जुन! यह जोग न तो ज़ियादः खाने वाले का कामयाब होता है और न बिल्कुल न खाने वाले का कामयाब होता है, न बेइंतिहा सोने वाला का और न बेइंतिहा जागने वाले का ही कामयाब होता है। तब किसका कामयाब होता है?

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।१७।।

तक्लीफ़ों का ख़ातिमः करने वाला यह जोग मुनासिब खान-पान, तफ़्रीह, आ'माल में मुनासिब कोशिश और मो'तदिल सोने और जागने वाले का ही पूरा होता है। ज़ियादः ख़ुराक लेने से काहिली-नींद और मद्होशी घेरेगी- तब रियाज़त नहीं होगी। खाना छोड़ देने से हवास कमज़ोर हो जायेंगे, मुस्तह्कम साकिन बैठने की ताक़त नहीं रहेगी। क़ाबिले एहतिराम महाराज जी कहते थे कि ख़ुराक से डेढ़-दो रोटी कम खानी चाहिए। तफ़्रीह या'नी वसीलः के मुताबिक़ घूमना-फिरना, सैर-सपाटा, कुछ मेहनत भी करते रहना चाहिए; कोई काम ढूँढ़ लेना चाहिए वर्नः खून का बहाव कमज़ोर पड़ जायेगा, बीमारियाँ घेर लेंगी। उम्र, सोने-जागने, खाने-पीने और रियाज़ से घटती-बढ़ती है। 'महाराज जी' कहा करते थे- ''जोगी को चार घंटे सोना चाहिए और मुसल्सल ग़ौरोफ़िक्र में लगे रहना चाहिए। बज़िद होकर न सोने वाले जल्द पागल हो जाते हैं।'' आ'माल में मुनासिब कोशिश भी हो या'नी मुअय्यनः अमल इबादत के मुताबिक़ मुसल्सल कोशाँ हो। ख़ारिज़ी मौजूआत की याद न कर हमेशः उसी मा'बूद में लगे रहने वाले का ही जोग कामयाब होता है; साथ ही-

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते।
निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा।।१८।।

इस तरह जोग की मश्क़ से ख़ास तौर पर क़ाबू में की हुई तबीअ़त जिस वक़्त रूहेमुत्लक़ में अच्छी तरह ज़म हो जाती है, तह्लील-सी हो जाती है, उस दौर में तमाम ख़्वाहिशात से मुर्बरा हुआ इंसान जोग से मुज़ैयन कहा जाता है। अब ख़ासतौर से क़ाबू में की हुई तबीअ़त के निशानात क्या हैं?

यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता।
योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः।।१९।।

जिस तरह हवा से ख़ाली जगह में रखा हुआ चराग़ मुतज़ल्ज़िल नहीं होता, लौ सीधे ऊपर जाती है, उसमें लर्ज़िश नहीं होती, यही मिसाल रूहे मुल्लक़ के तसव्वुर में डुबे हुए जोगी के ज़रीअः क़ाबू में की गयी उस तबीअ़त की दी गयी है। चराग़ तो मह्ज़ मिसाल है। आजकल चराग़ का रिवाज कम हो गया है। अगरबत्ती ही जलाने पर धुआं सीधे ऊपर जाता है, अगर हवा में तेज़ न हो। यह जोगी के ज़रीअः क़ाबू में की हुई तबीअ़त की मह्ज़ एक मिसाल है। अभी तबीअ़त भले ही क़ाबू में कर ली गयी है, बन्दिश हो गयी है, लेकिन अभी तबीअ़त बाक़ी है। जब बन्दिशशुदा तबीअ़त की भी तह्लील हो जाती है, तब कौन-सी शौकत मिलती है? देखें-

यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया।
यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति।।२०।।

जिस हालत में जोग की मश्क़ से (बिला मश्क़ के कभी बंदिश नहीं होगी, लिहाज़ा जोग की मश्क़ से) बंदिशशुदा तबीअ़त भी ख़ामोश हो जाती है, तह्लील हो जाती है, ख़त्म हो जाती है, उस हालत में **'आत्मना'**- अपनी रूह के ज़रीअः **'आत्मानम्'**- रूहे मुत्लक़ को देखता हुआ, **'आत्मनि एव'**- अपनी रूह में ही मुत्मइन होता है। देखता तो रूहे मुत्लक़ को है लेकिन मुत्मइन अपनी ही रूह से होता है, क्योंकि हुसूल के दौर में तो रूहे मुत्लक़ का बदीही दीदार होता है; लेकिन दूसरे ही लम्हः वह अपनी ही रूह को उन दाइमी, ख़ुदाई शौकतों से आलूदः पाता है। मा'बूद जावेद, अबदी, दाइमी, ग़ैरमर्ई और लाफ़ानी है, तो इधर रूह भी जावेद, अबदी, दाइमी, ग़ैरमर्ई और लाफ़ानी है। है तो, लेकिन बईदुलक़ियास भी है, जब तक तबीअ़त और तबीअ़त की लहर है, तब तक वह आपके इस्ते'माल के लिए नहीं है। तबीअ़त पर क़ाबू और क़ाबूशुदा तबीअ़त के तह्लीली दौर में रूहे मुत्लक़ का बदीही दीदार

होता है और दीदार के ठीक दूसरे पल उन्हीं ख़ुदाई सिफ़ात से मुज़ैयन अपनी ही रूह को पाता है। लिहाज़ा वह अपनी ही रूह में मुत्मइन होता है। यही उसकी हक़ीक़ी शक्ल है, यही आखिरी अंजाम है। इसी का तक्मिलः अगला श्लोक देखें–

सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्।
वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः।।२१।।

और हवास से मावरा, सिर्फ़ मुतबर्रिक लतीफ़ अक़्ल के ज़रीअः क़बूल करने के लाइक़ जो लामह्दूद मसर्रत है, उसको जिस हालत में मह्सूस करता है और जिस हालत में पहुँचा हुआ जोगी मा'बूद की हक़ीक़ी शक्ल को उंसुर से जानकर मुतज़ल्ज़िल नहीं होता, उसी में हमेशः क़याम करता है, और–

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते।।२२।।

आ'ला मा'बूद के हुसूल की तम्सील जिस फ़ाइदः को, इंतिहाई सुकून को हासिल कर उससे ज़ियादः दूसरा कुछ भी फ़ाइदः नहीं मानता और मा'बूद को हासिल करने वाली जिस हालत में पहुँचा हुआ जोगी भारी तक्लीफ़ से भी मुतज़ल्ज़िल नहीं होता, तक्लीफ़ का उसे एहसास भी नहीं होता; क्योंकि कुव्वते एहसास वाली तबीअ़त तो ख़त्म हो गयी, इस तरह–

तं विद्याद्दुःखसंयोगवियोगं योगसञ्ज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा।।२३।।

जो दुन्या के मिलने और बिछड़ने के एहसास से ख़ाली है, उसी का नाम जोग है। जो आ'ला दाख़िली सुकून है, उसके मिलन का नाम जोग है। जिसे उंसुरे आ'ला रूहे मुत्लक़ कहते हैं, उसके मिलन का नाम जोग है। उस जोग को बिना जल्दी किये तबीअ़त से यक़ीनी तौर पर अंजाम देना फ़र्ज़ है। सब्र के साथ लगा रहने वाला ही जोग में कामयाब होता है।

सङ्कल्पप्रभवान्कामांस्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः।
मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः।।२४।।

लिहाज़ा इंसान को चाहिए कि अज़्म से पैदा होने वाली तमाम ख़्वाहिशात को शह्वत और रग़्बत के साथ हमेशः के लिए तर्क कर, मन के ज़रीअः हवास को अच्छी तरह से क़ाबू में करके–

शनैः शनैरुपरमेद्बुद्ध्या धृतिगृहीतया।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किञ्चिदपि चिन्तयेत्।।२५।।

सिल्सिलःवार मश्क़ करता हुआ आ'ला सुकून को हासिल कर ले। तबीअ़त पर क़ाबू और धीरे-धीरे तह्लील हो जाय। उसके बा'द वह सब्र से मुज़ैयन अक़्ल के ज़रीअः मन को रूहेमुत्लक़ में क़ाइम करके दूसरा कुछ भी न सोचे। मुसल्सल तौर पर लगकर हासिल करने का उसूल है; लेकिन शुरू में मन लगता नहीं। इस पर जोग के मालिक कहते हैं-

यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम्।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत्।।२६।।

यह साकिन न रहने वाला शोख़ मन जिन-जिन वजूहात से दुन्यवी माद्दीयात में घूमता-फिरता है, उन-उन से रोककर बार-बार बातिन में ही पाबन्द करे। आमतौर से लोग कहते हैं कि मन जहाँ भी जाता है, जाने दो, दुन्या में ही तो भटकेगा और दुन्या भी उस मा'बूद के ही तह्त है, दुन्या में घूमना-फिरना मा'बूद के बाहर नहीं है; लेकिन श्रीकृष्ण के मुताबिक़ यह ग़लत है। गीता में इस तस्लीमशुदगी की ज़रा भी गुंज़ाइश नहीं है। श्रीकृष्ण का कहना है कि मन जहाँ-जहाँ जाय, जिन वसीलों से जाय, उन्हीं वसीलों से रोककर रूहे मुल्लक़ में ही लगावे। मन की बंदिश मुम्किन है। इस बंदिश का समरः क्या होगा?-

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम्।
उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम्।।२७।।

मुकम्मल तौर पर जिसका मन ख़ामोश है, जो बेगुनाह है, जिसका मलकाते रदीयः ख़ामोश हो गया है, ऐसे मा'बूद में मुत्तहदः जोगी को बेह्तरीन मसर्रत हासिल होती है, जिससे अफ़्ज़ल कुछ भी नहीं है। इसी पर फिर ज़ोर देते हैं-

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते।।२८।।

गुनाह से ख़ाली जोगी इस तरह रूह को मुसल्सल उस रूहे मुत्लक़ में लगाता हुआ आराम के साथ आ'ला मा'बूद रहे मुल्लक़ के हुसूल की लामह्दद मसर्रत का एहसास करता है। वह **'ब्रह्म संस्पर्श'** या'नी मा'बूद के लम्स और उसमें दाख़िलः के साथ लामह्दूद मसर्रत का एहसास करता है। लिहाज़ा यादेइलाही ज़रूरी है। इसी पर

आगे कहते हैं-

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः।।२९।।

जोग के समरः का हामिल रूहवाला, सबमें मुसावात से देखने वाला जोगी रूह को तमाम जानदारों में जारी-ओ-सारी देखता है और सभी जानदारों को रूह के दाइरे में ही रवाँ देखता है। इस तरह देखने से फ़ाइदः क्या है?

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति।।३०।।

जो इंसान तमाम माद्दीयात में मुझ रूहे मुत्लक़ को देखता है, जारी-ओ-सारी देखता है और तमाम माद्दियात को मुझ रूहे मुत्लक़ के ही दाइर-ए-इख़्तियार में देखता है, उसके लिए मैं मख़्फ़ी नहीं होता हूँ और वह मेरे लिए मुख़्फ़ी नहीं होता। यह मुहर्रिक की रू-ब-रू मुलाक़ात है, दोस्तानः ख़याल है, नज़्दीकी नजात है।

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः।
सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते।।३१।।

जो इंसान शिर्क से मुबर्रा मज़्कूरएबाला वहदानियत के तसव्वुर से मुझ रूहे मुत्लक़ मेरे साथ को याद करता है, वह जोगी हर तरह के आ'माल का बरताव करता हुआ मेरे साथ ही जुड़ा है, क्योंकि मुझे छोड़कर उसके लिए कोई बचा भी तो नहीं। उसका तो सब ख़त्म हो गया, लिहाज़ा वह अब उठता-बैठता जो कुछ भी करता है, मेरे इरादः के मुताबिक़ करता है।

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः।।३२।।

ऐ अर्जुन! जो जोगी अपनी ही तरह सारे माद्दीयात में मुसावी देखता है, अपने जैसा देखता है, आराम और तक्लीफ़ में भी मुसावी देखता है, वह जोगी (जिसका फ़र्क़ का ख़याल ख़त्म हो गया है) आ'ला अफ़्ज़ल माना गया है। सवाल पूरा हुआ, इस पर अर्जुन ने कहा-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन।
एतस्याहं न पश्यामि चञ्चलत्वात्स्थितिं स्थिराम्।।३३।।

ऐ मधुसूदन! यह जोग जिसके बारे में आप पहले समझा चुके हैं, जिससे मुसावात की नज़र मिलती है; मन के शोख़ होने की वजह से काफी वक़्त तक इसमें टिकने की हालत में मैं ख़ुद को नहीं देखता।

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्।।३४।।

ऐ श्रीकृष्ण! यह मन बड़ा शोख़ है, तफ़्तीश (प्रमथन) करने वाला है (या'नी दूसरे को मथ डालने वाला), हठी और ताक़तवर है, लिहाज़ा इसे क़ाबू में करना मैं हवा को क़ाबू में करने की तरह बेहद मुश्किलतलब मानता हूँ। तूफ़ानी हवा को और इस मन को क़ाबू में करना बराबर है। इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले)-

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।।३५।।

अज़ीम काम करने के लिए कोशा या'नी बाजू-ए-अज़ीम अर्जुन! बेशक मन शोख़ है, बड़ी मुश्किल से क़ाबू में होने वाला है; लेकिन कौन्तेय! यह रियाज़त और बैराग के ज़रीअः क़ाबू में होता है। जहाँ तबीअ़त को लगाना है, वहीं साकिन करने के लिए बार-बार कोशिश का नाम रियाज़त है और अच्छी तरह देखी-सुनी तअय्युशात की चीज़ों में (दुन्या या जन्नत वग़ैरः के तअय्युशात में) रग़बत या'नी लगाव का तर्क कर देना बैराग है। श्रीकृष्ण कहते हैं कि मन को क़ाबू में करना मुश्किल है; लेकिन रियाज़त और बैराग के ज़रीअः यह क़ाबू में आ जाता है।

असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मतिः।
वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायतः।।३६।।

अर्जुन मन को क़ाबू में न करने वाले इंसान के लिए जोग हासिल करना मुश्किल है; लेकिन अपने क़ाबू में किये गये मन वाले कोशाँ इंसान के लिए जोग आसान है- ऐसा मेरा ख़ुद का ख़याल है। जितना मुश्किल तू मान बैठा है, उतना मुश्किल नहीं है। लिहाज़ा इसे मुश्किल मानकर छोड़ मत दे। कोशिश के साथ लगकर जोग को हासिल कर; क्योंकि मन को क़ाबू में करने पर ही जोग मुम्किन है। इस पर अर्जुन ने सवाल किया-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः।
अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति।।३७।।

जोग करते-करते अगर किसी का मन मुतज़ल्ज़िल हो जाय, अगरचे अभी जोग में उसकी अक़ीदत मौजूद है ही, तो ऐसा इंसान मा'बूद को हासिल न कर किस अंजाम को पहुँचता है?

कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिव नश्यति।
अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रह्मणः पथि।।३८।।

बाजू-ए-अज़ीम श्रीकृष्ण मा'बूद को हासिल करने के रास्तः से भटका हुआ वह फ़िरेफ़्तः इंसान बिखरे हुए बादल की तरह दोनों तरफ़ से बरबाद व तबाह तो नहीं होता? छोटी-सी बदली आस्मान में घिर आये, तो वह न बरस पाती है न लौटकर बादलों से ही मिल पाती है, बल्कि हवा के झोकों से देखते-देखते अमूमन ख़त्म हो जाती है। उसी तरह कमज़ोर कोशिश वाला इंसान, कुछ वक़्त तक रियाज़त करके पीछे हट जाने वाला ख़त्म तो नहीं हो जाता? वह न आप में मक़ाम बना सका और न लज़्ज़ते दुन्या ही उठा पाया। उसका कौन-सा अंजाम होता है?

एतन्मे संशयं कृष्ण छेत्तुमर्हस्यशेषतः।
त्वदन्यः संशयस्यास्य छेत्ता न ह्युपपद्यते।।३९।।

ऐ श्रीकृष्ण! मेरे इस शक को मुकम्मल तौर से ख़त्म करने के लिए आप ही क़ादिर हैं। आपके इलावः दूसरा कोई इस शक़ को ख़त्म करने वाला मिलना मुम्किन नहीं है। इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते।
न हि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति।।४०।।

ख़ाकी जिस्म को ही रथ बनाकर मक़्सूद की तरफ़ आगे बढ़ने वाले अर्जुन! उस इंसान का न तो इस दुन्या में और न आलमेबाला में ही ख़ातिम होता है; क्योंकि ऐ दोस्त! उस आ'ला इफ़ादी मुअय्यनः अमल को करने वाला बदहाल नहीं होता। उसका होता क्या है?

प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते।।४१।।

मन शोख़ होने की वज्ह से जोग से बदउन्वान वह इंसान शरीफ़ुन्नफ़्स लोगों के अवालिम में ख़्वाहिशात का लुत्फ़ उठाकर (जिन ख़्वाहिशात के बिना पर वह जोग से बदउन्वान हुआ था, मा'बूद उसे थोड़े में सब दिखा-सुना देते हैं, उसका तलज़्ज़ुज़ उठाकर) वह **'शुचीनां श्रीमताम्'-** पाक बरताव वाले आ'ला मर्तबत इंसानों के घर में पैदा होता है। (जो पाक बरताव वाले हैं, वही आ'ला मर्तबत हैं।)

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम्।
एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम्।।४२।।

ख़्वाह वहाँ जनम न मिलने पर भी साबितुलअक़्ल जोगियों के ख़ानदान में उसे जगह मिल जाती है। आ'ला मतबत वालों के घर में मुतबर्रिक तअस्सुर (संस्कार) बचपन से ही मिलने लगते हैं; लेकिन वहाँ पैदा न हो पाने पर वह जोगियों के ख़ानदान में (घर में नहीं) शागीर्दगी में दाख़िल पा जाता है। कबीर, तुलसी, रैदास, वाल्मीकि वग़ैरः को मुतबर्रिक बरताव और आ'ला मर्तबत घराने में नहीं, जोगियों के घराने में दाख़िल मिला। मुर्शिद के घराने में तअस्सुरात का बदलाव भी एक जनम है और ऐसा जनम दुन्या में बिला शुब्हः बेइंतिहा कमयाब है। जोगियों के यहाँ जनम लेने का मत्लब उनके जिस्म से फ़र्ज़न्द की शक्ल में जनम लेना नहीं है। घर छोड़ने से पहले पैदा होने वाले औलाद उंसीयत की वज्ह से अज़ीम इंसान को भी भले ही अपना वालिद मानते रहें, लेकिन अज़ीम इंसान के लिए घर वालों के नाम पर कोई नहीं होता। जो शागिर्द उनके उसूलों की बजाआवरी करते हैं, उनकी अहम्मीयत औलाद से कई गुना ज़ियाद मानते हैं। वे ही उनके हक़ीक़ी औलाद हैं।

जो जोग के तअस्सुरात से मुज़ैयन नहीं हैं, उन्हें अज़ीम इंसान क़बूल नहीं करते। 'क़ाबिले एहतिराम महाराज जी' अगर हर किसी को साधू बनाते, तो हज़ारों बेज़ार लोग उनके शागिर्द होते। लेकिन उन्होंने किसी को सफ़र खर्च देकर, किसी के घर ख़बर भेजकर, ख़त भेजकर समझा-बुझाकर सबको उनके घर वापस भेज दिया। बहुत से लोग बज़िद हुए, तो उन्हें बद्सगुन हो। भीतर से मनाही हो कि इसमें साधू बनने की एक भी निशान नहीं है, इसे रखने में ख़ैर नहीं है, यह कामयाब नहीं होगा। नाउम्मीद होकर दो-एक ने पहाड़ से कूदकर अपनी जान भी दे दी, लेकिन महाराज जी ने उन्हें अपने पास नहीं रखा। बा'द में पता चलने पर बोले- ''मैं जानता था कि बड़ा बेक़रार है, लेकिन अगर यह सोचते कि सच में मर जायेगा, तो रख लेते। एक गुनाहगार भी रहता और क्या होता!'' शफ़कत उनमें भी बहुत ज़ियादः थी,

फिर भी नहीं रखा। छः-सात को, जिनके लिए हुक्म हुआ था कि, ''आज एक जोग से बदउन्वान शख़्स आ रहा है, जनम-जनम से भटका हुआ चला आ रहा है, इस नाम और इस शक्ल का कोई आने वाला है, उसे रखो, इल्मे तसव्वुफ़ की नसीहत दो, उसे आगे बढ़ाओ।'' सिर्फ़ उन्हीं लोगों को रखा। आज भी उनमें से एक अज़ीम इंसान धारकुण्डी में बैठे हैं, एक अनुसुइया में हैं, दो-तीन दूसरी जगह भी हैं। उन्हें मुर्शिद के घराने में दाख़िलः मिला, ऐसे अज़ीम इंसानों को हासिल कर पाना बेहद कमयाब है।

तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम्।
यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन।।४३।।

वहाँ वह इंसान इस जनम से पहले वाले जिस्म में जो कुछ रियाज़त की थी उस अक़्ल के इत्तिहाद को या'नी पहले जनम के रियाज़त के तअस्सुरात को बरबस ही हासिल कर लेता है और ऐ कुरुनन्दन! (कुरु ख़ानदान वाले), उसके असर से वह फिर **'संसिद्धौ'**- मा'बूद के हुसूल की शक्ल वाली आ'ला कामयाबी के लिए कोशिश करने लगता है।

पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः।
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते।।४४।।

आ'ला मर्तबत हज़्रात के घर दुन्यवी मौजूआत के ज़ेरेअसर रहने पर भी वह पहले जनम की रियाज़त से राहे मा'बूद की जानिब मुतवज्जेह हो जाता है और जोग में कमज़ोर कोशिशवाला वह मुतजस्सिस भी ज़बान के मौजूअ को पार करके नजात वाले मक़ाम को हासिल कर लेता है। उसके हुसूल का यही तरीक़ः है। कोई एक जनम में हासिल करता भी नहीं।

प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः।
अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्।।४५।।

मुख़्तलिफ़ जनमों से अपनी कोशिश में लगा जोगी आ'ला कामयाबी को हासिल कर लेता है। कोशिश के साथ रियाज़त करने वाला जोगी तमाम गुनाहों से अच्छी तरह पाक होकर आ'ला नजात को हासिल कर लेता है। हुसूल का यही सिल्सिलः है। पहले कमज़ोर कोशिश से वह जोग की शुरुआत करता है, मन के शोख़ होने पर जनम लेता है, मुर्शिद के घराने में दाख़िलः पाता है और हर एक जनम में

रियाज़त करते हुए उसी मक़ाम पर पहुँच जाता है, जिसका नाम आ'ला नजात, आ'ला मक़ाम है। श्रीकृष्ण ने कहा था कि इस जोग में तुख़्म का ख़ातिमः कभी नहीं होता। आप दो क़दम चल भर दें, उस वसीले का कभी ख़ातिमः नहीं होता। हर हालत में ज़िंदगी बसर करते हुए इंसान ऐसा कर सकता है। वजह यह कि थोड़ी रियाज़त तो हालात से घिरा रहने वाला इंसान ही कर पाता है, क्योंकि उसके पास वक़्त की कमी है। आप काले हों, गोरे हों या किसी जगह के हैं, गीता सबके लिए है। आपके लिए भी है, बशर्ते आप इंसान हों। शदीद कोशिश वाला चाहे जो हो, लेकिन कमज़ोर कोशिश वाला, घर-बार वाला (गिरहस्त) ही होता है। 'गीता' गिरहस्त, बेज़ार, ता'लीमयाफ़्तः, लाइल्म, महज़ आम इंसान के लिए है। किसी 'साधू' नाम वाले अजूबे इंसान के लिए ही नहीं। आख़िर में जोग के मालिक श्रीकृष्ण फ़ैसलः देते हैं-

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन।।४६।।

रियाज़तकशों से जोगी अफ़्ज़ल है, आलिमों से भी अफ़्ज़ल माना गया है। अमल करने वालो से भी जोगी अफ़्ज़ल है। लिहाज़ा अर्जुन! तू जोगी बन।

रियाज़तकश - रियाज़तकश मन के साथ हवास को उस जोग में ढालने के लिए मशक़्क़त करता है, अभी जोग उसमें ढला नहीं।

अमली - अमली इस मुअय्यनः अमल का इल्म हासिल कर उसमें लगा रहता है। न तो वह अपनी कुव्वत समझकर ही लगा है और न खुद सुपुर्दगी के साथ ही लगा है। सिर्फ़ अमल करता भर है।

आलिम - इल्म की राह वाला इंसान उसी मुअय्यनः अमल, यग के ख़ुसूसी तरीक़-ए-कार को अच्छी तरह समझते हुए अपनी कुव्वते इरादी को सामने रखकर उसमें लगा रहता है। उससे होने वाला नफ़ा-नुक़्सान की ज़िम्मःदारी उसी की है। उस पर नज़र रखकर चलता है।

जोगी - बेग़रज़ अमली जोगी मा'बूद पर मुन्हसिर होकर पूरी अक़ीदत और खुद सुपुर्दगी के साथ मुअय्यनः अमल 'जोग की रियाज़त' में लगा होता है, जिसके ख़ैरियत की ज़िम्मःदारी मा'बूद और जोग के मालिक श्रीकृष्ण खुद लेते हैं। ज़वाल के हालात होते हुए भी उसके लिए ज़वाल का ख़ौफ़ नहीं है, क्योंकि जिस उंसुरे आ'ला को चाहता है, वही उसे सँभालने की ज़िम्मःदारी भी ले लेता है।

रियाज़तकश अभी जोग को अपने अन्दर ढालने में कोशाँ है, अमली सिर्फ़ अमल जानकर करता भर है। ये गिर भी सकते हैं, क्योंकि न इन दोनों में सुपुर्दगी है और न अपने नफ़ा-नुक़्सान को देखने की सलाहीयत; लेकिन आलिम जोग के हालात को जानता है, अपनी ताक़त समझता है, उसकी ज़िम्मःदारी उसी पर है और बेग़रज़ अमली जोगी तो मा'बूद के ऊपर अपने को फेंक चुका है या'नी उसकी पनाह में जा पहुँचा है, लिहाज़ा वह मा'बूद सँभालेगा। फ़लाहे कामिल के रास्ते पर ये दोनों ठीक चलते हैं, मगर जिसकी ज़िम्मःदारी यह मा'बूद सँभालता है, वह इन सबमें अफ़्ज़ल है, क्योंकि मा'बूद ने उसे क़बूल कर लिया है। उसका नफ़ा-नुक़्सान वह मा'बूद देखता है। इस वास्ते जोगी अफ़्ज़ल है। लिहाज़ा अर्जुन! तू जोगी बन। ख़ुद सुपुर्दगी के साथ जोग का बरताव कर।

जोगी अफ़्ज़ल है; लेकिन उनसे भी वह जोग भी आ'ला अफ़्ज़ल है, जो बातिन से लगा होता है, इसी पर कहते हैं-

योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना।
श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः।।४७।।

तमाम बेग़रज़ अमली जोगी हज़्रात में भी जो अक़ीदत में डूबकर पूरे ज़मीर से, दाखिली ग़ौरो-फ़िक्र से मुझे मुसल्सल याद करता है, वह जोगी मुझे आ'ला अफ़्ज़ल क़ाबिले ता'ज़ीम है। यादे इलाही बनावटी या नुमाइश की चीज़ नहीं है। इससे मुआशरः भले ही मुआफ़िक़ हो; मगर मा'बूद बरख़िलाफ़ हो जाते हैं। यादे इलाही बेइन्तिहा बसीग़-ए-राज़ है और वह बातिन से होता है। उसका मद व ज़ज़्र बातिन पर मुन्हसिर है।

मग़्ज़े सुख़न :-

इस बाब के शुरू में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा कि, समरः की उम्मीद से मुबर्रा होकर जो 'कार्यम् कर्म' या'नी करने के लाइक़ ख़ुसूसी तरीक़-ए-कार पर कारबन्द होता है, वही कामिल है और उसी अमल को करने वाला ही जोगी है। सिर्फ़ आ'माल या आग को तर्क करने वाला जोगी या कामिल नहीं होता। इरादों का ईसार किये बग़ैर कोई भी इंसान कामिल या जोगी नहीं होता। 'हम इरादः नहीं करते', मह्ज ऐसा कह देने से इरादे दामन नहीं छोड़ते। जोग में आमादः होने की ख़्वाहिश वाले इंसान को चाहिए कि **'कार्यम् कर्म'.** करने लाइक़ ख़ास तरीक़-ए-कार करे।

अमल करते-करते जोग में साकिन हो जाने पर ही सारे इरादों का ख़ातिमः हो जाता है, इससे पहले नहीं। सारे इरादों का ख़ातिमः ही तर्केदुन्या है।

जोग के मालिक ने फिर बताया कि रूह जहन्नम में जाती है और उसको नजात भी मिलती है। जिस इंसान के ज़रीअः मन के साथ हवास क़ाबू में कर लिए गये हैं, उसकी रूह उसके लिए दोस्त बनकर दोस्ती का सुलूक करती है और यह हालत निहायत इफ़ादी होती है। जिसके ज़रीअः इन पर क़ाबू नहीं किया गया, उसके लिए उसी की रूह दुश्मन बनकर दुश्मनी का सुलूक करती है, मुसीबतों की वज्ह बनती है। लिहाज़ा इंसान को चाहिए कि अपनी रूह को जहन्नम रसीद न करे, अपने ज़रीअः अपनी रूह को नजात दिलाये।

उन्होंने हुसूल वाले जोगी की बूदोबाश बतायी। यग करने की जगह, बैठने का आसन और बैठने के तरीक़ः पर उन्होंने बताया कि, जगह यकसूई वाली और साफ़-सुथरी हो। कपड़ा, हिरन वग़ैरः की ख़ाल या कुश की चटाई में से कोई एक आसन हो। अमल के मुताबिक़ कोशिश, उसी के मुनासिब ख़ुराक व तफ़्रीह, सोने-जागने की एहतियात पर उन्होंने ज़ोर दिया। जोगी के क़ाबूयाफ़्तः तबीअ़त की मिसाल उन्होंने साकिन हया वाले जगह में चराग़ की उस लौ से दी जिसमें लर्ज़िश नहीं होती और इस तरह उस क़ाबू में की गयी तबीअ़त की भी जब तह्लील हो जाती है, उस वक़्त वह जोग की आ'ला हालत बेशुमार मसर्रत को हासिल कराती है। दुन्या के मिलने और बिछड़ने से मुबर्रा बेशुमार सुकून का नाम नजात है। जोग का मत्लब है, उससे (मा'बूद) से मिलन। जो जोगी उस मक़ाम को हासिल कर लेता है, वह सारे जानदारों में मुसाबी नज़र वाला हो जाता है। जैसी अपनी रूह, वैसी ही सबकी रूह को देखता है। वह आख़िरी आ'ला अंजाम के सुकून को हासिल करता है। लिहाज़ा जोग जरूरी है। मन जहाँ-जहाँ जाय, वहाँ-वहाँ से घसीटकर बार-बार इसको क़ाबू में करना चाहिए। श्रीकृष्ण ने क़बूल किया कि मन बड़ी मुश्किल से क़ाबू में होने वाला है, लेकिन क़ाबू में हो जाता है। यह रियाज़त और बैराग के ज़रीअः क़ाबू में हो जाता है। कमज़ोर कोशिश वाला इंसान भी मुख़्तलिफ़ जनमों की रियाज़त के बा'द उस मक़ाम पर पहुँच जाता है, जिसका नाम आ'ला नजात या आ'ला मक़ाम है। रियाज़तकशों, आलिमों और सिर्फ़ अमल करने वालों से जोगी अफ़्ज़ल है, लिहाज़ा अर्जुन! तू जोगी बन। ख़ुद सुपुर्दगी के साथ बातिन से जोग पर कारबन्द हो।

पेशक़र्दः बाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने ख़ास तौर से जोग के हुसूल रियाज़त पर ज़ोर दिया है। लिहाज़ा–

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'अभ्यासयोगो' नाम षष्ठोऽध्यायः।।६।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'अभ्यास योग' (जोग़-ए-रियाज़त) नाम का छठा बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'अभ्यासयोगो' नाम षष्ठोऽध्यायः।।६।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'अभ्यास योग' (जोग़-ए-रियाज़त) नाम का छठा बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ सप्तमोऽध्यायः।।
(सातवाँ बाब)

गुज़श्ता अबवाब में अमूमन गीता के ख़ास-ख़ास सभी सवालात पूरे हो गये हैं। बेग़रज़ अमली जोग, इल्मी जोग, अमल, यग की शक्ल और उसका तरीक़ः, जोग की हक़ीक़ी शक्ल और उसका समरः व अवतार, दोगलः, अबदी, ख़ुदशनास अज़ीम इंसान के लिए भी अवामी फ़लाह के लिए अमल करने पर ज़ोर, जंग वग़ैरः पर तफ़्सील से ज़िक्र किया गया। अगले अबवाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने इन्हीं से जुड़े हुए तमाम तक्मिलः सवालात को उठाया है, जिनका हल और आग़ाज़ इबादत में मददगार साबित होगा।

छठें बाब के आख़िरी श्लोक में जोग के मालिक ने यह कहकर ख़ुद सवाल खड़ा कर दिया कि, जो जोगी **'मद्गतेनान्तरात्मना'**- मुझमें अच्छी तरह क़ाइम बातिन वाला है, उसे मैं बेहद अफ़्ज़ल जोगी मानता हूँ। रुहेमुत्लक़ में अच्छी तरह क़याम क्या है? बहुत से जोगी हज़्रात रूहे मुत्लक़ को हासिल तो कर लेते हैं, फिर भी कहीं कोई कमी उन्हें खटकती है। ज़रा भी कसर न रह जाय, ऐसी हालत कब आयेगी? मुकम्मल तौर पर रूहे मुत्लक़ का इल्म कब होगा? कब होता है? इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः।
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु।।१।।

पार्थ! तू मुझमें राग़िब हुए मन-वाला, बाहरी नहीं बल्कि **'मदाश्रयः'**- या'नी मेरा हामिल होकर, जोग में लगा हुआ (छोड़कर नहीं) मुझको जिस तरह बिला शक़ो-शुब्हः जानेगा, उसको सुन। जिसे जानने के बा'द ज़रा भी शक न रह जाय। शौकतों की उस मुकम्मल जानकारी पर फिर ज़ोर देते हैं-

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः।
यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते।।२।।

मैं तुझे इस ख़ास इल्म के साथ इल्म के बारे में मुकम्मल तौर से बताऊँगा। तक्मिलः दौर में यग जिसकी तख़्लीक़ करता है, उस लाफ़ानी उंसुर के हुसूल के साथ मिलने वाली जानकारी का नाम इल्म है। उंसुरे आ'ला रूहे मुत्लक़ की रू-ब-रू जानकारी का नाम इल्म (विज्ञान) है। अज़ीम इंसान को एक साथ हर जगह काम करने की जो सलाहीयत हासिल होती है, वह मख़्सूस इल्म है। किस तरह वह मा'बूद एक साथ सबके दिल में काम करता है, किस तरह वह उठाता-बैठाता और दुन्यवी फ़साद से निकालकर मंज़िले मक़्सूद तक का फ़ासिलः तय करा लेता है?, उसके इस तौर-तरीक़ः का नाम मख़्सूस इल्म है। इस ख़ुसूसी इल्म के साथ इल्म को तफ़्सील से बताऊँगा, जिसे जानकर (सुनकर नहीं) दुन्या में और कुछ भी जानने के क़ाबिल नहीं रह जायेगा। जानने वालों की ता'दाद बहुत कम है।

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः।।३।।

हज़ारों इंसानों में कोई बिरला ही इंसान मेरे हुसूल के लिए कोशिश करता है और उन कोशिश करने वाले जोगियों में भी कोई बिरला ही इंसान मुझे उंसुर (बदीही दीदार) के साथ जानता है। अब मुकम्मल उंसुर है कहाँ? एक जगह पर माद्दी शक्ल में है या हर जगह जल्वःगर है?, इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं-

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा।।४।।

अर्जुन! ज़मीन, पानी, आग, हवा और आस्मान व मन, अक़्ल व ग़ुरूर - ऐसे ये आठ कुस्मों वाली मेरी क़ुद्रत है। यह अष्टधा मूल प्रकृति या'नी (आठ अनासिर वाली बुन्यादी क़ुद्रत) है।

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्।।५।।

'इयम्' या'नी यह आठ क़स्मों वाली तो ग़ैरमावरा क़ुद्रत है, या'नी जामिद क़ुद्रत है। बाज़ू-ए-अज़ीम अर्जुन! इससे दूसरी को जी शक्ल (मावरा) या'नी बा हिस क़ुद्रत समझ, जिसके यहाते में पूरी काइनात है, वह है ज़ी-रूह। ज़ीरूह भी क़ुद्रत से वाबस्तः रहने की वजह से वह भी क़ुद्रत ही है।

एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय।
अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा।।६।।

अर्जुन! ऐसा समझ कि तमाम जानदार **'एतद्योनीनि'**– इन अज़ीम क़ुद्रतों से मावरा और ग़ैर मावरा क़ुद्रतों से ही पैदा होने वाले हैं। यही दोनों वाहिद शक्लें (योनियां) हैं। मैं तमाम दुन्या की तख़्लीक और क़यामत (प्रलय) की शक्ल हूँ या'नी अस्ल बुन्याद हूँ। दुन्या की तख़्लीक मुझसे है और (प्रलय-क़यामत) तह्लील भी मुझमें है। जब तक क़ुद्रत मौजूद है, तब तक मैं ही उसकी तख़्लीक हूँ, और जब कोई अज़ीम इंसान क़ुद्रत से पार पा लेता है, तब मैं ही महाप्रलय (अज़ीम क़यामत) भी हूँ, जैसा कि तज्रिबः से ज़ाहिर होता है।

काइनात की तख़्लीक़ और प्रलय (क़यामत) के सवाल को इंसानी मुआशरः ने तजस्सुस के साथ देखा है। दुन्या के मुख़्तलिफ़ शराए' में इसे किसी-न-किसी तरह समझने की कोशिश चली आ रही है। कोई कहता है कि प्रलय (क़यामत) में दुन्या डूब जाती है, तो किसी के मुताबिक़ सूरज इतना नीचे आ जाता है कि ज़मीन जल जाती है। कोई इसी को क़यामत कहता है कि इसी दिन सबको उनके आ'माल का फ़ैसलः सुनाया जाता है, तो कोई रोज़-ब-रोज़ की प्रलय, किसी वज्ह से प्रलय का हिसाब-किताब लगाने में मश्ग़ूल है; लेकिन जोग के मालिक श्रीकृष्ण के मुताबिक़ क़ुद्रत अबदी है। बदलाव होते रहे हैं; लेकिन यह ख़त्म कभी नहीं हुई।

हिन्दोस्तानी मज़्हबी किताबों के मुताबिक़ मूरिसे अव्वल मनु ने प्रलय देखा था। इसके साथ ग्यारह आबिदों ने मछली की सींग में कश्ती बांधकर हिमालय की एक ऊँची चोटी पर पनाह ली थी। कारसाज़ श्रीकृष्ण की नसीहतों और ज़िन्दगी से तअल्लुक़ रखने वाली उनके दौर की शरीअ़त भागवत में मृकण्डु मुनि के फ़र्ज़ मारकण्डेय जी के ज़रीअः प्रलय का चश्मेदीद बयान पेश किया गया है। वे हिमालय के शिमाल की जानिब 'पुष्पभद्रा' नदी के किनारे रहते थे।

भागवत के बारहवीं फ़स्ल के आठवें और नौवें बाव के मुताबिक़ शौनक वग़ैरः आबिदों ने 'सूत जी' से पूछा कि मारकण्डेय जी ने महाप्रलय (अज़ीम क़यामत) के दिन बरगद के पत्ते पर बन्दःपर्वर बालमुकुन्द के दीदार का सर्फ़ हासिल किया था; लेकिन वे तो हमारे ही ख़ानदान के थे, हमसे कुछ ही वक़्त पहले हुए थे। उनके जनम के बा'द न कोई प्रलय हुआ और न दुन्या ही डूबी। सब कुछ जैसा का तैसा है, तब उन्होंने कैसा प्रलय देखा।

'सूतजी' ने बताया कि मारकण्डेय जी की इल्तिजा से ख़ुश होकर नरनारायण (एक अवतार) ने उन्हें अपना दीदार कराया। मारकण्डेय जी ने कहा कि मैं आपकी वह कारसाज़ी देखना चाहता हूँ जिसके ज़ेरे असर यह रूह बेशुमार शक्लों (योनियों) में चक्कर लगाती है। भगवान ने उनकी यह गुज़ारिश मंजूर की और एक रोज़ जब मुनी अपने ख़ानक़ाह में मा'बूद के ग़ौरो-फ़िक्र में डूबे थे, तब उन्हें दिखायी पड़ा कि चारों तरफ़ से समन्दर उमड़कर उनके ऊपर आ रहा है। उसमें 'नहंग' छलाँगे लगा रहे थे। उनकी चपेट में आबिद मारकण्डेय भी आ रहे थे। वे इधर-उधर बचने के लिए भाग रहे थे। आस्मान, सूरज, ज़मीन, चाँद, जन्नत, तमाम सितारे सभी उस समन्दर में डूब गये। इतने में मारकण्डेय जी को बरगद का दरख़्त और उसके पत्ते पर एक तिफ़्ल (बच्चा) दिखायी पड़ा। साँस के साथ मारकण्डेय जी भी उस बच्चे के पेट में चले गये और अपना ख़ानक़ाह को हल्क़-ए-सूरज के साथ काइनात को ज़िंदः पाया और फिर साँस के साथ उस बच्चे के पेट से वे बाहर निकल आये। आँख खुलने पर मारकण्डेय जी ने अपने को उसी ख़ानक़ाह में अपने ही आसन पर मौजूद पाया।

ज़ाहिर है कि करोड़ों साल की यादे रब के बा'द मारकण्डेय जी ने ख़ुदाई मंज़र को अपने मन में देखा, तज़्रिबः में देखा, बाहर सब कुछ जैसे का तैसा बरक़रार था। लिहाज़ा (तह्लील) प्रलय जोगी के मन में मा'बूद से मिलने वाला एहसास है। यादेः इलाही के तक्मिलः दौर में जोगी के दिल में दुन्या का असर ख़त्म होकर ग़ैरमर्ई मा'बूद ही बाकी बचता है, यही प्रलय (तह्लील) है। बाहर प्रलय नहीं होता। अज़ीम प्रलय जिस्म रहते ही वह्दानियत की ग़ैरमर्ई हालत है। यह अमली है। सिर्फ़ अक़्ल से फ़ैसलः लेने वाले शक को ही पैदा करते हैं, चाहे हम हों या आप। इसी पर आगे देखें-

मत्तः परतरं नान्यत्किञ्चिदस्ति धनञ्जय।
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव।।७।।

धनञ्जय! मेरे सिवा मुत्लक़ भी कोई दूसरी चीज़ नहीं है। यह तमाम दुन्या जवाहिर की माला की तरह मेरे में गुँथी हुई है। है तो, लेकिन जानेंगे कब? जब (इस बाब के अव्वल श्लोक के मुताबिक़), लाशरीक रग़्बत (अक़ीदत) से मेरा हामिल होकर जोग में उसी तरह से लग जायँ। इसके बग़ैर नहीं। जोग में लगना ज़रूरी है।

रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः।
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु।।८।।

कौन्तेय! पानी में मैं लज़्ज़त हूँ। चाँद और सूरज में रोशनी हूँ। सारे वेदों में ओंकार हूँ। (ओ+अहं+कार) ख़ुद का आकार, ख़ुद की शक्ल हूँ। आस्मान में आवाज़ और इंसानों में उसकी मर्दानगी हूँ। और मैं,

पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ।
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु।।९।।

ज़मीन में पाक महक और आग में जलाल हूँ। सारे जानदारों में उनकी ज़िन्दगी हूँ और रियाज़तकशों में उनकी रियाज़त हूँ।

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम्।
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम्।।१०।।

पार्थ! तू सारे जानदारों की अबदी वज्ह या'नी तुख़्म मुझे ही जान। मैं अक़्लमंदों की अक़्ल और जलाली हज़्रात का जलाल हूँ। इसी तसल्सुल में जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं–

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम्।
धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ।।११।।

हे भरत! ख़ानदान में अफ़्ज़ल अर्जुन! मैं ताक़तवरों की ख़्वाहिश और रग़बत से ख़ाली ताक़त हूँ। दुन्या में सब ताक़तवर ही तो बनते हैं। कोई कस्रत करता है, दण्ड-बैठक लगाता है, कोई ऐटमी ताक़त इकट्ठा करता है; लेकिन नहीं, श्रीकृष्ण कहते हैं कि ख़्वाहिश और रग़बत से मावरा जो ताक़त है वह मैं हूँ। वही हक़ीक़ी ताक़त है। सारे ज़ानदारों में दीन के मुताबिक़ ख़्वाहिश मैं हूँ। आ'ला मा'बूद रूहे मुत्लक़ ही वाहिद दीन है जो सबको सँभाले हुए है। जो दाइमी रूह है, वही दीन है। जो उससे मुताबक़त रखने वाली ख़्वाहिश है, मैं हूँ। आगे भी श्रीकृष्ण ने कहा कि, अर्जुन! मेरे हुसूल की ख़्वाहिश कर। सब ख़्वाहिशात की तो मुमानअत है; लेकिन उस रूहे मुत्लक़ को हासिल करने की ख़्वाहिश ज़रूरी है, वर्ना आप वसीलः वाले अमल में नहीं लग पायेंगे। ऐसी ख़्वाहिश भी मेरा ही करम है।

ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये।
मत्त एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि।।१२।।

और भी जो मलकाते फ़ाज़िलः से पैदा होने वाले एहसासात हैं, जो मलकाते रदीयः और मलकाते मज़मूम से पैदा होने वाले एहसासात हैं, उन सबको तू मुझसे

ही पैदा होने वाले हैं - ऐसा समझ। लेकिन हक़ीक़त में उनमें मैं और वे मुझमें नहीं हैं। क्योंकि न मैं उनमें खोया हुआ हूँ और न वे ही मेरे अन्दर दाख़िल हो पाते हैं; क्योंकि मुझे अमल से लगाव नहीं है, मैं लामुलव्वस हूँ, मुझे उनमें कुछ हासिल नहीं करना है। लिहाज़ा मुझमें दाख़िल नहीं हो पाते। ऐसा होने पर भी-

जिस तरह रूह की मौजूदगी से ही जिस्म को भूख-प्यास लगती है, रूह को अनाज या पानी से कोई वास्तः नहीं है, उसी तरह क़ुद्रत रूहे मुत्लक़ की मौजूदगी में ही अपना काम कर पाती है। रूहे मुत्लक़ उसकी सिफ़ात और कामों से लातअल्लुक़ रहता है।

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत्।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम्।।१३।।

मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः और मलकाते मज़मूम इन तीनों सिफ़ात के ज़ेरे असर ये सारी दुन्या उससे फ़िरेफ़्तः हो रही है। इस वास्ते लोग इन तीनों सिफ़ात से मावरा मुझ लाफ़ानी को उंसुर से अच्छी तरह नहीं जानते। मैं इन तीनों सिफ़ात से मावरा हूँ। या'नी जब तक ज़रा-सा भी सिफ़ात की परत मौजूद है, तब तक कोई मुझे नहीं जानता। उसे अभी चलना है, वह राही है, और-

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।।१४।।

तीनों सिफ़ात से मुज़य्यन मेरी यह हैरतअंगेज़ कारसाज़ी बेहद दुश्वार है; लेकिन जो इंसान मुझे ही मुसल्सल याद करते हैं, वे लौसेदुन्या पर फ़त्ह हासिल कर लेते हैं। यह कारसाज़ी है तो रूहानी लेकिन अगरबत्ती जलाकर इसकी इबादत न करने लगें। इससे नज़ात पाना है।

न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः।
माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः।।१५।।

जो मुझे लगातार याद करते हैं, वे जानते हैं। फिर भी लोग मेरी याद से ग़ाफ़िल रहते हैं। फ़ित्रत (माया) के ज़रीअः जिनका इल्म का इग्वा कर लिया गया है, जो दुन्यवी ख़स्लत के हामिल हैं, इंसानों में बदज़ात, ख़्वाहिश, गुस्सः वग़ैरः बुरे कामों को करने वाले जाहिल लोग मुझे नहीं याद करते। तो याद करता कौन है?

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ।।१६।।

ऐ भरत ख़ानदान में अफ़्ज़ल अर्जुन! **'सुकृतिनः'**- अफ़्ज़ल या'नी मुऐयनः अमल (जिसके समरः में शरफ़ का हुसूल हो, उसको) करने वाले, **'अर्थार्थी'** या'नी ख़्वाहिशमंद, **'आर्तः'** या'नी दुःख से छूटने की ख़्वाहिश वाले, **'जिज्ञासुः'** या'नी ज़ाहिर तौर से जानने का तजस्सुम और **'ज्ञानी'** या'नी जो दाख़िल होने की हालत में हैं - ये चारों तरह के अक़ीदतमन्द मुझे याद करते हैं।

'अर्थ' (सरमायः) वह चीज़ है, जिससे हमारे जिस्म ख़्वाह मुतअल्लिक़ात पूरी होती हो। लिहाज़ा सरमायः, ख़्वाहिशात ये सब कुछ पहले मा'बूद के ज़रीअः पूरी होती हैं। श्रीकृष्ण कहते हैं कि मैं ही पूरा करता हूँ, लेकिन इतना ही हक़ीक़ी सरमायः (अर्थ) नहीं है। रूहानी दौलत ही हमेशः क़ाइम रहने वाली दौलत है- यही अर्थ (सरमायः) है।

दुन्यावी सरमायः को पूरा करते-करते मा'बूद हक़ीक़ी सरमायः को रूहानी दौलत की तरफ़ बढ़ा देते हैं; क्योंकि वे जानते हैं कि इतने ही से मेरा मो'तक़िद बामसर्रत नहीं होगा। लिहाज़ा वे रूहानी दौलत भी उसे अता करने लगते हैं- **'लोक लाहु परलोक निबाहू'**- इस दुन्या में मुनाफ़ः और आलमेबाला में गुज़ारा, ये दोनों मा'बूद की चीज़ें हैं। अपने बन्दः को खाली नहीं रहने देते।

'आर्त' (ग़मगुसार)- जो ग़मज़दः हो। **'जिज्ञासु'**- पूरे तौर से जानने की तजस्सुस रखने वाले मुतजस्सिस लोग मुझे याद करते हैं। रियाज़त की पुख़्तः हालत की में दीदार (बदीही दीदार) के मक़ाम पर पहुँचे हुए आलिम हज़्रात भी मुझे याद करते हैं। इस तरह चार तरह के मो'तक़िद हैं जो मुझे याद करते हैं, जिनमें आलिम अफ़्ज़ल है या'नी आलिम भी बन्दः ही है।

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः।।१७।।

अर्जुन! उनमें भी जो हमेशः के लिए मुझमें तह्लील है, पुरख़ुलूस बन्दगी वाला आलिम ख़ुसूसी है; क्योंकि बदीही दीदार के साथ इल्म रखने वाले आलिम को मैं बेहद मह्बूब हूँ और वह आलिम भी मुझे बेहद अज़ीज़ है। वह आलिम मेरा ही हममर्तबत है।

उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्।
आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम्।।१८।।

अगरचे ये चारों तरह के बन्दे रवादार ही हैं (कौन-सी रवादारी कर दी? क्या आपकी बंदगी से मा'बूद को कुछ हासिल हो जाता है? क्या मा'बूद में कोई कमी है, जिसे आपने पूरी कर दी? नहीं, दरहक़ीक़त वही रवादार है जो अपनी रूह को जहन्नम में न पहुँचाये, जो उसकी नजात के लिए आगे बढ़ रहा है। इस तरह ये सब रवादार हैं।) लेकिन आलिम तो मुजस्सम मेरी शबीह ही है, ऐसा मेरा मानना है, क्योंकि वह मुस्तक़िल मिज़ाज आलिम बन्दः बेहूतरीन अंजाम की शक्ल में मेरे अन्दर मक़ाम पा चुका है। या'नी वह मैं हूँ, वह मुझमें है। मुझमें और उसमें कोई फ़र्क़ नहीं है। इसी पर फ़िर ज़ोर देते हैं-

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।।१९।।

रियाज़ करते-करते मुख़्तलिफ़ जनमों के अख़ीर में, हुसूल वाले जनम में दीदारनसीब आलिम **'वासुदेवः सर्वमिति'**- सब कुछ मा'बूद ही हैं- इस तरह मुझको याद करता है, वह आबिद बेहद कमयाब है। वह किसी मा'बूद की मुजस्समः नहीं गढ़वाता बल्कि दाख़िली तौर पर अपने अन्दर उस आ'ला मा'बूद की रिहाइश पाता है। उसी आलिम मर्देकामिल को श्रीकृष्ण रम्ज़शनास भी कहते हैं। इन्हीं अज़ीम इंसानों से बाहरी समाज में भलाई मुम्किन है। इस तरह के रू-ब-रू रम्ज़शनास अज़ीम इंसान श्रीकृष्ण के अल्फ़ाज़ में बेहद कमयाब हैं।

जब शरफ़ और दुन्यावी तअय्युशात (नजात और ऐश) दोनों ही मा'बूद से हासिल होते हैं, तब तो सभी को वाहिद मा'बूद को ही याद करना चाहिए, फिर भी लोग उन्हें याद नहीं करते। क्यों? श्रीकृष्ण के ही अल्फ़ाज़ में-

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया।।२०।।

'वह रम्ज़शनास मर्देकामिल या रूहे मुत्लक़ ही सब कुछ है'- लोग ऐसा समझ नहीं पाते; क्योंकि ऐशो-इश्रत की ख़्वाहिशात के ज़रीअः लोगों की अक़्ल इग़्वा कर ली गयी है। लिहाज़ा वे अपनी ख़सूलत या'नी मुख़्तलिफ़ जनमों से हासिल किये गये तअस्सुरात के ज़ेरेअसर तर्ग़ीब पाकर मुझ रूहे-मुत्लक़ से अलग दूसरे देवताओं और

उन्हें हासिल करने के लिए मुरव्वजः रिवाजों की पनाह लेते हैं। यहाँ दूसरे देवताओं का ज़िक्र पहली बार आया है।

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति।
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम्।।२१।।

जो ख़्वाहिश वाला अक़ीदतमन्द जिस-जिस देवता की मुजस्समः की अक़ीदत के साथ इबादत करना चाहता है, मैं उसी देवता में उसकी अक़ीदत को मुस्तक़िल करता हूँ। मैं मुस्तक़िल करता हूँ; क्योंकि देवता नाम की कोई चीज़ होती तब तो वह देवता ही इस अक़ीदत को मुस्तक़िल करता-

स तया श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमीहते।
लभते च ततः कामान्मयैव विहितान्हि तान्।।२२।।

वह इंसान उस अक़ीदत का हामिल होकर उस देवता की मुजस्समः की इबादत में मुस्तइद होता है और उस देवता के वसीले से मेरे ही ज़रीअः बनाये गये उन ख़्वास्तः ऐशो-इश्रत को बिला शुब्हः हासिल करता है। ऐशो-इश्रत कौन अता करता है? मैं ही अता करता हूँ। उसकी अक़ीदत का समरः है- ऐश; न कि किसी देवता की देन। लेकिन वह समरः तो हासिल कर ही लेता है, फिर इसमें बुराई क्या है? इसकी वज़ाहत करते हुए कहते हैं-

अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम्।
देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि।।२३।।

लेकिन उन कम अक़्ल वालों को मिलने वाला वह समरः फ़ानी है। आज समरः है तो लुत्फ़ उठाते-उठाते ख़त्म हो जायेगा, लिहाज़ा फ़ानी है। देवताओं की इबादत करने वाले देवताओं को हासिल करते हैं। देवता भी फ़ानी हैं। देवताओं से लगात दुन्या की सारी चीजें तग़य्युरपज़ीर और ख़त्म होने वाली हैं। मेरा मो'तक़िद मुझे हासिल करता है। जो ग़ैरमर्ई जो अक़ीदत की इंतिहा है उस आ'ला सुकून को हासिल करता है।

बाब तीन में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा कि इस यग के ज़रीअः तुम लोग देवताओं या'नी रूहानी दौलत का इज़ाफ़ः करो। जैसे-जैसे रूहानी दौलत में इज़ाफ़ः होगा, वैसे-वैसे तुम्हारी तरक़्क़ी होगी। सिल्सिलेवार तरक़्क़ी करते-करते आ'ला शरफ़ को हासिल कर लो। यहाँ देवता उस रूहानी दौलत का अम्बोह है,

जिससे आ'ला मा'बूद रूहे मुत्लक़ की मर्तबत को हासिल किया जाता है। रूहानी दौलत नजात के लिए है, जिसके छब्बीस निशानियों का बयान गीता के सोलहवें बा'द में किया गया है।

देवता मन के दरमियान आ'ला मा'बूद रूहे मुत्लक़ के ख़ास्सः को हासिल कराने वाली नेक सिफ़ात का नाम है। थी तो यह अन्दर की चीज़; लेकिन वक़्त के साथ लोगों ने अन्दर की चीज़ को बाहर देखना शुरू कर दिया। मूरतें गढ़ ली, इबादत के तमाम तौर-तरीक़े (कर्मकाण्ड) बना डाले और हक़ीक़त से दूर खड़े हो गये। श्रीकृष्ण ने इस गुमराही का हल मज़्कूरएवाला चार श्लोकों में किया। गीता में पहली बार 'दूसरे देवताओं' का नाम लेते हुए उन्होंने कहा कि देवताओं का कोई वुजूद ही नहीं होता। लोगों की अक़ीदत जहाँ सर झुकाती है, वहाँ मैं ही खड़ा होकर उनकी अक़ीदत को ताईद करता हूँ और मैं ही वहाँ समरः भी देता हूँ। वह समरः भी फ़ानी है। समरः ख़त्म हो जाते हैं, देवता ख़त्म हो जाते हैं और देवताओं का परस्तार भी ख़त्म हो जाता है। जिनका इर्फ़ान ख़त्म हो गया है, वे जाहिल ही दूसरे देवताओं की इबादत करते हैं। श्रीकृष्ण तो यहाँ तक कहते हैं कि दूसरे देवताओं की इबादत करने का उसूल ही ग़ैरमुनासिव है। (आगे देखेंगे बाब ९/२३)

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्।।२४।।

अगरचे जब देवताओं की शक्ल में देवता नाम की कोई चीज़ है ही नहीं, जो समरः मिलता है वह भी फ़ानी है, फिर भी सब लोग मुझे याद नहीं करते; क्योंकि कम अक़्ल इंसान (जैसा गुज़श्तः श्लोक में आया कि ख़्वाहिशात के ज़रीअः जिनकी अक़्ल का इग़्वा हो गया है, वे) मेरे बेहतरीन, लाफ़ानी और आ'ला असर को अच्छी तरह नहीं जानते। लिहाज़ा वे मुझ ग़ैरमर्ई इंसान को मुजस्समः इंसान वाले एहसास को हासिल हुआ मानते हैं, इंसान मानते हैं। या'नी श्रीकृष्ण भी इंसानी जिस्म को क़बूल करने वाले जोगी थे, जोग के मालिक थे। जो खुद जोगी हो और दूसरों को भी जोग अता करने की जिसमें सलाहीयत हो, उसे जोग का मालिक (योगेश्वर) कहते हैं। रियाज़त के सही दौर में पड़कर धीरे-धीरे तरक़्क़ी होते-होते अज़ीम इंसान भी उसी आ'ला एहसास में मक़ाम पा लेते हैं। जिस्मानी इंसान होते हुए भी वे उसी ग़ैरमर्ई हक़ीक़ी शक्ल में क़ाइम हो जाते हैं, फिर भी ख़्वाहिशात से मज़्बूर कम अक़्ल वाले उन्हें आम आदमी ही मानते हैं। वे सोचते हैं कि हमारी ही तरह तो यह भी

पैदा हुए हैं, मा'बूद कैसे हो सकते हैं? उन बेचारों का कुसूर भी क्या है? नज़र डालते हैं तो ज़ाहिरी तौर से जिस्म ही दिखायी पड़ता है, वे अज़ीम इंसान की हक़ीक़ी शक्ल को देख क्यों नहीं पाते? इस बारे में जोग के मालिक श्रीकृष्ण से ही सुनें-

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्।।२५।।

आम इंसान के लिए फ़ित्रत एक पर्दः है, जिसके ज़रीअः रूहे मुत्लक़ पूरे तौर से मख़्फ़ी है। जोग की रियाज़त समझकर वह इसमें लगा हुआ होता है। इसके बा'द जोग की फ़ित्रत (योगमाया) या'नी जोग का अमल भी एक पर्दः ही है। जोग का आगाज़ करते-करते उसकी इंतिहा जोग के रास्ते पर चलने की सलाहीयत आ जाने पर वह मख़्फ़ी हुआ रूहे मुत्लक़ ज़ाहिर होता है। जोग के मालिक कहते हैं कि मैं अपनी जोग की फ़ित्रत से ढँका हुआ हूँ, सिर्फ़ जोग की पुख़्तः हालत वाले ही मुझे हक़ीक़ी शक्ल में देख सकते हैं। मैं सबके लिए ज़ाहिर नहीं हूँ, लिहाज़ा यह कम अक़्ल इंसान मुझ जनम से आरी (जिसे अब जनम नहीं लेना है), लाफ़ानी (जिसकी फ़ना नहीं होनी है), ग़ैरमर्ई शक्ल (जिसे फ़िर ज़ाहिर नहीं होना है) को नहीं जानता। अर्जुन भी श्रीकृष्ण को अपनी ही तरह इंसान मानता था। आगे उन्होंने नज़र अता की तो अर्जुन अजिज़ी से कहने लगा, इल्तिजा करने लगा। दरहक़ीक़त ग़ैरमर्ई के मक़ाम पर फाइज़ अज़ीम इंसान को पहचानने में हम लोग अमूमन नाबीना ही हैं। आगे फ़र्माते हैं-

वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन।
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन।।२६।।

अर्जुन! मैं माज़ीहाल और मुस्तक़्बिल में होने वाले तमाम जानदारों को जानता हूँ लेकिन मुझे कोई नहीं जानता। क्यों नहीं जान पाता?

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत।
सर्वभूतानि सम्मोहं सर्गे यान्ति परन्तप।।२७।।

भरत के ख़ानदान वाले अर्जुन! तलब और कीना या'नी हसद व अदावत वग़ैरः वबाल की फ़िरेफ़्तगी से दुन्या के तमाम जानदार बेइंतिहा फ़िरेफ़्तः हो रहे हैं, लिहाज़ा मुझे जान नहीं पाते। तो क्या कोई जानेगा ही नहीं? जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं-

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम्।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः।।२८।।

मगर इफ़ादी अमल (जो बार-बार जनम लेने का ख़ातिमः करने वाला है, जिसका नाम करने लाइक़ अमल, मुऐयना अमल, यग का तरीक़-ए-कार कहकर बार-बार समझाया है, उस अमल को) करने वाले जिन बन्दों का गुनाह ख़त्म हो गया है, वे हसद, अदावत वग़ैरः वबाल की फ़िरेफ़्तगी से अच्छी तरह आज़ाद होकर, अज़्म में मुस्तह्कम रहकर मुझे याद करते हैं। किसलिए याद करते हैं?

जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये।
ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम्।।२९।।

जो मेरी पनाह में आकर ज़ईफ़ी और मौत से नजात पाने के लिए कोशिश करते हैं, वे इंसान उस मा'बूद को, पूरी रूहानियत को और मुकम्मल अमल को जानते हैं और इसी तसल्सुल में-

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः।
प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः।।३०।।

जो इंसान मख़्सूस जानदार (अधिभूत), मख़्सूस देवता (अधिदैव) और मख़्सूस यग (अधियज्ञ) के साथ मुझे जानते हैं, मुझमें मुज़्मिर तबीअ़त वाले वे इंसान आख़िरी वक़्त में भी मुझको ही जानते हैं, मुझमें ही क़ाइम रहते हैं और हमेशः ही मुझे हासिल रहते हैं। छब्बीसवें-सत्ताइसवें श्लोक में उन्होंने कहा कि मुझे कोई नहीं जानता; क्योंकि वे फ़िरेफ़्तगी में जकड़े हुए हैं, लेकिन जो उस फ़िरेफ़्तगी से छूटने के लिए कोशाँ हैं, वे १. मुकम्मल मा'बूद, २. मुकम्मल रूहानियत, ३ मुकम्मल अमल, ४. मुकम्मल मख़्सूस जानदार, ५. मुकम्मल मख़्सूस देवता, ६. मुकम्मल मख़्सूस यग के साथ मुझको जानते हैं या'नी इन सबका समरः मैं मुर्शिदकामिल हूँ। वही मुझे जानता है, ऐसा नहीं कि कोई नहीं जानता।

मग़्ज़े सुख़न :-

इस सातवें बाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया कि लाशरीक अक़ीदत से मेरी सुपुर्दगी में आकर, मेरी पनाह में होकर जो जोग में लगता है, वह पूरी तरह से मुझे जानता है। मुझे जानने के लिए हज़ारों में से कोई शाज़ (विरला) ही कोशिश करता है और कोशिश करने वालों में विरला ही कोई जानता है। वह मुझे माद्दी

शक्ल में एक ही जगह पर नहीं बल्कि हर जगह जारी-ओ-सारी देखता है। आठ किस्मों वाली मेरी ज़ामिद कुद्रत है और इसके माबैन ज़ीरूह की शक्ल मेरी ज़ीहिस कुद्रत है। इन्हीं दोनों के तबस्सुत से पूरी दुन्या खड़ी है। जलाल व कुव्वत मेरे ही ज़रीअः हैं। हसद और ख़्वाहिश से ख़ाली ताक़त और दीन के मुताबिक़ ख़्वाहिश भी मैं ही हूँ। जैसा कि सारी ख़्वाहिशात के लिए तो मुमानअत है, लेकिन मुझे हासिल करने के लिए ख़्वाहिश कर। ऐसी ख़्वाहिश का पैदा होना मेरा ही रह्मोकरम है। सिर्फ़ रूहे मुत्लक़ को हासिल करने की ख़्वाहिश ही 'दीनी ख़्वाहिश' है।

श्रीकृष्ण ने बताया कि मैं तीनों सिफ़ात से मुबर्रा हूँ। मैं आ'ला मा'बूद का लम्स करके उसके आ'ला एहसास में क़ाइम हूँ; लेकिन ऐश में डूबे जाहिल इंसान सीधे मुझको न याद कर दूसरे देवताओं की इबादत करते हैं, जबकि वहाँ देवता नाम का कोई है ही नहीं। पत्थर, पानी, दरख़्त, जिसकी भी वे इबादत करना चाहते हैं, उसी में उनकी अक़ीदत को मैं ही तस्दीक़ करता हूँ। उसके पर्दः में खड़ा होकर मैं ही समरः देता हूँ, क्योंकि न वहाँ कोई देवता है, न किसी देवता के पास कोई ऐश ही है। लोग मुझे आम आदमी समझकर नहीं याद करते; क्योंकि मैं जोग के तरीक़-ए-कार के ज़रीअ पर्दे में हूँ। आगाज़ करते-करते जोग की फ़ित्रत का पर्दः हटा लेने वाले ही मुझ जिस्म वाले को भी ग़ैरमर्ई शक्ल से जानते हैं। दूसरी हालत में नहीं।

मेरे मो'तक़िद चार तरह के है, दौलत के ख़्वाहिशमन्द, बेक़रार, मुतजस्सिस और आलिम। ग़ौरोफ़िक्र करते-करते मुख़्तलिफ़ जनमों के दौर से गुज़रते हुए आख़िरी जनम में हुसूल वाला आलिम मेरा ही हममर्तबत है, या'नी मुख़्तलिफ़ जनमों से ग़ौरोफ़िक्र कर उस शक्ले-रब्बानी को हासिल किया जाता है। हसद अदावत की फ़िरेफ़्तगी से घिरे हुए इंसान मुझे कभी भी नहीं जान सकते, लेकिन हसद-अदावत के फ़िरेब से अलग होकर जो मुऐयनः अमल (जिसे मुख़्तसर में इबादत कह सकते हैं) का ग़ौरोफ़िक्र करते हुए ज़ईफ़ी और मौत से छूटने के लिए कोशिश में लगे हैं, वे इंसान मुकम्मल तौर से मुझे जान लेते हैं। वे मुकम्मल मा'बूद को, मुकम्मल रूहानियत को, मुकम्मल मख़्सूस देवता को, मुकम्मल अमल को और मुकम्मल यग के साथ मुझे जानते हैं। वे मुझमें दाख़िल होते हैं और आख़िरी वक़्त में मुझको ही जानते है या'नी फ़िर कभी भूलते नहीं हैं।

इस बाब में रूहेमुत्लक़ के मुकम्मल इल्म की तज़्जियः है; लिहाज़ा–

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'समग्रबोधः' नाम सप्तमोऽध्यायः।।७।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'समग्र बोध' (इल्मे मुकम्मल) नाम का सातवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'समग्रबोधः' नाम सप्तमोऽध्यायः।।७।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'समग्र बोध' (इल्मे मुकम्मल) नाम का सातवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ अष्टमोऽध्यायः।।
(आठवाँ बाब)

सातवें बाब के आख़िर में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा कि, इफ़ाती अमल (मुऐयनः अमल, इबादत) को करने वाले जोगी तमाम गुनाहों से नजात पाकर उस साहिबे-जल्वः मा'बूद को जानते हैं या'नी अमल कोई ऐसी चीज़ है, जो जल्वःगर मा'बूद की जानकारी दिलाता है। उस अमल को करने वाले जल्वःगर मा'बूद को मुकम्मल अमल को मुकम्मल रूहानियत को, मुकम्मल मख़्सूस देवता को, मख़्सूस जानदार और मख़्सूस यग के साथ मुझको जानते हैं। लिहाज़ा अमल कोई ऐसी चीज़ है, जो इन सब का इल्म कराती है। वे आख़िरी वक़्त में भी मुझको ही जानते हैं। उनका इल्म कभी फ़रामोश नहीं होता है।

इस पर अर्जुन ने इस बाब के शुरू में ही उन्हीं अल्फ़ाज़ को दुहाराते हुए सवाल खड़ा किया-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम।
अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते।।१।।

ऐ इंसानों में अफ़्ज़ल! वह मा'बूद क्या है? रूहानियत क्या है? अमल क्या है? मख़्सूस जानदार और मख़्सूस देवता किसे कहा जाता है?

अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन्मधुसूदन।
प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः।।२।।

ऐ मधुसूदन! यहाँ मख़्सूस यग कौन है और वह इस जिस्म में कैसे है? साबित है कि मख़्सूस यग या'नी यग का आगाज़ करने वाला कोई ऐसा इंसान है, जो इंसानी जिस्म की बुन्याद वाला है। फ़नाफ़िल्लाह मिज़ाज रखने वाले इंसानों के ज़रीअः आख़िरी वक़्त में आप किस तरह जानने में आते हैं? इन सातों सवालात का सिल्सिलःवार फ़ैसलः देने के लिए जोग के मालिक श्रीकृष्ण बोले-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) –

अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते।
भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्मसञ्ज्ञितः।।३।।

'अक्षरं ब्रह्म परमं'– जो लाफ़ानी है, जिसकी फ़ना नहीं होती, वही आ'ला मा'बूद है। **'स्वभावः अध्यात्मं उच्यते'**– ख़ुद में मुस्तक़िल मिज़ाजी ही रूहानियत या'नी रूह का ही इख़्तियार है। इससे पहले सभी फ़ित्रत (माया) के इख़्तियार में रहते हैं; लेकिन जब 'स्व-भाव' या'नी रूह में मुस्तक़िल क़याम (ख़ुद में इस्तिक़्रार) मिल जाता है तो रूह का ही इख़्तियार उसमें रवाँ हो जाता है। यही रूहानियत है, रूहानियत की इंतिहा है। **'भूतभावोद्भवकरः'**– जानदारों के वे तसव्वुर जो कुछ न कुछ पैदा करते हैं या'नी जानदारों के वे इरादे, जो नेक या बदतअस्सुरात (संस्कारों) की तख़्लीक करते हैं, उनका तर्क या'नी इख़्तिताम, उनका खत्म हो जाना ही अमल की इंतिहा है। यही मुकम्मल अमल है, जिसके लिए जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा था– ''वह मुकम्मल अमल को जानता है।'' वहाँ अमल मुकम्मल है, आगे ज़रूरत नहीं है (मुऐयनः अमल)। इस हालत में जबकि जानदारों के वे तसव्वुर जो कुछ न कुछ तख़्लीक करते हैं, नेक या बदतअस्सुरात को इकट्ठा करते हैं, बनाते हैं, वे जब पूरी तरह से ख़ामोश हो जायँ, तो यही अमल का मुकम्मल होना है, इसके आगे अमल करने की ज़रूरत नहीं रह जाती। लिहाज़ा अमल कोई ऐसी चीज़ है, जो जानदारों के सारे इरादों को, जिनसे कुछ न कुछ तअस्सुरात पैदा होते हैं, उनका ख़ातिमः कर देती है। अमल का मल्लय है (इबादत) ग़ौरोफ़िक्र, जो यग में है।

अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम्।
अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर।।४।।

जब तक ग़ैरफ़ानी का एहसास नहीं हासिल होता तब तक ख़त्म होने वाले सारे फ़ानी एहसासात मख़्सूस जानदार 'अधिभूत' या'नी जानदारों के मक़ाम हैं। वही जानदारों की तख़्लीक़ के वजूहात हैं। **'पुरुषः च अधिदैवतम्'** और दुन्या से मावरा जो आ'ला इंसान है, वही मख़्सूस देवता या'नी तमाम देवताओं (रूहानी दौलत) का निगराँ है, रूहानी दौलत उसी आ'ला मा'बूद में ज़म हो जाती है। जिस्म वालों में अफ़्ज़ल अर्जुन! इस इंसानी जिस्म में मैं ही मख़्सूस यग (अधियज्ञ) या'नी यगों का निगराँ हूँ। लिहाज़ा इसी जिस्म में, ग़ैरमर्ई शक्ल में क़ाइम अज़ीम इंसान ही मख़्सूस यग है। श्रीकृष्ण एक जोगी थे। जो तमाम यगों के सारिफ़ हैं, आख़िर में यग उन्हीं

में ज़म हो जाते हैं। वही आ'ला हक़ीक़ी शक्ल मिल जाती है इस तरह अर्जुन के छः सवालात का हल निकल आया। अब आख़िरी सवाल है कि आख़िरी वक़्त में कैसे आपका इल्म होता है, जो कभी फ़रामोश नहीं होते?

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः।।५।।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं कि, जो इंसान आखिरी वक़्त में या'नी मन की बंदिश और तह्लीली दौर में मेरी ही याद करते हुए जिस्म से क़तातअल्लुक़ हो जाता है, वह **'मद्भाव'**- मुजस्सम मेरी शक्ल को हासिल कर लेता है, इसमें कोई शुब्हः नहीं है।

जिस्म की मौत अस्ल मौत नहीं है। मरने के बा'द भी अज्साम का सिल्सिलः पीछे लगा रहता है। अन्दोख्तः तअस्सुरात की सत्ह के मिट जाने के साथ ही मन पर क़ाबू हो जाता है और वह मन भी जब जज़्ब हो जाता है तो वहीं पर इंतिक़ाल है, जिसके बा'द जिस्म क़बूल नहीं करना पड़ता। यह अमली है। सिर्फ़ कहने से, बात-चीत से समझ में नहीं आता। जब तक लिबासों की तरह जिस्म का बदलाव हो रहा है, तब तक अज्साम का ख़ातिमः कहाँ हुआ? मन की बंदिश और बंदिशशुदः मन के भी तह्लीली दौर में जीते-जी जिस्म के तअल्लुक़ात से अलगाव हो जाता है। अगर मरने के बा'द ही यह हालत मिलती, तो श्रीकृष्ण भी मुकम्मल नहीं होते। उन्होंने कहा कि मुख़्तलिफ़ जनम के रियाज़त से हासिल होने वाला आलिम मुजस्सम मेरी शक्ल है। मैं वह हूँ और वह मुझमें है। मुझमें और उसमें ज़रा-सा भी फ़र्क़ नहीं है। यह जीते-जी का हुसूल है। जब फिर कभी जिस्म न मिले या'नी जनम न लेना पड़े, तो वही अज्साम का ख़ातिमः है।

यह तो हक़ीक़ी जिस्म के ख़ातिमः का बयान हुआ, जिसके बा'द जनम नहीं लेना पड़ता है। दूसरा जिस्म का ख़ातिमः मौत है, जो दुन्या में मुरव्वजः है; लेकिन इस जिस्म के खातिमः के बा'द फिर जनम लेना पड़ता है-

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः।।६।।

कौन्तेय! मौत के वक़्त इंसान ज़ेह्न में जिस तसव्वुर को लिये हुए जिस्म को तर्क करता है, उसी के मुताबिक़ वह जिस्म हासिल करता है। तब तो बड़ा सस्ता

सौदा है। सारी ज़िन्दगी मौज करें, मरने लगे तो मा'बूद को याद कर लेंगे। लेकिन श्रीकृष्ण कहते हैं, ऐसा होता नहीं, **'सदा तद्भावभावितः'**– मरते वक़्त इंसान के ज़ेह्न में वही तसव्वुर आ पाता है, जैसा ताउम्र किया है। वही ख़याल यक-ब-यक आ जाता है, जिनके साथ ज़िंदगी भर मुलव्वस रहा है, इसके इलावः कुछ नहीं हो पाता। लिहाज़ा–

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् ।।७।।

अर्जुन! तू हर वक़्त मेरी याद कर और जंग कर। मुझमें सुपुर्द मन और अक़्ल से मुज़ैयनः होकर तू बिला शुब्हः मुझे ही हासिल करेगा। मुसल्सल ग़ौरोफ़िक्र और जंग एक साथ कैसे मुम्किन है? मुम्किन है कि मुसल्सल ग़ौरोफ़िक्र और जंग की यही शक्ल हो कि 'जय कन्हैयालाल की, 'जय भगवान की' कहते रहें और तीर चलाते रहें। लेकिन याद की हक़ीक़ी शक्ल अगले श्लोक में तफ़्सील के साथ जोग के मालिक बयान करते हैं–

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन्।।८।।

ऐ पार्थ! उस याद के लिए जोग की रियाज़त से मुज़ैयन हुआ (मेरी फ़िक्र और जोग की रियाज़त मुतरादिफ हैं) मेरे सिवा किसी दूसरी तरफ़ न भटकने वाली तबीअ़त से मुसल्सल फ़िक्र करने वाला अह्ले-नूर से मुनव्वर शक्ल वाला मावराई इंसान या'नी रूहे मुत्लक़ को हासिल होता है। फ़र्ज़ कीजिए कि यह पेंसिल मा'बूद है, तो इसके इलावः दूसरी किसी चीज़ की याद नहीं आनी चाहिए। इसके अगल-बगल आपको किताब दिखायी पड़ती है या कोई और चीज़ भी, तो आपकी याद नामुकम्मल हो गयी। याद जब इतनी लतीफ़ है कि मत्लूबः के इलावः दूसरी चीज़ की याद भी न हो, मन में मौजें भी न आएँ, तो याद और जंग दोनों एक साथ कैसे मुम्किन होंगे? दरहक़ीक़त जब आप तबीअ़त को हर तरफ़ से समेटकर अपने एक मा'बूद की याद में लगे होंगे, तो उस वक़्त लौसेदुन्यावाले ख़साइल ख़्वाहिश, ग़ुस्सः, हसद अदावत ख़लल की शक्ल में सामने ज़ाहिर ही हैं। आप याद करेंगे, लेकिन वे आपके अन्दर हलचल पैदा करेंगी, आपका मन याद से मुतज़ल्ज़िल करना चाहेंगी। इन बाहरी ख़साइल पर क़ाबू पाना ही जंग है। मुसल्सल ग़ौरोफ़िक्र के साथ ही जंग मुम्किन है। गीता का एक भी श्लोक बाहरी मार-काट की हिमायत नहीं करता। ग़ौरोफ़िक्र किसका

करें? इस पर फ़र्माते हैं-

कविं पुराणमनुशासितार-
मणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः।
सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूप-
मादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।।९।।

उस जंग के साथ वह इंसान अलीम, अबदी, सबका नाज़िम, लतीफ़ से भी बेइंतिहा लतीफ़, सबकी पर्वरिश करने वाला लेकिन बईदुलक़ियास (जब तक तबीअ़त और तबीअ़त में उठने वाली लहर है, तब तक वह दिखाई नहीं देता। तबीअ़त की बंदिश और तह्लीली दौर में ही जो ज़ाहिर होता है) हमेशः बशक्ले नूर लाइल्मी से दूर उस क़ादिरेमुत्लक़ को याद करता है।

पहले बताया- मेरी फ़िक्र करता है, यहाँ कहते हैं- रूहेमुत्लक़ की। लिहाज़ा उस रूहेमुत्लक़ की फ़िक्र (तसव्वुर) का वसीलः मुबस्सिर अज़ीम इंसान है। इसी तसल्सुल में-

प्रयाणकाले मनसाचलेन
भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव।
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्
स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।।१०।।

जो मुसल्सल उस रूहे मुत्लक़ को याद करता है, वह अक़ीदतमन्द इंसान **'प्रयाणकाले'**-मन को मुद्ग़म करने वाले दौर में, जोग की ताक़त से या'नी उसी मुऐयनः अमल के बरताव के ज़रीअः, दोनों भौंहों के बीच में जान को अच्छी तरह क़ाइम करके (जान व रियाह के रफ़्तार को अच्छी तरह बराबर करके, न अन्दर से हलचल पैदा हो न बाहरी इरादों का असर हो, मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः, मलकाते मज़मूम पूरी तरह ख़ामोश हों, लौ (सुरत) मा'बूद में ही क़ाइम हो, उस दौर में) वह मुस्तह्कम मन या'नी मुस्तक़िल मिज़ाज इंसान उस पुरनूर रूहेमुत्लक़ को हासिल करता है। यह बात हमेशः याद रखने लाइक़ है कि उसी एक रूहेमुत्लक़ के हुसूल का तरीक़ः जोग है। उसके लिए मुऐयनः तरीक़ः का बरताव ही जोग का अमल है, जिसका तफ़्सील से बयान जोग के मालिक ने चौथे और छठें बाब में किया है। अभी उन्होंने कहा- 'मुसल्सल मेरी ही याद कर।' कैसे याद करें? तो इसी जोग के अक़ीदा में साक़िन रहते हुए करना है। ऐसा करने वाला पुरनूर रूहेमुत्लक़ को ही

हासिल करता है, जिसका कभी सह्व नहीं होता। यहाँ इस सवाल का हल निकल आया कि दौरे इंतिक़ाल में आपका इल्म किस तरह होता है? मक़ामे मक़्सूदः की अक्कासी देखें जिसका बयान गीता में जगह-जगह पर आया है-

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति
विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत्ते पदं सङ्ग्रहेण प्रवक्ष्ये।।११।।

'वेदविद्' या'नी नामा'लूम अनासिर को ज़ाहिरी तौर से जानने वाले लोग जिस मक़ामे आ'ला को **'अक्षरम्'**- लाफ़ानी कहते हैं, तारीकुद्दुन्या मर्देख़ुदा जिसमें दाख़िल होने के लिए कोशाँ रहते हैं, जिस आ'ला मक़ाम को चाहने वाले रहबानियत (ब्रह्मचर्य) का इत्तिबाअ करते हैं (ब्रह्मचर्य का मत्लब महज़ उज़्चेतनासुल पर क़ाबू पाना नहीं, बल्कि **'ब्रह्म आचरति स ब्रह्मचारी'**- ख़ारिजी तअस्सुरात को मन से तर्क करके मा'बूद की मुसल्सल फ़िक्र और याद ही ब्रह्मचर्य है, जो मा'बूद का दीदार कराने के बा'द उसी में मक़ाम दिलाकर ख़ामोश हो जाता है। इस बरताव से ज़ब्तेनफ़्स ही नहीं बल्कि तमाम हवास पर अपने आप क़ाबू हो जाता है। इस तरह जो ब्रह्मचर्य का बरताव करते हैं, जो दिल में क़ाबिले ज़ख़ीरः है, क़बूल करने लाइक़ है, उस मक़ाम के बारे में मैं तुझे बताऊँगा। वह मक़ाम है क्या? कैसे हासिल किया जाता है? इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं-

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम्।।१२।।

सारे हवास के दरवाज़ों को बन्दकर या'नी ख़्वाहिशात से अलग रहक़र, मन को दिल में क़ाइम करके (तसव्वुर दिल में किया जाता है, बाहर नहीं; इबादत बाहर नहीं होती) जान या'नी बातिन के कारोबार को दिमाग़ में कैदकर, जोग के अक़ीदः में क़ाइम होकर (जोग को क़बूल किये रहना है, दूसरा तरीक़ः नहीं है) इस तरह क़ाइम होकर-

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्।।१३।।

जो इंसान **'ओम् इति'**- ओम् इतना ही, जो लाफ़ानी मा'बूद का मज़्हर है

उसका विर्द और मेरी याद करता हुआ जिस्म को तर्क करता है, वह इंसान आ'ला नजात को हासिल करता है।

श्रीकृष्ण एक जोग के मालिक, आ'ला उंसुर में क़ाइम अज़ीम इंसान, मुर्शिद थे। जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया कि 'ओम्' लाफ़ानी मा'बूद का मज़्हर है, तू उसका विर्द कर और याद मेरी कर। मक़्सूद हासिल करने के बा'द हर अज़ीम इंसान का नाम वही होता है, जिसे वह हासिल है, जिसके अन्दर वह ज़म है। लिहाज़ा नाम 'ओम्' का बताया और शक्ल अपनी। जोग के मालिक ने 'कृष्ण-कृष्ण' विर्द करने की हिदायत नहीं दी। वक़्त के साथ अक़ीदतमन्दों ने उनके नाम का भी विर्द करना शुरू कर दिया और अपनी अक़ीदत के मुताबिक़ उसका समरः भी हासिल करते हैं, जैसा कि इंसान की अक़ीदत जहाँ टिक जाती है, वहाँ मैं ही उसकी अक़ीदत को तस्दीक करता और मैं ही समरः का इंतिज़ाम भी करता हूँ।

भगवान् शिव ने 'राम' लफ़्ज़ का विर्द करने पर ज़ोर दिया। **'रमन्ते योगिनः यस्मिन् स राम।'**, **'रा और म के बीच में कबिरा रहा लुकाय।'**- 'रा' और 'म' इन दो दुरूफ़ के बीच में कबीर अपने मन को रोकने में क़ादिर हो गये।

श्रीकृष्ण 'ओम्' पर ज़ोर देते है। 'ओऽहं स ओम्' या'नी वह इक़्तिदार मेरे अन्दर है, कहीं बाहर न तलाश करने लगें। यह 'ओम्' भी उस इक़्तिदारे आ'ला का तअर्रुफ़ कराकर साकिन हो जाता है। दरहक़ीक़त उस मा'बूद के बेशुमार नाम हैं लेकिन विर्द के लिए वही नाम मुनासिब है, जो छोटा हो, साँस में ढल जाये और एक रूहेमुत्लक़ का ही एहसास कराता हो। उससे अलग तमाम देवी-देवताओं के नासमझी से भरे तख़य्युल में उलझकर मंज़िले मक़्सूद से नज़र न हटा लें। 'काबिले एहतिराम महाराज जी' कहा करते थे कि- ''मेरी शक्ल देखें और अक़ीदत के मुताबिक़ कोई भी दो-ढाई हुरूफ़ का नाम- ॐ, 'राम', 'शिव' में से कोई एक को ले लें। उसकी फ़िक्र करें और उसी के मा'ना के मुताबिक़ मत्लूब की शक्ल का तसव्वुर करें।'' तसव्वुर मुर्शिद का ही किया जाता है।

आप 'राम', 'कृष्ण' या **'वीतराग विषयं वा चित्तम्'**-तारीकुद्दुन्या मर्देख़ुदा हज़्रात ख़्वाह **'यताभिमतध्यानाद्वा'** (पातंजल योगदर्शन, १/३७, ३९) किसी की भी शक्ल का तसव्वुर करें, वे तज़्रिबः में आपको मिलेंगे और आपके दौर के किसी मुर्शिद की तरफ़ बढ़ा देंगे, जिनकी रहनुमाई से आप धीरे-धीरे दुन्यवी दाइरे से बाहर निकलते जायेंगे। मैं भी शुरू में एक देवता (कृष्ण की अज़ीमुश्शान शक्ल) की तस्वीर का

तसव्वुर करता था; लेकिन क़ाबिले परस्तिश महाराज जी के तज्रिबाती दख़्ल के साथ वह ख़त्म हो गया।

इब्तिदाई रियाज़तकश नाम का तो विर्द करते हैं लेकिन अज़ीम इंसान की शक्ल का तसव्वुर करने में हिचकते हैं। वे अपने भीतर पहले से ही मौजूद मुसल्लमात को ज़िद के बिना पर तर्क नहीं कर पाते। वे किसी दूसरे देवता का तसव्वुर करते हैं, जिसकी जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने मुमानअत की है। लिहाज़ा पूरी ख़ुद सुपुर्दगी के साथ किसी तज्रिबःकार अज़ीम इंसान की पनाह लें। नेक वदीयत ताक़तवर होते ही ग़लत दलीलों का ख़ातिमः और हक़ीक़ी अमल में दाख़िलः मिल जायेगा। जोग के मालिक श्रीकृष्ण के मुताबिक़ इस तरह 'ॐ' के विर्द और मा'बूद की शक्ल वाले मुर्शिद की मुसल्सल याद करने से मन पर क़ाबू और मन की तह्लील हो जाती है और उसी वक़्त जिस्म से क़तातअल्लुक़ हो जाता है। सिर्फ़ मौत हो जाने से जिस्म पीछा नहीं छोड़ता।

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः।।१४।।

''मेरे इलावः और कोई तबीअ़त में है ही नहीं''- दूसरे किसी का तसव्वुर न करता हुआ या'नी लाशरीक तबीअ़त से मुस्तक़िल हुआ, जो मुसल्सल मेरी याद करता है, उस हमेशः मेरे अन्दर क़ाइम जोगी के लिए मैं हासिल हूँ। आपके हासिल होने से क्या मिलेगा?

मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम्।
नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः।।१५।।

मुझे हासिल करके वे दुःखों के कान की तम्सील लम्हाती दुबारः पैदाइश को हासिल नहीं करते बल्कि उनको आ'ला कामयाबी मिल जाती है या'नी मुझे हासिल करना या आ'ला कामयाबी को हासिल करना एक ही बात है। सिर्फ़ मा'बूद ही ऐसे हैं, जिन्हें हासिल करने के बा'द उस इंसान को दुबारः जनम नहीं लेना पड़ता। फिर दुबारः जनम लेने की हद कहाँ तक है?

आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते।।१६।।

अर्जुन! ख़ालिक़ से लेकर हशरातुलअर्ज़ वग़ैरः सभी के लिए दुन्या में आमदोरफ़्त का सिल्सिलः लगा हुआ है, जनम लेने और मरने व बार-बार इसी तसल्सुल में चलते

रहने वाले हैं, लेकिन कौन्तेय! मुझे हासिल होकर उस इंसान का दुबारः जनम नहीं होता।

मज़्हबी किताबों में आलम और आलमेवाला का तसव्वुर ख़ुदाई राह की शौकतों का एहसास कराने के दाख़िली तज्रिबात ख़्वाह मह्ज़ तम्सीलात हैं। ख़ला में न तो कोई ऐसा गड्ढा है, जहाँ कीड़े काटते हों और न ऐसा महल जिसे जन्नत कहा जाता हो। रूहानी दौलत से मुज़ैयन इंसान देवता (फ़िरिश्तः) और दुन्यवी दौलत से मुज़ैय्यन इंसान ही शैतान। श्रीकृष्ण के ही हक़ीक़ी रिश्तेदार कंस और बाणासुर दैत्य और शैतान थे। देवता, इंसान और दूसरे जानवरों, चिड़ियों वग़ैरः शक्लें (योनियाँ) ही मुख़्तलिफ अवालिम हैं। श्रीकृष्ण के मुताबिक़ यह ज़ीरूह मन के साथ पाँचों हवास को लेकर जनम-जनम के तअस्सुरात के मुताबिक़ नया जिस्म क़बूल कर लेती है।

लाफ़ानी कहे जाने वाले देवताओं की भी मौत होती है- **'क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति'** (सवाब ख़त्म हो जाने पर फ़ानी दुन्या में चले आते हैं)। इससे बड़ा नुक़्सान क्या होगा? वह देवता का जिस्म ही किस काम का, जिसमें मह्फ़ूज़ सवाब भी ख़त्म हो जाय? देवताओं की दुन्या, जानवरों की दुन्या, हशरातुलअर्ज़ वग़ैरः की दुन्या मह्ज़ तअय्युशात की दुन्या है। सिर्फ़ इंसान ही आ'माल को तख़्लीक़ करने वाला है, जिसके ज़रीअः वह उस आ'ला मक़ाम तक को हासिल कर सकता है, जहाँ से आमदोरफ़्त का सिल्सिलः टूट जाता है। हक़ीक़ी अमल का बरताव करके इंसान देवता बन जाय, ख़ालिक़ का मर्तबः हासिल कर ले, लेकिन वह आमदोरफ़्त से तब तक नहीं बच सकता, जब तक कि मन की बंदिश और ज़म होने के साथ रुहेमुत्लक़ का बदीही दीदार करके उसी एहसासे आ'ला में क़ाइम न हो जाय। मिसाल के तौर पर उपनिषद् भी इसी हक़ीक़त को ज़ाहिर करते हैं-

यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येऽस्य हृदि श्रिता।
अथ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्नुते।। कठो० (२/३/१४)

जब मन में मौजूद तमाम ख़्वाहिशात जड़ से ख़त्म हो जाती हैं, तब मौत से वास्तः रखने वाला इंसान हयाते जावेदानी पा जाता है, और यहीं, इसी दुन्या में, इसी इंसानी जिस्म में आ'ला मा'बूद का मुजस्सम रू-ब-रू एहसास कर लेता है।

सवाल उठता है कि क्या ख़ालिक़ भी फ़ानी है? तीसरे बाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने तख़्लीक़एकार ख़ालिक़ के हवाले से कहा था कि हुसूल के बा'द अक़्ल मह्ज़ एक मशीन है। उसके ज़रीअः रूहे मुत्लक़ ही ज़ाहिर होता है। ऐसे अज़ीम

इंसानों के ज़रीअः ही यग की तख़्लीक़ हुई है और यहाँ कहते हैं कि ख़ालिक़ का मर्तबः हासिल करने वाला भी आमदोरफ़्त की गिरिफ़्त में है। जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहना क्या चाहते हैं?

दरहक़ीक़त जिन अज़ीम इंसानों के ज़रीअः रूहेमुत्लक़ ही ज़ाहिर होता है, उन अज़ीम इंसानों की अक़्ल भी ख़ालिक़ नहीं है, लेकिन लोगों को पन्दो-नसीहत करने के बिना पर, नेकी का आग़ाज़ करने की वजह से ख़ालिक़ कहे जाते हैं। ख़ुद में वे ख़ालिक़ भी नहीं हैं। उनके पास अपनी अक़्ल रह ही नहीं जाती। लेकिन इसके पहले रियाज़त के दौर में अक़्ल ही ख़ालिक़ है- **'अहंकार सिव बुद्धि अज, मन ससि चित्त महान।'** (रामचरितमानस, ६/१५ क)।

आम इंसान की अक़्ल ख़ालिक़ नहीं है। अक़्ल जब मा'बूद में दाख़िल होने लगती है, उसी वक़्त से ख़ालिक़ की तख़्लीक़ शुरू हो जाती है, मुफ़क्किरीन ने जिसके चार ज़ीने बताये हैं। गुज़श्तः बाब तीन में बयान कर आये हैं, याद-देहानी के लिए फिर देख सकते हैं- हक़शनास (**ब्रह्मवित्**), आ'ला हक़शनास (**ब्रह्मविद्वर**), आ'लातर हक़शनास (**ब्रह्मविद्वरीयान्**), आ'लातरीन हक़शनास (**ब्रह्मविद्वरिष्ट**)। हक़शनास वह अक़्ल है, जो इल्मे तसव्वुफ (ब्रह्मविद्या) से मुज़ैयन हो। आ'लाहक़शनास (ब्रह्मविद्वर) वह है, जो इल्मे तसव्वुफ़ में अफ़्ज़ल हो। आ'लातरीन हक़शनास (ब्रह्मविद्वरीयान) वह अक़्ल है, जिससे वह इल्मे तसव्वुफ में माहिर ही नहीं बल्कि उसका मुंतज़िम, नाज़िम बन जाता है। आ'लातरीन हक़शनास अक़्ल की वह आख़िरी हद है, जहाँ मा'बूद रवाँ-दवाँ है। यहाँ तक अक़्ल का वुजूद है, क्योंकि रवाँ होने वाला मा'बूद अभी कहीं अलग है और क़बूल करने वाली अक़्ल अलग है। अभी वह फ़ित्रत की सरहद में है। अब ख़ुद बशक्ले नूर में जब अक़्ल (ख़ालिक़) रहती है, बाहोश है, तो तमाम दुन्या (फ़िक्र का बहाव) बाहोश है और जब जहालत में रहती है, तो बेहिस है। इसी को रोशनी और अँधेरा, रात और दिन कहकर मुख़ातब किया जाता है। देखें- ख़ालिक़ या'नी हक़शनासी का वह दर्जः जिसमें मा'बूद की रवानी है, उसको हासिल करने वाली बेह्तरीन अक़्ल में भी इल्म (जो ख़ुद बशक्ले नूर है, उसमें मिलाता है) का दिन और जहालत की रात, रोशनी और अंधेरे का सिल्सिलः लगा रहता है, यहाँ तक रियाज़तकश में लौसेदुन्या (माया) कामयाब होती है। रोशनी के दौर में बेहिस जानदार बाहिस हो जाते हैं, उन्हें मंज़िल दिखायी पड़ने लगती है और अक़्ल के बीच में जहालत की रात के इब्तिदाई दौर में सभी जानदार बेहिस हो जाते हैं। अक़्ल तय

नहीं कर पाती। अस्ल मक़्सूद की तरफ़ बढ़ना रुक जाता है। यही ख़ालिक़ का दिन और यही ख़ालिक़ की रात है। दिन की रोशनी में अक़्ल के हज़ारों ख़साइल में ख़ुदाई नूर छा जाता है और जहालत की रात में इन्हीं हज़ारों परतों में बेहिसी की हालत का अँधेरा छा जाता है।

मुबारक और नामुबारक, इल्म और जहालत इन दोनों ख़साइल के पूरी तरह ख़ामोश होने पर या'नी बेहिस और बाहिस, रात में ग़ाइब और दिन में ज़ाहिर दोनों तरह के जानदारों (अज़्म की रवानी) के मिट जाने पर उस ग़ैरमर्ई अक़्ल से भी मावरा दाइमी, ग़ैरमर्ई, एहसास मिलता है, जो फिर कभी ख़त्म नहीं होता। जानदारों के बेहिस और बाहिस दोनों हालात के मिटने पर ही वह अबदी एहसास हासिल होता है।

अक़्ल की मज़्कूरएवाला चार हालात के बा'द वाला इंसान ही अज़ीम इंसान है। उसके बीच में अक़्ल नहीं है, अक़्ल रूहेमुत्लक़ की मशीन जैसी हो गई है लेकिन लोगों को वह वाज़ोपन्द करता है, यक़ीन के साथ तर्ग़ीब देता है; लिहाज़ा उसमें अक़्ल महसूस होती है। लेकिन वह अक़्ल की सत्ह से मावरा है। वह आ'ला ग़ैरमर्ई ख़याल में मौजूद है। उसका दुबारः जनम नहीं होना है, लेकिन इस ग़ैरमर्ई हालत से पहले जब तक उसके पास अपनी अक़्ल है, जब तक वह ख़ालिक़ है; वह दुबारः जनम लेने के दाइरः में ही है। इन्हीं हक़ाइक पर रोशनी डालते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं–

सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः।।१७।।

जो हज़ार चारों ज़मानों (सतजुग, त्रेता, द्वापर, कलजुग) वाली ख़ालिक़ की रात और हज़ार चारों ज़मानों के उसके दिन को ज़ाहिर तौर से जानते हैं, वे इंसान वक़्त के उंसुर को हक़ीक़ी जानते हैं।

पेशक़र्दः श्लोक में दिन और रात, इल्म और जहालत की शबीह हैं। इल्मे तसव्वुफ़ से मुज़ैयन अक़्ल ख़ालिक़ की इब्तिदा और आ'लातरीन हक़शनास अक़्ल ख़ालिक़ की इंतिहा है। इल्म से मुज़ैयन अक़्ल ही ख़ालिक़ का दिन है। जब इल्म मुतहर्रिक होता है, उस वक़्त जोगी हक़ीक़ी शक्ल की तरफ़ ग़्रामज़न होता है, बातिन के हज़ारों ख़साइल में ख़ुदाई नूर की तह्रीक हो उठती है। इसी तरह जहालत की रात आने पर बातिन की हज़ारों ख़साइल में लौसे दुन्या का तूफ़ान खड़ा होता है।

रोशनी और तारीक़ी की यहीं तक हद है। इसके बा'द न तो जहालत रह जाती है और न इल्म ही। वह उंसुरे आ'ला रूहे मुत्लक़ ज़ाहिर हो जाता है। जो इसे उंसुर से अच्छी तरह जानते हैं, वे जोगी हज़्रात दौर के उंसुरे को जानने वाले हैं कि कब जहालत की रात होती है, कब इल्म का दिन होता है? दौर का असर कहाँ तक है? वक़्त कहाँ तक पीछा करता है? क़दीमी ज़मानः के मुफ़क्किरीन बातिन को तबीअ़त (चित्त) या कभी-कभी सिर्फ़ अक़्ल कहकर मुख़ातब करते थे। वक़्त के साथ बातिन की तक़्सीम मन, अक़्ल, तबीअ़त और गुरूर के चार ख़ास ख़साइल में की गयी, वैसे बातिन के ख़साइल लामुतनाही है। अक़्ल के अस्ना में ही जहालत की रात होती है और उसी अक़्ल में इल्म का दिन भी होता है। यही ख़ालिक़ की रात और दिन है। दुन्यवी रात में सारे जानदार बेहिस पड़े हैं। दुन्या में भटकती हुई उनकी अक़्ल उस नूरानी शक्ल में को नहीं देख पाती, लेकिन जोग का अमल करने वाले जोगी इससे जग जाते हैं, वे हक़ीक़ी शक्ल की तरफ़ बढ़ते हैं, जैसा कि गोस्वामी तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' में लिखा है-

कबहुँ दिवस महँ निबिड़ तम, कबहुँक प्रगट पतंग।
बिनसइ उपजइ ज्ञान जिमि, पाइ कुसंग सुसंग।।

(रामचरितमानस, ४/१५ ख)

इल्म से मुज़ैयन अक़्ल बुरी सुह्बत के ज़ेरे-असर जहालत में बदल जाती है। फिर सालेह सुह्बत से इल्म की रवानी उसी अक़्ल में हो जाती है। यह उतार-चढ़ाव आख़िर तक लगा रहता है। तक्मील के बा'द न अक़्ल है न ख़ालिक़, न रात रहती है न दिन। यही ख़ालिक़ के दिन-रात की तम्सीलात हैं। न हज़ारों साल की तवील रात होती है, न हज़ारों चार दौरों का दिन ही होता है और न कहीं कोई चार मुँह वाला ख़ालिक़ ही है। अक़्ल के मज़्कूरएबाला चार सिल्सिलःवार हालात ही ख़ालिक़ के चार मुँह और बातिन के चार ख़ुसूसी ख़साइल ही उनके चार ज़माने है। रात और दिन इन्हीं ख़साइल में होते हैं। जो इंसान इसके फ़र्क़ को उंसुर से जानते हैं, वे जोगी हज़्रात दौर के राज़ को जानते हैं कि दौर कहाँ तक पीछा करता है और कौन इंसान दौर से भी दूर हो जाता है। रात और दिन जहालत और इल्म में होने वाले काम को जोग के मालिक श्रीकृष्ण साफ़ करते हैं-

अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसञ्ज्ञके।।१८।।

ख़ालिक़ के दिन के इब्तिदाई दौर में या'नी इल्म (रूहानी दौलत) के शुरुआती दौर में तमाम जानदार ग़ैरमर्ई अक़्ल में बेदार हो जाते हैं और रात के इब्तिदाई दौर में उसी ग़ैरमर्ई, मख़्फ़ी अक़्ल में बेदारी के लतीफ़ उंसुर बेहिस हो जाते हैं। वे जानदार जहालत की रात में हक़ीक़ी शक्ल को साफ़ तौर से देख नहीं पाते लेकिन उनका वुजूद रहता है। बेदार होने और बेहिस होने का वसीलः यह अक़्ल है, जो सबमें ग़ैरमर्ई की हालत में रहती है, आम नज़र से दिखायी नहीं पड़ती है।

भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।
रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे।।१९।।

ऐ पार्थ! सारे जानदार इस तरह बेदार रहक़र दुन्यवी दबाव के तह्त मज़्बूर होकर जहालत की शक्ल वाली रात के आने पर बेहिस हो जाते हैं। वे नहीं देख पाते कि हमारा मक़्सूद क्या है? दिन (इल्म) के इब्तिदाई दौर में वे फिर बेदार हो जाते हैं। जब तक अक़्ल है, तब तक इसके अस्ना में इल्म और जहालत का सिल्सिलः ज़ारी रहता है। तब तक वह रियाज़तकश ही है, अज़ीम इंसान नहीं।

परस्तस्मात्तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः।
यः स सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति।।२०।।

एक तो ख़ालिक़ या'नी अक़्ल ग़ैरमर्ई है, हवास से दिखाई नहीं पड़ती और इससे भी मावरा अबदी ग़ैरमर्ई एहसास है, जो जानदारों के ख़त्म होने पर भी ख़त्म नहीं होता या'नी इल्म में होशमंद और जहालत में बेहिस, दिन में पैदा होने और रात में मख़्फ़ी एहसास वाले ग़ैरमर्ई ख़ालिक़ के भी मिट जाने पर वह अबदी ग़ैरमर्ई एहसास मिलता है, जो ख़त्म नहीं होता। अक़्ल में पैदा होने वाले मज़्कूरः दोनों उतार-चढ़ाव जब मिट जाते हैं, तब अबदी ग़ैरमर्ई एहसास हासिल होता है, जो मेरा आ'ला मक़ाम है। जब अबदी ग़ैरमर्ई एहसास हासिल हो गया, तो अक़्ल भी उसी एहसास में हमरंग जाती है, उसी एहसास को क़बूल कर लेती है। लिहाज़ा वह अक़्ल ख़ुद तो मिट जाती है और उसकी जगह पर अबदी ग़ैरमर्ई एहसास ही बाक़ी बचता है।

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम्।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम।।२१।।

उस अबदी ग़ैरमर्ई एहसास को अक्षर (लाफ़ानी या'नी कभी फ़ना न होने

वाला) कहा जाता है। उसी को आ'ला नजात कहते हैं। वही मेरा आ'ला मक़ाम है, जिसे हासिल करने के बा'द इंसान पीछे नहीं लौटते। उनका दुबारः जनम नहीं होता। इस अबदी ग़ैरमर्ई एहसास को हासिल करने का तरीक़ः बताते हैं-

पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया।
यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम्।।२२।।

पार्थ! जिस रूहेमुत्लक़ में सारे माद्दीयात मौजूद हैं, जिससे सारी दुन्या जारी-ओ-सारी हैं, अबदी ग़ैरमर्ई एहसासवाला वह आ'ला इंसान लाशरीक़ अक़ीदत से क़ाबिले हुसूल लाइक़ है। लाशरीक़ अक़ीदत का मत्लब है कि रूहेमुत्लक़ के इलावः किसी दूसरे की याद न करते हुए उनसे वाबस्तः हो जाय। पूरी अक़ीदत के साथ लगने को वाले इंसान भी कब तक दुबारः जनम लेने की हद में हैं और कब वे इस हुदूद पार कर जाते हैं? इस पर जोग के मालिक बयान करते हैं-

यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः।
प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ।।२३।।

ऐ अर्जुन! जिस दौर में जिस्म से क़तातअल्लुक़ होकर जाने वाले जोगी हज़्रात का दुबारः जनम नहीं होता और जिस दौर में जिस्म से क़तातअल्लुक़ होकर दुबारः जनम हासिल करते हैं, मैं अब उस वक़्त का बयान करता हूँ।

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम्।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः।।२४।।

जिस्म से तर्फे तअल्लुक़ करते वक़्त जिनके सामने रौशनज़दः आग जल रही हो, दिन का उजाला फ़ैला हो, सूरज चमक रहा हो, शबेमाह (शुक्ल पक्ष) का चाँद शबाब पर हो, जानिबे शिमाल का बिना बादलों वाला हसीन आस्मान हो, उस वक़्त दुन्या जुदा होकर जाने वाले हक़शनास जोगी हज़्रात मा'बूद को हासिल करते हैं।

आग मा'बूद के जलाल की अलामत है। दिन इल्म की रोशनी है। शबेमाह का उजला हिस्सः पाकीज़गी की निशानी है। इर्फ़ान, तर्केदुन्या, सरकोबी, नफ़्सकुशी, जलाल और इल्मों दानाई - ये छः शौकतें ही छः महीनें हैं। बलन्दी की तरफ़ आगे बढ़ने की हालत ही जानिबे शिमाल (उत्तरायण) है। दुन्या से हर तरह से मावरा इस हालत में जाने वाले हक़शनास जोगी हज़्रात मा'बूद को हासिल करते हैं, उनका दुबारः जनम नहीं होता; लेकिन लाशरीक मिज़ाज से लगे हुए जोगी हज़्रात अगर इस नूर

को हासिल नहीं कर पाये, जिनकी रियाज़त अभी मुकम्मल नहीं है, उनका क्या हश्र होता है?- इस पर कहते हैं-

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम्।
तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते।।२५।।

जिसकी वफ़ात के वक़्त धुआँ फैल रहा हो, जोग की आग हो (आग यग के तरीक़-ए-कार में पायी जाने वाली आग की शक्ल है) लेकिन धुएँ से ढँका हुआ हो, जहालत की रात हो, अँधेरा हो, शबे तारीक (कृष्णपक्ष) का चाँद कमज़ोर हो रहा हो, तारीकी की ज़ियादती हो, छः उयूब (ख़्वाहिश, गुस्सः, लालच, फ़िरेफ़्तगी, मद्होशी और हसद) से मुज़ैयन जानिबे-जुनूब (दक्षिणायन) या'नी बरख़िलाफ़ हो (जो रूहेमुत्लक़ के अन्दर इस्तेक़ार की हद से अभी बाहर है)? उस जोगी को फिर जनम लेना पड़ता है। तो क्या जिस्म के साथ उस जोगी की रियाज़त ख़त्म हो जाती है? इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं-

शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते।
एकया यात्यनावृत्तिमन्ययावर्तते पुनः।।२६।।

मज़्कूरः सफ़ेद और सियाह दोनों तरह के हालात दुन्या में दाइमी हैं या'नी वसीलः का कभी ख़ातिमः नहीं होता। एक उजली (सफ़ेद) हालत में वफ़ात पाने वाला दुबारः लौटकर वापस न आने वाली आ'ला नजात को हासिल करता है और दूसरी हालत में, जिसमें कमज़ोर रोशनी और अभी सियाही (अंधेरा) है, ऐसी हालत को पहुँचा हुआ पीछे को लौटता है, जनम लेता है। जब तक मुकम्मल रोशनी नहीं मिलती तब तक उसे यादे-इलाही में मश्गूल रहना है। सवाल पूरा हुआ। अब इसके लिए वसीलः पर फिर ज़ोर देते हैं-

नैते सृती पार्थ जानन्योगी मुह्यति कश्चन।
तस्मात्सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन।।२७।।

पार्थ! इस तरह इन रास्तों को जानकर कोई भी जोगी फ़िरेफ़्तः नहीं होता। वह जानता है कि मुकम्मल रोशनी हासिल कर लेने पर मा'बूद को हासिल करेगा और रोशनी में कमी रह जाने पर भी दुबारः जनम में वसीलः का ख़ातिमः नहीं होता। दोनों हालात दाइमी है। लिहाज़ा अर्जुन! तू हर दौर में जोग से मुज़ैयन बन या'नी मुसल्सल रियाज़त कर।

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव
दानेषु यत्पुण्यफलं प्रदिष्टम्।
अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा
योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम्।।२८।।

इसको बदीही दीदार के साथ जानकर (मानकर नहीं) जोगी वेद, यग, रियाज़त और सदक़ः के नेक नताइज की हदों को बिला शुब्हः फ़लाँग जाता है और अबदी आ'ला मक़ाम को हासिल कर लेता है। ग़ैरमर्ई रूहे मुत्लक़ के रू-ब-रू इल्म का नाम वेद है। वह ग़ैरमर्ई उंसुर जब ज़ाहिर हो ही गया, तो अब कौन किसे जाने? लिहाज़ा ज़ाहिर होने के बा'द वेदों से भी वास्तः ख़त्म हो जाता है, क्योंकि जानने वाला अलग नहीं है। यग या'नी इबादत का मुऐयनः तरीक़ः जरूरी था, लेकिन जब यह उंसुर ज़ाहिर हो गया तो किसके लिए याद करें? मन के साथ हवास को मक़्सूद के मुताबिक़ तपाना रियाज़त है। मक़्सद हासिल होने पर किसके लिए रियाज़त करें? मन, ज़बान और अमल के साथ पूरे ख़ुलूस, पूरे एहसास से ख़ुद सुपुर्दगी का नाम सदक़ः है। इन सबका नेक नतीजः है- रूहेमुत्लक़ का हुसूल। नतीजः भी अब जुदा नहीं है। लिहाज़ा इन सबकी अब जरूरत नहीं रह गयी। वह जोगी यग, रियाज़त, सदक़ः वग़ैरः मिलने वाले समरः की हदों को भी पार कर जाता है। वह आ'ला मक़ाम को हासिल करता है।

मग़्ज़े सुख़न :-

इस बाब में पाँच ख़ास नुक़्तों पर ग़ौर किया गया, जिनमें सबसे पहले बाब सात के आख़िर में जोग के मालिक श्रीकृष्ण के ज़रीअः उठाये गये सवालों को साफ़-साफ़ समझने के तजस्सुस से इस बाब के शुरू में अर्जुन ने सात सवालात खड़ा किये कि बन्दःपर्वर! जिसे आपने बताया, वह मा'बूद क्या है? वह रूहानियत क्या है? वह मुकम्मल अमल क्या है? मख़्सूस देवता, मख़्सूस जानदार और मख़्यूस यग क्या है? और आख़िरी वक़्त में आप किस तरह इल्म में आते हैं कि कभी फ़रामोश से नहीं होते? जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया कि जिसका ख़ातिमः नहीं होता, वही आ'ला मा'बूद है। ख़ुद की हुसूलयाबी वाला आ'ला एहसास ही रूहानियत है। जिससे जीव दुन्यवी फ़ित्रत के इख़्तियार से आज़ाद होकर रूह के इख़्तियार में हो जाता है, वही रूहानियत है और जानदारों के एहसास जो मुबारक ख़्वाह नामुबारक तअस्सुरात (संस्कारों) को जनम देते हैं, उन एहसासात का रुक जाना, **'विसर्गः'**- मिट जाना ही

मुकम्मल अमल है। इसके आगे अमल करने की ज़रूरत नहीं रह जाती। अमल कोई ऐसी चीज़ है, जो तअस्सुरात के मख़्रज को ही ख़त्म कर देता है।

इसी तरह फ़ना का एहसास मख़्सूस जानदार है या'नी ख़त्म होने वाले ही जानदारों को जनम देने में वसीले हैं। वे ही जानदारों के निगराँ हैं। आ'ला इंसान ही मख़्सूस देवता (अधिदैव) है। उसमें रूहानी दौलत ज़म होती है। इस जिस्म में मख़्सूस यग मैं ही हूँ या'नी जिसमें यग ज़म होते हैं, वह मैं हूँ, यग का निगराँ हूँ। वह मेरी हक़ीक़ी शक्ल को ही हासिल करता है या'नी श्रीकृष्ण एक जोगी थे। मख़्सूस यग कोई ऐसा इंसान है, जो इस जिस्म में मक़ाम करता है, बाहर नहीं। आख़िरी सवाल था कि, आख़िरी वक़्त में आप किस तरह इल्म में आते हैं? उन्होंने फ़र्माया कि जो मेरी मुसल्सल याद करते हैं, मेरे सिवा किसी दूसरे मौजूआत का ख़याल नहीं आने देते और ऐसा करते हुए जिस्म से वास्तः छोड़ देते हैं, वे मेरी मुजस्सम हक़ीक़ी शक्ल को हासिल करते हैं, उन्हें आख़िर में भी वही हासिल रहता है। जिस्म की मौत के साथ यह हुसूलयाबी होती हो, ऐसी बात नहीं है। फ़ना होने पर ही हासिल होता तो श्रीकृष्ण मुकम्मल न होते, तमाम जनमों से चलकर हासिल करने वाला आलिम उनका हममर्तबः न होता। मन पर पूरी तरह बन्दिश और बन्दिशशुदः मन की भी तह्लील ही इंतिक़ाल है, जहाँ दुबारः अज्साम की पैदाइश का वसीला ख़त्म हो जाता है। उस वक़्त वह आ'ला एहसास में दाख़िलः हासिल कर लेता है, उसकी दुबारः पैदाइश नहीं होती।

इस हुसूल के लिए उन्होंने मा'बूद से लौ लगाने का तरीक़ः बताया कि अर्जुन! मुसल्सल मेरी याद कर और जंग कर। दोनों एक साथ कैसे होगा? मुम्किन है ऐसा हो कि 'जय गोपाल, हे कृष्ण' कहते रहे, डंडा भी चलाते रहें। यादे इलाही की हक़ीक़ी शक्ल को साफ़ किया कि, जोग के अक़ीदा में क़ाइम रहते हुए, मेरे सिवा दूसरी किसी भी चीज़ की याद न करते हुए मुसल्सल याद में मश्ग़ूल रह। जब याद इतनी दक़ीक़ है, तो जंग कौन करेगा? मान लीजिए, यह किताब मा'बूद है, तो इसके अग़ल-बग़ल की चीज़ें, सामने बैठे हुए लोग या दूसरी देखी-सुनी हुई कोई चीज़ इरादे में भी न आये, दिखाई न पड़े। अगर दिखाई पड़ती है, तो यादे इलाही नहीं है। ऐसी याद में जंग कैसी? दरहक़ीक़त जब आप इस तरह मुसल्सल यादे इलाही में डूबे होंगे, तो उसी पल जंग की सहीह शक्ल सामने खड़ी होती है। उस वक़्त लौसेदुन्या वाली ख़स्लत ख़लल की शक्ल में सामने ही है। ख़्वाहिश, ग़ुस्सः, हसद अदावत असीरुलफ़त्ह

दुश्मन हैं। ये दुश्मन याद में मश्गूल नहीं रहने देंगे। इनसे पार पाना ही जंग है। इन दुश्मनों के ख़त्म हो जाने पर भी इंसान आ'ला नजात को हासिल करता है।

इस आ'ला नजात को हासिल करने के लिए अर्जुन! तू विर्द तो 'ओम्' का और तसव्वुर मेरा कर। या'नी श्रीकृष्ण एक मर्देकामिल थे। नाम और शक्ल इबादत की कुंजी है।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने इस सवाल को भी उठाया कि आमदो-रफ़्त क्या है? उसके दाइरे में कौन-कौन आते हैं? उन्होंने बताया कि ख़ालिक़ से लेकर सारी दुन्या आमदो-रफ़्त की गिरिफ़्त में है और इन सबके ख़त्म होने पर भी मेरा आ'ला ग़ैरमर्ई एहसास और उसमें क़याम की हालत ख़त्म नहीं होती।

इस जोग में दाख़िल इंसान के दो हालात हैं। जो मुकम्मल नूर को हासिल करने वाली छः शौकतों से मुज़ैयन माइले बलन्दी है, जिसमें ज़रा-सी भी कमी नहीं है, वह आ'ला नजात को हासिल करता है। अगर उस जोग के कारकून में ज़रा-सी भी कमी है, शबे तारीक-सी सियाही की तह्रीक है, ऐसी हालत में ही जिस्म का वक़्त ख़त्म होने वाले जोगी को जनम लेना पड़ता है। वह आम जानदार की तरह आमदो-रफ़्त के चक्कर में नहीं फँसता, बल्कि जनम लेकर उससे आगे भी बाक़ी बची रियाज़त को मुकम्मल करता है।

इस तरह अगले जनम में उसी तौर-तरीक़े से चलकर वह भी वहीं क़याम कर जाता है, जिसका नाम आ'ला मक़ाम है। पहले भी श्रीकृष्ण कह आये हैं कि इसका थोड़ा भी वसीलः आमदो-रफ़्त के बहुत बड़े ख़ौफ़ से नजात दिलाकर ही छोड़ता है। दोनों रास्ते दाइमी हैं, लाफ़ानी हैं- इस हक़ीक़त को समझकर कोई भी इंसान जोग से मुतज़ल्ज़िल नहीं होता। अर्जुन! तू जोगी बन। जोगी वेद, रियाज़त, यग और सदक़ः के भी नेक नताइज की हद से बाहर हो जाता है; आ'ला नजात को हासिल कर लेता है।

इस बाब में जगह-जगह पर आ'ला नजात की अक्कासी की गयी है, जिसे ग़ैरमर्ई, दाइमी और लाफ़ानी कहकर मुखातब किया गया, जिसकी कभी फ़ना ख़्वाह तबाही नहीं होती। लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'अक्षरब्रह्मयोगो' नामाष्टमोऽध्यायः।।८।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'अक्षर ब्रह्मयोग' (इल्मे लाफ़ानी इलाह) नाम का आठवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'अक्षरब्रह्मयोगो' नामाष्टमोऽध्यायः।।८।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'अक्षर ब्रह्मयोग' (इल्मे लाफ़ानी इलाह) नाम का आठवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ नवमोऽध्यायः।।
(नवाँ बाब)

बाब छः तक जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने जोग की बतसल्सुल तह्क़ीक़ की, जिसका ख़ालिस मत्लब था यग का तरीक़-ए-कार। यग उस आ'ला में दाख़िलः दिला देने वाली इबादत के तरीक़-ए-ख़ास का बयान है, जिसमें मुतहर्रिको-साकिन दुन्या हवन की चीज़ों की शक्ल में है। मन की बंदिश और बंदिशशुदः मन के भी तह्लीली दौर में वह लाफ़ानी उंसुर ज़ाहिर हो जाता है। तक्मिलः दौर में यग जिसकी तख़्लीक़ करता है, उसको क़बूल करने वाला आलिम है और वह अबदी मा'बूद में दाख़िलः पा जाता है। उस मिलन का नाम ही जोग है। उस यग को अमली शक्ल देना अमल कहलाता है। सातवें बाब में उन्होंने बताया कि इस अमल को करने वाले हर सिम्त जल्वःगर मा'बूद, मुकम्मल आमल, मुकम्मल रूहानियत, मुकम्मल मख़्सूस देवता, मुकम्मल मख़्सूस जानदार और मुकम्मल मख़्सूस यग के साथ मुझको जानते हैं। आठवें बाब में उन्होंने कहा कि यही आ'ला नजात है, यही आ'ला मक़ाम है।

पेशक़र्दः बाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने ख़ुद ज़िक्र किया कि जोग के हामिल इंसान की शौकत कैसी है? सबमें जल्वःगर रहने पर भी वह कैसे लातअल्लुक़ है? कारकुन होते हुए भी वह कैसे कुछ न करने वाला है? उस इंसान की फ़ित्रत और अस्रात पर रोशनी डाली। जोग को बरताव में ढालने पर आने वाले देवता वग़ैरः के सबब होने वाले ख़लल से आगाह किया और उस मर्देकामिल की पनाह में जाने के लिए ज़ोर दिया।

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे।
ज्ञानं विज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्।।१।।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा- अर्जुन! हसद अदावत (असूया) से आरी तेरे लिए मैं इस आ'ला बसीग़एराज़ इल्म को मख़्सूस इल्म के साथ बयान करूँगा

या'नी हुसूल के बा'द अज़ीम इंसान की बूदोबाश के साथ बयान करूँगा कि किस तरह वह अज़ीम इंसान हर जगह एक साथ अमलपैरा होता है, किस तरह वह लोगों को बेदारी अता करता है, रथबान बनकर रूह के साथ कैसे हमेशः रहता है। **'यत् ज्ञात्वा'**– जिसे बज़ाहिर जानकर तू ग़म की शक्ल वाली दुन्या से नजात हासिल कर लेगा। वह इल्म कैसा है?– इस पर इर्शाद फ़र्माते हैं–

राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम्।
प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम्।।२।।

खुसूसी इल्म से मुज़ैयन यह इल्म तमाम उलूम का शहंशाह है। इल्म का मा'ना ज़बान का इल्म या ता'लीम नहीं है। **'विद्या हि का ब्रह्मगतिप्रदाया'**, **'सा विद्या या विमुक्तये'**– इल्म उसे कहते हैं कि जिसे हासिल हो, उसे उठाकर सिरातेमुस्तक़ीम पर चलाते हुए नजात अता कर दे। अगर रास्ते में शौकतों, कामयाबियों ख़्वाह दुन्या में कहीं उलझ गया तो साबित है कि जहालत कामयाब हो गयी। वह इल्म नहीं है। यह शाहंशाहे उलूम (राजविद्या) ऐसा है, जो यक़ीनी तौर पर इफ़ादी है। यह तमाम बसीग़एराज़ का शाहंशाह है। जहालत और इल्म का पर्दः उठने पर जोग का मुतहम्मिल होने के बा'द ही इससे मिलन होता है। यह इंतिहा मुतबर्रिक़, बेहूतरीन और ज़ाहिर समरः बाला है। इधर करो, उधर लो – ऐसा बज़ाहिर समरः वाला है। यह तवहूहुमपरस्ती (अंधविश्वास) नहीं है कि इस जनम में रियाज़त करो, समरः कभी दूसरे जनम में मिलेगा। यह आ'ला दीन रुहेमुत्लक़ से मुल्हक़ है। खुसूसी इल्म के साथ यह इल्म करने में आसान और लाफ़ानी है।

बाब दो में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा था, कि अर्जुन! इस जोग में तुख़्म का ख़ातिमः नहीं होता। इसकी थोड़ी भी रियाज़त आमदोरफ़्त के बहुत बड़े ख़ौफ़ से नजात दिला देती है। छठें बाब में अर्जुन ने सवाल किया था कि बन्दःपर्वर! कमज़ोर कोशिश वाला रियाज़तकश बरबाद व तबाह तो नहीं हो जाता? श्रीकृष्ण ने बताया कि अर्जुन! पहले तो अमल को समझना ज़रूरी है और समझने के बा'द अगर थोड़ी-सी भी कामयाबी मिल गई तो उसका किसी जनम में कभी ख़ातिमः नहीं होता; बल्कि थोड़ी रियाज़त के ज़ेरेअसर हर जनम में वही करता है। मुख़्तलिफ़ जनमों की रियाज़त के समरः में वहीं पहुँच जाता है, जिसका नाम आ'ला नजात या'नी रूहेमुत्लक़ है। उसी को जोग के मालिक श्रीकृष्ण यहाँ भी कहते हैं कि यह अमल करने में बड़ा आसान और लाफ़ानी है, लेकिन इसके लिए अक़ीदत का होना बेहद ज़रूरी है।

अश्रद्दधानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परन्तप।
अप्राप्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि।।३।।

आ'ला रियाज़तकश अर्जुन! इस दीन में (जिसका थोड़ा भी वसीलः करने पर ख़ातिमः नहीं होता) अक़ीदत से आरी इंसान (वाहिद मा'बूद में मन को मर्कूज़ न करने वाला इंसान) मुझको हासिल न कर या'नी मेरे अन्दर जगह न बनाकर दुन्या में भटकता ही रहता है। लिहाज़ा अक़ीदत ज़रूरी है। क्या आप दुन्या से अलग हैं? इस बारे में कहते हैं-

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना।
मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः।।४।।

मुझ ग़ैरमर्ई हक़ीक़ी शक्ल से यह सारा जहान जल्वःगर है या'नी मैं जिस हक़ीक़ी शक्ल में क़ाइम हूँ, उसका जल्वः सब जगह तारी है। सारे जानदारों का मक़ाम मेरे अन्दर है, लेकिन मैं उनके अन्दर नहीं हूँ; क्योंकि में ग़ैरमर्ई हक़ीक़ी शक्ल में मौजूद हूँ। अज़ीम इंसान जिस ग़ैरमर्ई शक्ल में मौजूद है, वहीं से (जिस्म छोड़कर उसी ग़ैरमर्ई सत्ह से ही) बात करते हैं। इसी तसल्सुल में आगे कहते हैं-

न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम्।
भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावनः।।५।।

दरहक़ीक़त सारे जानदार भी मेरे अन्दर मौजूद नहीं है, क्योंकि मौत उनका ख़ास्सः है, कुद्रत पर मुन्हसिर हैं; लेकिन मेरी कारसाज़ी की शौकत को देख कि जानदारों को जनम देने वाली और पर्वरिश करने वाली मेरी रूह जानदारों में मौजूद नहीं है। मैं ख़ुदशनास हूँ लिहाज़ा मैं उन जानदारों में मौजूद नहीं हूँ। यही जोग का असर है। इसको साफ़ करने के लिए जोग के मालिक श्रीकृष्ण नज़ीर देते हैं-

यथाकाशस्थितो नित्यं वायुः सर्वत्रगो महान्।
तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय।।६।।

जैसे आस्मान में ही पैदा होने वाली अज़ीम हवा आस्मान में हमेशः मौजूद है मगर उसे गंदः नहीं कर पाती- ठीक वैसे ही सारे जानदार मुझमें मौजूद हैं, ऐसा समझ। ठीक इसी तरह मैं आस्मान की तरह लातअल्लुक़ी हूँ, वे मुझे गंदः नहीं कर पाते। सवाल पूरा हुआ। यही जोग का असर है। अब जोगी क्या करता है? इस पर फ़र्माते हैं-

सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिं यान्ति मामिकाम्।
कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम्।।७।।

अर्जुन! कल्प (बदलाव) के तह्लीली दौर में सभी मेरी कुद्रत या'नी मेरी फ़ित्रत को हासिल करते हैं और कल्प (बदलाव) की इब्तिदा में मैं उनको बार-बार **'विसृजामि'**- ख़ासतौर से तख़्लीक़ करता हूँ। थे तो वे पहले से, लेकिन बदनुमा थे, उन्हीं की तख़्लीक़ करता हूँ, सजाता हूँ। जो बेहिस् हैं, उन्हें बेदार करता हूँ; कल्प के लिए तर्ग़ीब देता हूँ। कल्प का मत्लब है- ता'मीरी इन्क़िलाब। दुन्यवी दौलत के दाइरे से बाहर निकलकर जैसे-जैसे इंसान रूहानी दौलत में दाख़िलः पाता है, यहीं से कल्प की शुरुआत है और जब ख़ुदाई एहसास को हासिल कर लेता है, वही कल्प का ख़ातिमः है। अपना अमल पूरा करके कल्प भी तह्लील हो जाता है। यादे इलाही की शुरूआत कल्प की इब्तिदा है और यादे-इलाही की इन्तिहा जहाँ मक़्सद ज़ाहिर हो जाता है, कल्प का ख़ातिमः है। जब यह ख़ुदाई नूर से मुज़ैयन रूह (प्रत्यगात्मा) शक्लों (योनियों) की वज्ह वाले हसद अदावत वग़ैरः से नजात पाकर अपनी दाइमी हक़ीक़ी शक्ल में मुस्तक़िल हो जाय, इसी को श्रीकृष्ण कहते हैं कि वह मेरी फ़ित्रत को हासिल करता है।

जो अज़ीम इंसान कुद्रत को ख़त्म करके हक़ीक़ी शक्ल में दाख़िलः पा गया उसकी कुद्रत कैसी? क्या उसमें कुद्रत बाकी ही है? नहीं, बाब ३/३३ में जोग के मालिक श्रीकृष्ण कह चुके हैं कि सभी जानदार अपनी कुद्रत को हासिल करते हैं। जैसा उनके ऊपर कुद्रत की सिफ़ात का दबाव है, वैसा करते हैं और **'ज्ञानवानपि'**- बदीही दीदार के साथ जानकारी रखने वाला आलिम भी अपनी कुद्रत के मुताबिक़ कोशिश करता है। वह पीछे वालों के इफ़ादा के लिए करता है। पूरी तरह बाख़बर मुबस्सिर अज़ीम इंसान की बूदोबाश ही उसकी कुद्रत है। वह अपने इसी फ़ित्रत के मुताबिक़ बरताव करता है। कल्प के ख़ातिमः के वक़्त लोग अज़ीम इंसान की इसी बूदोबाश को हासिल होते हैं। अज़ीम इंसान के इसी कारनामें पर फिर रोशनी डालते हैं-

प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः।
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात्।।८।।

अपनी ख़स्लत या'नी अज़ीम इंसान की बूदोबाश को मंजूर करके **'प्रकृतेर्वशात्'**- अपनी-अपनी ख़स्लत में मौजूद कुद्रत सिफ़ात के दबाव में मज़्बूर हुए इन तमाम

जानदारों को मैं बार-बार **'विसृजामि'**- ख़ास तौर से तख़्लीक़ और ख़ास तौर से आरास्तः करता हूँ। इन्हें अपनी हक़ीक़ी शक्ल की जानिब बढ़ने की तर्ग़ीब देता हूँ। तब तो आप इस अमल की क़ैद में हैं।

न च मां तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय।
उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु।।९।।

बाब ४/९ में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया था कि अज़ीम इंसान का तरीक़-ए-कार मावराई है। बाब ९/४ में बताया कि मैं ग़ैरमर्ई तौर से अमल करता हूँ। यहाँ भी वही कहते हैं कि धनंजय! जिन आ'माल को मैं ग़ैरमर्ई तरीके से करता हूँ, उनके साथ मेरी रग़्बत नहीं है। ग़ैर जानिबदार की तरह क़ाइम रहने वाले मुझ रूहेमुत्लक़ की हक़ीक़ी शक्ल को वे आ'माल अपनी कैद में नहीं रखते; क्योंकि अमल के समरः में जो मक़्सद हासिल होता है, उसमें मैं क़ाइम हूँ। लिहाज़ा उन्हें करने के लिए मैं मज़्बूर नहीं हूँ।

यह तो फ़ित्रत के साथ जुड़ी ख़स्लत के कामों का सवाल था, अज़ीम इंसान की बूदोबाश थी, उनकी तख़्लीक़ थी। अब मेरी कारसाज़ी से जो तख़्लीक़ होती है, वह क्या है? वह भी एक कल्प है या'नी बदलाव है-

मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्।
हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते।।१०।।

अर्जुन! मेरी सदारत में या'नी मेरी मौजूदगी में हर जगह जल्वःगर मेरी कारसाज़ी से यह कुद्रत (तीनों सिफ़ात से मुज़य्यन कुद्रत, आठ बुन्यादी ख़साइल और हस्सास (ज़ीहिस दोनों) मुतहर्रिकोसाकिन के साथ दुन्या की तख़्लीक़ करते है, जो कमतर दर्जः का बदलाव है और इसी वजह से यह दुन्या आमदो-रफ़्त के चक्कर में घूमती रहती है। दुन्या का यह कमतर कल्प (बदलाव), जिसमें वक़्त का बदलाव है, मेरी मुनासबत से कुद्रत ही करती है, मैं नहीं करता; लेकिन सातवें श्लोक में बयान किया गया कल्प (बदलाव) इबादत की तह्रीक और ताहद्दे तक्मील रहनुमाई करने वाला इन्क़िलाब (कल्प) अज़ीम इंसान ख़ुद करते हैं। एक जगह पर वे ख़ुदकारकुन हैं, जहाँ वे ख़ास तौर से तख़्लीक़ करते हैं। यहाँ कारकुन कुद्रत है, जो सिर्फ़ मेरे इशारे से यह वक़्ती तब्दीली करती है, जिसमें अज्साम का बदलाव, वक़्त का बदलाव दौर का बदलाव वग़ैरः आते हैं। ऐसा जारी-ओ-सारी असर होने पर भी कम अक़्ल लोग मुझे नहीं जानते। जैसे-

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम्।
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम्।।११।।

तमाम जानदारों के अज़ीम मा'बूद की शक्ल वाले मेरे आ'ला एहसास को न जानने वाले लाइल्म लोग मुझे इंसानी जिस्म की बुन्याद वाला और कमतर समझते हैं। तमाम जानदारों के अर्बाब का भी जो अज़ीम रब है, या'नी रब्बुलअर्बाब है, उस आ'ला एहसास में मैं क़ाइम हूँ, लेकिन हूँ इंसानी जिस्मवाला, लाइल्म लोग इसे नहीं जानते। वे मुझे इंसान कहकर मुख़ातब करते हैं। उनका क़ुसूर भी क्या है? जब वे निगाह डालते हैं, तो अज़ीम इंसान का जिस्म ही तो दिखायी पड़ता है। कैसे वे समझें कि आप अज़ीम ख़ुदाई एहसास में क़ाइम हैं? वे क्यों नहीं देख पाते?- इस पर कहते हैं-

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः।
राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः।।१२।।

वे बेकार की उम्मीद (जो कभी पूरी न हो, ऐसी उम्मीद), बेकार का अमल (बंदिश वाला अमल), बेकार का इल्म (जो दरअस्ल जहालत है), **'विचेतसः'**- ख़ासतौर से बेहिस् हुए, देव (राक्षसों) और शैतानों की तरह फ़िरेफ़्तः होने वाली ख़स्लत के मुतहम्मिल होते हैं या'नी दुन्यवी ख़साइल वाले होते हैं, लिहाज़ा इंसान समझते हैं। शैतान और देव मन की एक फ़ित्रत है, न कि कोई ज़ात या शक्ल (योनि)। दुन्यवी ख़स्लत वाले मुझे नहीं जान पाते, लेकिन आबिद हज़्रात मुझे जानते और याद करते हैं।

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम्।।१३।।

ऐ पार्थ! लेकिन रूहानी ख़स्लत या'नी रूहानी दौलत के मुतहम्मिल आबिद हज़्रात मुझे सारे जानदारों की बुन्यादी वज्ह, ग़ैरमर्ई और लाफ़ानी जानकर पूरे ख़ुलूस के साथ या'नी मन के अस्ना में किसी दूसरे को जगह न देकर सिर्फ़ मुझमें अक़ीदत रखकर मुसल्सल मेरी याद करते हैं। किस तरह याद करते हैं? इस पर फ़र्माते हैं-

सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढव्रताः।
नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते।।१४।।

वे लगातार फ़िक्र के अज़्म में अडिग रहते हुए मेरी ख़ुसूसियात की फ़िक्र

करते हैं, हुसूल के लिए कोशिश करते हैं और मेरा बार-बार आदाब करते हुए हमेशः मुझसे मुज़य्यन होकर लाशरीक अक़ीदत से मेरी इबादत करते है। मुसलसल लगे रहते हैं। मुज़य्यन कौन-सी इबादत करते हैं? कैसा है यह कारनामः? कोई दूसरी इयादत नहीं बल्कि वही 'यग' जिसे तफ़्सील के साथ बयान कर आये हैं। उसी इबादत को यहाँ मुख़्तसर में जोग के मालिक श्रीकृष्ण दुबारः बयान कर रहे हैं-

ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये यजन्तो मामुपासते।
एकत्वेन पृथक्त्वेन बहुधा विश्वतोमुखम्।।१५।।

उनमें से कोई तो मुझ जगह जल्वःगर अज़ीमुश्शान रूहेमुत्लक़ को इल्मी यग के ज़रीअः इबादत करते हैं या'नी अपने नफ़ा-नुक़्सान और कुव्वत को समझकर इसी मुऐयनः अमल-यग में लगते हैं। कुछ लोग लाशरीक अक़ीदत से मेरी इबादत करते हैं कि मुझे इसी में ज़म होना है और दूसरे लोग सब कुछ अलग रखकर, मुझे सुपुर्द करके बेग़रज़ ख़िद्मत के ख़याल से मेरी इबादत करते हैं और तमाम तरह से इबादत करते हैं; क्योंकि एक ही यग के ये सभी ऊँचे-नीचे दर्जात हैं। यग की शुरुआत ख़िद्मत से ही होती है; लेकिन उसका आग़ाज़ कैसे होता है? जोग के मालिक श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं- यग मैं करता हूँ। अगर अज़ीम इंसान रथबान न हों तो यग पूरा नहीं होगा। उन्हीं के निगरानी में रियाज़तकश समझ पाता है कि अब वह किस सत्ह पर है, कहाँ तक पहुँच सका है? दरहक़ीक़त यग का कारकुन कौन है? इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं-

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम्।
मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम्।।१६।।

कारकुन मैं हूँ। दरहक़ीक़त कारकुन के पीछे मुहर्रिक की शक्ल में हमेशः मुतज़िम मा'बूद ही है। रियाज़तकश की कामयाबी मेरी देन है। यग मैं हूँ। यग इबादत का तरीक़-ए-ख़ास है। तक्मिलः दौर में यग जिसकी तख़्लीक़ करता है, उस आबेहयात को नोश फ़र्माने वाला इंसान अबदी मा'बूद में दाख़िलः पा जाता है। आबा व अज्दाद को दी जाने वाली ख़ुराक (स्वधा) समिधा-हवन की चीज़ें मैं हूँ या'नी माज़ी के बेशुमार तअस्सुरात (संस्कारों) की तह्लील करना, उन्हें आसूदग़ी अता कर देना मेरी नियाज़ है। दुन्यवी आज़ारों से नजात दिलाने वाली दवा मैं हूँ। मुझे हासिल कर लोग इस आज़ार से 'छुटकारा पा जाते हैं। दुआ (मंतर) मैं हूँ। मन को साँस के बीच में रोक लेना मेरी देन है। इस रोक के काम में तेज़ी लाने वाली चीज़ 'घी' (आज्य-हवन की

चीज़ें) भी मैं हूँ। मेरे ही नूर में मन के सारे ख़साइल तह्लील होते हैं और हवन या'नी सुपुर्दगी भी मैं ही हूँ।

यहाँ जोग के मालिक श्रीकृष्ण बार-बार 'मैं हूँ' कह रहे हैं। इसका मत्लब मह्ज़ इतना है कि मैं ही मुहर्रिक की शक्ल में रूह से वाबस्तः होकर खड़ा हो जाता हूँ और लगातार फैसलः देते हुए जोग की रियाज़त को पूरी कराता हूँ। इसी का नाम ख़ुसूसी इल्म है। 'क़ाबिले एहतिराम महाराज जी' कहा करते थे कि- ''जब तक मा'बूद रथबान होकर तनफ़्फ़ुस पर रोकथाम न करने लगें, तब तक यादेइलाही (भजन) की शुरुआत ही नहीं होती।'' कोई लाख आँख बन्द करें याद करे, जिस्म को तपा डाले लेकिन जब तक जिस रूहे मुत्लक़ की हमें चाहत है, जिस सत्ह पर हम खड़े हैं, उस सत्ह पर उतरकर रूह से वह बेदार नहीं हो जाता, तब तक सही ता'दाद में याद की शक्ल समझ में नहीं आती। लिहाज़ा 'महाराज जी' कहते थे- ''मेरी शक्ल को पकड़ो, मैं सब कुछ अता करूँगा।'' श्रीकृष्ण कहते हैं- सब कुछ मुझसे होता है।

पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः।
वेद्यं पवित्रमोङ्कार ऋक्साम यजुरेव च।।१७।।

अर्जुन! मैं ही तमाम दुन्या का **'धाता'** या'नी सँभालने वाला हूँ, **'पिता'** या'नी पर्वरिश करने वाला, **'माता'** या'नी पैदा करने वाला, **'पितामह'** या'नी बुन्यादी मख़ज हूँ जिसमें सभी दाख़िलः पाते हैं और क़ाबिलेफ़ह्म कुद्दूस **'ओंकार'** या'नी **'अहम् आकारः इति ओंकारः'**- वह रूहेमुत्लक़ मेरी शक्ल में है। 'सोऽहं', 'तत्त्वमसि' वग़ैरः एक दूसरे के मुतरादिफ़ हैं, ऐसी जानने के लाइक़ हक़ीक़ी शक्ल मैं ही हूँ। **'ऋक्'** या'नी मुकम्मल इल्तिजा, **'साम'** या'नी मुसावात दिलाने वाला तरीक़-ए-कार, **'यजुः'** या'नी यग का ख़ुसूसी तरीक़ भी मैं ही हूँ। जोग के आग़ाज़ के मज़्कूरः तीनों ज़रूरी हिस्से मुझसे सादिर होते हैं।

गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत्।
प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम्।।१८।।

ऐ अर्जुन! **'गति'** या'नी क़ाबिले हुसूल आ'ला नजात, **'भर्ता'** या'नी पर्वरिश करनेवाला, सबका मालिक, **'साक्षी'** या'नी नाज़िर की शक्ल में मौजूद सबको जाननेवाला, क़ाबिलेपनाह सबका मक़ाम, बेग़रज़ महबूब दोस्त, तख़्लीक़ और ख़ातिमः (क़ियामत) या'नी मुबारक नामुबारक तअस्सुरात (संस्कारों) की तह्लील और लाफ़ानी वज्ह मैं ही हूँ। या'नी आख़िर में जिनमें दाख़िलः मिलता है, वे सारी शौकतें मैं ही हूँ।

तपाम्यहमहं वर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च।
अमृतं चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन।।१९।।

मैं सूरज की शक्ल में तपता हूँ। बारिश को राग़िब करता हूँ। मौत से मावरा लाफ़ानी उंसुर और मौत, हक़ और बातिल सब कुछ मैं ही हूँ। या'नी जो आ'ला नूर अता करता है, वह सूरज मैं ही हूँ। कभी-कभी याद करने वाले मुझे बातिल भी मान बैठते हैं, वे वफ़ात को हासिल करते हैं। इस तरह बयान करते हैं-

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा
यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोक-
मश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान्।।२०।।

इल्मेइबादत के तीनों हिस्से- ऋक्, साम और यजुः या'नी इल्तिजा, मुसावात का तरीक़-ए-कार और यग का बरताव करने वाले, सोम या'नी चाँद के कमज़ोर रोशनी को पाने वाले गुनाह से आज़ाद होकर मुक़द्दस हुए इंसान उसी यग के मुऐयनः अमल (तरीक़-ए-कार) के ज़रीअः मा'बूद की शक्ल में मेरी इबादत कर जन्नत के लिए दुआ करते हैं। यही ग़ैरमुनासिब कही जाने वाली बातिल ख़्वाहिश है, इसके बदले उन्हें मौत मिलती है। उनका दुबारः जनम होता है, जैसा गुजश्तः श्लोक में जोग के मालिक ने बताया। वे इबादत मेरी ही करते हैं, उसी मुऐयनः तरीक़ः से इबादत करते हैं; लेकिन बदले में जन्नत की इल्तिजा करते हैं। वे इंसान अपने नेकी के नतीज़े में देवताओं के बादशाह इन्द्र की सल्तनत (इन्द्रलोक) फ़िरदौस को हासिल कर जन्नत में देवताओं के बेहतरीन तअय्युशात का लुत्फ़ उठाते हैं; या'नी यह तअय्युश भी मैं ही अता करता हूँ।

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं।
क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति।
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना
गतागतं कामकामा लभन्ते।।२१।।

वे उस अज़ीम जन्नत के ऐशो-इश्रत का लुत्फ़ उठाकर सवाब के ख़त्म होने पर आलमे नासूत (मर्त्यलोक) या'नी आमदो-रफ़्त को हासिल करते हैं। इस तरह **'त्रयीधर्मम्'**- (तीन फ़राइज़) इल्तिजा, मुसावात और यग तीनों तरीक़ों से एक ही यग का आग़ाज़ करने वाले, मेरी पनाह में रहने वाले भी ख़्वाहिशमंद इंसान बार-बार

आमदोरफ़्त को या'नी दुबारः जनम लेने के लिए मज़्बूर होते हैं। लेकिन उनकी बुन्याद का ख़ातिमः कभी नहीं होता, क्योंकि इस राह में तुख़्म की फ़ना नहीं है। लेकिन जो किसी तरह की ख़्वाहिश नहीं करते, उन्हें क्या हासिल होता है?-

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।।२२।।

'लाशरीक अक़ीदत' से मुझमें मौजूद अक़ीदतमन्द मुझ मा'बूद की हक़ीक़ी शक्ल की मुसल्सल फ़िक्र करते हैं; **'पर्युपासते'**- ज़रा भी कोताही न करते हुए मेरी इबादत करते हैं, उन हमेशः वह्दानियत से मुज़ैयन इंसानों की ख़ैरियत का वज्न मैं खुद उठाता हूँ। या'नी उनके जोग की हिफ़ाज़त की सारी जिम्मःदारी अपने हाथ में ले लेता हूँ। इतना होने पर भी लोग दूसरे देवताओं को याद करते हैं-

येऽप्यन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम्।।२३।।

कौन्तेय! जो अक़ीदतमन्द बन्दे दूसरे-दूसरे देवताओं की इबादत करते हैं, वे भी मेरी ही इबादत करते हैं; क्योंकि वहाँ देवता नाम की कोई चीज़ तो होती नहीं; लेकिन उनकी वह इबादत ग़ैरमुनासिब तरीक़ः से है। यह मुझे हासिल करने का मुनासिब तरीक़ः नहीं है।

यहाँ जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने दूसरी बार देवताओं के माजूअ को लिया है। सबसे पहले बाब सात के बीसवें से तेइसवें श्लोक तक उन्होंने कहा कि, अर्जुन! ख़्वाहिशात के ज़रीअः जिनके इल्म का इग्वा कर लिया गया है, ऐसे कमअक़्ल इंसान दूसरे देवताओं की इबादत करते हैं और जहाँ इबादत करते हैं, वहाँ देवता नाम का कोई क़ादिर इक़्तिदार तो है ही नहीं। लेकिन पीपल, पत्थर, आसेब वग़ैरः या जहाँ कहीं भी उनकी अक़ीदत झुक जाती है, वहाँ कोई देवता नहीं है। मैं ही हर जगह हूँ, उस जगह पर मैं ही खड़ा होकर उनकी देवता वाली अक़ीदत को मुस्तक़िल करता हूँ। मैं ही समरः का तरीक़ः निकालता हूँ, समरः देता हूँ। समरः यक़ीनी तौर पर मिलता है; लेकिन उनका समरः फ़ानी है। आज है, तो कल लुत्फ़ उठाने में आ जायेगा, ख़त्म हो जायेगा जबकि मेरा बन्दः ख़त्म नहीं होता। लिहाज़ा वे कुन्दज़ेह्न लोग, जिनके इल्म का इग्वा हो गया है, वही दूसरे देवता की इबादत करते हैं।

पेशक़र्दः बाब ९ के २३ से २५वें श्लोक तक जोग के मालिक श्रीकृष्ण फिर दुबारः कहते हैं कि अर्जुन! जो अक़ीदत के साथ दीगर-दीगर देवताओं की इबादत

करते हैं, वे मेरी ही इबादत करते है; लेकिन इनकी इबादत का तरीक़ः ग़ैरमुनासिब है। वहाँ देवता नाम की कोई क़ादिर चीज़ नहीं है, उनके हुसूल का तरीक़ः ग़लत है। अब सवाल उठता है कि जब ये भी बहुत पहले से आपकी ही इबादत करते हैं और समरः भी मिलता ही है, तो बुराई क्या है?-

अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च।
न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते।।२४।।

तमाम यगों का सारिफ़ या'नी यग जिसमें तह्लील होते हैं, यग के नतीज़े में जो हासिल होता है, वह मैं हूँ और मालिक भी मैं ही हूँ; लेकिन वे मुझे उंसुर से अच्छी तरह नहीं जानते, लिहाज़ा **'च्यवन्ति'**- गिरते हैं। या'नी वे कभी दीगर देवताओं की ओर राग़िब होते हैं और उंसुर से जब तक नहीं जानते तब तक अपने ख़्वाहिशात से भी राग़िब रहते हैं। उनका अंजाम क्या हैं?

यान्ति देवव्रता देवान्पितॄन्यान्ति पितृव्रताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्।।२५।।

अर्जुन! देवताओं की इबादत करने वाले देवताओं की निस्बत हासिल करते हैं। देवता हैं तो इक़्तिदार की बदली हुई शक्ल, वे अपने सालेह-आ'माल के मुताबिक़ ज़िंदगी गुजारते हैं। आबा-ओ-अज्दाद की इबादत करने वाले अज्दाद को हासिल करते हैं या'नी माज़ी में उलझे रहते हैं। आसेब की इबादत करने वाले आसेब होते हैं, जिस्म हासिल करते हैं और मेरा बन्दः मुझे हासिल करता है। वे मेरी मुजस्सम हक़ीक़ी शक्ल होते हैं उनका ज़वाल नहीं होता। इतना ही नहीं, मेरी इबादत का तरीक़ः भी आसान है-

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः।।२६।।

बन्दगी की शुरुआत यहीं से होती है कि पत्ता, फूल, फल, पानी वग़ैरः जो कोई मुझे अक़ीदत के साथ पेश करता है, मन से कोशिश करने वाले उस बन्दः का वह सब कुछ मैं खाता हूँ या'नी क़बूल करता हूँ। लिहाज़ा-

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्।।२७।।

अर्जुन! तू जो अमल (हक़ीक़ी अमल) करता है, जो खाता है, जो हवन करता

है, सुपुर्दग़ी करता है, सदक़ः देता है, मन के साथ हवास को जो मेरे मुताबिक़ तपाता है, वह सब मुझे सुपुर्द कर या'नी मेरे लिए वक़्फ़ होकर यह सब कर। सुपुर्द करने से जोग की हिफ़ाज़त की ज़िम्मःदारी मैं ले लूँगा।

शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः।
संन्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि।।२८।।

इस तरह सारा कुछ का वक़्फ़ करके तर्के दुन्या के जोग से मुज़ैयन हुआ तू मुबारक-नामुबारक समरः देने वाले आ'माल की बंदिश से आज़ाद होकर मुझे हासिल करेगा।

मज़्कूरएबाला तीन श्लोकों में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बसिल्सिलः रियाज़त और उसके समरः की अक्कासी की है। पहले पत्ता, फूल, फल, पानी की पूरे ख़ुलूस से सुपुर्दगी, दूसरे ख़ुद सुपुर्दगी के साथ अमल का बरताव और तीसरे पूरी सुपुर्दगी के साथ सबकुछ का ईसार। इनके ज़रीअः अमल की बंदिश से आज़ाद (ख़ास तौर से आज़ाद) हो जायेगा। आज़ाद हो जाने से मिलेगा क्या? बताया, मुझे हासिल होगा। यहाँ नजात और हुसूल एक दूसरे तक़्मिलः हैं। आपका हुसूल ही नजात है, तो उससे फ़ाइदः?, इस पर फ़र्माते हैं-

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम्।।२९।।

मैं सारे जानदारों में मो'तदिल हूँ। दुन्या में न मेरा कोई पसंदीदः है और न नापसंदीदः है, लेकिन जो लाशरीक बन्दः है, वह मुझमें है और मैं उसमें हूँ। यही मेरा वाहिद रिश्तः है। उसमें पूरी तरह तारी हो जाता हूँ। मुझमें और उसमें कोई फ़र्क़ नहीं रह जाता। तब तो बहुत ख़ुशक़िस्मत लोग ही यादेइलाही में लगते होंगे? याद करने का हक़ किसे है? इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं-

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः।।३०।।

अगर बेइंतिहा बदकार भी लाशरीक़ अक़ीदत से या'नी मेरे सिवा किसी दूसरी चीज़ या देवता को न याद कर सिर्फ़ मुझे ही मुसल्सल याद करता है, वह साधू ही मानने लाइक है। अभी वह साधू हुआ नहीं है, लेकिन उसके हो जाने में शुब्हः भी नहीं है; क्योंकि वह हक़ीक़ी ख़ुद इरादी के साथ लग गया है। लिहाज़ा याद आप भी

कर सकते हैं बशर्ते कि आप इंसान हों; क्योंकि इंसान ही हक़ीक़ी इरादः वाला है। गीता गुनाहगारों को नजात दिलाती है। और वह राही–

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति।
कौन्तेय प्रति जानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति।।३१।।

इस यादेइलाही के ज़ेरेअसर वह बदकार भी जल्द ही दीनदार हो जाता है, आ'ला दीन रूहेमुत्लक़ से वाबस्तः हो जाता है और हमेशः रहने वाले आ'ला सुकून को हासिल कर लेता है। कौन्तेय! तू पूरे यक़ीन के साथ इस सच्चाई को जान कि मेरा बन्दः कभी फ़ना नहीं होता। अगर एक जनम में नजात नहीं मिली तो अगले जनमों में भी वही रियाज़त करके जल्द ही आ'ला सुकून को हासिल कर लेता है। लिहाज़ा नेक चलन और बदकार सभी को याद करने का हक़ है। इतना ही नहीं, बल्कि–

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्।।३२।।

पार्थ! औरत, वैश्य, शूद्र वग़ैरः और जो कोई गुनाह की शक्ल (योनि) वाले भी क्यों न हों, वे सभी मेरी पनाह में आकर आ'ला नजात को हासिल करते हैं। लिहाज़ा यह गीता मह्ज़ इंसान के लिए है, चाहे वह कुछ भी करता हो, कहीं भी पैदा हुआ हो। सबके लिए यह एक तरह भलाई की नसीहत देती है। गीता आलमगीर है।

पापयोनि (कुसूरवारी शक्ल) बाब १६/७–२१ में शैतानी ख़स्लत के निशानात के तह्त बन्दःपर्वर ने बयान किया कि जो लोग शरीअ़त का तरीक़ः को तर्ककर मह्ज़ नाम के यगों के ज़रीअः गुरूर के साथ यग करते हैं, वे इंसानों में बदकार हैं। यग है नहीं, लेकिन यग का नाम दे रखा है और गुरूर से यग करता है, वह बदखूँ और बदक़ार (कुसूरवारी शक्ल) है। जो मुझ रूहेमुत्लक़ से हसद रखने वाले हैं, वही गुनाहगार हैं। वैश्य, शूद्र राहे मा'बूद के ज़ीने हैं। औरतों के मुतअल्लिक़ कभी कद्रोमंज़िलत, कभी हक़ारत का ख़याल, मुआशरः में हमेशः रहा है। लिहाज़ा श्रीकृष्ण ने इनका नाम लिया। लेकिन जोग के तरीक़–ए–कार में औरत और मर्द दोनों का बराबर ही दख़्ल है।

किं पुनर्ब्राह्मणाः पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा।
अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम्।।३३।।

फिर तो बर्हमन और शाही आरिफ़ क्षत्री दर्जः हासिल करने वाले अक़ीदतमन्दों के लिए कहना ही क्या है? बर्हमन एक ख़ुसूसी हालत है, जिसमें मा'बूद से निस्बत दिला देने वाली सारी सलाहीयतें मौजूद हैं। सुकून, ख़ाकसारी, तज़्रिबाती हुसूलयाबी, तसव्वुर और मा'बूद की रहनुमाई में जिसमें आगे बढ़ने की सलाहीयत है, यही बर्हमन की हालत है। शाही आरिफ़ क्षत्री में मालोज़र व कामयाबियों का फ़ैलाव, बहादुरी, हुक्मरानी की ख़सूलत, पीछे क़दम न हटाने की फ़ित्रत रहती है। इस जोग की सत्ह पर पहुँचे हुए जोगी तो नजात पाते ही हैं, उनके लिए क्या कहना है। लिहाज़ा अर्जुन! तू आराम से आरी वक़्ती तौर से इस इंसानी जिस्म को पाकर मेरी ही याद कर। इस फ़ानी जिस्म की शफ़क़त पर्वरिश में वक़्त ज़ाये न कर।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने यहाँ चौथी बार बर्हमन, क्षत्री, वैश्य और शूद्र का जिक्र किया। बाब दो में उन्होंने कहा कि क्षत्री के लिए जंग से बढ़कर भलाई का कोई रास्तः नहीं है। बाब तीन में उन्होंने कहा कि अपने फर्ज़ेमंसबी में मौत भी बेह्तर हैं। बाब चार में उन्होंने मुख़्तसर में बताया कि चार नस्लों की तख़्लीक़ मैंने की। तो क्या इंसान को चार जातों में बाँटा? बोले, नहीं **'गुणकर्म विभागशः'**– सिफ़ात के पैमाने से अमल को चार दर्जात में रखा। श्रीकृष्ण के मुताबिक़ अमल वाहिद यग का तरीक़-ए-कार है। लिहाज़ा इस यग को करने वाले चार तरह के हैं। इब्तिदाई दौर में यह यग का कारकुन शूद्र है, कम इल्म है। कुछ करने की सलाहीयत बढ़ी, रूहानी दौलत का इज़ाफ़ः हुआ तो वही यग का कारकुन वैश्य बन गया। इससे आगे बढ़ने पर कुद्रत की तीनों सिफ़ात को काटने की सलाहीयत आ जाने पर वही रियाज़तकश क्षत्री दर्जः का है और जब इसी रियाज़तकश की ख़सूलत में मा'बूद से निस्बत दिलाने वाली सलाहीयते ढल जाती हैं, तो वही बर्हमन है। वैश्य और शूद्र के बनिस्बत क्षत्री और बर्हमन दर्जेः का रियाज़तकश हुसूल के ज़ियादः करीब है। शूद्र और वैश्य भी उसी मा'बूद से निस्बत पाकर पुरसुकून होंगे। फिर इसके आगे के मर्तबः वालों का तो कहना ही क्या है? उनके लिए तो तब ही है।

गीता जिन उपनिषदों (शराए') का मग़्जेसुख़न है, उनमें रुबूबी आलिमः खवातीन के वाक़िआत भरे पड़े हैं। ग़ैरमुस्तनद मज़्हब से डरने वाले, क़दामतपरस्त वेद को पढ़ने न पढ़ने के हक़ का इंतिज़ाम देने में सर ख़पाते रहे। जोग के मालिक श्रीकृष्ण का साफ़ ए'लान है कि यग के लिए किये जाने वाले मुऐयनः अमल में औरत, मर्द सभी को बराबर हक़ है।

लिहाज़ा वे याद के अक़ीदः पर हिम्मतअफ़्ज़ाई करते हैं-

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः।।३४।।

अर्जुन! मुझमे ही मन लगाने वाला बन। सिवा मेरे दूसरे ख़यालात मन में न आने पायें। मेरा लाशरीक बन्दः बन। मुसल्सल ग़ौरो फ़िक्र में लग। अक़ीदत के साथ मेरी ही मुसल्सल इबादत कर और मेरा ही आदाब बजा। इस तरह मेरी पनाह में होकर रूह को मुझमें यकताई के ख़याल से क़ाइम होकर तू मुझे ही हासिल करेगा या'नी मेरे साथ यकताई हासिल करेगा।

मग़्ज़े सुख़न :-

इस बाब के शुरू में श्रीकृष्ण ने ईशाद फ़र्माया- अर्जुन! तेरे जैसे बेऐब बन्दा के लिए मैं इस इल्म को ख़ुसूसी इल्म के साथ बयान करूँगा, जिसको जानने के बा'द कुछ भी जानना बाक़ी नहीं रहेगा। इसे जानकर तू दुन्या की बंदिश से आज़ाद हो जायेगा। यह इल्म सारे उलूम का शाहंशाह है। इल्म वह है, जो आ'ला मा'बूद से निस्बत दिलाये। यह इल्म उसका भी शाहंशाह है या'नी यक़ीनी तौर पर भलाई करने वाला है। यह तमाम बसीग़एराज़ का भी शाहंशाह है, पोशीदः चीज़ को भी आश्कारा करने वाला है। यह ज़ाहिरी समरः वाला, रियाज़त करने में सहूल और लाफ़ानी है। थोड़ी भी इसका वसीला आपसे कामयाब हो जाय, तो इसका कभी ख़ातिमः नहीं होता, बल्कि इसके ज़ेरे असर वह आ'ला शरफ़ तक पहुँच जाता है, लेकिन इसमें एक शर्त है। अक़ीदत से आरी इंसान आ'ला नजात को न हासिल कर दुन्यवी भूल-भुलैया में भटकता रहता है।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने जोग की शौकत पर भी रोशनी डाली। ग़मो के वस्ल का फ़िराक़ ही जोग है या'नी जो दुन्या के वस्लोफ़िराक़ से हर तरह मुबर्रा है, उसका नाम है जोग। उंसुरे-आ'ला रूहेमुत्लक़ के मिलन का नाम जोग है। रूहेमुत्लक़ का हुसूल ही जोग की इंतिहा है। जो इससे निस्बत पा गया, उस जोगी के असर को देख कि तमाम दुन्या का मालिक और जानदारों का राज़िक होने पर भी मेरी रूह उन जानदारों से लातअल्लुक़ है। मैं ख़ुदकफ़ील हूँ। वही हूँ। जैसे आस्मान में पैदा सब जगह चक्कर लगाने वाली हवा आस्मान में ही मौजूद है लेकिन उसे गंदः नहीं कर पाती, उसी तरह तमाम जानदार मुझमें मौजूद हैं, समोये हुए हैं लेकिन मैं उनसे

मुलव्वस नहीं हूँ।

अर्जुन! कल्प (बदलाव) की इब्तिदा में मैं जानदारों को ख़ास तरीके से तख़्लीक़ करता हूँ, सजाता हूँ और कल्प के इत्मामी दौर में तमाम जानदार मेरी फ़ित्रत को या'नी जोग के हामिल अज़ीम इंसान की बूदोबाश को, उनके ग़ैरमर्ई ख़याल को हासिल करते हैं। अगरचे अज़ीम इंसान दुन्या से मावरा है, लेकिन हुसूल के बा'द खुद ख़याली या'नी खुद में मुस्तकिर रहते हुए अवामी फ़राहम के लिए जो काम करता है, वह उसकी एक बूदोबाश है। इसी बूदोबाश के कारोबार को उस अज़ीम इंसान की फ़ित्रत कहकर मुख़ातब किया गया है।

एक ख़ालिक तो मैं हूँ, जो जानदारों को कल्प (बदलाव) के लिए तर्ग़ीब देता हूँ और दूसरी तख़्लीक़ करने वाली तीनों सिफ़ात वाली कुद्रत है, जो मेरी फ़ित्रत से मुहतर्रिकोसाकिन के साथ सारे जानदारों को तख़्लीक़ करती है। यह भी एक कल्प (बदलाव) है, जिसमें जिस्मानी बदलाव, फ़ित्री बदलाव और दौर का बदलाव मुज़्मिर है। गोस्वामी तुलसीदासजी भी यही कहते हैं-

एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा बस जीव परा भवकूपा।।

(रामचरितमानस, ३/१४/५)

कुद्रत की दो किस्में- इल्म और जहालत है। इनमें जहालत बद है, तक्लीफदेह है, जिससे लाचार जानदार दुन्यवी कुएँ में पड़ा है। जिससे तर्ग़ीब पाकर जानदार वक़्त, अमल, फ़ित्रत और सिफ़ात के दाइरः में आ जाता है। दूसरी है- इल्मी फ़ित्रत (विद्या माया) जिसे श्रीकृष्ण कहते हैं- मैं तख़्लीक करता हूँ। गोस्वामी तुलसीदास जी के मुताबिक़ मा'बूद तख़्लीक करते हैं।

एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताकें।।

(रामचरितमानस, ३/१४/६)

यह (फ़ित्रत) दुन्या की तख़्लीक़ करती है, जिसके ज़ेरे असर सिफ़ात हैं। इफ़ादी सिफ़ात वाहिद मा'बूद में हैं। दुन्या में सिफ़ात हैं ही नहीं, वह तो फ़ानी है; लेकिन इल्म में मा'बूद ही मुहर्रिक बनकर करते हैं।

इस तरह बदलाव (कल्प) दो तरह के हैं। एक तो चीज़ों का, जिस्म और दौर का बदलाव कल्प है; लेकिन यह बदलाव कुद्रत ही मेरे तबस्सुत से करती है लेकिन इससे अज़ीम कल्प, जो रूह को लतीफ़ शक्ल अता करता है, उसकी आराइश अज़ीम

इंसान करते हैं। वे बेहिस जानदारों को हस्सास बनाते हैं। यादे इलाही की इब्तिदा ही इस कल्प (बदलाव) की शुरुआत है और यादे इलाही की इंतिहा कल्प का ख़ातिमः है। जब यह कल्प दुन्यवी आज़ार से पूरी तरह सेहतमन्द बनाकर दाइमी मा'बूद में निस्बत दिला देता है, उस इब्तिदाई दौर में जोगी मेरी बूदोबाश और मेरी हक़ीक़ी शक्ल को हासिल कर लेता है। हुसूल के बा'द अज़ीम इंसान की बूदोबाश ही उसकी फ़ित्रत है।

मज़्हबी किताबों में वाक़िआत मिलते हैं कि चारों ज़मानों (सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग) के गुज़र जाने पर ही कल्प (बदलाव) पूरा होता है, क़ियामत (महाप्रलय) होती है। आमतौर से लोग इसे हक़ीक़ी नहीं समझते। युग (दौर) का मत्लब है- दो। आप अलग हैं, मा'बूद अलग है, तब तक दौर के फ़राइज़ रहेंगे। गोस्वामी जी ने रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में इसका ज़िक्र किया है। जब मलकाते मज़मूम मुतहर्रिक होते हैं, मलकाते रदीयः मामूली ता'दाद में हैं, चारों तरफ़ दुश्मनी और मुख़ालफ़त है, ऐसा इंसान कलजुग का है। वह यादे इलाही में नहीं लग पाता; लेकिन रियाज़त शुरू होने पर दौर बदल जाता है। मलकाते रदीयः में इज़ाफ़ः होने लगता है, मलकाते मज़मूम घटने लगता है, थोड़ा-बहुत मलकाते फ़ाज़िलः भी ख़स्लत में आ जाते हैं, ख़ुशी और ख़ौफ़ की कशमकश बनी रहती है तो वही रियाज़ती द्वापर (कलजुग के पहले वाला दौर) की हालत में आ जाता है। बतद्रीज मलकाते फ़ाज़िलः का इज़ाफ़ः होने पर मलकाते रदीयः बहुत कम रह जाता है, इबादत के अमल में उंसीयत पैदा हो जाती है, ऐसे त्रेतायुग (द्वापर के पहले वाला दौर) में ईसार की हालत वाला रियाज़तकश मुख़्तलफ़ यग करता है। **'यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि'** यग के दर्जःवाला विर्द, जिसका उतार-चढ़ाव तनफ़्फ़ुस पर है, उसे करने की सलाहीयत रहती है। जब महूज़ मलकाते फ़ाज़िलः बाक़ी रहा, ग़ैर मुसावात (ग़ैर बराबरी) ख़त्म हो गयी, मुसावात आ गई, यह इल्म का दौर या'नी कामयाबी का दौर ख़्वाह सतयुग (दौरे हक़) का असर है। उस वक़्त जोगी हज़्रात ख़ुसूसी इल्म वाले होते हैं, मा'बूद से निस्बत बनाने वाले होते हैं, क़ुद्रती तौर से क़ुव्वते तसव्वुर की उनमें सलाहीयत रहती है।

होशमन्द लोग दौरे फ़राइज़ के उतार-चढ़ाव को मन की गहराई के साथ समझते हैं। मन पर क़ाबू पाने के लिए बेदीनी को तर्क करके दीन की तरफ़ मुख़ातब हो जाते हैं। पाबंद मन की भी तह्लील हो जाने पर दौरों के साथ-साथ कल्प का भी ख़ातिमः हो जाता है। तक्मील में दख़्ल दिलाकर कल्प भी साकिन हो जाता है।

यही क़ियामत है, जब यह कुद्रत उस आ'ला इंसान में ज़म हो जाती है। इसके बा'द अज़ीम इंसान की जो बूदोबाश है, वही उसकी फ़ित्रत है, वही उसका मिज़ाज है।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं- अर्जुन! जाहिल लोग मुझे नहीं जानते, मुझ रब्बुलअर्बाब को भी नाचीज़ समझते हैं, आम आदमी मानते हैं। हर एक अज़ीम इंसान के साथ यही दिक़्क़त रही है कि उस दौर के समाज ने उनकी अनदेखी की। उनकी डटकर मुख़ालफ़त हुई। श्रीकृष्ण भी इससे मावरा नहीं थे। वे कहते हैं कि मेरा मक़ाम आ'ला एहसास में है; लेकिन जिस्म मेरा भी इंसान का ही है। लिहाज़ा कम अक़्ल इंसान मुझे कमतर कहकर, इंसान बताकर मुख़ातब करते हैं। ऐसे लोग बेकार की उम्मीद वाले हैं, बेसूद अमल वाले हैं, लाहासिल इल्म वाले हैं कि कुछ भी करें और कह दें कि हम तो ख़्वाहिश नहीं करते, हो गये बेग़रज़ अमली जोगी। वे दुन्यवी ख़स्लत वाले मुझे नहीं पहचान पाते; लेकिन रूहानी दौलत को हासिल करने वाले लोग पूरे ख़ुलूस से मेरी याद करते हैं, मेरी ख़ूबियों की मुसल्सल फ़िक्र करते हैं।

लाशरीक इबादत या'नी यग के लिए अमल के दो ही रास्ते हैं। पहला है- इल्म का यग या'नी अपने भरोसे, अपनी कुव्वत को समझकर उसी मुऐयनः अमल में लग जाना और दूसरा तरीक़ः मालिक और ख़ादिम का तसव्वुर है, जिसमें फ़नाफिशशैख़ होकर वही अमल किया जाता है। इन्हीं दो नज़रीयात से लोग मेरी इबादत करते हैं लेकिन उनके ज़रीअः जो हासिल होता है वह यग, वह हवन, वह कारकुन, अक़ीदत और दवा जिससे दुन्यवी आज़ार का इलाज होता है, मैं ही हूँ। आख़िर में जो नतीजः हासिल होता है, वह नतीजः भी मैं ही हूँ।

इसी यग को लोग **'त्रैविद्या'** (तीन उलूम)- दुआ, यग और मुसावात दिलाने वाले तरीक़ों से मुरत्तब करते हैं लेकिन उसके एवज़ में जन्नत के ख़्वाहिशमन्द होते हैं, तो मैं जन्नत भी अता करता हूँ। उसके ज़ेरेअसर वे इन्द्र का मक़ाम हासिल कर लेते हैं, एक लम्बे असः तक उसका लुत्फ़ भी उठाते हैं, लेकिन सबाब की कमी होने पर वे दुबारः जनम लेते हैं। उनका तरीक़ः सहीह था, लेकिन तअय्युशात की ख़्वाहिश रहने पर दुबारः जनम पाते हैं, लिहाज़ा ऐशो-इश्रत की ख़्वाहिश नहीं करनी चाहिए। जो लाशरीक अक़ीदत के साथ या'नी 'मेरे सिवा दूसरा है ही नहीं' ऐसे ख़याल से मुसल्सल मुझसे लौ लगाते हैं, ज़रा भी कमी न रह जाय, इस तरह जो याद करते हैं, उनके जोग की हिफ़ाज़त की जिम्मःदारी मैं अपने हाथ में ले लेता हूँ।

इतना सब कुछ होने पर भी कुछ लोग दूसरे देवताओं की इबादत करते हैं। ये भी मेरी ही इबादत करते हैं; लेकिन वह मुझे हासिल करने का सही तरीक़ः नहीं है। वे तमाम यगों के सारिफ़ की शक्ल में मुझे नहीं जानते या'नी उनकी इबादत के सम में मैं नहीं मिलता, लिहाज़ा उनका तनज़्ज़ुल हो जाता है। वे देवता, आसेब, आबा-ओ-अज्दाद (पितरों) के ख़यालाती शक्ल में दुन्या में क़ाइम रहते हैं, जबकि में मेरा बन्दः मुजस्सम मुझमें मक़ाम करता है, मेरी ही हक़ीक़ी शक्ल हो जाता है।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने इस यग के लिए अमल को बइंतिहा सह्ल बताया कि, कोई फल-फूल या जो कुछ भी अक़ीदत से देता है, उसे मैं क़बूल करता हूँ। लिहाज़ा अर्जुन! तू जो कुछ भी इबादत की शक्ल में करता है, मुझे सुपुर्द कर। जब सब कुछ का वक़्फ़ हो जायेगा, तब जोग का हामिल बन कर तू आ'माल की बंदिश से आज़ाद हो जायेगा और यह नजात मेरी ही हक़ीक़ी शक्ल है।

दुन्या में रहने वाले सारे जानदार मेरे ही हैं, किसी भी जानदार से न मुझे महब्बत है, न नफ़्रत। मैं ग़ैरजानिबदार हूँ, लेकिन जो मेरा लाशरीक बन्दः है, मैं उसमें हूँ, वह मुझमें है। बेइंतिहा बदकार, सबसे बड़ा गुनाहगार ही कोई क्यों न हो, फिर भी लाशरीक अक़ीदत और बन्दगी से मुझे याद करता है तो वह नेक (साधू) माने जाने के लाइक़ है। उसका इरादः अटल है तो वह जल्द ही मा'बूद से मुनासबत पा लेता है और दाइमी आ'ला सुकून को हासिल कर लेता है। यहाँ श्रीकृष्ण ने साफ़ किया कि दीनदार कौन है। दुन्या में पैदा होने वाला कोई भी जानदार अगर पूरे ख़ुलूस के साथ वाहिद रूहेमुत्लक़ को याद करता है, उनकी फ़िक्र करता है तो वह जल्द ही दीनदार हो जाता है। लिहाज़ा दीनदार वह है, जो एक मा'बूद की याद करता है। आख़िर में यक़ीन देहानी कराते हैं कि- अर्जुन! मेरा बन्दः कभी ख़त्म नहीं होता। कोई शूद्र हो, नीच हो, ख़ानदानी हो, ग़ैरख़ानदानी हो या उसका कुछ भी नाम हो, मर्द या औरत हो ख़्वाह कुसूरवारी शक्ल (योनि) वाला या कीड़े-मकोड़े जानवर वग़ैरः की योनि वाला जो भी हो, मेरी पनाह में आकर आ'ला शरफ़ को हासिल करता है। लिहाज़ा अर्जुन! सुख से आरी, वक़्ती लेकिन कमयाब इंसानी जिस्म को हासिल कर मेरी याद कर। फिर तो जो मा'बूद से मुनासबत दिलाने वाली सलाहीयतों से मुज़ैयन है, उस बर्हमन और जो शाही ख़ानदान में पैदा हुए आरिफ़ की सत्ह से याद करने वाला है, ऐसे जोगी के लिए कहना ही क्या है? वह तो नजात पा ही गया है। लिहाज़ा अर्जुन! मुसल्सल तौर से मुझमें मन लगाने वाला बन, मुसल्सल आदाब बजा। इस

तरह मेरी पनाह में आकर तू मुझे ही हासिल करेगा, जहाँ से पीछे लौटकर नहीं आना पड़ता।

पेशक़र्दः बाब में उस इल्म पर रोशनी डाली गयी, जिसे श्रीकृष्ण ख़ुद बेदारः हैं। यह शाहंशाहे उलूम है, जो एकबार बेदार होने के बा'द यक़ीनी तौर पर फ़लाह का बाइस बनाता है। लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'राजविद्याजागृति' नाम नवमोऽध्यायः।।९।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'राजविद्या-जागृति' (बेदारी-ए-शाहंशाहे उलूम) नाम का नौवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'राजविद्याजागृति' नाम नवमोऽध्यायः।।९।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'राजविद्या-जागृति' (बेदारी-ए-शाहंशाहे उलूम) नाम का नौवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ दशमोऽध्यायः।।
(दसवाँ बाब)

बगुज़्शतः बाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने पोशीदः शाहंशाहे उलूम की अक्कासी की, जो यक़ीनी तौर पर फ़लाह अता करता है। दसवें बाब में उनका क़ौल है कि, बाजू-ए-अज़ीम अर्जुन! मेरे आ'ला राज़ से मुज़ैयन क़ौल को फिर भी सुन। यहाँ उसी बात को दूसरी बार कहने की ज़रूरत क्या है? दरहक़ीक़त रियाज़तकश को आख़िरी अंजाम हासिल करने तक अंदेशः बना रहता है। जैसे-जैसे वह हक़ीक़ी शक्ल में ढलता जाता है, दुन्यवी पर्दे बारीक होते जाते हैं, नये-नये मंज़र आते हैं। अज़ीम इंसान ही उन चीज़ों से बाख़बर करते रहते हैं। वह ख़ुद नहीं जानता। अगर वे रहनुमाई करना बन्द कर दें, तो रियाज़तकश हक़ीक़ी शक्ल को हासिल करने से महरूम रह जायेगा। जब तक वह हक़ीक़ी शक्ल से दूर है, तब तक साबित है कि दुन्या का कोई न कोई पर्दः बना है, फिसलने और लड़खड़ाने की गुंजाइश बनी रहती है। अर्जुन! पनाहशुदः शागिर्द है। उसने कहा था- **'शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्'-** बन्दःपर्वर! मैं आपका शागिर्द हूँ, आपकी पनाह में हूँ, मुझे सँभालिये। लिहाज़ा उसकी भलाई की ख़्वाहिश से जोग के मालिक श्रीकृष्ण फ़िर बयान किये-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

भूय एव महाबाहो शृणु मे परमं वचः।
यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया।।१।।

बाजू-ए-अज़ीम अर्जुन! मेरे आ'ला असर वाले क़ौल को फिर सुन, जिसे मैं तुझ जैसे बेहद महब्बत रखने वाले की भलाई की ग़रज़ से कहूँगा।

न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः।
अहमादिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः।।२।।

अर्जुन! मेरी पैदाइश के बारे में न देवता लोग जानते हैं और न वली हज़्रात ही जानते हैं। श्रीकृष्ण ने कहा था- **'जन्म कर्म च मे दिव्यम्'-** मेरा वह जनम और

अमल मावराई है, इन आम नज़रों से नहीं देखा जा सकता, लिहाज़ा मेरे उस ज़ाहिर होने को देवता और वली के मर्तबः तक पहुँचे हुए लोग भी नहीं जानते। मैं हर तरह से देवताओं और वलियों की बुन्यादी वज्ह हूँ।

यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम्।
असम्मूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते।।३।।

जो मुझ ज़िन्दगी और मौत से आरी, इब्तिदा और इंतिहा से मुबर्रा तमाम अवालिम के अज़ीम मा'बूद को बदीही दीदार के साथ जान लेता है, वह इंसान फ़ना पिज़ीर इंसानों में इल्मदाँ है या'नी पैदाइश से मुबर्रा, अबदी और सारे अवालिम के अज़ीम मालिक को अच्छी तरह जानना ही इल्म है और ऐसा जानने वाला तमाम गुनाहों से नजात पा जाता है। आमदो-रफ़्त से छुटकारा पा लेता है। श्रीकृष्ण कहते हैं कि यह दस्तयाबी भी मेरा ही फैज़ है।

बुद्धिर्ज्ञानमसम्मोहः क्षमा सत्यं दमः शमः।
सुखं दुःखं भवोऽभावो भयं चाभयमेव च।।४।।

अर्जुन! अक़्ले सलीम, बदीही दीदार के साथ जानकारी, मक़्सद में इर्फ़ान के साथ रुज़्हान, मुआफ़ी, दाइमी हक़ीक़त, नफ़्सकुशी, मन पर क़ाबू, बातिनी ख़ुशी, राहेग़ौरो फ़िक्र की मुसीबतें, रूहे मुत्लक़ की बेदारी, हक़ीक़ी शक्ल के हुसूल के दौर में सारा कुछ की तह्लील, मा'बूद के मुतअल्लिक़ ज़वाबदेही का ख़ौफ़ और दुन्यवी ख़ौफ़ से आज़ादी और-

अहिंसा समता तुष्टिस्तपो दानं यशोऽयशः।
भवन्ति भावा भूतानां मत्त एव पृथग्विधाः।।५।।

अदम तशद्दुद (अहिंसा) या'नी अपनी रूह को जहन्नुम में न पहुँचाने का बरताव, मुसावात जिसमें ग़ैर बराबरी न हो, सब्र, रियाज़त-मन के साथ हवास को मक़्सूद के मुताबिक़ तपाना, सदक़ः या'नी मुकम्मल सुपुर्दग़ी, राहे मा'बूद में इज़्ज़त-ज़िल्लत का बर्दाश्त करना, इस तरह मज़्कूरएबाला जानदारों के एहसासात मुझसे ही सादिर होते हैं। ये सारे एहसास रूहानी तरीक़-ए-फ़िक्र के निशानात हैं। इनकी कमी ही 'दुन्यवी दौलत' है।

महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा।
मद्भावा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः।।६।।

हफ़्तऔरंग (सप्तर्षि) या'नी बतसल्सुल जोग की सात बुन्यादें [शुभेच्छा (नेक ख़्वाहिश), सुविचारणा (अच्छी सोच), तनुमानसा (जिस्म में मन का लगाव न होना), सत्वापत्ति (सच्चाई से रग़बत), असंसक्ति (लगाव से अलगाव), पदार्थभावना (माद्दीयात का ख़याल न होना) और तुर्यगा (मन पर क़ाबू)] और इनके मुताबिक़ बातिन के चार सिफ़ात (मन, अक़्ल, तबीअ़त और गुरूर), उसके मुताबिक़ मन जिसके अन्दर मेरी अक़ीदत है- ये सब मेरे ही इरादे से (मेरे ही हुसूल के अज़्म से और जो मेरी ही तर्ग़ीब से सादिर होते हैं, दोनों एक दूसरे के तक्मिलः हैं) पैदः होते हैं। इस दुन्या में ये (मुकम्मल रूहानी दौलत) इन्हीं ही रिआ़यः हैं। क्योंकि सातों तह्क़ीक़ात की तह्रीक में 'रूहानी दौलत' ही है, दूसरा कुछ नहीं।

एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वतः।
सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः।।७।।

जो इंसान जोग की और मेरी मज़्कूरएबाला शौकतों को बदीही दीदार के साथ जानता है, वह साकिन तसव्वुराती जोग के ज़रीअः मुझमें यकसानियत के साथ मौजूद होता है। इसमें कोई शुब्हः नहीं है। जिस तरह हवा से ख़ाली जगह पर रखे चराग़ की लौ सीधी जाती है, लर्ज़िश नहीं होती, जोगी की क़ाबूयाफ़्तः तबीअ़त की यही ता'रीफ़ है। पेशक़र्दः श्लोक में **'अविकम्पेन'** (ग़ैरमुतहर्रिक) लफ़्ज़ इसी मफ़्हूम की ज़ानिब इशारः करता है।

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः।।८।।

मैं सारी दुन्या की तख़्लीक़ की वज्ह हूँ। मुझसे ही सारी दुन्या कोशाँ है। इस हक़ीक़त को मानकर अक़ीदत और ख़ुलूस से मुज़ैयन दानिशमंद लोग मुसल्सल मेरी याद करते हैं। मत्लब यह कि जोगी के ज़रीअः मेरी रज़ाअः के मुताबिक़ जो रुज्हान होते है, उसे मैं ही किया करता हूँ। वह मेरा ही रह्मोकरम है। (कैसे है? इसे पहले जगह-जगह पर बताया जा चुका है) वे मुसल्सल किस तरह याद करते हैं? इस पर फ़र्माते हैं-

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च।।९।।

बिला शिर्क़ते ग़ैर मुझमें ही मुसल्सल तबीअ़त को लगाने वाले, मुझमें ही जान

लगाने वाले हमेशः आपस में मेरे तौर-तरीक़ों का इल्म व एहसास हासिल करते हैं। मेरी ता'रीफ़ करते हुए ही सुकून पाते हैं और मुसल्सल मेरे तसब्बुर में लगे रहते हैं।

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते।।१०।।

मुसल्सल मेरे तसव्वुर में लगे हुए और बा-मुहब्बत याद करने वाले उन बन्दों को मैं वह अक़्लीजोग या'नी की जोग से निस्बत दिलाने वाली अक़्ल अता करता हूँ, जिससे वे मुझे हासिल करते हैं या'नी जोग की बेदारी मा'बूद के रहमो-करम का नतीजः है। वह ग़ैरमर्ई फ़र्द 'अज़ीम इंसान' जोग में दाखिलः दिलाने वाली समझ कैसे अता करता है?

तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः।
नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता।।११।।

उनके ऊपर पूरी मेह्बानी अता करने के लिए मैं उनकी रूह से यकसाँ खड़ा होकर, रथबान बनकर जहालत से पैदा होने वाली तारीकी को इल्म के चराग़ से रौशन करके ख़त्म कर देता हूँ। दरहक़ीक़त किसी हालआश्ना (मुस्तक़िल मिज़ाज) जोगी के ज़रीअः जब तक वह मा'बूद आपकी रूह से ही बेदार होकर हर लम्हः रहनुमाई नहीं करता, रोक-थाम नहीं करता, इस दुन्यवी चक्कर से आज़ाद करते हुए ख़ुद आगे नहीं बढ़ाता, तब तक हक़ीक़ी याद की अस्ल में शुरुआत ही नहीं होती। वैसे तो मा'बूद का हर गोशे से इज़्हार होने लगता है, लेकिन शुरू में ये पहुँचे हुए अज़ीम इंसान के ज़रीअः ही ज़ाहिर होते हैं। अगर ऐसा अज़ीम इंसान आपको हासिल नहीं है तो वे आपसे साफ़ तौर पर मुख़ातब नहीं होंगे।

मा'बूद, मुर्शिद ख़्वाह रूहे मुत्लक़ का रथबान होना एक ही बात है। रियाज़तकश की रूह से बेदारी के बा'द उनके अहकामात चार तरह से मिलते हैं। पहले मुजस्सम साँस से वाबस्तः एहसास होता है। आप ग़ौरोफ़िक्र में बैठे हैं। कब आपका मन लगने वाला है? किस हद तक लग गया है? कब मन भागना चाहता है और कब भाग गया? इसको हर मिनट-सेकेण्ड पर मा'बूद जिस्म की हरकत से इशारः करते हैं। आ'जा का फड़कना मुजस्सम सांस से वाबस्तः एहसास है, जो एक लम्हः में दो-चार जगहों पर एक साथ आता है और आपके लापरवाह होने पर मिनट-मिनट पर आने लगेगा। यह इशारः तभी होता है, जब मत्लूब की शक्ल को आप लाशरीक ख़याल

से पकड़ें, वर्नः आम जानदारों में तअस्सुरात के टकराव से जिस्मानी फड़कन होती रहती है, जिनका मा'बूद से मत्लब रखने वालों से कोई सरोकार नहीं है।

दूसरा एहसास ख़्वाबीदः साँस से वाबस्तः होता है। आम इंसान अपने ख़्वाहिशात से मुतअल्लिक़ ख़्वाब देखता है; लेकिन जब आप मा'बूद को पकड़ लेंगे, तो यह मौजूद ख़्वाब भी अह्काम में बदल जाता है। जोगी ख़्वाब नहीं देखता, होने वाले वाक़िआत देखता है।

मज़्कूरएबाला दोनों एहसासात इब्तिदाई है, किसी मुबस्सिर अज़ीम इंसान की कुर्बत से, मन में उनके लिए मह्ज़ अक़ीदत रखने से उनकी मा'मूली ख़िद्मत से भी बेदार हो जाते हैं, लेकिन इन दोनों से भी बारीक़ बाकी दो एहसासात अमली हैं, जिन्हें अमली राह पर चलकर ही देखा जा सकता है।

तीसरा एहसास गहरी नींद वाली साँस से वाबस्तः होता है। दुन्या में सब सोते ही तो हैं। दुन्यवी फ़िरेब की रात में सभी बेहोश पड़े हैं। शबो-रोज़ जो हैं, ख़्वाब ही तो है। यहाँ गहरी नींद का ख़ालिस मा'ना है, जब मा'बूद की फ़िक्र की ऐसी डोर लग जाय कि सुरत (ख़याल) बिल्कुल साकिन हो जाय, जिस्म जागता रहे और मन सो जाय। ऐसी हालत में वह मा'बूद फिर अपना एक इशारः देंगे। जोग की हालत के मुताबिक़ एक मंज़र आता है, जो सहीह रास्तः अता करता है, माज़ी और मुस्तक़्बिल से तअर्रुफ़ कराता है। 'क़ाबिले एहतिराम महाराज जी' कहा करते थे कि, ''डाक्टर जैसे बेहोशी की दवा देकर मा'क़ूल इलाज करके होश में लाता है, ऐसे ही मा'बूद बाख़बर कर देते हैं।''

चौथा और आख़िरी एहसास मुसावी साँस से वाबस्तः है। जिसमें आपने लौ (सुरत) लगायी थी, उस मा'बूद के साथ मुसावात हासिल हो गयी। उसके बा'द उठते-बैठते, चलते-फिरते, हर जगह से उसे एहसास होने लगता है। यह जोगी तीनों दौरों का जानकार होता है। यह एहसास तीनों दौरों से अलग ग़ैरमर्ई की हालत वाले अज़ीम इंसान रूह से बेदार होकर नासमझी के ज़ेरेअसर पैदा होने वाले तारीकी को चराग़े-इल्म से ख़त्म करके अंजाम देते हैं। इस पर अर्जुन ने सवाल खड़ा किया-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान्।
पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुम्।।१२।।

आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा।
असितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे।।१३।।

बन्दःपर्वर! आप आ'ला मा'बूद, आ'ला मक़ाम और कुदुस हैं; क्योंकि आपको सभी वली हज़्रात अबदी, मावराई इंसान रब्बुलअर्बाब, दाइमी और आलमगीर कहते हैं। आ'ला इंसान, आ'ला मक़ाम का ही मुतरादिफ़ मावराई इंसान, दाइम वग़ैरः अल्फ़ाज़ हैं। आरिफ़ेमलकूत नारद, असित, देवल, व्यास और ख़ुद आप भी मुझसे वही कहते हैं या'नी पहले गुज़श्तः दौर के वली हज़्रात कहते आये हैं, अब मौजूदः दौर में जिनकी कुर्बत हासिल है; नारद, देवल, असित और व्यास का नाम लिया, जो अर्जुन के हमज़मानः थे (सालेह इंसानों की कुर्बत अर्जुन को हासिल थी।) आप भी वही कहते हैं। लिहाज़ा-

सर्वमेतदृतं मन्ये यन्मां वदसि केशव।
न हि ते भगवन्व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः।।१४।।

ऐ केशव! जो कुछ भी आप मेरे लिए नसीहत कर रहे हैं, वह सब मैं सहीह मानता हूँ। आपकी शख़्सियत को न देवता और न दानव ही जानते हैं।

स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम।
भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते।।१५।।

ऐ ख़ालिक़! मालिके ख़ल्क़! ऐ देवताओं के देवता! ऐ मालिकुल मुल्क! ऐ इंसानों में अज़ीम इंसान! ख़ुद आप ही अपने को जानते हैं या जिसके बालिन में बेदार होकर आप ज़ाहिर करा देते हैं, वह जानता है। वह भी आप के ज़रीअः आपकी जानकारी हुई। इस वास्ते-

वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि।।१६।।

आप भी अपनी उन मावराई शौकतों को मुकम्मल तौर से जरा भी बाक़ी न रखकर बयान करने में क़ादिर हैं, जिन शौकतों के ज़रीअः आप तमाम अवालिम को जारी-ओ-सारी करके मौजूद हैं।

कथं विद्यामहं योगिंस्त्वां सदा परिचिन्तयन्।
केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया।।१७।।

ऐ जोगी! (श्रीकृष्ण एक जोगी थे) मैं किस तरह मुसल्सल फ़िक्र करता हुआ

आपका इल्म हासिल करूँ और ऐ बन्दःपर्वर! मैं किन-किन एहसासात के साथ आपको याद करूँ?

विस्तरेणात्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन।
भूयः कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम्।।१८।।

ऐ बन्दःपर्वर! अपने जोग की ताक़त को और जोग की अज़्मत को फिर भी तफ़्सील के साथ बतलाइये। मुख़्तसर में तो इसी बाब के शुरू में बताया ही है, फिर बताइये; क्योंकि लाफ़ानी उंसुर को दिलाने वाली इन नसीहतों को सुनने से मुझे आसूदगी नहीं होती।

रामचरित जे सुनत अघाहीं। रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं।।
(रामचरितमानस, ७/५२/१)

जब तक दाख़िल नहीं मिल जाता तब तक उस लाफ़ानी उंसुर को जानने की तश्नगी बनी रहती है। दाख़िल होने से पहले रास्ते में ही यह सोचकर कोई बैठ गया कि बहुत जान लिया तो उसने नहीं जाना। साबित है कि उसका रास्तः बन्द होना चाहता है। लिहाज़ा रियाज़तकश को तक्मिल तक मा'बूद के अहकाम को पकड़ते रहना चाहिए और उसे बरताव में ढालना चाहिए। अर्जुन की बयान किये गये तज़्स्सुस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने फ़र्माया-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे।।१९।।

कौरव ख़ानदान में अश्रफ़ अर्जुन! अब मैं अपनी मावराई शौकतों को, उनमें से ख़ास शौकतों के बारे में तुझे बताऊँगा, क्योंकि मेरी शौकतों के फ़ैलाव की इन्तिहा नहीं है।

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च।।२०।।

अर्जुन! मैं सारे जानदारों के दिल में क़ाइम सबकी रूह हूँ और तमाम जानदारों की इब्तिदा, वस्त और अख़ीर भी मैं ही हूँ या'नी पैदाइश, हयात और मौत भी मैं ही हूँ।

आदित्यानामहं विष्णुर्ज्योतिषां रविरंशुमान्।
मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी।।२१।।

मैं अदिति के बारह औलाद में विष्णु और रोशनी में मुनव्वर सूरज हूँ। हवा की किस्मों में मैं मरीचि नाम की हवा और सितारों में माहताब हूँ।

वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः।
इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना।।२२।।

वेदों में मैं सामवेद या'नी मुकम्मल मुसावात दिलाने वाला नग़्मः हूँ। देवताओं में मैं उनका शाहंशाह इन्द्र हूँ और हवास में मन हूँ क्योंकि मन की बंदिश से ही मैं जाना जाता हूँ और जानदारों में उनकी हिस (चेतना) हूँ।

रुद्राणां शङ्करश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम्।
वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम्।।२३।।

ग्यारह रुद्रों में मैं शंकर हूँ। (शंक+अर स शंकर) या'नी शंकाओं (शको-शुब्हः) से अलग की हालत में हूँ। यक्ष और देवों में मैं दौलत का मालिक कुबेर हूँ। आठ वसुओं में मैं आग और चोटी वालों में सुमेरू या'नी शुभों (नेक ख़यालात) की मीज़ान मैं हूँ। वही सबसे ऊँची चोटी है न कि कोई पहाड़ी। दरहक़ीक़त ये सब जोग की रियाज़त की अलामतें हैं। जोग से मुतअल्लिक़ अल्फाज़ हैं।

पुरोधसां च मुख्यं मां विद्धि पार्थ बृहस्पतिम्।
सेनानीनामहं स्कन्दः सरसामस्मि सागरः।।२४।।

पुर (मक़ाम) की हिफ़ाज़त करने वाले पुरोहितों (पीरों) में वृहस्पति मुझे ही समझ, जिससे रूहानी दौलत की तहरीक होती है और ऐ पार्थ! सिपहसालारों में मैं स्वामी कार्तिकेय हूँ। कर्म (अमल) का ईसार ही कार्तिकेय है, जिससे मुतहर्रिकोसाकिन का ख़ातिमः, क़ियामत और मा'बूद का हुसूल होता है। झीलों में मैं समन्दर हूँ।

महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्म्येकमक्षरम्।
यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः।।२५।।

औलिया में मैं भृगु हूँ और अल्फ़ाज़ में एक हर्फ़ 'ॐ'कार हूँ, जो उस मा'बूद का मज़्हर है। सब तरह के यगों में मैं विर्द का यग हूँ। यग आ'ला हैसियत दिलाने वाली इबादत के तरीक़-ए-ख़ास की अक्कासी है। उसका लुब्बे-लुवाब है यादेइलाही और नाम का विर्द। दो अल्फ़ाज़ से पार हो जाने पर नाम जब यग के दर्ज़ेः में आता

है, तो आवाज़ से नहीं विर्द किया जाता, न ग़ौरो-फ़िक्र से, हल्क़ से, बल्कि वह साँस में बेदार हो जाता है। सिर्फ़ लौ (सुरत) को साँस के पास लगाकर मन से लगातार चलना भर पड़ता है। यग के दर्जः वाले नाम का उतार-चढ़ाव साँस पर मुन्हसिर है। यह अमली है। अटल रहने वालों में मैं हिमाला हूँ। सर्द, मुसावी और अटल वाहिद मा'बूद है। जब क़ियामत हुई तब मूरिसेअव्वल मनु उसी चोटी में बँध गये। अटल, मुसावी और पुरसुकून मा'बूद की क़ियामत नहीं होती। उस मा'बूद की पकड़ मैं हूँ।

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः।
गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः।।२६।।

सब दरख़्तों में मैं अश्वस्थ (पीपल) हूँ। **'अश्वः'**- कल तक भी जिसके रहने का वा'दः नहीं किया जा सकता, ऐसा **'ऊर्ध्वमूलमधःशाखम् अश्वत्थम्'**- ऊपर मा'बूद जिसकी जड़ है, नीचे कुद्रत जिसकी शाख़ हैं, ऐसी दुन्या ही एक दरख़्त है, जिसे पीपल का नाम दिया गया है। पीपल का आम दरख़्त नहीं कि उसकी इबादत करने लगें। इसी पर कहते हैं कि- वह मैं हूँ और मलकूती आरिफ़ों (देवर्षियों) में मैं नारद हूँ। **नाद रंध्रः स नारद**। (आवाज़ का छेद-आवाज़ की लताफ़त) रूहानी दौलत इतनी लतीफ़ हो गयी कि लय में उठने वाली आवाज़ (नाद) पकड़ में आ जाय, ऐसी बेदारी मैं हूँ। गंधर्वों (देवताओं की गाने-बजाने वाली एक ज़ात) में मैं चित्ररथ हूँ। या'नी गायन (फ़िक्र) करने वाले ख़साइल में जब शक्ल उभरने लगे, वह ख़ुसूसी हालत मैं हूँ। कामिलों में मैं कपिल मुनि हूँ। 'काया' (जिस्म) ही कपिल है। इसमें जब लौ लग जाय, उस ख़ुदाई तह्रीक की हालत मैं हूँ।

उच्चैःश्रवसमश्वानां विद्धि माममृतोद्भवम्।
ऐरावतं गजेन्द्राणां नराणां च नराधिपम्।।२७।।

घोड़ों में मैं आबे-हयात (अमृत) के लिए मथे गये समन्दर से पैदा होने वाला उच्चैःश्रवा नामक घोड़ा हूँ। दुन्या में हर शै'फ़ानी है। रूह ही जावेद अबदी और लाफ़ानी है। इस लाफ़ानी शक्ल से जिसकी तह्रीक है, वह घोड़ा मैं हूँ। घोड़ा रफ़्तार की अलामत है। आत्मतत्त्व (रूहानी उंसुर) को क़बूल करने में जब मन उधर रफ़्तार पकड़ता है, घोड़ा है। ऐसा रफ़्तार मैं हूँ। हाथियों में ऐरावत (इन्द्र का सफ़ेद रंग का हाथी) नाम का हाथी मैं हूँ। इंसानों में शाह मुझे ही समझ। दरहक़ीक़त अज़ीम इंसान ही शाह है, जिसके पास तंगदस्ती नहीं है।

आयुधानामहं वज्रं धेनूनामस्मि कामधुक्।
प्रजनश्चास्मि कन्दर्पः सर्पाणामस्मि वासुकिः।।२८।।

अस्लिहः में मैं बज्र हूँ। गायों में कामधेनु हूँ। कामधेनु कोई ऐसी गाय नहीं है जो दूध की जगह मनचाहा पकवान मुहैया करती है। आरिफों में वशिष्ठ के पास कामधेनु थी। दरहक़ीक़त 'गो' हवास को कहते हैं। हवास को क़ाबू में रखने की ख़ूबी मा'बूद को क़ाबू में रखने वालों में पायी जाती है। जिसके हवास मा'बूद के मुताबिक़ साकिन के हो जाते हैं, उसके लिए उसी के हवास कामधेनु बन जाते हैं, फिर तो,

जो इच्छा करिहहु मन माहीं। हरि प्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं।।
(रामचरितमानस, ७/११३/४)

उसके लिए कुछ भी कमयाब नहीं रहता। जनम देने वालों में नये हालात को ज़ाहिर करने वाला मैं हूँ। 'प्रजनन' (पैदाइश) एक तो बच्चा बाहर पैदा किया जाता है। मुतहर्रिको साकिन में रात-दिन पैदा ही होते हैं, चूहे-चींटी रात-दिन बच्चे पैदा करते हैं, ऐसा नहीं; बल्कि एक हालत से दूसरी हालत, इस तरह ख़साइल का बदलाव होता है, उस बदलाव की हक़ीक़ी शक्ल मैं हूँ। साँपों में मैं वासुकि हूँ।

अनन्तश्चास्मि नागानां वरुणो यादसामहम्।
पितॄणामर्यमा चास्मि यमः संयमतामहम्।।२९।।

नागों (अफ़ई) में मैं 'अनन्त' या'नी शेषनाग हूँ। वैसे यह कोई वह साँप नहीं है, जिसे आमतौर से लोग समझते हैं। गीता की हमज़मानः किताब 'श्रीमद्भागवत' में इसकी शक्ल का ज़िक्र है कि इस ज़मीन से तीस हजार योजन (दूरी की माप जो किसी मत से १ कोस की और किसी के मत से ४ कोस की व किसी के मत से ८ कोस की होती है।) की दूरी पर मा'बूद की ताक़त है जिसे 'वैष्णवी ताक़त' कहते हैं, जिसके सर पर यह ज़मीन सरसों के दाने के मानिन्द बिला वज्न के टिकी है। उस ज़माने में योजन का पैमानः चाहे जो रहा हो, फिर भी यह काफी दूर है। दरहक़ीक़त यह एक जाज़िबः (आकर्षण शक्ति) का बयान है, साइंसदाँ लोगों ने जिसे ईथर माना है। सय्यारः- मस्नुई सय्यारः सभी उसी ताक़त की बुन्याद पर टिके हैं। उस ख़ला में सय्यारों का कोई वज्न भी नहीं है। वह ताक़त साँप की कुण्डली की मानिन्द सभी सय्यारों को लपेटे है। यही है वह 'अनन्त', जिसकी बुन्याद पर यह ज़मीन टिकी है। श्रीकृष्ण कहते हैं- ऐसी ख़ुदाई ताक़त में हूँ। पानी में रहने वाले जानदारों में उनका राजा 'वरुण' हूँ और अज्दाद (पितरों) में 'अर्यमा' हूँ। अदमतशद्दुद (अहिंसा), सदाक़त

(सत्य), चोरी न करना (अस्तेय), रहवानियत (ब्रह्मचर्य) और हवस से मुबर्रा (अपरिग्रह) पाँच यम (वसीले) हैं। इसके बरताव में आने वाली बुराइयों को ख़त्म करना 'अरः' (ज़िद) है। उयूब की सरकोबी से अज्दाद या'नी गुज़श्तः तअस्सुरात आसूदः होते हैं, गुलूख़लासी अता करते हैं। हुकूमत करने वालों में मैं 'यमराज' हूँ या'नी मज़्कूर-ए-बाला यमों (वसीलों) का नाज़िम हूँ।

प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानां कालः कलयतामहम्।
मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणाम्।।३०।।

मैं देवों (दैत्यों) में प्रह्लाद हूँ। (पर आह्लाद- मावरा के लिए खुशी) महब्बत ही प्रह्लाद है। दुन्यवी दौलत से वाबस्तः रहते हुए मा'बूद की तरफ़ ख़िंचाव और तड़प शुरू होती है, जिससे आ'ला मा'बूद का दीदार होता है। ऐसी महब्बत की ख़ुशी मैं हूँ। शुमार करने वालों में मैं वक़्त हूँ। एक-दो-तीन-चार ऐसी गिनती या लम्हः घड़ी-दिन-पखवाड़ा-महीनः वग़ैरः नहीं, बल्कि मा'बूद की फ़िक्र में लगा हुआ वक़्त में हूँ। यहाँ तक कि **'जागत में सुमिरन करे, सोवत में लव लाय।'** मुसल्सल फ़िक्र में वक़्त मैं हूँ। जानवरों में मृगराज (शेर) (जोगी भी मृ+ग या'नी जोग की शक्ल वाले जंगल में गमन करने (जाने) वाला है और परिन्दों में गरुड़ मैं हूँ। ज्ञान (इल्म) ही गरुड़ है। जब ख़ुदाई एहसास बेदार होने लगता है, तब यही मन अपने मा'बूद की सवारी बन जाता है और जब यही मन शको-शुब्हः से मुज़ैयम है तब 'सर्प' (अफ़ई) होता है, डॅसता रहता है, शक्लों (योनियों) में फेंकता है। गरुड़ विष्णु की सवारी है। जो इक़्दिार सारी दुन्या में अणु की शक्ल में मुतहर्रिक है, इल्म से मुज़ैयन मन उसे अपने में जज़्ब कर लेता है, उसका हामिल बनता है। श्रीकृष्ण कहते हैं- मा'बूद को अपने क़बूल करने वाला मन मैं हूँ।

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम्।
झषाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी।।३१।।

तहारत मुहैया कराने वालों में मैं हवा हूँ, मुसल्लह लोगों में राम हूँ। **'रमन्ते योगिनः यस्मिन् स रामः'**- जोगी हज़्रात किसमें मन लगाते हैं? तज़्रिबः में। मा'बूद मत्लूबः की शक्ल में जो हिदायत देता है, जोगी उसमें मस्रूफ़ रहते हैं। उस बेदारी का नाम राम है और वह बेदारी में हूँ। मछलियों में मगर (घड़ियाल) और नदियों में गंगा नदी मैं हूँ।

सर्गाणामादिरन्तश्च मध्यं चैवाहमर्जुन।
अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदतामहम्।।३२।।

ऐ अर्जुन! तख़्लिक़ात की इब्तिदा, इन्तिहा और वस्त मैं ही हूँ। उलूम में तसव्वुफ़ का इल्म मैं हूँ। जो रूह का इख़्तियार दिला दे, वह इल्म मैं हूँ। दुन्या में ज़ियादःतर लोग लौसेदुन्या (माया) के इख़्तियार में हैं; हसद अदावत, दौर, अमल, ख़स्लत और सिफ़ात से आमादः हैं। इनके इख़्तियार से निकालकर रूह के इख़्तियार में ले जाने वाला इल्म मैं हूँ, जिसे इल्मेतसव्वुफ़ कहते हैं। आपसी इख़्तिलाफ़ात में, ज़िक्रेइलाही में जो फैसलःकुन है, ऐसी गुफ़्तगू मैं हूँ। बाक़ी के फैसलः तो फैसलः तलब होते हैं।

अक्षराणामकारोऽस्मि द्वन्द्वः सामासिकस्य च।
अहमेवाक्षयः कालो धाताहं विश्वतोमुखः।।३३।।

मैं हुरूफ़ में 'अ'कार- ओम्कार और मुरक्कब में द्वन्द्व नाम का मुरक्कब हूँ। लाफ़ानी दौर मैं हूँ। दौर में हमेशः रद्दो-बदल होते रहते हैं; लेकिन वह वक़्त, जो लाफ़ानी जावेद अबदी रूहे मुत्लक़ में दाख़िलः दिलाता है; वह हालत मैं हूँ। अज़ीमुश्शान हक़ीक़ी शक्ल या'नी हर जगह जारी-ओ-सारी, सबको सँभालने व पर्वरिश करने वाला भी मैं ही हूँ।

मृत्युः सर्वहरश्चाहमुद्भवश्च भविष्यताम्।
कीर्तिः श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा।।३४।।

मैं सबका ख़ातिमः करने वाली मौत और आगे पैदा होने वालों की पैदाइश की वज्ह हूँ। औरतों में मैं शुह्रत, ताक़त, लफ़्फ़ाजी, याददाश्त, समझ या'नी अक़्ल, सब्र और मुआफ़ी मैं हूँ।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण के मुताबिक़- **'द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।'** (बाब १५, श्लोक १६)- इंसान दो ही तरह के होते हैं- फ़ानी और लाफ़ानी। तमाम जानदार वग़ैरः की पैदाइश और ख़ातिमः करने वाले ये जिस्म फ़ानी इंसान हैं। वे नर, मादा, मर्द या औरत कुछ भी कहलायें, श्रीकृष्ण के अल्फ़ाज़ में इंसान ही है। दूसरा है- लाफ़ानी इंसान जो आ'ला दर्जे के मुस्तह्कम तबीअ़त के साकिन होने के दौर में देखने में आता है। यही वज्ह है कि इस राहे-जोग में औरत मर्द सभी बराबर के हालत वाले अज़ीम इंसान होते आये हैं; लेकिन यहाँ याददाश्त को ताक़त, अक़्ल

वग़ैरः औरतों के ही ख़ुसूसियात बताये गये। क्या इन नेक सिफ़ात की ज़रूरत मर्दों के लिए नहीं है? कौन ऐसा मर्द है जो श्रीमान्, शुह्रतमन्द, मुक़र्रिर, ज़हीन, अक़्लमन्द और साबिर नहीं बनना चाहता? ज़ेह्नी सत्ह पर कमज़ोर लड़कों में इन्हीं सिफ़ात की तरक़्क़ी करने के लिए वालिदैन उनकी ता'लीम का अलग से इंतिज़ाम करते हैं। यहाँ कहते हैं कि ये निशानियाँ सिर्फ़ औरतों में पायी जाती हैं, लिहाज़ा आप ग़ौर करके देखें कि औरत कौन है? दरहक़ीक़त आपके दिल की ख़स्लत ही 'औरत' है। उसमें इन ख़ूबियों की तह्रीक होनी चाहिए। इन सिफ़ात को क़बूल करना औरत ख़्वाह मर्द सबके लिए मुफ़ीद है, जो मुझसे होते हैं।

बृहत्साम तथा साम्नां गायत्री छन्दसामहम्।
मासानां मार्गशीर्षोऽहमृतूनां कुसुमाकरः।।३५।।

वेदों में क़ाबिले नग़्मः सराई में मैं 'बृहत्साम' या'नी अज़ीम से मुज़ैयन, मुसावात दिलाने वाला नग़्मः हूँ या'नी ऐसी बेदारी मैं हूँ। बह्र (छंदों) में गायत्री बह्र मैं हूँ। गायत्री कोई दुआ (मंत्र) नहीं हैं, जिसे पढ़ने से नजात मिलती हो बल्कि ख़ुद सुपुर्दगी से वाबस्तः एक बह्र (छंद) है। तीन बार मुतज़ल्ज़िल हो जाने के बा'द आरिफ़ विश्वामित्र ने अपने को मा'बूद की पनाह में सुपुर्द करते हुए कहा- **"ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।"** या'नी ज़मीनो-आस्मान और बिहिश्त (भूः, भुवः और स्वः) तीनों अवालिम में बशक्ले उंसुर जल्वःगर देवता! आप ही मुम्ताज हैं। हमें ऐसी अक़्ल अता करें, ऐसी तर्ग़ीब दें कि हम मक़्सद को हासिल कर लें। यह मह्ज़ एक गुज़ारिश है। रियाज़तकश अपनी अक़्ल से हक़ीक़ी फ़ैसलः नहीं ले पाता कि मैं कब सही हूँ, कब ग़लत? उसकी यह हवालेक़र्दः इल्तिजा मैं हूँ, जिसमें यक़ीनी तौर से भलाई है; क्योंकि वह मेरी पनाह में आया है। महीनों में सबसे आ'ला महीना अगहन मैं हूँ और जिसमें हमेशः बहार हो ऐसा मौसिम, दिल की ऐसी हालत भी मैं ही हूँ।

द्यूतं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम्।
जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि सत्त्वं सत्त्ववतामहम्।।३६।।

जलाली इंसानों का जलाल में हूँ। क़िमारबाज़ी (जुआ) में फ़िरेब करने वालों का फ़िरेब मैं हूँ। तब तो अच्छा है, जुआ खेलें, उसमें मक्रो-फ़िरेब करें, वही मा'बूद हैं। नहीं, ऐसा कुछ नहीं है। यह दुन्या ही एक जुआ है, यही दग़ाबाज़ है। इस दुन्या के फ़साद से निकलने के लिए नुमाइश छोड़कर पोशीदगी के साथ चुपके-चुपके

यादे-इलाही में लग जाना ही फ़िरेब है। फ़िरेब है तो नहीं; लेकिन बचाव के लिए ज़रूरी है। जड़ भरत की तरह मद्मस्त, अन्धे, बहरे और गूँगे की तरह दिल से सब कुछ समझते हुए भी बाहर से ऐसे रहें कि जैसे नावाक़िफ़ हों, सुनते हुए भी न सुनें, देखते हुए भी न देखें। छुपकर ही यादेइलाही का तरीक़ः है। तभी रियाज़तकश कुद्रत और कुद्रत के मालिक के जुए में कामयाबी हासिल करता है। फ़त्ह करने वालों की फ़त्ह मैं हूँ और सौदागरों का यक़ीन (जिसे बाब-दो, श्लोक ४१ में कह आये हैं) इस जोग में हत्मी अमल एक है, अक़्ल एक ही है, सम्त एक ही है ऐसी) अमली अक़्ल मैं हूँ। सालेह इंसानों का जलाल और ताक़त मैं हूँ।

वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि पाण्डवानां धनञ्जयः।
मुनीनामप्यहं व्यासः कवीनामुशना कविः।।३७।।

वृष्णि ख़ानदान में मैं वासुदेव या'नी हर जगह मौजूद रहने वाला देवता हूँ। पाण्डवों में मैं धनञ्जय (अर्जुन) हूँ। सवाब ही पाण्डु है और रूहानी दौलत ही क़ाइम व दाइमी दौलत है। सवाब की तर्ग़ीब से रूहानी दौलत को हासिल करनेवाला धनञ्जय मैं हूँ। ज़ाहिदों में मैं व्यास हूँ। उंसुरे आ'ला को ज़ाहिर करने की जिसमें सलाहीयत है, वह ज़ाहिद हूँ। सुख़नवरों में मैं 'उशना' या'नी उसमें दाख़िलः दिलाने वाला शाइर मैं हूँ।

दण्डो दमयतामस्मि नीतिरस्मि जिगीषताम्।
मौनं चैवास्मि गुह्यानां ज्ञानं ज्ञानवतामहम्।।३८।।

ज़ालिमों में जुल्म करने की ताक़त मैं हूँ। फत्ह के ख़्वाहिशमंदों की अमली हिक्मत (नीति) हूँ। पोशीदः रखने लाइक़ एहसासात में मैं ख़ामोशी हूँ और इल्मवालों में बदीही दीदार के साथ मिलने वाली समझदारी, मुकम्मल इल्म मैं हूँ।

यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन।
न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम्।।३९।।

अर्जुन! तमाम जानदारों की पैदाइश की वजह भी मैं ही हूँ, क्योंकि मुतहर्रिको साकिन ऐसा कोई भी नहीं है, जो मुझसे ख़ाली हो। मैं हर जगह जारी-ओ-सारी हूँ। सब मेरे ही नूर से हैं।

नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परन्तप।
एष तूद्देशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया।।४०।।

आ'ला रियाज़तकश अर्जुन! मेरी मावराई शौकतों का इन्तिहा नहीं है। अपनी शौकतों की वुस्अत का बयान तो मैंने मुख़्तसर में किया है, दरहक़ीक़त वे लामहूदूद हैं।

इस बाब में कुछ ही शौकतों को ज़ाहिर किया गया है क्योंकि अगले ही बाब में अर्जुन इन सबको देखना चाहता है, क्योंकि बदीही दीदार से ही शौकतें समझ में आती हैं। अन्दाज़े-फ़िक्र समझने के लिए इसी के अन्दर से थोड़ा इज़्हार किया गया।

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसम्भवम्।।४१।।

जो-जो भी सर्वतों वाली, मुनव्वर और ताक़तवाली चीजें हैं, उन-उन को तू मेरे जलाल की बरकत के एक थोड़े से हिस्सः से पैदा होने वाली हैं, ऐसा जान।

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्।।४२।।

ख़्वाह अर्जुन! इस बहुत जानने से तेरा क्या मत्लब है? मैं इस तमाम दुन्या बहुत थोड़ा-सा अख़्ज़ करके मौजूद हूँ।

मज़्कूरएबाला शौकतों के बयान का मतलब यह नहीं है कि आप या अर्जुन इन सभी चीज़ों की परस्तिश करने लगें बल्कि श्रीकृष्ण का मफ़्हूम सिर्फ़ इतना ही है कि इन सारी सम्तों से अक़ीदत को समेटकर मह्ज़ उस लाफ़ानी मा'बूद में लगावें। इतने से ही उनका फ़र्ज़ पूरा हो जाता है।

मग़्ज़े सुख़न :-

इस बाब में श्रीकृष्ण ने कहा कि- अर्जुन! मैं तुझे फिर नसीहत दूँगा, क्योंकि तू मेरा बेहद महबूब है। पहले बता चुके हैं, फिर भी बताने जा रहे हैं; क्योंकि मंज़िले-मक़्सूद पर पहुँचने तक मुर्शिद से नसीहत लेने की ज़रूरत रहती है। मेरे ज़ाहिर होने को न देवता और न वली हज़्रात ही जानते हैं, क्योंकि मैं उनकी भी इब्तिदाई वज्ह हूँ; क्योंकि ग़ैरमर्ई हालत के बा'द की आलमगीर हालत को वही जानता है, जो उस दौर से गुज़र चुका है। जो मुझे लापैदाइशी, लामुतनाही और तमाम अवालिम के अज़ीम ख़ुदा को बदीही दीदार के साथ जानता है, वही आलिम है।

अक़्ल, इल्म, समझदारी, नफ़्सकुशी, मन पर क़ाबू, सब्र, रियाज़त, सदक़ः और शुह्रत के तसव्वुरात या'नी रूहानी दौलत की मज़्कूरः निशानियाँ मेरी देन हैं। हफ़्त

औरंग या'नी जोग कि सात कर्दार, उससे भी पहले होने वाले उसी की मुनासबत से बातिनी चार हिस्से (मन, अक़्ल, तबीअ़त और गुरूर) और इनके मुताबिक़ मन जो अज़ख़ुद पैदा (स्वयंभू) है, ख़ुद ख़ालिक़ है- ये सब मुझमें जज़्बः, लगाव और अक़ीदत रखने वाले हैं, जिनकी दुन्या में तमाम ख़ल्क़ है, ये सब मुझसे ही पैदा है या'नी रियाज़ती ख़साइल मेरी ही ख़ल्क हैं। इनकी पैदाइश ख़ुद से नहीं, मुशिर्द से होती है। जो मज़्कूरएबाला मेरी शौकतों को मुजस्सम जान लेता है, वह बिला शुब्हः मुझमें यकताई के एहसास से दाख़िल होने लाइक़ है।

अर्जुन! 'मैं ही सबकी पैदाइश की वज्ह हूँ'- जो पूरी अक़ीदत के साथ ऐसी जानकारी हासिल कर लेते हैं, वे लाशरीक ख़ुलूस के साथ मेरी फ़िक्र करते हैं। मुसल्सल मुझमें मन, अक़्ल और जी-जान से लगने वाले होते हैं। आपस में मेरी ख़ुसूसियात की फ़िक्र और मुझमें ही मस्रूफ़ रहते हैं। उन मुसल्सल मुझसे जुड़े हुए इंसानों को मैं जोग से निस्बत दिलाने वाली अक़्ल अता करता हूँ। यह भी मेरा ही करम है। किस तरह अक़्ली जोग देते हैं? तो अर्जुन **'आत्मभावस्थ'**- (ख़ुद कफ़ील) उनकी रूह में मुस्तइद होकर तैयार हो जाता हूँ और उनके मन में नासमझी से पैदा हुए अंधेरे को इल्म के चराग़ से ख़त्म करता हूँ।

अर्जुन ने सवाल खड़ा किया कि, बन्दःपर्वर! आप कुदुस अबदी, मावराई, लामुतनाही और सब जगह जल्वःगर हैं- ऐसा वली हज़्रात कहते हैं और मौजूदः वक़्ते हाल में आरिफ़े मलकूत (देवर्षि) नारद, देवल, व्यास और आप भी वही कहते हैं। यही हक़ीक़त भी है कि आपको न देवता जानते हैं और न दानव। ख़ुद आप अपने बारे में जिसे बाख़बर कर दें, वही जान पाता है। आप ही अपनी शौकतों का बयान करने में क़ादिर हैं, लिहाज़ा मालिकेमख़्लूक़ात! आप अपनी शौकतों का बयान तफ़्सील के साथ कीजिए। मंजिले मक़्सूद पर पहुँचने तक मा'बूद से सुनते रहने की तलब बनी रहनी चाहिए। आगे मा'बूद की मंशा क्या है, उसे रियाज़तकश क्या जाने।

इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने फ़र्दन-फ़र्दन अपनी इक्यासी-शौकतों की निशानियों को मुख़्तसर में बताया- जिनमें से कुछ तो जोग के वसीलः में दाख़िल होने के साथ मिलने वाली बातिनी शौकतों की अक्कासी है और बक़ियः कुछ समाज में मालोज़र व कामयाबियों के साथ पायी जाने वाली शौकतों पर रोशनी डाली और आख़िर में उन्होंने ज़ोर देकर कहा- अर्जुन! बहुत कुछ जानने से तेरा क्या मक़्सद हैं? इस दुन्या में जो कुछ भी जलाल और शौकतों से मुज़ैयन चीजें हैं, वे सब मेरे

जलाल के एक मा'मूली हिस्सः के तौर पर मौजूद हैं। दरहक़ीक़त मेरी शौकतें बेइंतिहा हैं- ऐसा कहते हुए जोग के मालिक ने इस बाब का इख़्तिताम किया।

इस बाब में श्रीकृष्ण ने अपनी शौकतों की मह्ज़ अक़्ली समझ अता की, जिससे अर्जुन की अक़ीदत सब ओर से सिमटकर एक मा'बूद में लग जाये; लेकिन दोस्तो! सब कुछ सुन लेने और बाल की खाल निकालकर समझ लेने के बा'द भी उस रास्तः पर चलकर उसे जानना बाक़ी ही रहता है। यह अमली राह है।

तमाम बाब में जोग के मालिक की शौकतों का ही बयान है। लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'विभूतिवर्णनम्' नाम दशमोऽध्यायः।।१०।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'विभूति वर्णन' (बयाने शानो-शौकत) नाम का दसवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'विभूतिवर्णनम्' नाम दशमोऽध्यायः।।१०।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'विभूति वर्णन' (बयाने शानो-शौकत) नाम का दसवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ एकादशोऽध्यायः।।
(ग्यारहवाँ बाब)

बाबगुज़श्तः बाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने अपनी ख़ास-ख़ास शौकतों का इख़्तिसार के साथ बयान किया; लेकिन अर्जुन को लगा कि उसने तफ़्सील से सुन लिया है। उसने कहा कि आपकी बातें सुनने से मेरी सारी फ़िरेफ़्तगी ख़त्म हो गयी; लेकिन आपने जो कहा, उसे रू-ब-रू देखना चाहता हूँ। सुनने और देखने में मग़्रिब और मश्रिक़ का फ़र्क़ है। चलकर देखने की हक़ीक़त कुछ और ही होती है। अर्जुन ने उस शक्ल को देखा तो काँपने लगा, मुआफ़ी की इल्तिजा करने लगा। क्या आलिम ख़ौफ़ज़दः होता है? उसे कोई तजस्सुस रह जाता है? नहीं, अक़्ली सत्ह की जानकारी हमेशः नासाफ़ रहती है। हाँ, वह हक़ीक़ी इल्म के लिए तर्ग़ीब ज़रूर देता है। लिहाज़ा अर्जुन ने गुज़ारिश की कि-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला)-

मदनुग्रहाय परमं गुह्यमध्यात्मसञ्ज्ञितम्।
यत्त्वयोक्तं वचस्तेन मोहोऽयं विगतो मम।।१।।

बन्दःपर्वर! मुझ पर मेह्बान होकर के जो आपके वसीलः से राज़भरे तसव्वुफ़ में दाख़िलः दिलाने वाली नसीहतें दी गयीं, उससे मेरी यह जहालत ख़त्म हो गयी। मैं आलिम हो गया।

भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया।
त्वत्तः कमलपत्राक्ष माहात्म्यमपि चाव्ययम्।।२।।

क्योंकि ऐ चश्मेकवल! मैंने माद्दीयात की तख़्लीक़ और प्रलय आपसे तफ़्सील के साथ सुना है और आपका लाफ़ानी असर भी सुना है।

एवमेतद्यथात्थ त्वमात्मानं परमेश्वर।
द्रष्टुमिच्छामि ते रूपमैश्वरं पुरुषोत्तम।।३।।

ऐ पर्वर्दगार! आप अपने को जैसा कहते हैं, यह ठीक वैसा ही है, इसमें कोई शक नहीं है; लेकिन मैंने उसे सिर्फ़ सुना है। लिहाज़ा ऐ आ'लातरीन इंसान! शौकतों से मुज़ैयन उस हक़ीक़ी शक्ल को मैं ज़ाहिरी तौर पर देखना चाहता हूँ।

मन्यसे यदि तच्छक्यं मया द्रष्टुमिति प्रभो।
योगेश्वर ततो मे त्वं दर्शयात्मानमव्ययम्।।४।।

ऐ मालिक! मेरे ज़रीअः आपकी वह शक्ल देखी जानी मुम्किन हैं, अगर आप ऐसा मानते हों, तो ऐ जोग के मालिक! आप अपनी लाफ़ानी हक़ीक़ी शक्ल का मुझे दीदार कराइये। इस पर जोग के मालिक ने कोई इख़्तिलाफ़ नहीं किया; क्योंकि पहले भी वे जगह-जगह पर कह आये हैं कि तू मेरा लाशरीक बन्दः और महबूब दोस्त है। लिहाज़ा उन्होंने बड़ी खुशी के साथ अपनी हक़ीक़ी शक्ल का दीदार कराया।

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रशः।
नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च।।५।।

पार्थ! मेरी सैकड़ों और हज़ारों मुख़्तलिफ़ किस्म की और मुख़्तलिफ़ रंग (वर्ण) व सूरत वाली मावराई हक़ीक़ी शक्ल का दीदार कर।

पश्यादित्यान्वसून्रुद्रानश्विनौ मरुतस्तथा।
बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याश्चर्याणि भारत।।६।।

ऐ भारत! अदिति के बारह औलाद, आठ वसुओं, ग्यारह रुद्रों, दोनों अश्विनीकुमारों और उन्चास मरुद्गणों को देख और दूसरी बहुत-सी पहले तुम्हारे ज़रीअः कभी न देखी गई हैरतअंगेज़ शक्लों को देख।

इहैकस्थं जगत्कृत्स्नं पश्याद्य सचराचरम्।
मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद्द्रष्टुमिच्छसि।।७।।

अर्जुन! अब मेरे इस जिस्म में एक ही जगह पर मौजूद हुए मुतहर्रिको-साकिन के साथ तमाम जहान को देख और दूसरी चीज़ें भी, जो कुछ देखना चाहता है, वह देख।

इस तरह तीन श्लोकों तक श्रीकृष्ण मुसल्सल दिखाते चले गये लेकिन अर्जुन को कुछ दिखायी नहीं पड़ा। (वह आँखें मलता रह गया।) लिहाज़ा ऐसा दिखाते हुए बन्दःपर्वर यकबारगी रुक जाते हैं और फ़र्माते हैं-

न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा।
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम्।।८।।

अर्जुन! तू मुझे अपनी निगाहों के ज़रीअः या'नी अक़्ली नज़र से देखने में क़ादिर नहीं है। लिहाज़ा मैं तुझे मावराई या'नी नादिर नज़र अता करता हूँ, जिससे तू मेरे असर और जोग की ताक़त को देख।

इधर जोग के मालिक श्रीकृष्ण की रह्मोकरम से अर्जुन को वही नज़र मिल गयी, उसने देखा और उधर जोग के मालिक व्यास के रह्मोकरम से वही नज़र संजय को मिली थी। जो कुछ अर्जुन ने देखा, हू-ब-हू वही संजय ने भी देखा और उसकी बरकत से अपने को फ़लाह का हिस्सेदार बनाया। ज़ाहिर है कि श्रीकृष्ण एक जोगी के हमसर हैं।

संजय उवाच (संजय बोला) -

एवमुक्त्वा ततो राजन्महायोगेश्वरो हरिः।
दर्शयामास पार्थाय परमं रूपमैश्वरम्।।९।।

संजय बोला- ऐ शाह! अज़ीम जोग के मालिक श्रीकृष्ण (हरि) ने इस तरह की बातें बताने के बा'द अर्जुन को अपनी आ'ला शौकतों से मुज़ैयन मावराई हक़ीक़ी शक्ल दिखायी। जो ख़ुद जोगी है और दूसरों को भी जोग अता करने की जिसमें सलाहीयत हो, जो जोग का मालिक हो, उसे जोग का मालिक कहते हैं? इसी तरह, सब कुछ सल्ब (हरण) करनेवाला हरि है। अगर सिर्फ़ दुःखों को सल्ब (हरण) किया और सुख छोड़ दिया, तो दुःख आयेगा। लिहाज़ा सारे गुनाहों के खातिमः के साथ सब कुछ का सल्ब (हरण) करके अपनी हक़ीक़ी शक्ल दिखाने में जो क़ादिर है, वह हरि है। उन्होंने अर्जुन को अपनी मावराई हक़ीक़ी शक्ल दिखायी। सामने तो खड़े ही थे।

अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम् ।
अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम्।।१०।।

मुख़्तलिफ़ मुँह और आँखों से मुज़य्यन, मुख़्तलिफ़ हैरतअंगेज़ शबीह वाले, मुख़्तलिफ़ नादिर ज़ेवरात से आरास्तः और मुख़्तलिफ़ मावराई अस्लिहः को हाथ से उठाये, और-

दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम्।
सर्वाश्चर्यमयं देवमनन्तं विश्वतोमुखम्।।११।।

नादिर माला और लिबासों को पहने हुए, लतीफ़ ख़ुशबू को लगाये हर तरह हैरतअंगेज़ियों से मुज़य्यन, लामह्दूद अज़ीमुश्शान शक्ल वाले आ'ला मा'बूद को अर्जुन ने नज़र मिलने पर देखा।

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता।
यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः।।१२।।

(लाइल्मी की मिसाल धृतराष्ट्र, एहतियात की तम्सील संजय, जैसा पहले बयान किया गया है) संजय बोला- ऐ शाह! आस्मान में एक साथ हज़ारों तुलूअ-ए-आफ़्ताब से जितनी रोशनी होती है, वह भी बशक्ले आलम उन मर्दे कामिल के नूर के मुकाबिले शायद ही हो। यहाँ श्रीकृष्ण मर्दे कामिल ही है, जोग के मालिक थे।

तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा।
अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा।।१३।।

पाण्डु के बलद अर्जुन ने (नेकी ही पाण्डु है। नेकी ही इश्क़ को जनम देती है।) उस वक़्त मुख़्तलिफ़ क़िस्मों से बँटी हुई सारी दुन्या को उन आ'ला मा'बूद के जिस्म में एक जगह मौजूद देखा।

ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनञ्जयः।
प्रणम्य शिरसा देवं कृताञ्जलिरभाषत।।१४।।

इसके बा'द हैरतज़दः, मस्रूर रोमों वाला वह अर्जुन आ'ला मा'बूद को सर झुकाकर आदाब करते हुए (पहले भी आदाब बजाता था; लेकिन असर देख लेने पर बाअदब, बाएहतिराम आदाब बजाकर) दस्तबस्तः होकर बोला। यहाँ अर्जुन ने क़ल्ब से आदाब अर्ज़ किया और कहा-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

पश्यामि देवांस्तव देव देहे
सर्वांस्तथा भूतविशेषसङ्घान्।
ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थ-
मृषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान्।।१५।।

ऐ मा'बूद! आपके जिस्म में मैं तमाम मलाइक को और मुख़्तलिफ़ जानदारों के गुरोहों को, कवल की आसनी पर बैठे हुए ख़ालिक़ को, महादेव को, सारे वली हज़्रात को और नादिर साँपों को देखता हूँ। यह रू-ब-रू दीदार था, सिर्फ़ तख़य्युल

नहीं; लेकिन ऐसा तभी मुम्किन है जब जोग के मालिक (आ'ला मक़ाम पर फ़ाइज़ अज़ीम इंसान) दिल से ऐसी नज़र अता करें। यह रियाज़त से ही मुम्किन है।

अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं
पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम्।
नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं
पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप।।१६।।

मालिके दुन्या! मैं आपको मुख़्तलिफ़ हाथ, पेट, मुँह और आँखों से मुज़ैयन व हर जानिब से लामुतनाही शक्लों वाला देखता हूँ। ऐ मालिके जहान! न मैं आपकी इब्तिदा को, न वस्त को और न इन्तिहा को ही देखता हूँ। या'नी आपकी इब्तिदा वस्त और इन्तिहा का फ़ैसलः नहीं कर पा रहा हूँ।

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च
तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तम्।
पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्ता-
द्दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् ।।१७।।

मैं आपको ताज, गुर्ज़ और चर्ख़ से मुज़ैयन, हर जानिब से मुनव्वर, पुरनूर शक्ल, दहक़ती हुई आग और सूरज की तरह देखने में बेहद मुश्किल या'नी दिक़्क़त के साथ देखा जाने वाला और हर जानिब से अक़्ल वग़ैरः के दाइरे से बाहर लामह्दूद देखता हूँ। इस तरह तमाम हवास से पूरी तरह वक़्फ़ होकर जोग के मालिक श्रीकृष्ण को इस अज़ीमुश्शान शक्ल में देखकर अर्जुन उनकी हम्दोसराई करने लगा-

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं
त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता
सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे।।१८।।

बन्दःपर्वर! आप जानने के लाइक आ'ला लाफ़ानी या'नी फ़ना न होने वाले मा'बूद के हैं। आप इस दुन्या की सबसे आ'ला पनाहगाह हैं, आप दाइमी दीन के मुहाफ़िज़ हैं और आप लाफ़ानी अबदी इंसान हैं- ऐसा मेरा ख़याल है। रूह की शक्ल क्या है? दाइमी है, अबदी है, ग़ैरमर्ई है, लाफ़ानी है, यहाँ श्रीकृष्ण की क्या शक्ल है? वही दाइमी, अबदी, ग़ैरमर्ई, लाफ़ानी। या'नी हुसूल के बा'द अज़ीम इंसान भी

उसी ख़ुदशनासी की हालत में क़ाइम होता है तभी तो मा'बूद और रूह एक दूसरे के हमवज़्न हैं।

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्य-
मनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम्।
पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रं
स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम्।।१९।।

ऐ पर्वर्दगार! मैं आपको इब्तिदा, वस्त और इन्तिहा से मुबर्रा, लामहदूद कुव्वत से मुज़य्यन, बेशुमार हाथों वाला (पहले हज़ारों थे, अब बेशुमार हो गये), चाँद और सूरज जैसी आँखोंवाला (तब तो मा'बूद यकचश्म हो गये। एक आँख चाँद की तरह कमज़ोर रोशनी वाली और दूसरी सूरज की तरह जलाल वाली, ऐसा कुछ नहीं है। सूरज की तरह रोशनी अता करने वाली और चाँद की तरह ठंडक पहुँचाने वाली ख़ूबी मा'बूद में है। चाँद और सूरज मह्ज़ अलामत हैं या'नी चाँद और सूरज जैसी निगाह वाले) और दहकती हुई आग जैसे मुँह वाला व अपने जाहो-जलाल से इस दुन्या को तपाते हुए देखता हूँ।

द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि
व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः।
दृष्ट्वाद्भुतं रूपमुग्रं तवेदं
लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन्।।२०।।

ऐ अज़ीम रूह! आस्मान और ज़मीन के बीच की पूरी ख़ला और सारी सिम्तें वाहिद आपसे ही लबरेज़ हैं। आपकी इस मावराई, ख़ौफनाक शक्ल को देखकर तीनों अवालिम बेहद परेशान हो रहे हैं।

अमी हि त्वां सुरसङ्घा विशन्ति
केचिद्भीताः प्राञ्जलयो गृणन्ति।
स्वस्तीत्युक्त्वा महर्षिसिद्धसङ्घाः
स्तुवन्ति त्वां स्तुतिभिः पुष्कलाभिः।।२१।।

वे मलाइक के गुरोह आपमें ही दाख़िल हो रहे हैं और कई एक ख़ौफ़ज़दः होकर दस्तबस्तः आपकी हम्दसराई कर रहे हैं। वलियों और कामिलों के झुण्ड हम्दो-सिताइश या'नी 'खैर हो', ऐसा कहते हुए दुआओं के ज़रीअः आपकी हम्दो-सना कर रहे हैं।

रुद्रादित्या वसवो ये च साध्या
विश्वेऽश्विनौ मरुतश्चोष्मपाश्च।
गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसङ्घा
वीक्षन्ते त्वां विस्मिताश्चैव सर्वे।।२२।।

रुद्र, आदित्य, वसु, साध्य, विश्वदेव, अश्विनीकुमार, वायुदेव, आग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और सिद्धों के झुण्ड सभी हैरतअंगेज़ नज़र से आपको देख रहे हैं या'नी देखते हुए भी समझ नहीं पा रहे हैं क्योंकि उनके पास वह नज़र ही नहीं है। श्रीकृष्ण ने पहले ही बताया था कि शैतानी ख़साइल वाले लोग मुझे कमतर कहकर मुख़ातब करते हैं, आम इंसान जैसा मानते हैं, जबकि मैं आ'लातरीन एहसास में आ'ला मा'बूद की शक्ल में क़ाइम हूँ। अगरचे हूँ इंसानी जिस्म की बुन्याद वाला। उसी की तफ़्सील यहाँ है कि वे तअज़्ज़ुब की नज़र से देख रहे हैं, हक़ीक़ी तौर पर समझ नहीं पा रहे हैं, नहीं देखते हैं।

रूपं महत्ते बहुवक्त्रनेत्रं
महाबाहो बहुबाहूरुपादम्।
बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालं
दृष्ट्वा लोकाः प्रव्यथितास्तथाहम्।।२३।।

बाजूएअज़ीम (श्रीकृष्ण बाजू-ए-अज़ीम हैं और अर्जुन भी। दुन्या से मावरा अज़ीम इक़्तिदार में जिसका हल्क़-ए-कार हो, वह बाजू-ए-अज़ीम है। श्रीकृष्ण अज़्मत के हल्कः में मुकम्मल हैं, इन्तिहाई हद में हैं। अर्जुन उसी के इब्तिदाई दौर में है, रास्ते में है। मंज़िल रास्तः का दूसरा सिरा ही तो है।) बाजू-ए-अज़ीम जोग के मालिक आपके बहुत मुँह और आँखों वाली, बेशुमार हाथ, जंघा और पैरों वाली, बहुत सारे पेट और ख़ौफ़नाक दाढ़ों वाली अज़ीमुश्शान शक्ल को देखकर सारे अवालिम बेचैन हो रहे हैं तथा मैं भी बेक़रार हो रहा हूँ। अब श्रीकृष्ण की अज़्मत को देखकर अर्जुन को कुछ डर लग रहा है कि वे इतने अज़ीम हैं।

नभःस्पृशं दीप्तमनेकवर्णं
व्यात्ताननं दीप्तविशालनेत्रम्।
दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा
धृतिं न विन्दामि शमं च विष्णो।।२४।।

सारी दुन्या में सब जगह जौहर (अणु) की शक्ल में मौजूद ऐ विष्णु! आस्मान की बलन्दियों को छूती हुई रोशनी की मीनार, मुख़्तलिफ़ शक्लों से मुज़ैयन, मुँह फैलाये हुए और रौशनज़दः बड़ी आखों वाले आपको देखकर ख़ासतौर से ख़ौफ़ज़दः बातिन वाला मैं सब्र और मन को तसल्ली देने वाले सुकून को नहीं हासिल कर पा रहा हूँ।

दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि
दृष्ट्वैव कालानलसन्निभानि।
दिशो न जाने न लभे च शर्म
प्रसीद देवेश जगन्निवास।।२५।।

आपके दह्शतजदः दाढ़ोंवाले और आतशे-अजल (कालाग्नि) (अजल के लिए भी आग है रूहेमुत्लक़) की मानिन्द दहक़ते हुए मुँह को देखकर मैं सम्तों को नहीं जान पा रहा हूँ। चारों तरफ़ रोशनी देखकर सम्तों का पता नहीं चल रहा है। आपकी यह शक्ल देखते हुए मुझे सुख भी नहीं मिल रहा है। ऐ शाहे मलाइक! ऐ मालिकुल दुन्या! आप खुश हों।

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः
सर्वे सहैवावनिपालसङ्घैः।
भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथासौ
सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः।।२६।।

वे सभी धृतराष्ट्र के औलाद शाहों के गुरोहों के साथ आपमें दाख़िल हो रहे हैं और भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य व वह कर्ण (जिससे अर्जुन बहुत ख़ौफ़ज़दः था, वह कर्ण) और हमारी तरफ़ के भी ख़ास सिपहसालारों के साथ सब के सब -

वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति
दंष्ट्राकरालानि भयानकानि।
केचिद्विलग्ना दशनान्तरेषु
सन्दृश्यन्ते चूर्णितैरुत्तमाङ्गैः।।२७।।

बड़े रफ़्तार के साथ आपके ख़ौफ़नाक दाढ़ों वाले दहशतजदः तमाम (मुखों) में दाख़िल हो रहे हैं और उनमें से कितने ही रौंदे हुए सरों के साथ आपके दाँतों के बीच फँसे हुए दिखायी पड़ रहे हैं। वे किस रफ़्तार के साथ दाख़िल हो रहे हैं? अब उनका रफ़्तार देखिये-

यथा नदीनां बहवोऽम्बुवेगाः
समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति।
तथा तवामी नरलोकवीरा
विशन्ति वक्त्राण्यभिविज्वलन्ति।।२८।।

जैसे बहुत-सी नदियों के पानी की रवानी (अपने में ख़ौफ़नाक होते हुए भी) समन्दर की ओर दौड़ती हैं, समन्दर में दाख़िल होती है, ठीक उसी तरह वे बहादुर इंसानों के झुण्ड आपके जलते हुए तमाम मुखों में दाख़िल हो रहे हैं। या'नी वे ख़ुद में बहादुर तो हैं, लेकिन आप समन्दर की मानिन्द हैं। आपके सामने उनकी ताक़त बेहद कम है। वे किस वास्ते और किस तरह दाख़िल हो रहे हैं?, इसके लिए नजीर पेश है-

यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतङ्गा
विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः।
तथैव नाशाय विशन्ति लोका-
स्तवापि वक्त्राणि समृद्धवेगाः।।२९।।

जिस तरह पर्वाने ख़त्म होने के लिए ही जलती हुई आग में बेहद रफ़्तार से दाख़िल होते हैं, वैसे ही ये सारे जानदार भी अपनी तबाही के लिए आपके दहान (मुखों) में बहुत ज़ियादः बढ़े हुए रफ़्तार से दाख़िल हो रहे हैं।

लेलिह्यसे ग्रसमानः समन्ता-
ल्लोकान्समग्रान्वदनैर्ज्वलद्भिः।
तेजोभिरापूर्यजगत्समग्रं
भासस्तवोग्राः प्रतपन्ति विष्णो।।३०।।

आप उन सारे अवालिम को ताबिन्दः मुखों के ज़रीअः हरजानिब से चाटते हुए निगल रहे हैं, उनको चख रहे हैं। ऐ मुहीत मा'बूद! आपका शदीद नूर सारे जहान को अपने जलाल से तारी करके दहक रहा है। मत्लब यह है कि जब पहले दुन्यवी दौलत आ'ला उंसुर में तह्लील हो जाती है, उसके बा'द रूहानी दौलत का कोई मत्लब नहीं रह जाता। लिहाज़ा वह भी उसी आ'ला शक्ल में तह्लील हो जाती है। अर्जुन ने देखा कि कौरवों के जानिबदार उसके बा'द उसके अपनी जानिबदार के जंगजू श्रीकृष्ण के मुँह में तह्लील होते जा रहे हैं। उसने सवाल किया-

आख्याहि मे को भवानुग्ररूपो
नमोऽस्तु ते देववर प्रसीद।
विज्ञातुमिच्छामि भवन्तमाद्यं
न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम्।।३१।।

मुझे बताइये कि ख़ौफ़नाक शक्ल वाले आप कौन हैं? ऐ रब्बुलअर्बाब! आपको आदाब है, आप खुश हों। अबदी शक्ल वाले! मैं आपको अच्छी तरह जानना चाहता हूँ (जैसे- आप कौन हैं? क्या करना चाहते हैं?) क्योंकि आपकी ख़स्लत या'नी आपकी हरकतों को नहीं समझ पा रहा हूँ। इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण बोले-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो
लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः।
ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे
येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः।।३२।।

अर्जुन! मैं सारे जहान का ख़ातिमः करने वाला बढ़ा हुआ काल (मौत) हूँ और इस वक़्त इन अवालिम को ख़त्म करने पर आमादः हूँ। मुख़ालिफ़ीन की फ़ौज में मौजूद जितने जंगजू हैं, वे सब तेरे बग़ैर भी नहीं रहेंगे, वे जिंदा नहीं बचेंगे, इस वास्ते आमादः हुआ हूँ।

तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व
जित्वा शत्रून्भुङ्क्ष्व राज्यं समृद्धम्।
मयैवैते निहताः पूर्वमेव
निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्।।३३।।

इसवास्ते अर्जुन! तू जंग के लिए खड़ा हो, नेकनामी हासिल कर दुश्मनों पर फ़त्ह हासिल कर एक खुशहाल और बाहैसियत इक़्तिदार का लुत्फ उठा। ये सारे जंगजू मेरे ज़रीअः पहले ही मारे जा चुके हैं। सव्यसाचिन् (अर्जुन)! तू मह्ज़ वसीलः बन।

आमतौर से श्रीकृष्ण ने हर जगह कहा है कि वह मा'बूद न कुछ खुद करता है, न कराता है, न हालात ही पैदा करता है। फिरेफ़्तः अक़्ल की वज्ह से ही लोग कहते हैं कि मा'बूद कराता है; लेकिन यहाँ वे खुद ताल ठोंक कर खड़े हो जाते हैं

कि अर्जुन! सब कुछ करने वाला तो मैं हूँ। मेरे ज़रीअः ये पहले से ही मारे जा चुके हैं। तू बस खड़ा भर हो जा, नेकनामी हासिल कर ले। ऐसा इस वास्ते है कि **'सो केवल भगतन्ह हित लागी।'** अर्जुन उसी मक़ाम को हासिल कर चुका था कि मा'बूद खुद ताल ठोककर खड़े हो गये। उंसीयत ही अर्जुन है। सच्चे आशिक़ के लिए मा'बूद हमेशः खड़े हैं, उसी के कारकुन हैं, रथबान बन जाते हैं।

यहाँ गीता में तीसरी बार इक़्तिदार का मौजूअ आया। पहले अर्जुन जंग करना नहीं चाहता था। उसने कहा कि ज़मीन के मालोज़र से बह्रावर बेख़तर हुकूमत और मलाइक के मालिकानः या तीनों अवालिम के इक़्तिदार में भी मैं उस तरीक़ः को नहीं देखता, जो हवास को सुखाने वाले मेरे इस ग़म को दूर कर सकें। जब बेक़रारी बनी ही रहेगी, तो हमें नहीं चाहिए। जोग के मालिक ने कहा- इस जंग में हारोगे तो देवता का मक़ाम और जीतने पर हुजूरे आ'ला का मर्तबः मिलेगा और यहाँ ग्यारहवें बाब में कहते हैं कि ये दुश्मन मेरे ज़रीअः मारे जा चुके हैं, तू मह्ज़ वसीलः भर बन जा, नेकनामी को हासिल कर और एक ख़ुशहाल हुकूमत का लुत्फ़ उठा। फिर वही बात। जिस बात से अर्जुन चौंकता है, जिसमें वह अपने ग़म को ख़त्म होता हुआ नहीं देखता, क्या श्रीकृष्ण फिर वही इक़्तिदार अता करेंगे? नहीं, दरहक़ीक़त उयूब के ख़ातिमः के साथ मा'बूद के मक़ाम तक की पहुँच ही हक़ीक़ी ख़ुशहाली है, जो हमेशः क़ाइम रहने वाली दौलत है, जिसका कभी ख़ातिमः नहीं होता, शाही जोग का नतीजः है।

द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च
कर्णं तथान्यानपि योधवीरान्।
मया हतांस्त्वं जहि मा व्यथिष्ठा
युध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान्।।३४।।

इन द्रोण, भीष्म, जयद्रथ, कर्ण और दूसरे बहुत से मेरे ज़रीअः मारे गये जंगजू बहादुरों को तू मार, ख़ौफ़ मत कर। जंग में दुश्मनों को तू यक़ीनी तौर पर जीतेगा, इसवास्ते जंग कर। यहाँ भी जोग के मालिक ने कहा कि वे मेरे ज़रीअः मारे जा चुके हैं, इन मरे हुओं को तू मार। ज़ाहिर किया कि मैं कारकुन हूँ, जबकि पाँचवें बाब के १३वें, १४वें तथा १५वें श्लोक में उन्होंने कहा था- मा'बूद कुछ नहीं करते हैं। अट्ठारहवें बाब में वे कहते हैं- मुबारक या नामुबारक हर एक काम के होने में पाँच वसीले हैं- अधिष्ठान (जगह), कर्त्ता (कारकुन), करण (वसीलः), चेष्टा (कोशिश)

और दैव (क़िस्मत)। जो कहते हैं कि रौनक़अफ़्रोज़ मा'बूद करते हैं, वे नासमझ हैं, हक़ीक़त को नहीं जानते या'नी मा'बूद नहीं करते। ऐसा तज़ाद (विरोधाभास) क्यों?

दरहक़ीक़त दुन्या और उस आ'ला मक़ाम पर फ़ाइज़ इंसान के बीच एक हद्दे लक़ीर है। जब तक दुन्यवी अनासिर का दबाव ज़ियादः रहता है, तब तक फ़ित्रत (माया) तर्ग़ीब देती है और जब रियाज़तकश उसके ऊपर उठ जाता है, मा'बूद मत्लूबः या मुर्शिद के हल्क़-ए-कार में दाख़िलः ले लेता है, उसके बा'द मुर्शिद मल्लूबः (याद रहे मुहर्रिक की जगह पर मुर्शिद, रूह, रूहे मुत्लक़, मत्लूब, मा'बूदः एक दूसरे के मुतरादिफ़ हैं। कुछ भी कहें, कहता मा'बूद ही है) दिल से रथबान हो जाता है, रूह से बेदार होकर उस अक़ीदतमन्द रियाज़तकश की ख़ुद रहनुमाई करने लग जाता है।

'क़ाबिले-एहतिराम महाराज जी' कहते थे- ''हो, जिस मा'बूद की हमें चाह है, जिस सत्ह पर हम खड़े हैं, उस सत्ह पर ख़ुद उतरकर जब तक रूह से बेदार नहीं हो जाता तब तक सही तौर पर रियाज़त की शुरुआत नहीं होती। उसके बा'द जो कुछ रियाज़तकश को कामयाबी मिलती है, वह उसकी नज़रे-इनायत है। रियाज़तकश तो महज़ एक वसीलः बनकर उनके इशारः और हुक्म पर चलता भर रहता है। रियाज़तकश की कामयाबी उनकी मेह्बानी है। ऐसे अक़ीदतमंद के लिए मा'बूद अपनी नज़र से देखता है, दिखाता है और अपने मक़ाम तक पहुँचाता है।'' यही श्रीकृष्ण कहते है कि मेरे ज़रीअः मारे गये इन दुश्मनों को मार। तय है कि तुम्हें फ़त्ह हासिल होगी, मैं जो खड़ा हूँ।

संजय उवाच (संजय बोला) -

एतच्छ्रुत्वा वचनं केशवस्य
कृताञ्जलिर्वेपमानः किरीटी।
नमस्कृत्वा भूय एवाह कृष्णं
सगद्गदं भीतभीतः प्रणम्य।।३५।।

संजय बोला- (जो कुछ अर्जुन ने देखा, ठीक वैसा ही संजय ने देखा है। जहालत से मुहीत मन ही नाबीना धृतराष्ट्र है, लेकिन ऐसा मन भी एहतियात के ज़रीअः अच्छी तरह देखता, सुनता और समझता है।) श्रीकृष्ण की इन मज़्कूरएबाला बातों को सुनकर ताजदार अर्जुन ख़ौफ़ज़दः होकर, दस्तबस्तः आदाब बजा फिर श्रीकृष्ण से इस तरह लर्ज़ीदः आवाज़ में ही बोला-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या
जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च।
रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति
सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसङ्घाः।।३६।।

ऐ आलिमुलग़ैब! मालिकेनफ़्स! यह मुनासिब ही है कि आपकी शुह्रत से दुन्या ख़ुश होती है और उंसीयत को हासिल करती है। आपकी ही अज़्मत से डरे हुए देव (राक्षस) इधर-उधर सम्तों की जानिब भागते हैं और सारे कामिलों के गुरोह आपकी अज़्मत को देखकर आदाब बजाते हैं।

कस्माच्च ते न नमेरन्महात्मन्
गरीयसे ब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रे।
अनन्त देवेश जगन्निवास
त्वमक्षरं सदसत्तत्परं यत्।।३७।।

ऐ अज़ीम रूह! ख़ालिक़ (ब्रह्मा) के भी अजली ख़ालिक और अज़ीमतरीन आपका वे कैसे आदाब न बजायें; क्योंकि ऐ लामुतनाही! ऐ रब्बुलअर्बाब! ऐ मालिकुल दुन्या! हक़, बातिल और उनसे भी मावरा लाफ़ानी या'नी दाइमी हक़ीक़ी शक्ल आप ही हैं।

अर्जुन ने लाफ़ानी हक़ीक़ी शक्ल का रू-ब-रू दीदार किया था। मह्ज़ अक़्ली सत्ह पर तख़य्युल करने या मान लेने के बिना पर ही कोई ऐसी हालत नहीं मिलती, जो लाफ़ानी हो। अर्जुन का रू-ब-रू दीदार उसका बातिनी एहसास है। उसने ख़ाकसारी के साथ कहा-

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराण-
स्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम
त्वया ततं विश्वमनन्तरूप।।३८।।

आप अबदी देवता और दाइमी इंसान हैं। आप इस दुन्या की आ'ला पनाह और जानने वाले हैं, क़ाबिले इल्म हैं और आ'ला मक़ाम हैं। ऐ लामह्दूद शक्ल वाले! आपसे यह सारी दुन्या जल्वःगर है। आप सब जगह मौजूद हैं।

वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः
प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च।
नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः
पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते।।३९।।

आप ही हवा, मल्कुल मौत (यमराज), आग, पानी, चाँद और ख़ल्क़ के मालिक, ब्रह्मा (ख़ालिक़) और ख़ालिक़ के भी पिदर हैं। आपको हज़ारों बार आदाब है। इसके बावुजूद भी बारहा आदाब है। बेहद अक़ीदत और बन्दगी के बिना पर बाअदब सर झुकाते हुए अर्जुन को आसूदगी नहीं हो रही है। वह कहता है-

नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते
नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व।
अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं
सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः।।४०।।

ऐ क़ादिरे मुत्लक़! आपको सामने से और पीछे से भी आदाब हो। ऐ रूहे आलम! आपको हर जानिब से आदाब हो; क्योंकि ऐ बेइंतिहा जफ़ाकश! आप हर तरफ़ से दुन्या को तारी किये हुए हैं, लिहाज़ा आप ही हर शक्ल में और हर जगह मौजूद हैं। इस तरह बारहा आदाब करके ख़ौफ़ज़दः अर्जुन अपनी ग़लतियों के लिए मुआफ़ी की गुज़ारिश करता है-

सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं
हे कृष्ण हे यादव हे सखेति।
अजानता महिमानं तवेदं
मया प्रमादात्प्रणयेन वापि।।४१।।

आपके इस अज़्मात को न जानते हुए आपको साथी, दोस्त मानकर मेरे ज़रीअः मया मुहब्बत या ग़फ़्लत से भी 'ऐ कृष्ण! ऐ यादव! ऐ दोस्त!' - इस तरह जो कुछ भी मद्होशी में कहा गया है और-

यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि
विहारशय्यासनभोजनेषु।
एकोऽथवाप्यच्युत तत्समक्षं
तत्क्षामये त्वामहमप्रमेयम्।।४२।।

ऐ मुस्तक़िल मिज़ाज! जो आप हँसी-मज़ाक में, तफ़्रीह, सोने, बैठने और खाने-पीने वग़ैरः मामलों में तन्हा या उन लोगों के सामने भी बेइज़्ज़त किये गये हैं, वे सारे गुनाह, बईदुलक़ियास असर वाले आप से मैं मुआफ़ी का तलबगार हूँ। किस तरह मुआफ़ करें?

पितासि लोकस्य चराचरस्य
त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान्।
न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो
लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभावः।।४३।।

आप इस मुतहर्रिको-साकिन दुन्या के पिदर, मुर्शिद से भी बरतर मुर्शिद और बेइन्तिहा क़ाबिले-एहतिराम हैं। जिसकी कोई दूसरी मिसाल नहीं, ऐसे बेमिसाल असर वाले! आपके बराबर तीनों अवालिम में दूसरा कोई नहीं है, फिर आपसे बड़ा कैसे होगा? आप साथी भी नहीं, क्योंकि साथी तो हमवज़्न होता है।

तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय कायं
प्रसादये त्वामहमीशमीड्यम्।
पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः
प्रियः प्रियायार्हसि देव सोढुम्।।४४।।

आप मुतहर्रिको-साकिन के पिदर हैं, लिहाज़ा मैं अपने जिस्म को अच्छी तरह आपके क़दमों में रखकर इज़्हारेअक़ीदत (आदाब) करके, क़ाबिले हम्दोसना आप मा'बूद को ख़ुश करने के लिए इल्तिजा करता हूँ। ऐ पर्वर्दगार! पिदर जैसे पिसर के, दोस्त जैसे दोस्त के और शौहर जैसे महबूबः बीबी के गुनाहों को मुआफ़ करता है, वैसे ही आप भी मेरे गुनाहों को मुआफ़ करने के क़ाबिल हैं। गुनाह क्या था? हमने कभी 'ऐ यादव! ऐ दोस्त! ऐ कृष्ण!' कहा था। समाज के बीच या तन्हाई में कहा था, खाने के वक़्त या सोने के वक़्त कहा था। क्या कृष्ण कहना क़ुसूर था? काले थे ही, तो गोरे कैसे कहे जाते? यादव कहना भी ख़ता नहीं थी, क्योंकि यदु ख़ानदान में तो पैदाइश हुई थी। दोस्त कहना भी क़ुसूर नहीं था, क्योंकि ख़ुद श्रीकृष्ण भी अपने को अर्जुन का दोस्त मानते थे। जब कृष्ण कहना क़ुसूर ही है, एक बार कृष्ण कहने के लिए अर्जुन तमाम मर्तबः गिड़गिड़ाकर मुआफ़ी की इल्तिजा कर रहा है तो विर्द किसका करें? नाम कौन-सा लें?

दरहक़ीक़त ग़ौरोफ़िक्र का जो तरीक़ः ख़ुद जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया है, वैसा ही आप करें। उन्होंने पहले बताया, **'ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन्'**– अर्जुन! ॐ बस इतना ही लाफ़ानी रब का मज़्हर है। इसका तू विर्द कर और तसव्वुर में मुझे रख, क्योंकि उस आ'ला एहसास के साथ निस्बत मिल जाने के बा'द उन अज़ीम इंसान का भी यही नाम है, जो उस ग़ैरमर्ई का मज़्हर है। जल्वः देखने पर अर्जुन ने पाया कि ये न तो काले हैं, न गोरे, न दोस्त (सखा) हैं, न यादव, यह तो लाफ़ानी रब के मक़ाम को पहुँचे हुए मर्दे-कामिल हैं।

पूरी गीता में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने पाँच बार 'ओम्' लफ़्ज़ के विर्द पर ज़ोर दिया। अब अगर आपको विर्द करना है, तो कृष्ण-कृष्ण न कहकर 'ओम्' का ही विर्द करें। आमतौर से अक़ीदतमन्द लोग कोई न कोई रास्तः निकाल लेते हैं। कोई ओम् का विर्द करने के हक़ की मुनासबत और ग़ैरमुनासिबत के ज़िक्र से ख़ौफ़ज़दः है, तो कोई फ़क़ीरों की दुहाई देता है या कोई श्रीकृष्ण ही नहीं, उनसे पहले 'राधा' और गोपियों के नाम का भी उनको जल्द ख़ुश करने की लालसा में विर्द करता है। इंसान अक़ीदतमंद है, लिहाज़ा उसका ऐसा विर्द करना महज़ जज़्बातीयत है। अगर आप सचमुच अक़ीदतमंद हैं, तो उनके हुक्म की ता'मील करें। वे ग़ैरमर्ई में क़ाइम होते हुए भी आज आपके सामने नहीं हैं लेकिन उनका कलाम आपके सामने है, उनके हुक्म की ता'मील करें वर्नः आप ही बताइये कि गीता में आपकी क्या जगह है? हाँ, इतना ज़रूर है कि **'अध्येष्यते च य इमं श्रद्धावाननसूयश्च शृणुयादपि यो नरः'**– जो मुतालअः करता है, सुनता है, वह इल्म और यग को समझ लेता है, मुबारक अवालिम को हासिल कर लेता है। लिहाज़ा मुतालअः ज़रूर करें।

जान और रियाह के ग़ौरो-फ़िक्र में 'कृष्ण' नाम का सिल्सिलः पकड़ में नहीं आता। बहुत से लोग कोरी-जज़्बातीयत के ज़ेरे असर सिर्फ़ 'राधे-राधे' कहने लगे हैं। इम्रोज़ोफ़र्दा हुक्काम से काम न होने पर उनके ख़ास रिश्तःदार से, दोस्त या बीबी से सिफ़ारिश (सोर्स) लगाकर काम चला लेने का रिवाज है। लोग सोचते हैं- मुम्किन है मा'बूद के घर में भी ऐसा चलता होगा; लिहाज़ा उन्होंने 'कृष्ण-कृष्ण' कहना बंद करके 'राधे-राधे' कहना शुरू कर दिया। वे कहते हैं- 'राधे राधे श्याम मिला दे।' राधा एक बार बिछड़ी तो ख़ुद श्याम से नहीं मिल पायी, वह आपको कैसे मिला दें? लिहाज़ा किसी दूसरे का कहना न मानकर श्रीकृष्ण के हुक्म को आप लफ़्ज़-ब-लफ़्ज़ मानें, ओम् (ॐ) का विर्द करें। हाँ, यहाँ तक मुनासिब है कि 'राधा' हमारे लिए

नस्बुलऐन हैं, उतनी ही लगन से हमें भी लगना चाहिए। अगर हासिल करना है, तो राधा की तरह हिज्रज़दः (बिरही) बनना है।

आगे भी अर्जुन ने 'कृष्ण' कहा। 'कृष्ण' उनका मुरव्वजः नाम था। ऐसे कई नाम थे, जैसे- गोपाल। बहुत से रियाज़तक़श 'गुरु-गुरु' या गुरु का मुरव्वजः नाम जज़्बाती तौर पर विर्द करना चाहते हैं, लेकिन हुसूल के बा'द हर एक अज़ीम इंसान का वही नाम है, जिस ग़ैरमर्ई मक़ाम पर वह मौजूद है। बहुत से मुक़ल्लिद सवाल करते हैं- ''मुर्शिदे कामिल! जब तसव्वुर आपका करते हैं, तो कदीमी नाम 'ओम्' वग़ैरः का विर्द क्यों करें, गुरु-गुरु या कृष्ण-कृष्ण क्यों न कहें?'' लेकिन यहाँ जोग के मालिक ने साफ़ किया कि ग़ैरमर्ई हक़ीक़ी शक्ल में तह्लील होने के साथ अज़ीम इंसान का भी वही नाम है, जिसमें वह क़ाइम है। 'कृष्ण' मुखातबः था, विर्द करने का नाम नहीं।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण से अर्जुन ने अपनी ख़ताओं के लिए मुआफ़ी की इल्तिजा की, उन्हें फ़ित्री शक्ल में लौट आने की इल्तिजा की। श्रीकृष्ण मान गये, आम हो गये या'नी उसे मुआफ़ भी कर दिया। उसने गुज़ारिश की-

अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा
भयेन च प्रव्यथितं मनो मे।
तदेव मे दर्शय देवरूपं
प्रसीद देवेश जगन्निवास।।४५।।

अभी तक अर्जुन के सामने जोग के मालिक आलमी शक्ल में हैं। लिहाज़ा वह कहता है कि मैं इसके पहले न देखी हुई आपकी इस हैरतअंगेज़ शक्ल को देखकर खुश हो रहा हूँ और मेरा मन ख़ौफ़ से बेइन्तिहा बेक़रार भी हो रहा है। पहले तो दोस्त समझता था, इल्मे तीरन्दाज़ी में शायद अपने को कुछ बेह्तर ही पाता था लेकिन अब असर देखकर ख़ौफ़ज़दः हो रहा है। गुज़श्तः बाब में इस असर को सुनकर वह अपने को आलिम मानता था। आलिम को कहीं ख़ौफ़ नहीं होता है। दरहक़ीक़त रू-ब-रू दीदार का असर ही अजीबोगरीब होता है। सब कुछ सुन और मान लेने के बा'द भी सब कुछ चलकर जानना बाक़ी ही रहता है। वह कहता है- पहले न देखी हुई आपकी इस शक्ल को देखकर मैं खुश हो रहा हूँ। मेरा मन ख़ौफ़ से बेक़रार भी हो रहा है। लिहाज़ा ऐ रब! आप खुश हों। ऐ रब्बुल अर्बाब! ऐ मालिकुल दुन्या! आप अपनी उस शक्ल का ही मुझे दीदार कराइये। कौन-सी शक्ल?

किरीटिनं गदिनं चक्रहस्त-
मिच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव।
तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन
सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते।।४६।।

मैं आपको वैसे ही या'नी पहले की ही तरह सर पर ताज पहने हुए, हाथ में गुर्ज़ और चर्ख़ लिये हुए देखना चाहता हूँ। लिहाज़ा ऐ शक्ले आलम! ऐ हज़ारों बाजुओं वाले! आप अपनी उसी चार बाजुओं वाली शक्ल में हो जाइये। उसने कौन-सी शक्ल देखनी चाही? चार बाजुओं वाली शक्ल। अब देखना है- चार बाजुओं वाली शक्ल है क्या?

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं
रूपं परं दर्शितमात्मयोगात्।
तेजोमयं विश्वमनन्तमाद्यं
यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम्।।४७।।

इस तरह अर्जुन की इल्तिजा सुनकर श्रीकृष्ण बोले- अर्जुन! मैंने मेह्रबानी के साथ अपने जोग की ताक़त के ज़ेरेअसर अपनी आ'ला आबोताब वाली सबकी इब्तिदा और लामह्दूद आलमी शक्ल तुझे दिखायी है, जिसे तेरे सिवा दूसरे किसी ने पहले कभी नहीं देखी।

न वेदयज्ञाध्ययनैर्न दानै-
र्न च क्रियाभिर्न तपोभिरुग्रैः।
एवंरूपः शक्य अहं नृलोके
द्रष्टुं त्वदन्येन कुरुप्रवीर।।४८।।

अर्जुन! इस इंसानों की दुन्या में मैं इस तरह आलमी शक्लवाला न वेद से, न यग से, न मुतालअः से, न अमल से, न शदीद रियाज़त से और न तेरे सिवा किसी दूसरे से देखा जाने को मुम्किन हूँ या'नी तेरे सिवा यह शक्ल दूसरा कोई देख नहीं सकता। तब तो गीता आपके लिए बेकार है। दीदारे मा'बूद की भी सलाहीयतें मह्ज़ अर्जुन तक महदूद रह गयीं, जबकि पहले बता आये हैं कि अर्जुन! उंसीयत, दह्शत और गुस्सः से ख़ाली लाशरीक मन से मेरी पनाह में आये हुए बहुत से लोग

इल्म वाली रियाज़त से पाक होकर ज़ाहिरी तौर पर मेरी हक़ीक़ी शक्ल को हासिल कर चुके हैं। यहाँ कहते हैं- तेरे सिवा न कोई देख सका है और न मुस्तक़्बिल में कोई देख सकेगा। लिहाज़ा अर्जुन कौन है? क्या कोई जिर्मवाला है? क्या जिस्म वाला है? नहीं, दरहक़ीक़त इश्क़ ही अर्जुन है। इश्क़ से ख़ाली इंसान न कभी देख सका है और न मुस्तक़्बिल में कभी देख सकेगा। पूरी यकसुई के साथ वाहिद मा'बूद के मुताबिक़ लगाव ही इश्क़ है। आशिक़ के लिए ही हुसूल का उसूल है।

मा ते व्यथा मा च विमूढभावो
दृष्ट्वा रूपं घोरमीदृङ्ममेदम्।
व्यपेतभीः प्रीतमनाः पुनस्त्वं
तदेव मे रूपमिदं प्रपश्य।।४९।।

इस तरह की मेरी इस ख़ौफ़नाक शक्ल को देखकर तुझे बेक़रारी न हो और जहालत का एहसास भी न हो कि घबड़ाकर भाग खड़ा हो जा। अब तू बेख़ौफ़ और महब्बत भरे दिल से मेरी उसी पहले वाली शक्ल को या'नी चार बाजुओं वाली शक्ल को फ़िर देख।

संजय उवाच (संजय बोला) -

इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोक्त्वा
स्वकं रूपं दर्शयामास भूयः।
आश्वासयामास च भीतमेनं
भूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा।।५०।।

संजय बोला- सब जगह मौजूद रहने वाले मालिक, उन वासुदेव (कृष्ण) ने अर्जुन से इस तरह कहकर दुबारः वैसी ही अपनी शक्ल को दिखायी। फिर मर्दे कामिल श्रीकृष्ण ने **'सौम्यवपुः'** या'नी ख़ुश होकर दह्शतजदः अर्जुन को तसल्ली दी। अर्जुन बोला-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

दृष्ट्वेदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन।
इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः।।५१।।

मालिकुल ख़ल्क! आपकी इस बेइंतिहा पुरसुकून इंसानी शक्ल को देखकर, अब मैं ख़ुशमिज़ाज हुआ अपनी असूली (पहले की) हालत में लौट आया हूँ। अर्जुन

ने कहा था- बन्दःपर्वर! अब आप मुझे उसी चार बाजुओं वाली शक्ल का दीदार कराइये। जोग के मालिक ने दीदार कराया भी; लेकिन जब अर्जुन ने देखा, तो क्या पाया? **'मानुषं रूप'-** इंसानी शक्ल को देखा। दरहक़ीक़त हुसूल के बा'द अज़ीम इंसान ही चार बाजुओं वाले (चतुर्भुज) और बेशुमार बाजुओं वाले (अनन्तभुज) कहलाते हैं। दो बाजुओं वाला अज़ीम इंसान तो उंसीयत वाले (अनुरागी) के सामने बैठा ही है; लेकिन कहीं दूसरी जगह से कोई याद करता है तो वही अज़ीम इंसान उस याद करने वाले से बेदार (रथबान) होकर उसकी भी रहनुमाई करता है। 'बाजू' (भुजा) कामकी अलामत है। वे अन्दर भी काम करते हैं और बाहर भी, यही चार बाजुओं वाली शक्ल है। उनके हाथों में नाकूस (शंख), चर्ख़ (चक्र), गुर्ज़ (गदा) और कँवल बतसल्सुल हक़ीक़ी मंज़िल की तरफ़ बढ़ने का ए'लान, वसीलः का आग़ाज़, नफ़्सकुशी और शफ़्फ़ाफ़ बेग़रज़ अमली सलाहीयत की मह्ज़ अलामत है। यही वज्ह है कि चार बाजुओं वाली शक्ल में उन्हें देखने पर भी अर्जुन ने उन्हें इंसानी-शक्ल में ही पाया। चार बाजुओं वाले अज़ीम इंसानों के जिस्म और शक्ल से काम करने के तरीक़-ए-ख़ास का नाम हैं, न कि चार हाथों वाले कोई श्रीकृष्ण थे।

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानसि यन्मम।
देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकाङ्क्षिणः।।५२।।

मर्दे-कामिल श्रीकृष्ण ने कहा- अर्जुन! मेरी यह शक्ल देखने को बेहद कमयाब है, जैसा कि तूने देखी है; क्योंकि देवता भी हमेशः इस शक्ल के दीदार की ख़्वाहिश रखते हैं। दरहक़ीक़त सभी लोग फ़कीर (संत) को पहचान ही नहीं पाते। 'क़ाबिले-एहतिराम सत्संगी महाराज' रौशन ज़मीर मुकम्मल अज़ीम इंसान थे, लेकिन लोग उन्हें पागल समझते रहे। चन्द शरीफ़ुन्नफ़्स इंसानों को निदा-ए-ग़ैब हुई कि ये मुर्शिद कामिल हैं। सिर्फ़ उन्होंने उन्हें दिल से पकड़ा, उनके मक़ाम को हासिल किया और अपनी नजात हासिल कर ली। यही श्रीकृष्ण कहते हैं कि जिनके दिल में रूहानी दौलत बेदार है, वे देवता हज़्रात भी हमेशः इस शक्ल के दीदार की ख़्वाहिश रखते हैं तो क्या यग, सदक़ः ख़्वाह वेदों के मुतालअः से आप देखे जा सकते हैं? इस पर वह मर्दे-कामिल कृष्ण कहते हैं-

नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया।
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा।।५३।।

न वेदों से, न रियाज़त से, न सदक़ः से और न यग से मैं इस तरह देखने के लिए सह्लुलहुसूल हूँ, जिस तरह तूने मुझे देखा है। तब क्या आपको देख पाने का कोई तरीक़ः नहीं है? वे मर्दे-कामिल कहते हैं, एक तरीक़ः हैं-

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप।।५४।।

ऐ अज़ीम रियाज़तकश अर्जुन! लाशरीक बंदगी के ज़रीअः या'नी सिवा मेरे किसी दूसरे देवता की याद न करते हुए, लाशरीक अक़ीदत से तो मैं इस तरह रू-ब-रू दीदार के लिए, उंसुर से मुजस्सम जानने के लिए और हासिल करने के लिए भी सह्लुलहुसूल हूँ, या'नी उसके हुसूल का वाहिद आसान ज़रीअः लाशरीक बंदगी है। आख़िर में इल्म भी लाशरीक बन्दगी में तब्दील हो जाता है, जैसा कि गुज़श्तः बाब सात में ज़ाहिर है। वे पहले कह चुके हैं कि तेरे सिवा न कोई देख सका है और न कोई देख सकेगा, जबकि यहाँ कहते हैं कि लाशरीक बन्दगी से न सिर्फ़ मुझे देखा जा सकता है बल्कि मुजस्सम जाना और मेरे मक़ाम को हासिल भी किया जा सकता है। या'नी अर्जुन लाशरीक अक़ीदतमन्द का नाम है, एक हालत का नाम है। इश्क़ ही अर्जुन है। आख़िर में जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं-

मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः।
निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव।।५५।।

ऐ अर्जुन! जो इंसान मेरे ज़रीअः हिदायतकर्दः अमल या'नी मुऐयनः अमल, यग के लिए अमल करता है, **'मत्परमः'**- मेरा हामिल होकर करता है, जो मेरा लाशरीक बन्दः है, **'संगवर्जितः'**- लेकिन सुह्बत से मुतअस्सिर रहते हुए वह अमल पूरा नहीं हो सकता। लिहाज़ा जो सुह्बते-असर से बचकर **'निर्वैरः सर्वभूतेषु'**- सारे दुन्यवी जानदारों में अदावत के एहसास से मुर्बरा है, वह मुझे हासिल करता है। तो क्या अर्जुन ने जंग की? अह्द करके क्या उसने जयद्रथ वग़ैरः को मारा? अगर उन्हें मारता है, तो मा'बूद का दीदार उसे मयस्सर न हो पाता, जबकि अर्जुन ने दीदार किया है। इससे साबित है कि गीता में एक भी श्लोक ऐसा नहीं है, जो बाहरी मार-काट की हिमायत करता हो। जो हिदायतक़र्दः अमली यग के तरीक़-ए-कार का बरताव करेगा, जो लाशरीक ख़ुलूस के साथ उनके सिवा किसी दूसरे की याद तक नहीं करेगा, जो सुह्बत के असर से अलग रहेगा तो जंग कैसी? जब आपके साथ कोई है ही नहीं, तो आप जंग किससे करेंगे? तमाम दुन्यवी जानदारों में जो दुश्मनी

और अदावत के एहसास से मुर्बरा है, मन से भी किसी को तक्लीफ़ देने का तख़य्युल न करे, वही मुझे हासिल करता है। तो क्या अर्जुन ने जंग ली? हरगिज़ नहीं।

दरहक़ीक़त सुहबत के असर से अलग रहक़र जब आप लाशरीक ग़ौरोफ़िक्र में डूबते हैं, मुऐयनः यग के अमल में लगते हैं, उस वक़्त रास्तः रोकने वाले हसद, अदावत, ख़्वाहिश, गुस्सः वग़ैरः नाक़ाबिले तस्ख़ीर दुश्मन अड़चनों की शक्ल में सामने ही हैं। उन पर क़ाबू पाना ही जंग है।

मग़्ज़े सुख़न :-

इस बाब की इब्तिदा में अर्जुन ने कहा- बन्दःपर्वर! आपके आबो-ताब को मैंने तफ़्सील से सुना, जिससे मेरी फ़िरेफ़्तगी ख़त्म हो गयी, नासमझी का अंधेरा छँट गया; लेकिन जैसा कि आपने बताया कि मैं हर जगह जल्वःगर हूँ, इसे मैं रू-ब-रू देखना चाहता हूँ। अगर मेरे ज़रीअः देखना मुम्किन हो, तो बराए मेह्बानी उसी हक़ीक़ी शक्ल को दिखाने की ज़ह्मत गवारा कीजिए। अर्जुन अज़ीज़ दोस्त था, लाशरीक ख़िद्मत गुज़ार था, लिहाज़ा जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बिला किसी इख़्तिलाफ के फ़ौरन दिखाना शुरू किया कि अब मेरे ही अन्दर खड़े बनातुन्नाश (सप्तर्षि) और उनसे भी पहले होने वाले वली हज़्रात को देख, ख़ालिक़ (ब्रह्मा) और विष्णु को देख। हर तरफ़ जल्वःनुमाया मेरे जलाल को देख। मेरे ही जिस्म में एक जगह पर खड़े तू मुतहर्रिको-साकिन दुन्या को देख; लेकिन अर्जुन आँखें मलता ही रह गया। इसी तरह जोग के मालिक श्रीकृष्ण तीन श्लोकों तक मुसल्सल अपना जल्वः दिखाते गये लेकिन अर्जुन को कुछ भी दिखायी नहीं पड़ा। सारी शौकतें जोग के मालिक में उस वक़्त भी थी, लेकिन अर्जुन को वे आम आदमी जैसे ही नज़र आ रहे थे। तब इस तरह दिखाते-दिखाते जोग के मालिक श्रीकृष्ण यक-ब-यक रुक जाते हैं और कहते हैं- अर्जुन! इन नज़रों से तू मुझे नहीं देख सकता। अपनी अक़्ल से तू मेरी शनाख़्त नहीं कर सकता। ले, अब मैं तुझे वह नज़र अता करता हूँ, जिससे तू मुझे देख सकेगा। बन्दःपर्वर तो सामने खड़े ही थे। अर्जुन ने देखा, हक़ीक़त में देखा। देखने के बा'द मामूली ख़ामियों के लिए मुआफ़ी की इल्तिजा करने लगा, जो दरहक़ीक़त ख़ामियाँ नहीं थीं। मिसाल के तौर पर बन्दःपर्वर! कभी मैंने आपको कृष्ण, यादव और कभी दोस्त कह दिया था, इसके लिए आप मुझे मुआफ़ करें। श्रीकृष्ण ने मुआफ़ भी

किया, क्योंकि अर्जुन की इल्तिजा मंजूर करके वे मो'तदिल शक्ल में लौट आये, सब्र बँधाया।

दरहक़ीक़त 'कृष्ण' कहना कुसुर नहीं था। वे स्याह (साँवले) थे ही, सफ़ेद (गोरे) कैसे कहलाते। 'यदु' ख़ानदान में पैदाइश हुई ही थी। श्रीकृष्ण ख़ुद भी अपने को दोस्त मानते ही थे। दरहक़ीक़त हर एक रियाज़तकश अज़ीम इंसान को पहले ऐसा ही समझता है। कुछ उन्हें शक्लो-सूरत से मुख़ातब करते हैं, कुछ उनकी ख़ुसूसीयात की से मुताबक़त से उन्हें पुकारते हैं और कुछ उन्हें अपना ही हमसर मानते हैं, उनकी हक़ीक़ी शक्ल को नहीं समझते। उनकी बईदुलकियास शक्ल को जब अर्जुन ने समझा तो पाया कि यह न तो स्याह हैं, न तो सफ़ेद (गोरे), न किसी ख़ानदान के हैं और न किसी के दोस्त ही हैं। इनके बराबरी का कोई है ही नहीं, तो दोस्त कैसा? बराबर कैसा? यह तो बईदुलक़ियास शक्ल हैं। जिसे यह ख़ुद दिखा दें, वही इन्हें देख पाता है। लिहाज़ा अर्जुन ने अपनी शुरुआती ख़ामियों के लिए मुआफ़ी की इल्तिजा की।

सवाल उठता है कि जब कृष्ण कहना जुर्म है, तो उनके नाम का विर्द कैसे किया जाय? जिसे जोग के मालिक कृष्ण ने विर्द करने के लिए ख़ुद ज़ोर दिया, विर्द करने का जो तरीक़ः बताया, उसी तरीक़ः से आप फ़िक्र और याद करें। वह है- **'ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्'**- 'ओम्' लाफ़ानी मा'बूद का मुतरादिफ़ है। 'ओ अहम् स ओम्'- जो हर जगह मौजूद है, वह इक़्तिदार मेरे अंदर पोशीदः है - यही है ओम् का मत्लब। आप इसका विर्द करें और तसब्बुर मेरा करें। शक्ल अपनी और नाम ओम् का बताया।

अर्जुन ने गुज़ारिश की कि चार बाजुओं वाली शक्ल में दीदार कराइये। श्रीकृष्ण उसी मो'तदिल शक्ल में हो गये। अर्जुन ने कहा- बन्दःपर्वर! आपके इस लतीफ़ इंसानी शक्ल को देखकर अब मैं कुद्रती हालत में हो गया। गुज़ारिश की थी चार बाजुओं वाली शक्ल के लिए, दिखायी 'इंसानी शक्ल' (मानुषं रूपं)। हक़ीक़त में दाइमी में निस्बत पाने वाला जोगी जिस्म से यहाँ बैठा है; बाहर दो हाथों से काम करता है और साथ ही बातिन से बेदार होकर जहाँ से भी जो अक़ीदतमंद याद करते हैं, एक साथ सभी जगह उन सबके दिलों में बेदार होकर मुहर्रिक की शक्ल में काम करता है। हाथ उसके काम करने की अलामत हैं, यही चतुर्भुज (चार बाजुओं वाली

शक्ल) है।

श्रीकृष्ण ने कहा- अर्जुन! तेरे सिवा मेरी इस शक्ल को न कोई देख सका है और मुस्तक़्बिल में न कोई देख सकेगा। तब गीता हमारे लिए बेकार है। मगर नहीं, जोग के मालिक कहते हैं- एक तरीक़ः है। जो मेरा लाशरीक बन्दः है, मेरे इलावः जो दूसरे किसी की याद न करके मुसल्सल मेरे ही ग़ौरो-फ़िक्र में लगा रहने वाला है, उसकी लाशरीक बन्दगी के ज़रीअः मैं रू-ब-रू देखने को (जैसा तूने देखा है), उंसुर से जानने को और दाख़िलः पाने के लिए भी सह्लुल हुसूल हूँ। या'नी अर्जुन लाशरीक बन्दः था। बन्दगी की निखरी हुई शक्ल है उंसीयत (अनुराग), मा'बूद के मुताबिक़ लगाव। **'मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा।'**- (रामचरितमानस, ७/६१/१) उंसीयत (अनुराग) से ख़ाली इंसान न कभी हासिल किया है और न हासिल कर सकेगा। उंसीयत (अनुराग) नहीं है, तो कोई लाख जोग करे, विर्द करे, रियाज़त करे या सदक़ः दे वह (मा'बूद) नहीं मिलता। लिहाज़ा मा'बूद के मुताबिक़ उंसीयत या लाशरीक अक़ीदत निहायत ज़रूरी है।

आख़िर में श्रीकृष्ण ने कहा- अर्जुन! मेरे ज़रीअः हिदायतकर्दः अमल को कर, मेरा लाशरीक बन्दः होकर कर, मेरी पनाह में होकर कर; लेकिन सुह्बत के असर से अलग रहकर। सुह्बत के असर में यह अमल हो ही नहीं सकता, लिहाज़ा इस पूरा होने में ख़लल पैदा करता है। जो अदावत के ख़याल से मुबर्रा है, वही मुझे हासिल करता है। जब सुह्बत का असर नहीं है, जहाँ मुझे छोड़कर दूसरा कोई है ही नहीं, नफ़्रत और दुश्मनी का ज़ेह्नी इरादः भी नहीं है, तो जंग कैसी? बाहरी दुन्या में लड़ाई-झगड़े होते रहते हैं; लेकिन कामयाबी फ़त्ह करने वालों को भी नहीं मिलती। नाक़ाबिले-तस्ख़ीर दुन्यवी दुश्मन को लातअल्लुक़ी के सिलाह से काटकर आ'लातरीन मा'बूद में दाखिलः पा जाना ही हक़ीक़ी फ़त्ह है, जिसके पीछे शिकस्त नहीं है।

इस बाब में पहले तो जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने अर्जुन को ख़ास नज़र अता की, फिर अपनी आलमी शक्ल का दीदार कराया। लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'विश्वरूपदर्शनयोगो' नामैकादशोऽध्यायः।।११।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'विश्वरूप दर्शन योग' (दीदारे-मज़ाहिरे काइनात जोग) नाम का ग्यारहवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'विश्वरूपदर्शनयोगो' नामैकादशोऽध्यायः।।११।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'विश्वरूप दर्शन योग' (दीदारे-मज़ाहिरे काइनात जोग) नाम का ग्यारहवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ द्वादशोऽध्यायः।।
(बारहवाँ बाब)

ग्यारहवें बाब के आख़िर में श्रीकृष्ण ने बारहा ज़ोर दिया था कि, अर्जुन! मेरी यह शक्ल, जिसे तूने देखा, तेरे सिवा न पहले कभी देखी गई है और न मुस्तक़्बिल में कोई देख सकेगा। मैं न रियाज़त से, न यग से और न सदक़ः से ही देखे जाने को सह्लुलहुसूल हूँ; लेकिन लाशरीक बन्दगी के ज़रीअः या'नी मेरे सिवा कहीं दूसरी जगह अक़ीदत बिखरने न पाये, मुसल्सल तेल की धार की तरह मेरे तसव्वुर के ज़रीअः, ठीक इसी तरह जैसा तूने देखा, मैं ज़ाहिरी तौर से दीदार के लिए, उंसुर से मुजस्सम से जानने के लिए और निस्बत पाने के लिए भी सह्लुलहुसूल हूँ। लिहाज़ा अर्जुन! मुसल्सल मेरी ही फ़िक्र कर अक़ीदतमंद बन। बाब के आख़िर में उन्होंने कहा था, अर्जुन! तू मेरे ही ज़रीअः मुऐयन किये गये अमल को कर। **'मत्परमः'**- बल्कि मुझसे मन्सूब होकर कर। लाशरीक बन्दगी ही उसके हुसूल का वसीलः है। इस पर अर्जुन का सवाल क़ुद्रती था कि जो ग़ैरमर्ई लाफ़ानी की इबादत करते हैं और जो मुशक्कल आपकी इबादत करते हैं, इन दोनों में बेह्तर कौन है?

यहाँ इस सवाल को अर्जुन ने तीसरी बार खड़ा किया है। बाब तीन में गुज़ारिश की थी कि- बन्दःपर्वर! अगर बेग़रज़ अमली जोग के बनिस्वत सांख्यजोग को आप बेह्तर मानते हैं, तो आप मुझे ख़ौफ़नाक आ'माल में क्यों लगाते हैं? इस पर श्रीकृष्ण ने कहा था- अर्जुन! बेग़रज़ अमल का रास्तः अच्छा लगे चाहे इल्मी रास्तः दोनों ही नज़रीयात से अमल तो करना ही पड़ेगा। इतने के बावुजूद जो भी हवास को हठ से रोककर मन से मौजूआत की याद करता है, वह मग़्रूर है, आलिम नहीं। लिहाज़ा अर्जुन! तू अमल कर। कौन-सा अमल करे? तो **'नियतं कुरु कर्म त्वम्'**- मुऐयनः अमल को कर। मुऐयनः अमल क्या है? तो बताया- यग का तरीक़-ए-कार ही वाहिद अमल है। यग का तरीक़ः बताया, जो इबादत और ग़ौरोफ़िक्र का तरीक़-ए-ख़ास है, मा'बूद से निस्बत दिलाने वाला तरीक़-ए-कार है। जब बेग़रज़ अमली-राह और इल्मी राह दोनों में ही अमल करना है, यग के लिए अमल करना है, तरीक़ः एक ही है,

तो फ़र्क़ कैसा? अक़ीदतमन्द आ'माल का वक़्फ़ करके, मा'बूद पर मुन्हसिर होकर यग के लिए अमल में लगता है, तो दूसरा सांख्य जोगी अपनी कुव्वत को समझकर (ख़ुद पर मुन्हसिर होकर) उसी अमल में लगा होता है, पूरी मेह्नत करता है।

बाब पाँच में अर्जुन ने फिर सवाल किया- बन्दःपर्वर! आप कभी सांख्य (इल्म) के ज़रीअः अमल करने की ता'रीफ़ करते हैं, तो कभी ख़ुद सुपुर्दगी के वसीलः से बेग़रज़ अमली जोग की बड़ाई करते हैं - इन दोनों में बेह्तर कौन है? यहाँ तक अर्जुन समझ चुका था कि दोनों नज़रीयात से अमल तो करना ही होगा; फिर भी दोनों में बेह्तर रास्तः वह चुनना चाहता है। श्रीकृष्ण ने कहा- अर्जुन! दोनों ही नज़रीयात से अमल में लगने वाले मुझे ही हासिल करते हैं, लेकिन सांख्य मार्ग (इल्मी-राह) के बनिस्बत बेग़रज़ अमली राह बेह्तर है। बेग़रज़ अमली जोग का अज्म किये बग़ैर न कोई जोगी होता है और न आलिम। सांख्य योग (इल्मी-जोग) मुश्किल है, उसमें मुश्किलें ज़ियादः हैं।

यहाँ तीसरी बार अर्जुन ने यही सवाल खड़ा किया कि- बन्दःपर्वर! आपमें लाशरीक अक़ीदत से लगने वाले और ग़ैरमर्ई, लाफ़ानी की इबादत में सांख्य रास्तः (इल्मी-राह) से लगने वाले इन दोनों में बेह्तर कौन है?

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते।
ये चाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः।।१।।

'एवं' या'नी इस तरह, जो अभी-अभी आपने तरीक़ः बताया है, ठीक उसी तरीक़ः के मुताबिक़ लाशरीक बन्दगी से आपकी पनाह लेकर, आपसे मुसल्सल वाबस्तः बनाकर आपकी अच्छी तरह इबादत करते हैं और दूसरे जो आपकी पनाह न लेकर पूरी आज़ादी के साथ ख़ुद पर मुन्हसिर होकर उसी लाफ़ानी और ग़ैरमर्ई शक्ल की इबादत करते हैं, जिसमें आप मौजूद हैं, इन दोनों तरह के अक़ीदतमन्दों में ज़ियादः अफ़्ज़ल जोग को जानने वाला कौन है? इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने फ़र्माया-

श्रीभगवानुवाच (श्रीभगवान बोले) -

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः।।२।।

अर्जुन! यकसुई के साथ मुझमें मन लगाकर, मुसल्सल मुझसे वाबस्तः हुए जो

अक़ीदतमंद लोग आ'ला से तअल्लुक़ रखने वाली बरतर अक़ीदत के हामिल होकर मुझे याद करते हैं, वे मेरी नज़र में जोगियों में भी आ'लातर जोगी क़ाबिले क़बूल हैं।

ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम्।।३।।
सन्नियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः।।४।।

जो इंसान हवास के गुरोह को अच्छी तरह क़ाबू में करके, मन और अक़्ल के ग़ैरोफ़िक्र से बेहद मावरा, ज़र्रा-ज़र्रा में मौजूद, लाबयान हमेशः यकसाँ रहने वाले, दाइमी, अटल, ग़ैरमर्ई, ग़ैर मुशक्कल और लाफ़ानी मा'बूद की इबादत करते हैं, तमाम जानदारों की भलाई में लगे हुए और सबमें बराबरी का एहसास रखने वाले वे जोगी हज़्रात भी मुझे ही हासिल करते हैं। मा'बूद के मज़्कूरएबाला सिफ़ात मुझसे जुदा नहीं हैं; लेकिन-

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते।।५।।

उन ग़ैरमर्ई रूहेमुत्लक़ से मन्सूब तबीअ़त वाले इंसानों की रियाज़त में ज़ियादः तक्लीफ़ है; क्योंकि जिस्म पर ग़ुरूर करने वालों से ग़ैरमर्ई, तअल्लुक़ रखने वाली हालत तक्लीफ़ के साथ हासिल की जाती है। जब तक जिस्म का एहसास मौजूद है, तब तक ग़ैरमर्ई का हुसूल दुश्वार है।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण मुर्शिद थे। ग़ैरमर्ई मा'बूद का उनमें वुजूद था। वे कहते हैं कि अज़ीम इंसान की पनाह में न जाकर जो रियाज़तकश अपनी कुव्वत समझते हुए आगे बढ़ता है कि मैं इस हालत में हूँ, आगे इस हालत में जाऊँगा, मैं अपने ही ग़ैरमर्ई जिस्म को हासिल करूँगा, वह मेरी ही शक्ल होगी, मैं वही हूँ - इस तरह सोचते हुए हुसूल का इंतिज़ार न करके अपने जिस्म को ही **'सोऽहम्'** (मैं वही हूँ) कहने लगता है। यही इस रास्ते में सबसे बड़ी रुकावट है। वह **'दुःखालयम् अशाश्वतम्'** (यह फ़ानी जिस्म तक्लीफ़ का घर है) में ही घूम-फिरकर खड़ा हो जाता है। लेकिन जो मेरी पनाह लेकर चलता है, वह-

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्न्यस्य मत्पराः।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते।।६।।

जो मेरे ऊपर मुन्हसिर होकर सारे आ'माल या'नी इबादत को मुझमें सुपुर्द करके लाशरीक खुलूस के साथ जोग या'नी इबादत के तरीक़-ए-कार के ज़रीअः मुसल्सल ग़ौरोफ़िक्र करते हुए याद करते हैं-

तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम्।।७।।

सिर्फ़ मुझमें तबीअ़त लगाने वाले उन बन्दों का में जल्द ही मौत की तम्सील दुन्या से नजात देने वाला होता हूँ। इस तरह तबीअ़त लगाने की तर्ग़ीब और तरीक़ः पर जोग के मालिक रोशनी डालते हैं-

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः।।८।।

लिहाज़ा अर्जुन! तू मुझमें मन लगा, मुझमें ही अक़्ल को मुन्हसिर कर। इसके बा'द तू मेरे अन्दर ही मक़ाम हासिल करेगा, इसमें जरा भी शक नहीं है। मन और अक़्ल भी न लगा सके, तब? (अर्जुन ने पहले कहा भी था कि मन को रोकना तो मैं हवा रोकने की तरह बेहद दुश्वार समझता हूँ।) इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं-

अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम्।
अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय।।९।।

अगर तू मन को मुझमें अटल तरीक़ः से क़ाइम करने में क़ादिर नहीं है, तो ऐ अर्जुन! जोग की रियाज़त के ज़रीअः मुझे हासिल करने की ख़्वाहिश कर। (जहाँ भी तबीअ़त जाय वहाँ से घसीटकर उसे इबादत, ग़ौरोफ़िक्र में लगाने का नाम रियाज़त है) अगर यह भी न कर पाये तो-

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव।
मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि।।१०।।

अगर तू रियाज़त करने में भी मज्बूर है, तो सिर्फ़ मेरे लिए अमल कर या'नी इबादत करने के लिए तैयार हो जा। इस तरह मुझे हासिल करने के लिए आ'माल का बरताव करता हुआ तू मेरे हुसूल वाली कामयाबी को ही हासिल करेगा। या'नी रियाज़त करना भी दुश्वार होने लगे तो रियाज़त की राह पर चलते भर रहो।

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान्।।११।।

अगर इसे भी पूरा करने में क़ासिर हो, तो तमाम आ'माल के समरः को तर्क कर या'नी नफ़ा-नुक़्सान की फ़िक्र छोड़कर **'मद्योग'** (मेरी बन्दगी) का सहारा लेकर या'नी ख़ुद सुपुर्दगी के साथ रूहानी तअल्लुक़ रखने वाले अज़ीम इंसान की पनाह में जा। उनसे तर्ग़ीब पाकर अमल अपने आप सादिर होने लगेगा। ख़ुद सुपुर्दगी के साथ अमल के समरः को तर्क कर देने की अहम्मीयत बताते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण फ़र्माते हैं-

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते।
ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम्।।१२।।

सिर्फ़ तबीअ़त को रोकने की रियाज़त से राहे-इल्म (ज्ञानमार्ग) से अमल में लग जाना बेह्तर है। इल्मी वसीलः से अमल को अमली शक्ल देने के मुक़ाबलन तसब्बुर बेह्तर है; क्योंकि तसव्वुर में मा'बूद रहता ही है। तसब्बुर से भी तमाम आ'माल के समरः का ईसार बेह्तर है; क्योंकि मा'बूद के लिए ख़ुदसुपुर्दगी के साथ ही जोग पर नज़र रखते हुए अमल के समरः को तर्क कर देने से उनके ख़ैरियत की जिम्मःदारी मा'बूद की हो जाती है। लिहाज़ा इस ईसार से वह फ़ौरन ही आ'ला सुकून को हासिल कर लेता है।

अभी तक जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया कि ग़ैरमर्ई की इबादत करने वाले इल्म के राही से ख़ुद सुपुर्दगी के साथ अमल करने वाला बेग़रज़ अमली जोगी बेह्तर है। दोनों एक ही अमल करते हैं, लेकिन इल्म की राह वाले जोगी के रास्ते में ख़लल जियादः हैं। उसके फ़ाइदः-नुक़्सान की जिम्मःदारी ख़ुद उसी पर रहती है, जबकि अपने आपको सुपुर्द करने वाले अक़ीदतमंद की जिम्मःदारी अज़ीम इंसान पर होती है। लिहाज़ा वह अमल के समरः के ईसार के ज़रीअः जल्द ही सुकून को हासिल कर लेता है। अब बासुकून इंसान की पहचान बताते हैं-

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी।।१३।।

इस तरह सुकूनयाफ़्तः जो इंसान सारे जानदारों में हसद-अदावत के ख़याल से ख़ाली सबका महबूब और बिला वज्ह मेह्बाँ है और जो शफ़क़त से मुबर्रा, घमण्ड से दूर आराम व तक्लीफ़ मिलने पर मुसावी और साबिर है-

सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।१४।।

जो मुसल्सल जोग के आ'ला मक़ाम से वाबस्तः है, फ़ाइदः और नुक़्सान में मुत्मइन है, मन और हवास के साथ जिस्म को क़ाबू में किये हुए है, अटल इरादः वाला है, अपने दिलो-दिमाग को मेरे हवाले करने वाला मेरा बन्दः मुझे अजीज़ है।

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः।।१५।।

जिससे किसी भी जानदार को बेक़रारी नहीं होती और जो ख़ुद भी किसी जानदार से बेक़रार नहीं होता, ख़ुशी ग़म, ख़ौफ और तमाम तक्लीफ़ों से आज़ाद है, वह बन्दः मुझे अज़ीज़ है।

रियाज़तकशों के लिए यह श्लोक बेहद मुफ़ीद है। उन्हें इस तरह से रहना चाहिए कि उनके ज़रीअः किसी के दिल को ठेस न लगे। इतना तो रियाज़तकश कर सकता है; लेकिन दूसरे लोग इस रवैयः को इख़्तियार नहीं करेंगे, तो वे दुन्यादार हैं ही। वे तो आग उगलेंगे, कुछ भी कहेंगे, लेकिन राहरौ को चाहिए कि अपने दिल में उनके ज़रीअः (उनकी चोटों से) भी मुतज़ल्ज़िल न हो, ग़ौरोफ़िक्र में ख़याल लगा रहे। तसल्सुल न टूटे। मिसाल के तौर पर आप ख़ुद सड़क पर बाक़ाइदः बाँए से चल रहे हैं, कोई शराब पीकर चला आ रहा है, उससे बचना भी आपकी जिम्मःदारी है।

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।१६।।

जो इंसान ख़्वाहिशात से मुबर्रा, हर लिहाज़ से ताहिर है, **'दक्षः'** या'नी इबादत का माहिर है (ऐसा नहीं कि चोरी करता हो तो माहिर है। श्रीकृष्ण के मुताबिक़ अमल एक ही है- मुऐयनः अमल, इबादत और ग़ौरोफ़िक्र, उसमें जो माहिर है), जो मुआफिक़ और मुख़ालफ़त से मावरा है, तक्लीफ़ों से आज़ाद है, सारी इब्तिदा को तर्क करने वाला वह मेरा बन्दः मुझे मह्बूब है। करने लाइक़ कोई तरीक़ः उसके ज़रीअः शुरू करने के लिए बाक़ी नहीं रहता।

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः।।१७।।

जो न कभी खुश होता है, न कीना रखता है, न ग़म करता है, न ख़्वाहिश ही करता है, जो मुबारक और नामुबारक तमाम आ'माल के समरः को तर्क करनेवाला है, जहाँ कोई मुबारक अलग नहीं है, नामुबारक बाकी नहीं है, बन्दगी की इस बलन्दी का हामिल वह इंसान मुझे अज़ीज़ है।

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः।।१८।।

जो इंसान दोस्त और दुश्मन में, इज़्ज़त और ज़िल्लत में मुसावी है, जिसके बातिनी ख़साइल पूरी तरह ख़ामोश हैं, जो सर्दी, गर्मी, आराम, तक्लीफ़ वग़ैरः की टकराहटों में मो'तदिल है और लगाव से ख़ाली है, और-

तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टो येन केनचित्।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः।।१९।।

जो ता'रीफ़ और मज़म्मत को मुसावी समझने वाला है, तफक्कुर की आ'ला हद पर पहुँचकर जिसके मन के साथ हवास ख़ामोश हो चुके हैं, चाहे जैसे जिस हालत में हो, जिस्म की पर्वरिश होने में जो हमेशः मुत्मइन है, जो अपने घर में लगाव से मुर्बरा है, बन्दगी के आ'ला मक़ाम पर पहुँचा हुआ वह मुस्तक़िल मिज़ाज इंसान मुझे अज़ीज़ है।

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते।
श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः।।२०।।

जो मेरे ऊपर मुन्हसिर होकर दिली अक़ीदत के हामिल इंसान इस मज़्कूरएबाला दीनी आबे-हयात का अच्छी तरह इस्ते'माल करते हैं, वे बन्दे मुझे बेहद मह्बूब हैं।

मग़्ज़े सुख़न :-

गुजश्तः बाब के आख़िर में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा था कि, अर्जुन! तेरे सिवा न किसी ने हासिल किया है, न हासिल कर सकेगा - जैसा तूने देखा; लेकिन लाशरीक बन्दगी या उंसीयत से जो याद करता है, वह इसी तरह मेरा दीदार कर सकता है, उंसुर के साथ मुझे जान सकता है और मुझसे तअल्लुक़ भी बना सकता है। या'नी मा'बूद ऐसा इक़्तिदार है, जिसको हासिल किया जाता है। लिहाज़ा अर्जुन! अक़ीदतमंद बन।

अर्जुन ने इस बाब में सवाल खड़ा किया कि, बन्दःपर्वर! लाशरीक अक़ीदत से जो आपका ग़ौरोफ़िक्र करते हैं और दूसरे वे, जो लाफ़ानी, ग़ैरमर्ई की इबादत करते हैं इन दोनों में बेह्तर जोग को जानने वाला कौन है? जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया कि दोनों मेरे ही मक़ाम पर पहुँचते हैं, मुझे ही हासिल करते हैं क्योंकि मैं ग़ैरमर्ई हक़ीक़ी शक्ल हूँ। लेकिन जो हवास को क़ाबू में रखते हुए मन को हर तरफ़

से समेट कर ग़ैरमर्ई मा'बूद में राग़िब हैं, उनके रास्ते में दिक्कतें ज़ियादः हैं। जब तक जिस्म का कारोबार है, तब तक ग़ैरमर्ई शक्ल का हुसूल तक्लीफ़देह है; क्योंकि ग़ैरमर्ई शक्ल तो तबीअ़त की बंदिश और इसके तह्लीली दौर में हासिल होगी। उसके पहले उसका जिस्म ही बीच में ख़लल अन्दाज़ बन जाता है। 'मैं हूँ-मैं हूँ', 'मुझे पाना है' कहते-कहते अपने जिस्म की ही जानिब मुड़ जाता है। उसके मुतज़ल्ज़िल होने की ज़ियादः गुंज़ाइश है। लिहाज़ा अर्जुन! तू पूरे आ'माल को मुझे सुपुर्द कर लाशरीक बन्दगी से मेरा ग़ौरोफ़िक्र कर। जो बन्दे मेरे ऊपर मुन्हसिर होकर सारे आ'माल को मेरे हवाले करके, इंसानी जिस्म रखने वाले मुझ मुशक्कल जोगी की शक्ल के तसव्वुर के ज़रीअ तेल की धार की तरह तसल्सुल के साथ मेरी फ़िक्र करते हैं, उनका मैं जल्द ही दुन्यवी समन्दर से नजात दिलाने वाला बन जाता हूँ। लिहाज़ा राहे-बन्दगी बेह्तर है।

अर्जुन! मुझमें मन को लगा। मन न लगे तो भी मन लगाने की रियाज़ कर। जहाँ भी तबीअ़त भटक कर जाय फिर घसीटकर उसकी घेराबन्दी कर। यह भी करने में कासिर है तो तू अमल (कर्म) कर। अमल एक ही है, यग के लिए अमल। तू **'कार्यम् कर्म'** करता भर चल। दूसरा न कर। उतना ही कर, नजात मिले ख़्वाह न मिले। अगर यह भी करने में कासिर है तो रौशन ज़मीर, ख़ुदशनास, मुबस्सिर अज़ीम इंसान की पनाह में जाकर सारे आ'माल के समरात का ईसार कर। ऐसा ईसार करने से तू आ'ला सुकून को हासिल कर लेगा।

उसके बा'द सुकूने कामिल को हासिल करने वाले बन्दः की पहचान बताते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा- जो सारे जानदारों में अदावत के ख़याल से मुबर्रा है, जो हमदर्दी का हामिल और रह्मदिल है, लगाव और ग़ुरूर से है, वह बन्दः मुझे अज़ीज़ है। जो जोग के तसव्वुर में मुसल्सल आमादः और ख़ुदशनास ख़ुदकफ़ील है, वह बन्दः मुझे अज़ीज़ है। जिससे न किसी को बेक़रारी होती है और ख़ुद भी जो किसी से बेक़रार नहीं होता है, ऐसा बन्दः मुझे मह्बूब है। जो ताहिर है, माहिर है, दुःख-दर्द से दूर है, सारे मख़्रज का ईसार कर जिसने नजात हासिल कर ली है, ऐसा बन्दः मुझे अज़ीज़ है। सारे ख़्वाहिशात का ईसार करने वाला और मुबारक-नामुबारक के ख़यालात से मुबर्रा बन्दः मुझे मह्बूब है। जो मज़म्मात और ता'रीफ़ में मुसाबी और ख़ामोश है, मन के साथ जिसके हवास पुरसुकून और ख़ामोश हैं, जो किसी भी तरह जिस्म की पर्वरिश में मुत्मइन और रहने की जगह से जिसका लगाव नहीं है,

जिस्म की हिफ़ाज़त में भी जिसकी दिलचस्पी नहीं है, ऐसा हक़शनास बन्दगीपरस्त इंसान मुझे मह्बूब है।

इस तरह श्लोक ग्यारह से उन्नीस तक जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने पुरसुकून जोग के हामिल बन्दः की बूदोबाश पर रोशनी डाली, जो रियाज़तकशों के लिए एक तौफ़ीक़ है। आख़िर में फैसलः देते हुए उन्होंने कहा- अर्जुन! जो मुझसे वाबस्तः हुआ, लाशरीक अक़ीदत से मुज़य्यन इंसान इस मज़्कूरएबाला दीनी आबे-हयात को बेग़रज़ एहसास से अच्छी तरह अपने बरताव में ढालते हैं, वे अक़ीदतमन्द बंदे मुझे बेहद मह्बूब हैं। लिहाज़ा ख़ुद सुपुर्दगी के साथ इस अमल में लगना बेह्तर है, क्योंकि उसके फ़ाइदः और नुक़्सान की जिम्मःदारी वह मत्लूब, मुर्शिद अपने ऊपर ले लेते हैं। यहाँ श्रीकृष्ण ने आ'ला मक़ाम पर फ़ाइज़ हुए अज़ीम इंसान की पहचान बतायी और उनकी पनाह में जाने को कहा। आख़िर में अपनी पनाह में आने की तर्ग़ीब देकर उन अज़ीम इंसानों का हमसर अपने को ए'लान किया। श्रीकृष्ण एक जोगी, मर्देकामिल थे।

इस बाब में अक़ीदत को अफ़्ज़ल बताया गया; लिहाज़ा इस बाब का नाम 'भक्तियोग' (इल्म-ए-अक़ीदत) मुनासिबे हाल है। लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'भक्तियोग' नाम द्वादशोऽध्यायः।।१२।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'भक्तियोग' (इल्म-ए-अक़ीदत) नाम का बारहवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'भक्तियोग' नाम द्वादशोऽध्यायः।।१२।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'भक्तियोग' (इल्म-ए-अक़ीदत) नाम का बारहवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ त्रयोदशोऽध्यायः।।
(तेरहवाँ बाब)

गीता की इब्तिदा में ही धृतराष्ट्र का सवाल था कि संजय! मैदाने दीन (धर्मक्षेत्र) और मैदाने अमल (कुरुक्षेत्र) में जंग की ख़्वाहिश से इकट्ठा हुए मेरे और पाण्डु के औलाद ने क्या किये? अभी तक यह नहीं बताया गया कि वह मैदान है कहाँ? लेकिन जिस अज़ीम इंसान ने जिस मैदान में जंग का होना बताया, पेशक़र्दः बाब में ख़ुद ही उस मैदान के बारे में फ़ैसलः देते हैं कि वह मैदान (क्षेत्र) दरहक़ीक़त है कहाँ?

श्रीभगवानुवाच (श्रीभगवान बोले) -

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते।
एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः।।१।।

कुन्ती बलद! यह जिस्म ही एक मैदान है और इसको जो अच्छी तरह जानता है, वह आलिमे-मैदां उसमें फँसा नहीं है बल्कि उसका नाज़िम है। ऐसा उस उंसुर को ज़ाहिर करने वाले अज़ीम इंसानों ने कहा है।

जिस्म तो एक ही है, उसमें मैदाने-दीन और मैदाने-अमल - ये दो मैदान कैसे? दरहक़ीक़त इस एक ही जिस्म में बातिन के दो ख़साइल क़दीमी हैं, एक तो आ'ला दीन आ'ला मा'बूद से निस्बत दिलाने वाली पुरसवाब ख़स्लत रूहानी दौलत है और दूसरी है- दुन्यवी दौलत, नापाक नज़रियः से जिसकी तंज़ीम है, जो फ़ानी दुन्या पर यक़ीन दिलाती है। जब दुन्यवी दौलत की इफ़्रात होती है, तो यही जिस्म मैदाने-अमल (कुरुक्षेत्र) बन जाता है और इसी जिस्म के माबैन जब रूहानी दौलत की ज़ियादती होती है, तो यही जिस्म (धर्मक्षेत्र) मैदाने-दीन कहलाता है। यह उतार-चढ़ाव बराबर लगा रहता है; लेकिन रम्ज़शनास अज़ीम इंसान की क़ुर्बत से जब कोई लाशरीक बन्दगी के ज़रीअः इबादत में लग जाता है, तो दोनों ख़साइल के दरमियान फैसलःकुन जंग का आग़ाज़ हो जाता है। बतसल्सुल रूहानी दौलत का उरुज और दुन्यवी दौलत का ख़ातिमः हो जाता है। दुन्यवी दौलत के पूरी तरह ख़ातिमः के बा'द आ'ला के

दीदार की हालत आती है। दीदार के साथ ही रूहानी दौलत की ज़रूरत ख़त्म हो जाती है। लिहाज़ा वह भी ख़ुद-ब-ख़ुद मा'बूद में तह्लील हो जाती है। बन्दगी करने वाला इंसान मा'बूद से निस्बत बना लेता है। ग्यारहवें बाब में अर्जुन ने देखा कि कौरवों के जानिबदारों के बा'द पाण्डवों के जानिबदार जंगजू भी जोग के मालिक में तह्लील होते जा रहे हैं। इस तह्लील के बा'द इंसान की जो शक्ल है, वही आलिमे-मैदाँ (क्षेत्रज्ञ) है। आगे देखें-

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम।।२।।

ऐ अर्जुन! तू सारे मैदानों में आलिमे-मैदाँ मुझे ही जान या'नी मैं भी आलिमे-मैदाँ हूँ। 'जो इस मैदान को जानता है, वह आलिमे-मैदाँ है'- ऐसा उसे ज़ाहिरी तौर पर जानने वाले अज़ीम इंसान कहते हैं और श्रीकृष्ण कहते हैं कि मैं भी आलिमे-मैदाँ हूँ या'नी श्रीकृष्ण भी जोग के मालिक ही थे। क्षेत्र (मैदान) और क्षेत्रज्ञ (आलिमे-मैदाँ) या'नी तमाम उयूब के साथ कुद्रत और इंसान (प्रकृति और पुरुष) को उंसुर से जानना ही इल्म है, ऐसा मेरा मानना है या'नी बदीही दीदार के साथ इनकी समझ का नाम इल्म है, कोरी बहस का नाम इल्म नहीं है।

तत्क्षेत्रं यच्च यादृक्च यद्विकारि यतश्च यत्।
स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे शृणु।।३।।

वह मैदान जैसा है और जिन उयूब वाला है व जिस वज्ह से हुआ है और वह आलिमे-मैदाँ भी जो है और जिस तरह के असर वाला है, उन सबके बारे में मुझसे मुख़्तसर में सुन। या'नी क्षेत्र (मैदान) उयूब वाला है, किसी वज्ह से हुआ है, जबकि आलिमे-मैदाँ सिर्फ़ बाअसर है। मैं ही कहता हूँ- ऐसी बात नहीं है, वली हज़्रात भी कहते हैं।

ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक्।
ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः।।४।।

यह क्षेत्र (मैदान) और क्षेत्रज्ञ (आलिमे-मैदाँ) का उंसुर आरिफ हज़्रात के ज़रीअः तमाम तरह से गाया गया है और तमाम तरह से वेदों की दुआओं (मंत्रों) के ज़रीअः तक़्सीम करके भी कहा गया है व ख़ास तौर से मुऐयन किये गये मुनासिब दलील के साथ ब्रह्मसूत्र के जुम्लों के ज़रीअः बताया गया। या'नी वेदान्त, वली, ब्रह्मसूत्र

और हम एक ही बात करने जा रहे हैं। श्रीकृष्ण यही कहते हैं, जो इन सबने कहा है। क्या जिस्म (मैदान) इतना ही है, जितना दिखाई देता है? इस पर फ़र्माते हैं-

महाभूतान्यहङ्कारो बुद्धिरव्यक्तमेव च।
इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः।।५।।

अर्जुन! पाँच अज़ीम अनासिर (मिट्टी, पानी, आग, आस्मान, हवा), गुरूर, अक़्ल और तबीअ़त (तबीअ़त का नाम न लेकर उसे ग़ैरमर्ई मावरा ख़स्लत कहा गया। या'नी बुन्यादी ख़स्लत पर रोशनी डाली गयी है, जिसमें मावरा ख़स्लत भी शामिल है, मज़्कूरएबाला आठ बुन्यादी ख़साइल (अष्टधा मूलप्रकृति) और दस हवास [आँख, कान, नाक, दहन, जिल्द, जबान, हाथ, पैर, ज़िहार (औरत या मर्द होने की अलामत), मक़अद] एक मन और पाँच हवास के मौजूआत (शक्ल, रस, महक़, लफ़्ज़ और लम्स) और,

इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं सङ्घातश्चेतना धृतिः।
एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम्।।६।।

ख़्वाहिश, हसद, आराम, तक्लीफ़ और इन सबका मज्मूअः माद्दी जिस्म का यह जिर्म, हिस और सब्र इस तरह मैदान के बारे में उयूब के साथ मुख़्तसर में कहा गया। अलमुख़्तसर यही मैदान की हक़ीक़ी शक्ल है, जिसमें डाला गया भला और बुरा तुख़्म तअस्सुरात की शक्ल में उगता है। जिस्म ही मैदान है। जिस्म में गारा-मसाला किस चीज़ का है? तो यही पाँच अनासिर, दस हवास, एक मन वग़ैरः - जैसी पहचान ऊपर गिनायी गयी है। इन सब का इज्तिमाई साख़्त जिस्म है। जब तक ये उयूब रहेंगे, तब तक ये जिर्म भी मौजूद रहेंगे। इस वास्ते कि यह उयूब से बना है। अब उस आलिमे-मैदाँ की हक़ीक़ी शक्ल देखें, जो इस मैदान में मुलव्वस नहीं बल्कि उससे जुदा है।

अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम्।
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः।।७।।

ऐ अर्जुन! इज़्ज़त और ज़िल्लत का ख़ातिमः, गुरूर के बरताव की कमी, अदम तशद्दुद (या'नी अपनी और दूसरे किसी की रूह को तक्लीफ़ न देना अदमतशद्दुदः है। अदमतशद्दुद का मत्लब सिर्फ़ इतना ही नहीं है कि चींटी मत मारो। श्रीकृष्ण ने कहा कि अपनी रूह को तनज़्ज़ुल में मत डाल। उसको तनज़्ज़ुल में डालना तशद्दुद

है और उसकी तरक़्क़ी ही ख़ालिस अदमतशद्दुद है। ऐसा इंसान दूसरी अर्वाह की तरक़्क़ी के लिए भी माइल रहता है। हाँ, इसका आगाज़ किसी को ठेस न पहुँचाने से होता है। यह उसी का एक-एक हिस्सः है) लिहाज़ा अदमतशद्दुद, मुआफी का जज्बः, मन और जुबान की सादः तब्ई, मुर्शिद की फ़र्माबरदारी या'नी मुकम्मल अक़ीदत और बन्दगी के साथ मुर्शिद की ख़िद्मत, उनकी इबादत पाकीज़गी, बातिन का इस्तिक़्लाल, मन और हवास के साथ जिस्म पर क़ाबू और,

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहङ्कार एव च।
जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ।।८।।

इस दुन्या और आलमेबाला के देखे-सुने ऐशो-इश्रत में रग़्बत का ख़ातिमः, गुरूर की कमी, जनम व मौत, ज़ईफ़ी, बीमारी और ऐश वग़ैरः में तक्लीफ़ों के उयूब की बार-बार फ़िक्र,

असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु।
नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु।।९।।

औलाद, बीबी, दौलत और मकान वग़ैरः में लगाव का ख़ातिमः, पसंदीदः और नापसंदीदः के हुसूल में तबीअ़त का हमेशः मुसावी रहना (आलिमे मैदा की रियाज़त, बीबी, औलाद वग़ैरः घर-बार की हालत में ही शुरू होती है।)

मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी।
विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि ।।१०।।

मुझमें (श्रीकृष्ण एक जोगी थे या'नी ऐसे किसी अज़ीम इंसान में) लाशरीक जोग से या'नी जोग के सिवा दूसरा कुछ भी याद न करते हुए, लाशरीक अक़ीदत (मा'बूद के इलावः किसी दूसरी सोच का जेह्न में न आना), तन्हाई की जगह का इस्ते'माल, इंसानी जमाअत में रहने की रग़्बत का न होना, और-

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्।
एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा।।११।।

रूह के इख़्तियारवाले इल्म में यकसाँ हालत और इल्मे-ज़ौहर के मा'ना मा'बूद का बदीही दीदार- यह सब तो इल्म है और इससे जो बरख़िलाफ़ है, वह सब जहालत है- ऐसा बताया गया है। उस उंसुरे-आ'ला मा'बूद के दीदार के साथ मिलने वाली जानकारी का नाम इल्म है। (बाब ४ में उन्होंने कहा कि यग की तक्मील में बा'द

यग जिस चीज़ को बाक़ी छोड़ देता है, उस इल्मे-जाविदाँ का अख़्ज़ करने वाला अबदी मा'बूद से निस्बत पा लेता है। लिहाज़ा मा'बूद के बदीही दीदार के साथ मिलने वाली जानकारी इल्म है। यहाँ भी वही बात कहते हैं कि उंसुरे-आ'ला रूहेमुत्लक़ के दीदार का नाम इल्म है।) इसके बरख़िलाफ़ सब जहालत है। गुरूर वग़ैरः का न होना मज़्कूरएबाला निशानियां इस इल्म की तक्मिलः हैं। यह सवाल पूरा हुआ।

ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामृतमश्नुते।
अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते।।१२।।

अर्जुन! जो जानने लाइक़ है और जिसे जानकर फ़नापज़ीर इंसान लाफ़ानी उंसुर को हासिल करता है, उसे अच्छी तरह बताऊँगा। वह अबदी आ'ला मा'बूद न हक़ कहा जाता है और न बातिल ही कहा जाता है; क्योंकि जब तक वह अलग है, तब तक वह हक़ है और जब इंसान उसके अन्दर महू्व हो गया, तब कौन किससे कहे। एक ही रह जाता है, दूसरे का एहसास नहीं। ऐसी हालत में वह मा'बूद न हक़ है, न बातिल है; बल्कि जो ख़ुद फ़ित्री है, वही है।

सर्वतःपाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्।
सर्वतःश्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति।।१३।।

वह मा'बूद हर जानिब से दस्तोपा वाला हर जानिब से आँख, सर और दहनवाला, हर तरफ़ से कानों वाला (सुननेवाला) है; क्योंकि वह दुन्या की हर शै में जारी-ओ-सारी होकर क़ाइम है।

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम्।
असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च।।१४।।

वह तमाम हवास के मौजूआत को जानने वाला है, फिर भी सारे हवास से मुबर्रा है। वह बिला लगाव वाला, सिफ़ात से ख़ाली होने पर भी सबको सँभालने और पर्वरिश करने वाला व सारी सिफ़ात का लुत्फ़ उठाने वाला है या'नी एक-एक करके सारी सिफ़ात को अपने अन्दर ज़म कर लेता है। जैसा श्रीकृष्ण कह आये हैं कि यग और रियाज़तों का सारिफ़ मैं हूँ। आखिर में सारी सिफ़ात मुझमें तह्लील हो जाती हैं।

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च।
सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत्।।१५।।

वह मा'बूद सारे जानदारों के बाहर-भीतर पूरी तरह मौजूद है। मुतहर्रिको-साकिन शक्ल भी वही है। लतीफ़ होने से वह दिखायी नहीं पड़ता, नाक़ाबिले-फ़ह्म है, मन और हवास के दाइरः से बाहर है और बहुत क़रीब और दूर भी वही है।

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम्।
भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च।।१६।।

नाक़ाबिले तक़्सीम होकर भी वह तमाम मुतहर्रिको-साकिन माद्दीयात में अलग-अलग सा मह्सूस होता है। वह क़ाबिले-फ़ह्म मा'बूद तमाम माद्दीयात को पैदा करने वाला, सँभालने और पर्वरिश करने वाला और आख़िर में उनका खातिमः करने वाला है। यहाँ ख़ारिजी और दाख़िली दोनों ख़यालात की जानिब इशारः किया गया है। जैसे बाहर पैदाइश और अन्दर बेदारी, बाहर पर्वरिश और अन्दर ख़ैरो-बरकत के फ़र्ज़ की अदायगी, बाहर जिस्म की तब्दीली और अन्दर हर चीज़ की तह्लील या'नी माद्दीयात की तख़्लीक़ के वजूहात की तह्लील और उस तह्लील के साथ ही अपनी हक़ीक़ी शक्ल को हासिल कर लेता है। ये सब उसी मा'बूद के निशानात हैं।

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम्।।१७।।

वह क़ाबिले-फ़ह्म मा'बूद नूर का भी नूर है, अंधेरे से बेहद मावरा कहा जाता है। वह मुकम्मल बशक्ले इल्म है, मुकम्मल आलिम है, क़ाबिले-फ़ह्म है, और इल्म के ज़रीअः ही हासिल होने वाला है। बदीही दीदार के साथ मिलने वाली जानकारी का नाम इल्म है। ऐसी जानकारी के ज़रीअः ही उस मा'बूद का हासिल होना मुम्किन है। यह सबके दिल में मौजूद है। उसके रहने का मक़ाम दिल है; कहीं और तलाश करने पर वह नहीं मिलेगा। लिहाज़ा दिल के अन्दर तसव्वुर और जोग के बरताव के ज़रीअः ही उस मा'बूद के हुसूल का तरीक़ः है।

इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः।
मद्भक्त एतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते।।१८।।

ऐ अर्जुन! बस इतना ही मैदान (क्षेत्र), इल्म और क़ाबिले-फ़ह्म मा'बूद की शक्ल के बारे में मुख़्तसरन बताया गया है। इसे जानकर मेरा बन्दः मेरी मुजस्सम शक्ल को हासिल कर लेता है।

अभी तक जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने जिसे मैदान कहा था, उसी को कुद्रत

और जिसे आलिमे-मैदाँ (क्षेत्रज्ञ) कहा था, उसी को अब वह इंसान (पुरुष) लफ़्ज़ से इशार करते हैं।

प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि।
विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसम्भवान्।।१९।।

यह कुद्रत और इंसान (प्रकृति और पुरुष) दोनों को ही अबदी समझ और सारे उयूब तीनों सिफ़ात वाली कुद्रत से ही पैदा हुए हैं, ऐसा समझ।

कार्यकरणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते।
पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते।।२०।।

फ़े'ल और वसीलः (जिसके ज़रीअः आ'माल सादिर होते हैं इर्फ़ान, तर्के दुन्या वग़ैरः और नामुबारक आ'माल होने में ख़्वाहिश गुस्सः वग़ैरः वसीलः हैं) को पैदा करने का सबब कुद्रत कही जाती है और यह इंसान आराम व तक्लीफ़ों को भुगतने के बिना पर वसीलः कहा जाता है। सवाल उठता है कि क्या यह भुगतता ही रहेगा या इससे उसे कभी नजात भी मिलेगी? जब कुद्रत और इंसान दोनों ही अबदी हैं, तो कोई इनसे आज़ाद होगा कैसे? इस पर फ़र्माते हैं-

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्तक्ते प्रकृतिजान्गुणान्।
कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु।।२१।।

कुद्रत के बीच में खड़ा होने वाला इंसान ही कुद्रत से पैदा होने वाली सिफ़ात के काम की शक्ल वाली चीज़ों का लुत्फ़ उठाता है और इन सिफ़ात के साथ ही इस ज़ीरूह की नेक और बद शक्लों (योनियों) में जनम लेने की वज्ह है। यह वजह या'नी कुद्रत की सिफ़ात का साथ ख़त्म होने पर ही आमदोरफ़्त से नजात मिलती है। अब उस इंसान पर रोशनी डालते हैं कि वह किस तरह कुद्रत के बीच खड़ा है?

उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः।
परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन्पुरुषः परः।।२२।।

वह इंसान करीबी नाज़िर (**उपद्रष्टा**) दिल की दुन्या में बहुत ही क़रीब, हाथ-पाँव, मन जितने आपके क़रीब हैं, उससे भी ज़ियादः क़रीब नाज़िर की शक्ल में मौजूद है। उसकी रोशनी में आप नेक करें या बद करें, उसका कोई तअल्लुक़ नहीं है। वह नाज़िर की शक्ल में खड़ा है। रियाज़त का सही सिल्सिलः पकड़ में आने पर राहरौ कुछ ऊपर उठा, उसकी जानिब बढ़ा तो नाज़िर इंसान का सिल्सिलः बदल

जाता है, वह **'अनुमन्ता'**- इजाज़त देने लगता है, एहसास देने लगता है। रियाज़त के ज़रीअः और करीब पहुँचने पर वही इंसान **'भर्ता'** (राज़िक़) बनकर पर्वरिश करने लगता है, जिसमें आपकी ख़ैरो-बरकत का भी इंतिज़ाम कर देता है। रियाज़त और ज़ियादः लतीफ़ होने पर वही **'भोक्ता'** (सारिफ़) हो जाता है। **'भोक्तारं यज्ञ तपसाम्'**- यग, रियाज़त जो कुछ भी बन पड़ता है, सबको वह इंसान क़बूल करता है और जब क़बूल कर लेता है, उसके बा'द वाली हालत में **'महेश्वरः'**- अज़ीम मा'बूद की शक्ल में ढल जाता है। वह कुद्रत का मालिक बन जाता है, लेकिन अभी कहीं कुद्रत जिंदः है, तभी उसका मालिक है। इससे भी ज़ियादः बलंदी की हालत में वही इंसान **'परमात्मेति चाप्युक्तो'**- जब आ'ला मा'बूद से मंसूब हो जाता है, तब रूहेमुत्लक़ कहलाता है। इस तरह जिस्म में मौजूद रहते हुए भी यह इंसान पर (मावराई) ही है, हर तरह से इस कुद्रत से मावरा ही है। फ़र्क़ सिर्फ़ इतना ही है कि शुरू में यह नाज़िर की शक्ल में था, धीरे-धीरे तरक़्क़ी होते-होते आ'ला का लम्स कर मा'बूद की शक्ल में ढल जाता है।

य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह।
सर्वथा वर्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते।।२३।।

इस तरह पुरुष को और सिफ़ात के साथ कुद्रत को जो इंसान बदीही दीदार के साथ जान लेता है, वह हर तरह की ज़िंदगी गुज़ारता हुआ भी दुबारः नहीं पैदा होता या'नी उसकी दुबारः पैदाइश नहीं होती। यही नजात है। अभी तक जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने मा'बूद (ब्रह्म) और कुद्रत (प्रकृति) की रू-ब-रू जानकारी के साथ मिलने वाली आ'ला नजात या'नी उसकी दुबारः पैदाइश से नजात पर रोशनी डाली और अब वे उस जोग पर ज़ोर देते हैं जिसका तरीक़-ए-कार है इबादत। क्योंकि इस अमल को अमली जामः पहनाये बग़ैर कोई हासिल करता नहीं।

ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना।
अन्ये साङ्ख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे।।२४।।

ऐ अर्जुन! उस **'आत्मानम्'**- रुहेमुलक को कितने ही इंसान तो **'आत्मना'**- अपने बातिनी ग़ौरोफ़िक्र से तसव्वुर के ज़रीअः **'आत्मनि'** दिल की दुन्या में देखते हैं, कितने ही सांख्य जोग (इल्मी-जोग) के ज़रीअः (या'नी अपनी कुव्वत को समझते हुए उसी अमल में लगे होते हैं।) और दूसरे बहुत से लोग उसे बेग़रज़ अमली जोग के ज़रीअः देखते हैं। ख़ुद सुपुर्दगी के साथ उसी मुऐयना अमल में लगे होते हैं।

पेशक़र्दः श्लोक में ख़ास वसीलः है; तसव्वुर (ध्यान)। उस तसव्वुर में लगने के लिए इल्मी जोग और बेग़रज़ अमली जोग दो रास्ते हैं।

अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते।
तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः।।२५।।

लेकिन दूसरे जिनको रियाज़त का इल्म नहीं है, वे इस तरह न जानते हुए **'अन्येभ्यः'**- दूसरे जो उंसुर को जानने वाले अज़ीम इंसान हैं, उनकी नसीहत सुनकर ही इबादत करते हैं और सुनकर लगे हुए वे इंसान भी इस मौत की तम्सील दुन्यवी समन्दर से बिला शुब्हाः कनारा पा जाते हैं। लिहाज़ा कुछ भी न हो सके तो सुह्बते-सालेह में लग जायें।

यावत्सञ्जायते किञ्चित्सत्त्वं स्थावरजङ्गमम्।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ।।२६।।

ऐ अर्जुन! यहाँ तक कि जो कुछ भी मुतहर्रिको-साकिन चीज़ें पैदा होती हैं, उन सब को तू मैदान (क्षेत्र) और आलिमे-मैदाँ (क्षेत्रज्ञ) के इत्तिफ़ाक़ से ही पैदा हुई जान। हुसूल कब होता है? इस पर इर्शाद फ़र्माते हैं-

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम्।
विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति।।२७।।

जो इंसान ख़ास तौर से ख़त्म होते हुए मुतहर्रिको-साकिन हर शै' में लाफ़ानी मा'बूद को मुसावात की नज़र से मौजूद देखता है, वही हक़ीक़त देखता है। या'नी उस कुद्रत के ख़ास तौर से ख़त्म होने पर ही वह बशक्ले रूहेमुत्लक़ है, इससे पहले नहीं। इसी पर गुजश्तः बाब आठ में भी कहा था- **'भूत भावोद्भवकरो विसर्गः कर्मसंज्ञितः'**- जानदारों के वे ख़याल, जो नेक ख़्वाह बद कुछ भी (तअस्सुरात) तख़्लीक़ करते हैं, उनका ख़ातिमः हो जाना ही आ'माल की इंतिहा है। उस वक़्त अमल मुकम्मल है। वही बात यहाँ भी कहते हैं कि जो मुतहर्रिको-साकिन हर शै' को ख़त्म होते हुए और मा'बूद को मुसावात के साथ क़ाइम देखता है, वही सहीह देखता है।

समं पश्यन्हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम्।
न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम्।।२८।।

क्योंकि वह इंसान हर जगह मुसावी ख़याल से मौजूद मा'बूद के वजूद को मुसावी से (जैसा है, वैसा ही उसी तरह) देखता हुआ ख़ुद को अपने ज़रीअः बरबाद

नहीं करता। क्योंकि वह जैसा था, वैसा उसने देखा, लिहाज़ा वह आ'ला नजात को हासिल करता है। हासिल करने वाले इंसान की पहचान बताते हैं-

प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः।
यः पश्यति तथात्मानमकर्तारं स पश्यति।।२९।।

जो इंसान सारे आ'माल को हर तरह से कुद्रत के ज़रीअः ही किया जाना देखता है या'नी जब तक कुद्रत है, तभी तक आ'माल का होना देखता है और रूह को न करने वाली देखता है, वही हक़ीक़त देखता है।

यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति।
तत एव च विस्तारं ब्रह्म सम्पद्यते तदा।।३०।।

जिस दौर में इंसान माद्दीयात के अजीबोगरीब अंदाज़ों में वाहिद रूहेमुत्लक़ को रवाँ व मौजूद देखता है और उस रूहेमुत्लक़ से ही तमाम माद्दीयात की तफ़्सील देखता है, उस वक़्त वह रूहेमुत्लक़ से मन्सूब होता है। जिस वक़्त यह हालत आ गई, उसी वक़्त वह मा'बूद को हासिल कर लेता है। यह निशानी भी रम्ज़शनास अज़ीम इंसान की ही है।

अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः ।
शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते।।३१।।

कुन्ती वलद! अबदी होने से और सिफ़ात से मुबर्रा होने से वह लाफ़ानी मा'बूद, जिस्म में मौजूद होते हुए भी हक़ीक़त में न करता है और न मुलव्वस ही होता है। किस तरह?

यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते।
सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते।।३२।।

जिस तरह हर जगह मुहीत आस्मान लतीफ़ होने की वजह से मुलव्वस नहीं होता, ठीक वैसे ही हर जगह जिस्म में मौजूद होने के बावुजूद भी रूह सिफ़ात से ख़ाली होने के बाइस जिस्म की सिफ़ात से मुलव्वस नहीं होती। आगे बताते हैं-

यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः।
क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत।।३३।।

अर्जुन! जिस तरह एक ही सूरज तमाम काइनात को रौशन करता है, उसी तरह एक ही रूह तमाम मैदान को रौशन करती है। आख़िर में फ़ैसलः देते हैं-

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमन्तरं ज्ञानचक्षुषा।
भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम्।।३४।।

इस तरह मैदान (क्षेत्र) और आलिमे-मैदाँ (क्षेत्रज्ञ) के राज़ को और उयूब के साथ कुद्रत से आज़ाद होने के तरीक़ः को जो इल्मी नज़र से देख लेते हैं, वे आरिफ़ हज़्रात आ'ला मा'बूद रूहेमुत्लक़ को हासिल करते हैं। या'नी मैदान (क्षेत्र) और आलिमे मैदाँ (क्षेत्रज्ञ) को देखने की नज़र इल्म है और इल्म बदीही दीदार का ही मुतरादिफ़ है।

मग़्ज़े सुख़न :-

गीता की इब्तिदा में मैदाने-दीन (धर्मक्षेत्र), मैदाने (कुरुक्षेत्र) का नाम तो लिया गया, लेकिन वह मैदान दरहक़ीक़त है कहाँ, वह मक़ाम बताना बाकी था, जिसे खुद शरीअ़त के मुसन्निफ़ ने पेशक़र्दः बाब में साफ़ किया कि, अर्जुन! यह जिस्म ही एक मैदान (क्षेत्र) है। जो इसकी समझ रखता है, वह आलिमे-मैदाँ (क्षेत्रज्ञ) है। वह इसमें मुलव्वस नहीं बल्कि लातअल्लुक़ है। इसका नाज़िम है। अर्जुन! ''तमाम मैदानों (क्षेत्रों) में मैं भी आलिमे-मैदाँ (क्षेत्रज्ञ) हूँ।'' दूसरे अज़ीम इंसानों से अपना मुआज़नः किया। इससे ज़ाहिर है कि श्रीकृष्ण भी एक जोगी थे; क्योंकि जो जानता है, वह आलिमे-मैदाँ है, ऐसा अज़ीम इंसानों ने कहा है, मैं भी आलिमे-मैदाँ हूँ या'नी कि दूसरे अज़ीम इंसानों की तरह मैं भी हूँ।

उन्होंने मैदान जैसा है, जिन उयूब वाला है, आलिमे-मैदाँ जिन अस्नातवाला है, उस पर रोशनी डाली। मैं ही कहता हूँ, ऐसी बात नहीं है। वली हज़्रात ने भी यही बात बताई है। वेद की बंदिशों (छन्दों) में भी उसी को तक़्सीम करके दिखाया गया है। ब्रह्मसूत्र में भी वही देखने को मिलता है।

जिस्म (जो मैदान है) क्या इतना ही है, जितना दिखायी देता है? इसके वुजूद के पीछे जिन चीज़ों का बहुत बड़ा हाथ है, उनको शुमार कराते हुए बताया कि आठ बुन्यादी ख़साइल (अष्टधा मूल प्रकृति), ग़ैरमर्ई कुद्रत (अव्यक्त प्रकृति), दस हवास और मन, हवास के पांचों मौजूआत, उम्मीद, हिर्सो-हवस इस तरह इन उयूब का इज्तिमाई मज़्मूअः यह जिस्म है। जब तक ये मौजूद रहेंगे, तब तक जिस्म किसी न किसी शक्ल में रहेगा ही। यही मैदान है, जिसमें बोया गया नेक तुख़्म बद तअस्सुर (संस्कार) की शक्ल में उगता है। जो इससे बच जाता है, वह आलिमे-मैदाँ (क्षेत्रज्ञ)

है। आलिमे-मैदाँ की शक्ल को बताते हुए उन्होंने ख़ुदाई सिफ़ात पर रोशनी डाली और कहा कि आलिमे-मैदाँ इस मैदान को रौशन करने वाला है।

उन्होंने बताया कि रियाज़त के तक़्मिलः दौर में उंसुरे आ'ला रूहेमुत्लक़ का बदीही दीदार ही इल्म है। इल्म का मा'ना है बदीही दीदार। इसके इलावः जो कुछ भी है, जहालत है। जानने के लाइक़ चीज़ है- आ'ला मा'बूद वह न हक़ है, न बातिल। वह इन दोनों से मावरा है। उसे जानने के लिए लोग दिल में तसव्वुर करते हैं, बाहर बुत रखकर नहीं। बहुत से लोग इल्मी जोग (सांख्य) के वसीलः से तसव्वुर करते हैं, तो बक़िया लोग बेग़रज़ अमली जोग, ख़ुद सुपुर्दगी के साथ उसके हुसूल के लिए उसी मुऐयनः अमली इबादत का बरताव करते हैं। जो उसका तरीक़ः नहीं जानते, वे लोग मुबस्सिर अज़ीम इंसानों के ज़रीअः सुनकर इबादत का बरताव करते हैं। वे भी आ'ला इफ़ादः को हासिल करते हैं। लिहाज़ा कुछ भी समझ में न आये, तो उसकी समझ रखने वाले अज़ीम इंसान की सुहूबत लाज़िमी है।

मुस्तक़िल मिज़ाज अज़ीम इंसान की निशानी बताते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा कि जैसे आस्मान हर जगह बराबर रहता हुआ भी मुलव्वस नहीं है, जैसे हर तरफ़ रोशनी करते हुए भी सूरज लातअल्लुक़ है, ठीक इसी तरह मुस्तक़िल मिज़ाज इंसान हर जगह बराबर मा'बूद को जैसा है, वैसा ही देखने की सलाहीयत वाला इंसान मैदान से या क़ुद्रत से पूरी तरह लातअल्लुक़ है। अख़ीर में उन्होंने फैसलः दिया कि मैदान और आलिमे-मैदा की जानकारी इल्मी नज़रों से ही मुम्किन है। इल्म, जैसा कि पहले बताया गया, उस मा'बूद के बदीही दीदार के साथ मिलने वाली समझ है। शराए' को बहुत ज़ियादः रटकर दुहराना इल्म नहीं बल्कि मुतालअः और अज़ीम इंसानों से उस अमल को समझकर, उस अमल की राह पर चलकर, मन के साथ हवास पर क़ाबू और उस क़ाबू के भी तह्लीली दौर में उंसुरे आ'ला को देखने के साथ जो एहसास होता है, उसी एहसास का नाम इल्म है। अमल जरूरी है। इस बाब में ख़ास तौर से आलिमे-मैदां (क्षेत्रज्ञ) का तफ़्सीली बयान किया गया। दरहक़ीक़त मैदान (क्षेत्र) की शक्ल मुहीत है। जिस्म कहना तो आसान है लेकिन जिस्म का तअल्लुक़ कहाँ तक है? तो सारी काइनात बुन्यादी ख़साइल की तफ़्सील है। लामह्दूद ख़लाओं तक आपके जिस्म का फ़ैलाव है। उनसे आपकी ज़िंदगी कुव्वतबख़्श है, उनके बग़ैर आप जी नहीं सकते। यह ज़मीन, दुन्या, जहान, मुल्क, सूबा और आपका यह

दिखायी देने वाला जिस्म उस कुद्रत का एक छोटा हिस्सः भी नहीं है। इस तरह मैदान (क्षेत्र) का ही इस बाब में तफ़्सीली बयान है, लिहाज़ा–

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगो' नाम त्रयोदशोऽध्यायः।।१३।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ विभाग योग' (मैदाँ आलिमे मैदाँ बाबे जुज़ जोग) नाम का तेरहवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगो' नाम त्रयोदशोऽध्यायः।।१३।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ विभाग योग' (मैदाँ आलिमे मैदाँ बाबे जुज़ जोग) नाम का तेरहवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ चतुर्दशोऽध्यायः।।
(चौदहवाँ बाब)

गुजश्तः मुख़्तलिफ़ अवबाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने इल्म की शक्ल को साफ़ की। बाब ४/१९ में उन्होंने बताया कि जिस इंसान के ज़रीअः पूरे ज़राए' से शुरू किया गया। मुऐयनः अमल का बरताव बतसल्सुलः तरक़्क़ी करते-करते इतना लतीफ़ हो गया कि ख़्वाहिश और इरादों का पूरी तरह ख़ातिमः हो गया। उस वक़्त जिसे वह जानना चाहता है, उसका रू-ब-रू एहसास हो जाता है, उसी एहसास का नाम इल्म है। तेरहवें बाब में इल्म की तश्रीह की, **'अध्यात्मज्ञाननित्यत्वम् तत्त्वज्ञानार्थ दर्शनम्'-** इल्मे तसव्वुफ़ में यकसाँ हालत और उंसुर के बतौर मा'ना मा'बूद का रू-ब-रू दीदार इल्म है। मैदान और आलिमे-मैदाँ के राज़ को ज़ाहिर कर लेना ही इल्म है। इल्म का मत्लब मज़्हबी मनाज़रः (शास्त्रार्थ) नहीं। शराए' को याद कर लेना ही इल्म नहीं है। रियाज़त की उस हालत का नाम इल्म है, जहाँ वह उंसुर ज़ाहिर होता है। मा'बूद के बदीही दीदार के साथ मिलने वाले एहसास का नाम इल्म है, इसके बरख़िलाफ़ जो कुछ भी है, जहालत है।

इस तरह सब कुछ बता लेने पर भी पेशक़र्दः बाब चौदह में जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं कि, अर्जुन! उन उलूम में भी बेह्तरीन इल्म को मैं फिर भी तुझे बताऊँगा। जोग के मालिक उसी को दुहराने जा रहे हैं, क्योंकि **'सास्त्र सुचिन्तित पुनि पुनि देखिअ।'-** अच्छी तरह मुतालअः की हुई शरीअ़त भी बार-बार देखनी चाहिए। इतना ही नहीं, जैसे-जैसे आप रियाज़त की राह पर आगे बढ़ेंगे, जैसे-जैसे उस मा'बूद से निस्बत पाते जायेंगे, वैसे-वैसे मा'बूद से नये-नये एहसासात मिलेंगे। यह इल्म मुर्शिद की शक्ल में अज़ीम इंसान ही देते हैं, लिहाज़ा श्रीकृष्ण कहते हैं- मैं फिर भी कहूँगा।

ज़ेह्न (सुरति) ऐसा क़िर्तास (पटल) है, जिस पर तअस्सुरात (संस्कारों) का नक़्श हमेशः बनता रहता है। अगर राहरौ को मा'बूद से निस्बत दिलाने वाली समझ

धुँधली पड़ती है, तो उस जेह्न के क़िर्तास पर क़ुद्रत नक़्श होने लगती है, जो बरबादी की वज्ह है। लिहाज़ा तक्मील तक रियाज़तकश को मा'बूद से मुतअल्लिक़ जानकारी को दुहराते रहना चाहिए। आज याद ज़िंदः है, लेकिन आगे आने वाले हालात में दाख़िलः हासिल होने के साथ यह हालत नहीं रह जायेगी। लिहाज़ा 'क़ाबिले एहतिराम महाराज जी' कहा करते थे कि- ''इल्मे तसव्वुफ़ का ग़ौरोफ़िक्र रोज़ करो, एक तस्बीह रोज़ घुमाओ, जो फ़िक्र के साथ घुमाई जाती है, बाहर की तस्बीह नहीं।''

यह तो रियाज़तकश के लिए है, लेकिन जो हक़ीक़ी मुर्शिद होते हैं, ये मुसल्सल उस राहरौ के पीछे लगे रहते हैं, अन्दर उसकी रूह के साथ बेदार होकर और बाहर अपने तर्ज़े-अमल से उसे नये-नये हालात से बाख़बर कराते चलते हैं। जोग के मालिक श्रीकृष्ण भी अज़ीम इंसान थे, अर्जुन मुक़ल्लिद के मक़ाम पर है। उसने उनसे सँभालने की गुज़ारिश की थी, लिहाज़ा जोग के मालिक श्रीकृष्ण का क़ौल है कि उलूम में भी बेह्तरीन इल्म को मैं फ़िर तुझे बताऊँगा।

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम्।
यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः।।१।।

अर्जुन! उलूम में भी बेह्तरीन इल्म, आ'ला इल्म को मैं फिर तुझे बताऊँगा (जिसे पहले कह चुके हैं), जिसे जानकर सारे सूफ़ी हज़्रात इस दुन्या से नजात पाकर आ'ला कामयाबी को हासिल करते हैं (जिसके बा'द कुछ भी हासिल करना बाक़ी नहीं रहता)।

इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च।।२।।

इस इल्म का **'उपाश्रित्य'**- नज़्दीक से पनाह लेकर, अमली तौर से चलकर करीब पहुँचकर मेरी हक़ीक़ी शक्ल को हासिल करने वाले लोग तख़्लीक़ की इब्तिदा में दुबारः जनम नहीं लेते और वक़्ते-नज़्अ या 'नी जिस्म से क़तातअल्लुक़ होते वक़्त बेक़रार नहीं होते क्योंकि अज़ीम इंसान के जिस्म का ख़ातिमः तो उसी दिन हो जाता है, जब वह हक़ीक़ी शक्ल को हासिल कर लेता है। उसके बा'द उसका जिस्म रहने के लिए महज़ एक ठिकाना रह जाता है। दुबारः जनम के लिए जगह कहाँ है, जहाँ लोग जनम लेते हैं? इस पर श्रीकृष्ण इर्शाद फ़र्माते हैं-

मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम्।
सम्भवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत।।३।।

ऐ अर्जुन! मेरे **'महद्ब्रह्म'** या'नी आठ बुन्यादी ख़साइल तमाम जानदारों की शक्ल (योनि) है और उसमें मैं जी हिस की शक्ल वाले तुख़्म को क़ाइम करता हूँ। उस मुतहर्रिको साकिन के इत्तिफ़ाक़ से सभी जानदारों की तख़्लीक़ होती है।

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः।
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता।।४।।

कौन्तेय! सारी शक्लों (योनियों) में जितने जिस्म पैदा होते हैं, उन सबकी **'योनिः'**- (योनि) हामिलः मादर आठ किस्मों वाले बुन्यादी ख़साइल हैं और मैं ही तुख़्मरेज़ी करने वाला पिदर हूँ। दीगर कोई न मादर है, न पिदर। जब तक बेहिस और ज़ीहिस का इत्तिफ़ाक़ रहेगा, पैदाइशों के सिल्सिले ज़ारी रहेंगे, वसीलः तो कोई न कोई बनता ही रहेगा। हस्सासरूह बेहिस कुद्रत में क्यों बँध जाती है? इस पर कहते हैं-

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः।
निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम्।।५।।

बाजू-ए-अज़ीम अर्जुन! मलकाते फ़ाज़िलः (सत्त्वगुण), मलकाते रदीयः (रजो-गुण) और मलकाते मज़मूम (तमोगुण) कुद्रत से पैदा हुई तीनों सिफ़ात ही इस लाफ़ानी ज़ीरूह को जिस्म में बाँधती हैं। किस तरह?-

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम्।
सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन चानघ।।६।।

बेगुनाह अर्जुन! इन तीनों सिफ़ात में रोशनी पैदा करने वाला बेऐब मलकाते फ़ाज़िलः तो **'निर्मलत्वात्'**- शफ़्फ़ाफ़ होने के बिना पर आराम और इल्म की फ़िरेफ़्तगी से रूह को जिस्म में बाँधता है। मलकाते फ़ाज़िलः भी बंदिश ही है। फ़र्क़ इतना ही है कि आराम वाहिद मा'बूद में है और इल्म बदीही दीदार का नाम है। मलकाते फ़ाज़िलः का हामिल इंसान तब तक क़ैद में है, जब तक मा'बूद का बदीही दीदार नहीं हो जाता।

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम्।
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम्।।७।।

अर्जुन! लगाव की जीती-जागती शक्ल मलकाते रदीयः (रजोगुण) है। इसे तू ख़्वाहिश और रग़बत से पैदा हुआ समझ। वह ज़ीरूह को **'कर्मसंगेन'**- अमल और उसके समरः की रग़बत में बाँधता है। वह अमल में लगा देता है।

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत।।८।।

अर्जुन! तमाम जिस्म वालों को अपनी फ़िरेब में लेने वाले मलकाते मज़मूम (तमोगुण) को तू जहालत से पैदा हुआ समझ। वह इस रूह को मदहोशी या'नी नाकाम कोशिश, काहिली (कि कल करेंगे) और नींद के ज़रीअः गिरिफ़्त में लेता है। नींद का मा'ना यह नहीं कि मलकाते मज़मूम का हामिल इंसान ज़ियादः सोता है। जिस्म सोता हो, ऐसी बात नहीं। **'या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी'**- (जब रात में सारे लोग सोते रहते हैं, तो जोगी जागता रहता है।) दुन्या ही रात है। मलक़ाते मज़मूम (तमोगुण) का हामिल इंसान इस दुन्या की तम्सील शबी में शबो-रोज़ मश्गूल रहता है, नूरानी हक़ीक़ी शक्ल की तरफ़ से ग़ाफिल रहता है। यही मलकाते मज़मूम वाली नींद है। जो इसमें फँसा है, सोता है। अब तीनों सिफ़ात की बन्दिश की इज्तिमाई शक्ल बताते हैं-

सत्त्वं सुखे सञ्जयति रजः कर्मणि भारत।
ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे सञ्जयत्युत।।९।।

अर्जुन! मलकाते फ़ाज़िलः आराम की तरफ़ माइल करता है, दाइमी सुकूने आ'ला के रास्ते पर ले चलता है, मलकाते रदीयः (रजोगुण) अमली राह पर चलने की तर्ग़ीब देता है और मलकाते मज़मूम (तमोगुण) इल्म को ढँक करके मदहोशी में या'नी बातिन की नाकाम कोशिशों में लगाता है। जब सिफ़ात एक ही जगह पर, एक ही दिल में हैं, तो अलग-अलग कैसे बँट जाती हैं? इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण बताते हैं-

रजस्तमश्चाभिभूय सत्त्वं भवति भारत।
रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा।।१०।।

ऐ अर्जुन! मलकाते रदीयः और मलकाते मज़मूम को दबाकर मलकाते फ़ाज़िलः गामज़न होता है, वैसे ही मलकाते फ़ाज़िलः और मलकाते मज़मूम को दबाकर मलकाते रदीयः बढ़ता है और इसी तरह मलकाते रदीयः और मलकाते फ़ाज़िलः को दबाकर

मलकाते मज़मूम बढ़ता है। यह कैसे पहचाना जाय कि कब और कौन-सी ख़ुसूसियत काम कर रही है?

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्प्रकाश उपजायते।
ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्त्वमित्युत।।११।।

जिस दौर में इस जिस्म और बातिन के साथ सारे हवास में ख़ुदाई नूर और समझने की ताक़त पैदा होती है, उस वक़्त ऐसा समझना चाहिए कि मलकाते फ़ाज़िलः ख़ुसूसी इज़ाफ़ः की तरफ़ माइल है, और-

लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा।
रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ।।१२।।

ऐ अर्जुन! मलकाते रदीय में ख़ास इज़ाफ़ः होने पर लालच, काम में लगने की कोशिश, आ'माल की शुरुआत, बेइत्मीनानी या'नी मन की शोख़ी, दुन्यवी तअय्युशात की हविश ये सारी चीजें पैदा होती हैं। अब मलकाते मज़मूम के इज़ाफ़ः में क्या होता है?

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च।
तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन।।१३।।

अर्जुन! मलकाते मज़मूम के इज़ाफ़ः होने पर **'अप्रकाशः'** (बेनूरी) नूर आ'ला मा'बूद की निशानी है, ख़ुदाई नूर की ओर न बढ़ने की ख़सूलत, **'कार्यम् कर्म'**- जो करने के लाइक़ ख़ास तरीक़-ए-कार है उसमें अदम रुज़्हान, बातिन में नाकाम कोशिशों का बहाव और दुन्या में फिरेफ़्तः करने वाले ख़साइल- ये सभी पैदा होते हैं। इन सभी चीज़ों की पैदाइश होती है। इन सिफ़ात के इल्म से फ़ाइदः क्या है?

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत्।
तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते।।१४।।

जब यह ज़ीरूह मलकाते फ़ाज़िलः के इज़ाफ़ः के दौर में वफ़ात को हासिल करती है, जिस्म को तर्क करती है, तब सालेहीन के बेदाग़ मावराई अवालिम को हासिल करती है और-

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते।
तथा प्रलीनस्तमसि मूढयोनिषु जायते।।१५।।

मलकाते रदीयः का इज़ाफ़ः होने पर मौत को हासिल करने वाला, आ'माल की रग़बत वाले इंसानों में जनम लेता है और मलकाते मज़मूम के इज़ाफ़ः में मरा हुआ इंसान जाहिल शक्लों (योनियों) में जनम लेता है, जिसमें हशरातुलअर्ज वग़ैरः तक योनियों का फ़ैलाव है। लिहाज़ा सिफ़ात में भी इंसानों को सालेह सिफ़ात वाला होना चाहिए। कुद्रत का यह ख़ज़ाना आपके हासिल की हुई सिफ़ात को मौत के बा'द भी उन्हें आपको महफ़ूज तरीक़ः से लौटाता है। अब देखें इसका समरः -

कर्मणः सुकृतस्याहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम्।
रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम्।।१६।।

सालेह, अमल का समरः सालेह, बेदाग़ सुख, इल्म और तर्के-दुन्या वग़ैरः बताये गये है; मलकाते रदीयः वाले अमल का समरः तक्लीफ़ और मलकाते मज़मूम वाले अमल का समरः जहालत है। और-

सत्त्वात्सञ्जायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च।
प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च।।१७।।

मलकाते फ़ाज़िलः से इल्म पैदा होता है (ख़ुदाई एहसास का नाम इल्म है), ख़ुदाई एहसास का बहाव होता है। मलकाते रदीयः से बिला शक लालच पैदा होती है और मलकाते मज़मूम से मद्होशी, फ़िरेफ़्तगी, काहिली (जहालत) ही पैदा होती है। इनकी पैदाइश का क्या अंजाम है?

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः।।१८।।

मलकाते फ़ाज़िलः का हामिल इंसान **'ऊर्ध्वम्'**- उस हक़ीक़ी मा'बूद की ओर माइल होता है, जन्नतनशीं होता है। मलकाते रदीयः का हामिल इंसान औसत दर्जः के होते हैं, जिनके पास न **'सात्विक'**- इर्फ़ान-तर्के दुन्या ही होता है और न बदज़ात हशरातुलअर्ज़ की योनियों में जाते हैं बल्कि दुबारः जनम हासिल करते हैं; और क़ाबिले-नफ़्रत मलकाते मज़मूम में लगे हुए गुमराह इंसान **'अधोगतिः'** (ज़वाल) या'नी जानवर, चिड़िया, हशरातुलअर्ज वग़ैरः बदज़ात योनियों को हासिल करते हैं। इस तरह तीनों सिफ़ात किसी न किसी शक्ल में योनि की वजूहात हैं। जो इंसान इन सिफ़ात से नजात पा लेते हैं, वे आमदोरफ़्त से आज़ाद हो जाते हैं और मेरे मक़ाम को हासिल कर लेते हैं। इस पर कहते हैं-

नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टानुपश्यति।
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति।।१९।।

जिस दौर में नाज़िर रूह तीनों सिफ़ात के इलावः दूसरे किसी को कारकुन नहीं देखती और तीनों सिफ़ात से बेइन्तिहा मावरा उंसुरे-आ'ला को **'वेत्ति'**- जान लेती है, उस वक़्त वह इंसान मेरे मक़ाम को हासिल कर लेता है। यह अक़्ली तस्लीमशुदगी नहीं है कि ख़ुसूसियत का तअल्लुक़ सिफ़ात से होता है। रियाज़त करते-करते एक ऐसा मक़ाम आता है, जहाँ उस आ'ला का एहसास जाग जाता है कि सिफ़ात के इलावः कोई कारकुन नज़र नहीं आता, उस वक़्त इंसान तीनों सिफ़ात से मुर्बरा हो जाता है। यह ख़याली तस्लीमशुदगी नहीं है। इसी पर आगे कहते हैं-

गुणानेतानतीत्य त्रीन्देही देहसमुद्भवान्।
जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते ।।२०।।

इंसान इन कसीफ़ अज्साम की पैदाइश की वज्ह वाली तीनों सिफ़ात से मुबर्रा होकर, जनम-मौत-ज़ईफ़ी व हर तरह की तक्लीफ़ों से ख़ास तौर से आज़ाद होकर लाफ़ानी उंसुर को हासिल करता है। इस पर अर्जुन ने सवाल किया-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

कैर्लिङ्गैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवति प्रभो।
किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्तते।।२१।।

बंदःपर्वर! इन तीनों सिफ़ात से मावरा इंसान किन-किन सलाहीयत (निशानियों) से मुज़य्यन होता है और किस तरह के बरताव वाला होता है और इंसान किस तरीक़ः से इन तीनों सिफ़ात से मुबर्रा होता है?

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव।
न द्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षति।।२२।।

अर्जुन के मज़्कूरएबाला तीनों सवालात का जवाब देते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा- अर्जुन! जो इंसान मलकाते फ़ाज़िलः के ज़ेरेअसर ख़ुदाई नूर, मलकाते रदीयः के ज़ेरेअसर अमल में लगने का ख़याल और मलकाते मज़मूम के ज़ेरेअसर फ़िरेफ़्तगी को न तो राग़िब होने पर बुरा समझता है और न फ़ारिग़ होने पर उनकी ख़्वाहिश ही करता है। और-

उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते।
गुणा वर्तन्त इत्येव योऽवतिष्ठति नेङ्गते।।२३।।

जो इस तरह लातअल्लुक़ इंसान की तरह क़ाइम हुआ सिफ़ात के ज़रीअः मुतज़ल्ज़िल नहीं किया जा सकता, सिफ़ात सिफ़ात के अन्दर ही बरताव करती हैं - ऐसा हक़ीक़तन जानकर उस हालत से मुतज़ल्ज़िल नहीं होता, तभी वह सिफ़ात से मुबर्रा होता है।

समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः।।२४।।

मुसल्सल ख़ुद में या'नी ख़ुदशनासी की हालत में क़ाइम है, आराम और जो तक्लीफ़ में मुसावी है, मिट्टी, पत्थर और सोना एक ही नज़र से देखता है, साबिर है, जो पसन्दीदः और नापसन्दीदः को बराबर समझता है, अपनी नुक़्तःचीनी और ता'रीफ़ में भी कोई फ़र्क़ नहीं मानता है, और-

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः।
सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते।।२५।।

जो इज़्ज़त और ज़िल्लत में मुसावी है, दोस्त और दुश्मन में भी मुसावात देखता है, वह मुकम्मल शुरुआतों से मुबर्रा हुआ इंसान फ़नाफ़िल्लाह कहा जाता है।

श्लोक बाईस से पचीस तक सिफ़ात से मुबर्रा इंसान की पहचान और बरताव बताये गये कि वह मुतज़ल्ज़िल नहीं होता, सिफ़ात के ज़रीअः उसे मुतज़ल्ज़िल नहीं किया जा सकता, साकिन रहता है। अब पेश है सिफ़ात से मुबर्रा होने का तरीक़ः-

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते।।२६।।

जो इंसान लाशरीक बन्दगी के ज़रीअः या'नी मा'बूद के इलावः दूसरी दुन्यवी यादों से पूरी तरह मुबर्रा होकर, जोग के ज़रीअः या'नी उसी मुऐयनः अमल के ज़रीअः मुझे मुसल्सल याद करता है, वह इन तीनों सिफ़ात को अच्छी तरह नज़रअंदाज़ करके मावरा मा'बूद के साथ यकसाँ होने के क़ाबिल होता है, जिसका नाम कल्प (बदलाव) है। मा'बूद से यकताई के साथ जुड़ जाना ही हक़ीक़ी कल्प (बदलाव) है। लाशरीक ख़याल से मुऐयनः अमल का बरताव किये बग़ैर कोई भी से सिफ़ात से मुबर्रा नहीं होता। आख़िर में जोग के मालिक फ़ैसलः देते हैं-

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च।।२७।।

हे अर्जुन! इस लाफ़ानी मा'बूद की (जिसके साथ वह कल्प (बदलाव) करता जिस के अन्दर सिफ़ात से मुबर्रा यकताई के एहसास से दाख़िल होता है), जावेदानी की, दाइमी दीन की और उस सालिम यकसाँ मसर्रत की मैं पनाह हूँ या'नी रूहेमुत्लक़ में क़ाइम मुर्शिदे-कामिल ही इन सबकी पनाह है। श्रीकृष्ण एक जोग के मालिक थे। अब अगर आप को ग़ैरमर्ई, लाफ़ानी, रब, दाइमी दीन, सालिम और यकसाँ मसर्रत की ज़रूरत हैं, तो किसी हक़शनास, ग़ैरमर्ई इलाह में क़ाइम अज़ीम इंसान की पनाह लें। उनके वसीलः से ही यह मुम्किन है।

मग़्ज़े सुख़न :-

इस बाब की इब्तिदा में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा कि, अर्जुन! उलूम में भी बेइन्तिहा अफ़्ज़ल आ'ला इल्म को मैं फिर भी तुझे बताऊँगा, जिसे जानकर आरिफ़ हज़्रात इबादत के ज़रीअः मेरे मक़ाम को हासिल करते हैं, फिर तख़्लीक़ की इब्तिदा में वे जनम नहीं लेते, लेकिन जिस्म की मौत तो होनी ही है। उस वक़्त वे ग़मजदः नहीं होते। दरहक़ीक़त वे जिस्म तो उसी दिन तर्क कर देते हैं, जिस दिन मक़ाम को हासिल करते हैं। हुसूल जीते-जी होता है लेकिन जिस्म का ख़ातिमः होते वक़्त भी वे ग़मज़दः नहीं होते।

क़ुद्रत से ही पैदा हुए मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः और मलकाते मज़मूम ये तीनों सिफ़ात ही इस ज़ीरूह को जिस्म में बाँधते है। दो सिफ़ात को दबाकर तीसरी ख़ुसूसियत की तरक़्क़ी की जा सकती है। सिफ़ात क़ाबिले तब्दील हैं। क़ुद्रत जो अबदी है, ख़त्म नहीं होती, बल्कि सिफ़ात के अस्रात को दरकिनार किया जा सकता है। सिफ़ात मन को मुतअस्सिर करती हैं। जब मलकाते फ़ाज़िलः का इज़ाफ होता है, तो ख़ुदाई नूर और सोचने की ताक़त रहती है। मलकाते रदीयः मुलव्वस करने वाला होता है, उस वक़्त अमल की लालच रहती है, लगाव रहता है और बातिन में मलकाते मज़मूम मुतहर्रिक होने पर काहिली और ग़फ़्लत घेर लेती हैं। मलकाते फ़ाज़िल के इज़ाफ़ः में मौत को हासिल हुए इंसान जन्नतनशींन होते हैं। मलकाते रदीयः में इज़ाफ़ः होने पर इंसान इंसानी योनि में ही लौटकर वापस आता है और मलकाते मज़मूम का इज़ाफ होने पर इंसान जिस्म को तर्क करके (जानवर, हशरातुलअर्ज़ वग़ैरः) बदज़ात

योनि को हासिल करता है। लिहाज़ा इंसानों को बतद्रीज़ बेह्तरीन सिफ़ात मलकाते फ़ाज़िलः की जानिब बढ़ना चाहिए। दरहक़ीक़त तीनों सिफ़ात किसी न किसी योनि के ही सबब हैं। सिफ़ात ही रूह को जिस्म में बाँधती हैं लिहाज़ा सिफ़ात से लातअल्लुक़ होना चाहिए।

वे जिससे आज़ाद होते हैं, उसकी हक़ीक़ी शक्ल बताते हुए जोग के मालिक ने कहा कि आठ बुन्यादी ख़साइल हामिलः वालिदः है और मैं ही तुख़्म की शक्ल में वालिद हूँ, दूसरा न कोई वालिदः है, न वालिद। जब तक यह सिल्सिलः जारी रहेगा तब तक मुतहर्रिको-साकिन दुन्या में वसील की शक्ल से कोई न कोई वालिदैन बनता रहेगा, लेकिन दरहक़ीक़त कुद्रत ही वालिदः है और मैं ही वालिदः हूँ। इस पर अर्जुन ने तीन सवालात खड़ा किये कि सिफ़ात से ख़ाली इंसान के क्या निशानात हैं? क्या बरताव है? किस तरीक़ः से इंसान इन तीनों सिफ़ात से मुबर्रा होता है? इस तरह जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने सिफ़ात से मुबर्रा इंसान की पहचान और बरताव का बयान किया और आख़िर सिफ़ात से मुबर्रा होने का तरीक़ः बताया कि जो इंसान लाशरीक बन्दगी और जोग के ज़रीअः मुसल्सल मेरी याद करता है, वह तीनों सिफ़ात से मुबर्रा हो जाता है। दूसरे किसी का तसव्वुर न करते हुए मुसल्सल मा'बूद की फ़िक्र करना लाशरीक बन्दगी है, जो दुन्या के वस्लो-फ़िराक़ से हर तरह आज़ाद है, उसी का नाम जोग है, उसको अमली शक्ल देने के तरीक़ः नाम अमल है। यग जिससे पूरा होता है, वह हरकत अमल है। लाशरीक बन्दगी के ज़रीअः उस मुऐयनः अमल के बरताव ही इंसान तीनों सिफ़ात से मुबर्रा होता है और मुबर्रा होकर मा'बूद के साथ यकताई के लिए, मुकम्मल कल्प (बदलाव) को हासिल करने के क़ाबिल होता है। सिफ़ात जिस मन पर असर डालती हैं, उसकी तह्लील होते ही मा'बूद के साथ यकताई हो जाती है, यही हक़ीक़ी कल्प (बदलाव) है। लिहाज़ा बिला यादेइलाही के कोई सिफ़ात से मुबर्रा नहीं होता।

आख़िर में जोग के मालिक श्रीकृष्ण फ़ैसलः देते हैं कि वह सिफ़ात से मुबर्रा इंसान जिस मा'बूद के साथ यकताई की हालत में पहुँचता है, उस मा'बूद की, उंसुरे लाफ़ानी की, दाइमी दीन की और सालिम यकसाँ मसर्रत की मैं ही पनाह हूँ। या'नी ख़ास कारकुन हूँ। अब तो श्रीकृष्ण चले गये, अब वह पनाहगाह तो चली गई, तब तो बड़े शुब्हःवाली बात है कि अब वह पनाहगाह कहाँ मिलेगी? लेकिन नहीं, श्रीकृष्ण ने अपना तअर्रुफ़ कराया है कि वे एक जोगी थे, आ'ला मक़ाम पर फाइज़ अज़ीम

इंसान थे। **'शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्।'** अर्जुन ने कहा था- मैं आपका शागिर्द हूँ, आपकी पनाह में हूँ, मुझे सँभालिए। जगह-जगह पर श्रीकृष्ण ने अपना तअर्रुफ़ कराया। मुस्तकिल मिज़ाज अज़ीम इंसान की पहचान बतायी और उनसे अपना मुआज़नः किया। लिहाज़ा ज़ाहिर है कि श्रीकृष्ण एक मर्दे-कामिल, जोगी थे। अब अगर आपको सालिम, यकसाँ मसर्रत, दाइमी दीन या उंसुरे लाफ़ानी की ज़रूरत है, तो इन सबके हुसूल का मख़्रज वाहिद मुर्शिद है। सीधे किताब पढ़कर इसे कोई हासिल नहीं कर सकता। जब वही अज़ीम इंसान रूह से वाबस्तः होकर रथबान हो जाते हैं, तो धीरे-धीरे आशिक़ (अनुरागी) को रहनुमाई करते हुए उसके मक़ाम तक, जिनमें वे ख़ुद फ़ाइज़ हैं, पहुँचा देते हैं। वही वाहिद वसीलः है। इस तरह जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने अपने को सबकी पनाहगाह बताते हुए इस चौदहवें बाब का इख़्तिताम किया जिसमें सिफ़ात का तफ़्सीली बयान है। लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'गुणत्रयविभागयोगो' नाम चतुर्दशोऽध्यायः।।१४।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'गुणत्रय विभाग योग' (तक़्सीमे-सिफ़ात जोग) नाम का चौदहवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'गुणत्रयविभागयोगो' नाम चतुर्दशोऽध्यायः।।१४।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'गुणत्रय विभाग योग' (तक़्सीमे-सिफ़ात जोग) नाम का चौदहवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ पञ्चदशोऽध्यायः।।
(पँद्रहवाँ बाब)

अज़ीम इंसानों ने मुख़्तलिफ़ मिसालें देकर इस दुन्या को समझाने की कोशिश की है। किसी ने इसी को दुन्यवी जंगल कहा, तो किसी ने दुन्यवी समन्दर। हालात के मुताबिक़ इसी को दुन्यवी नदी और दुन्यवी कुआँ भी कहा गया और कभी इसका मुआजनः गो-पद (गाय के खुर) से किया गया कि जितना हवास का दाइरः है, उतनी ही दुन्या है और आख़िर में ऐसी भी हालत आई कि **'नामु लेत भवसिन्धु सुखाहीं।'**- (रामचरितमानस, १/२४/४) दुन्यवी समन्दर भी सूख गया। क्या दुन्या में ऐसे समन्दर हैं? जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने भी दुन्या को समन्दर और दरख़्त का नाम दिया। बाब बारह में उन्होंने कहा- जो मेरे लाशरीक बन्दे हैं, उनको दुन्यवी समन्दर से जल्द ही नजात दिलाने वाला होता हूँ। यहाँ पेशक़र्दः बाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं कि दुन्या एक दरख़्त है, इसको काटते हुए ही जोगी हज़्रात उस आ'ला मक़ाम की तलाश करते हैं। देखें-

श्रीभगवानुवाच (श्रीभगवान बोले) -

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्।।१।।

अर्जुन! **'ऊर्ध्वमूलम्'**-ऊपर की तरफ़ मा'बूद ही जिसकी जड़ है, **'अधःशाखम्'**- नीचे कुद्रत ही जिसकी शाख़ें हैं, ऐसे दुन्यवी शक्ल वाले पीपल के दरख़्त को लाफ़ानी कहते हैं। (दरख़्त तो अ-श्वः या'नी कल तक भी रहने वाला नहीं, जब चाहे कट जाय, लेकिन है लाफ़ानी) श्रीकृष्ण के मुताबिक़ लाफ़ानी दो हैं- एक दुन्यवी दरख़्त लाफ़ानी है और दूसरा उससे भी मावरा आ'ला लाफ़ानी। वेद इस लाफ़ानी दुन्यवी दरख़्त के पत्ते कहे गये हैं। जो इंसान इस दुन्यवी शक्ल वाले दरख़्त को (देखते हुए) जान लेता है, वह वेद का आलिम है।

जिसने उस दुन्यवी दरख़्त को जाना है, उसने वेद को जाना है, न कि किताब पढ़ने वाला। किताब पढ़ने से तो मह्ज़ उस तरफ़ बढ़ने की तर्ग़ीब मिलती है। पत्तों

की जगह पर वेद की क्या जरूरत है? दरहक़ीक़त इंसान भटकते-भटकते जिस आख़िरी कोपल (बर्गेनौ) या'नी आख़िरी जनम को हासिल करता है, वहीं से वेद के छन्द (बंदिशें) (जो भलाई की तख़्लीक करते हैं) तर्ग़ीब देते हैं, वहीं से उनका इस्ते'माल है। वही से भटकाव ख़त्म हो जाता है। वह मंजिल (हक़ीक़त) की जानिब मुड़ जाता है और-

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा
गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि
कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके।।२।।

उस दुन्यवी दरख़्त की तीनों सिफ़ात के ज़रीअः बढ़ी हुई ख़्वाहिशात और ऐशो-इश्रत की शक्ल में बर्गेनौ वाली शाखें नीचे और ऊपर हर तरफ़ फ़ैली हुई हैं। नीचे की तरफ़ हशरातुलअर्ज़ तक और ऊपर देवता की मर्तबत से लगात ख़ालिक़ तक हर जगह फ़ैली हुई हैं और महज़ इंसानी योनी में आ'माल के मुताबिक़ बाँधने वाली हैं, दूसरी सभी योनियाँ ऐशो-इश्रत का लुत्फ़ उठाने के लिए है। इंसानी योनि ही आ'माल के मुताबिक़ बन्दिश तैयार करती है।

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते
नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल-
मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा।।३।।

लेकिन इस दुन्यवी दरख़्त की शक्ल जैसी बतायी गई है, वैसी यहाँ नहीं पायी जाती; क्योंकि न तो इसकी इब्तिदा है, न इतिहा है और न यह अच्छी हालत में ही है (क्योंकि यह बदलती रहने वाली है)। इस मज़बूत ज़ामिद वाले दुन्यवी शक्ल वाले दरख़्त को मज़्बूत **'असंगशस्त्रेण'**- असंग या'नी तर्के-दुन्या के सिलाह के ज़रीअः काटना है। (ऐसा नहीं कि पीपल के जड़ में मा'बूद रहते है या पीपल का पत्ता वेद है और घी का चराग़ (आरती) दिखाने लगे दरख़्त को)।

इस दुन्यवी दरख़्त की जड़ तो ख़ुद मा'बूद ही है जो तुख़्म की तरह असर अंदाज़ है, तो क्या वह भी कट जोयगा? मुस्तह्कम तर्केदुन्या के ज़रीअः इस दुन्या का तअल्लुक़ ख़त्म हो जाता है, यही काटना है। काटकर करें क्या?

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं
यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये
यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी।।४।।

मुस्तह्कम तर्के दुन्या के ज़रीअः दुन्यवी दरख़्त को काटने के बा'द उस आ'ला मक़ाम मा'बूद की अच्छी तरह तलाश करनी चाहिए, जिसमें दाख़िलः हासिल कर लेने के बा'द इंसान दुन्या में दुबारः नहीं आते या'नी मुकम्मल नजात हासिल कर लेते हैं। लेकिन उसकी तलाश किस तरह मुम्किन है? जोग के मालिक फ़र्माते हैं- इसके लिए ख़ुद सुपुर्दगी ज़रूरी है। जिस मा'बूद से क़दीमी दुन्यवी दरख़्त की ख़स्लत का फ़ैलाव है, उसी अबदी इंसान मा'बूद की मैं पनाह में हूँ (उनकी पनाह में गये बग़ैर दरख़्त का ख़ातिमः होगा नहीं)। अब पनाह में गया हुआ तर्के दुन्या के मर्तबः पर फ़ाइज़ इंसान कैसे समझे कि दरख़्त कट गया? उसकी शनाख़्त क्या है? इस पर कहते हैं-

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा
अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसञ्ज्ञै-
र्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत्।।५।।

मज़्कूरएबाला तरह की ख़ुद सुपुर्दगी से जिनकी फ़िरेफ़्तगी और इज़्ज़त ख़त्म हो गयी है, फ़िरेफ़्तगी की शक्ल वाले सुह्बत के अस्नात पर जिन्होंने क़ाबू पा लिया है **'अध्यात्मनित्या'**- मा'बूद की शक्ल में जो लोग मुसल्सल तौर पर फ़ाइज़ हैं, जिनकी ख़्वाहिशात ख़ास तौर से ख़त्म हो गयी हैं और आरामो-तक्लीफ़ के वबाल से आज़ाद हुए आलिम हज़्रात उस लाफ़ानी आ'ला मक़ाम को हासिल करते हैं। जब तक ये हालत नहीं आती, तब तक दुन्यवी दरख़्त नहीं कटता। यहाँ तक बैराग की ज़रूरत रहती है। उस आ'ला मक़ाम की शक्ल क्या है? जिसे हासिल करते हैं-

न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम।।६।।

उस आ'ला मक़ाम को न सूरज, न चाँद, और न आग ही रौशन कर पाती है। जिस आ'ला मक़ाम को हासिल कर इंसान लौटकर फिर दुन्या में नहीं आते हैं, वही मेरा आ'ला मक़ाम है या'नी उनका दुबारः जनम नहीं होता। इस मक़ाम को

हासिल करने में सबका बराबर इख़्तियार है। इस पर कहते हैं-

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।
मनःषष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति।।७।।

'जीवलोके' या'नी इस जिस्म में (जिस्म ही दुन्या है) यह ज़ीरूह मेरा ही अबदी हिस्सः है और वही इन तीनों सिफ़ात वाली फ़ित्रत (माया) में मौजूद होकर मन के साथ पाँचों हवास को राग़िब करती है। यह किस तरह?-

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः।
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात्।।८।।

जिस तरह हवा ख़ुश्बू के मक़ाम से ख़ुश्बू को हासिल करके ले जाती है, ठीक उसी तरह जिस्म का मालिक ज़ीरूह (जीवात्मा) जिस पहले वाले जिस्म को तर्क करती है, उससे मन और पाँचों हवासे बातिनी के कारोबार को हासिल करके (राग़िब करके साथ लेकर) फिर जिस जिस्म को हासिल करती है, उसमें दाख़िल होती है। (जब अगला जिस्म उसी वक़्त तय है तो आटा का जिर्म (पिण्ड) बनाकर किसे पहुँचाते हो? क़बूल करता कौन है? लिहाज़ा श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा था कि यह जहालत तेरे अंदर कहाँ से पैदा हो गयी कि पिण्डोदक क्रिया (जिर्म पानी वग़ैरः देने की रस्म) ख़त्म हो जायेगी। वहाँ जाकर करता क्या है? मन के साथ छः हवास कौन हैं?

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च।
अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते।।९।।

उस जिस्म में मौजूद होकर यह ज़ीरूह कान, आँख, ज़िल्द (त्वचा), ज़बान, नाक और मन का सहारा लेकर या'नी इन सबके सहारे ही मौजूआत का लुत्फ़ उठाती हैं लेकिन ऐसा नज़र नहीं आता, सब उसे देख नहीं पाते। इस पर श्रीकृष्ण कहते हैं-

उत्क्रामन्तं स्थितं वापि भुञ्जानं वा गुणान्वितम्।
विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः।।१०।।

जिस्म तर्क करके जाती हुई जिस्म में मौजूद, मौजूआत का लुत्फ़ उठाती हुई या तीनों सिफ़ात से मुज़ैयन ज़ीरूह को ख़ास तौर के नादान लाइल्म लोग नहीं जानते। सिर्फ़ इल्म की नज़र रखने वाले ही उसे जानते हैं, देखते हैं; यही हक़ीक़त है। अब वह नज़र कैसे मिले? आगे देखें-

यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम्।
यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः।।११।।

जोगी हज़्रात अपने दिल में तबीअ़त को हर तरफ़ से समेटकर, इस रूह को पूरी कोशिश करते हुए ही रू-ब-रू दीदार करते हैं; लेकिन नाशुक्र रूह वाले या'नी दाग़दार बातिन वाले जाहिल लोग कोशिश करते हुए भी इस रूह को नहीं जानते (क्योंकि उनका बातिन दुन्यवी ख़साइल में अभी बिखरा है) तबीअ़त को हर तरफ़ से समेटकर यकसुई के साथ बातिन में कोशिश करने वाले अक़ीदतमंद लोग ही उसे हासिल करने की सलाहीयत रखते हैं। लिहाज़ा बातिनी तौर से मुसल्सल तौर पर याद जगाये रखना ज़रूरी है। अब उन अज़ीम इंसानों की शक्ल में जो शौकतें पायी जाती हैं (जिनके बारे में पहले बता भी आये हैं), उन पर रोशनी डालते हैं-

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम्।
यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम्।।१२।।

जो जलाल सूरज में मौजूद रहक़र सारे जहान को रोशन करता है, जो जलाल चाँद में मौजूद है और जो जलाल आग में है, इसे तू मेरा ही जलाल समझ। अब उस अज़ीम इंसान के ज़रीअः सादिर होने वाले कामों के बारे में बताते हैं-

गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा।
पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः।।१३।।

मैं ही ज़मीन में दाख़िल होकर अपनी कुव्वत से सारे जानदारों को क़बूल करता हूँ और चाँद में रस की शक्ल होकर तमाम नवातात को मुक़व्वी बनाता हूँ।

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम्।।१४।।

मैं ही जानदारों के अज्साम में आग की शक्ल में मौजूद होकर जान (प्राण) और रियाह (अपान) का हामिल बनकर चार तरह के अज्नास का हाज़िम हूँ।

बाब चार में ख़ुद जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने आतशे नफ़्स, आतशे एहतियात, आतशे जोग, आतशे जानो-रियाह, आतशे मा'बूद वग़ैरः तेरह-चौदह तरह की आतश का बयान किया, जिनमें सबका नतीजः इल्म है। इल्म ही आतश है। श्रीकृष्ण कहते हैं, ऐसी आतश की शक्ल होकर जान और रियाह से मुज़ैयन चार तरीक़ों से (विर्द हमेशः तनफ़्फ़ुस से होता है, उसके चार तरीक़े बैखरी, मध्यमा, पश्यन्ति और परा

हैं- इन चार तरीक़ों से) तैयार होने वाले अज्नास का मैं ही हाज़िम हूँ।

श्रीकृष्ण के मुताबिक़ मा'बूद ही वाहिद अनाज है, जिससे रूह को मुकम्मल आसूदगी हासिल होती है, फिर कभी नाआसूदगी नहीं होती। जिस्म की पर्वरिश करने वाले मोरव्वजः अनाजों को जोग के मालिक ने ख़ुराक का नाम दिया है (युक्ताहार-मुनासिब ख़ुराक)। हक़ीक़ी अनाज रूहेमुत्लक़ है। बैखरी, मध्यमा, पश्यन्ति और परा के चार तरीक़ों से गुज़र कर ही वह अनाज अच्छी तरह पकता है। इसी को तमाम अज़ीम इंसानों ने नाम, रूप (शक्ल), लीला (तमाशा) और धाम (मक़ाम) का नाम दिया है। पहले नाम का विर्द होता है। धीरे-धीरे दिल की दुन्या में मा'बूद की शक्ल साफ़ अयाँ होने लगती है। उसके बा'द उसके तमाशा (लीला) का एहसास होने लगता है कि वह मा'बूद किस तरह ज़र्रः-ज़र्रः में मौजूद है? किस तरह उसकी सब जगह अमलदारी है? इस तरह दिल की दुन्या में कारोबार का दीदार ही तमाशा (लीला) है। (बाहर की रामलीला-रासलीला नहीं) और उस ख़ुदाई तमाशा का बदीही एहसास करते हुए जब हक़ीक़ी तमाशागर की क़ुर्बत नसीब होने लगती है, तब मक़ाम की हालत आती है। उसका इल्म हासिल कर रियाज़तकश उसी मक़ाम पर फ़ाइज़ हो जाता है। उसमें इस्तिक़ार पाना और मावराई विर्द के मुकम्मल होने की हालत में मा'बूद की क़ुर्बत पाकर उसमें फ़ाइज़ होना, दोनों साथ-साथ होता है।

इस तरह जान और रियाह या'नी तनफ़्फ़ुस से मुज़ैयन होकर चारों तरीक़ों से या'नी बैखरी, मध्यमा, पश्यन्ति और सिल्सिलःवार तरक़्क़ी करते-करते परा के तक्मली दौर में वह (अनाज) मा'बूद अच्छी तरह पक जाता है, हासिल भी हो जाता है, हज़म भी हो जाता है और उससे लगाव रखनेवाला भी अच्छी तरह पका हुआ ही है।

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो
मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च।
वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो
वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम्।।१५।।

मैं ही सारे जानदारों के दिल में आलिमुलग़ैब की शक्ल में मौजूद हूँ। मुझसे ही शक्ल की याद (सुरत जो उंसुर रुहेमुल्लक़ फ़रामोश है, उसका याद हो आना) होती है,? (दौरे हुसूल की अक्कासी है)। याद के साथ ही इल्म (बदीही दीदार) और **'अपोहनम्'**- या'नी रुकावटों का ख़ातिमः मुझ मा'बूद से ही होता है। सब वेदों के ज़रीअः मैं ही क़ाबिले-फ़हूम हूँ। वेदान्त का कारकुन या'नी **'वेदस्य अन्तः सः वेदान्त'**

(अलग था तभी तो जानकारी हुई, जब जानते ही उसी शक्ल में या उसी मक़ाम पर पहुँच गया, तो कौन किसको जाने?) वेद की आख़िरी हालत का कारकुन मैं ही हूँ और **'वेदवित्'** (वेद को जानने वाला) भी मैं ही हूँ या'नी वेद का आलिम। बाब की इब्तिदा में उन्होंने कहा कि दुन्या एक दरख़्त है। ऊपर मा'बूद जड़ और नीचे तमाम कुद्रती मनाज़िर तक शाख़ें हैं। जो इस जड़ से दुन्या को अलग करके जानता है, जड़ से जानता है, वह वेद का आलिम है। यहाँ कहते हैं कि मैं वेद का आलिम हूँ, जिसे इसका इल्म है। श्रीकृष्ण ने अपने को उसके मुआज़न में खड़ा किया कि वे वेदवित् (वेद के आलिम) हैं, 'मैं वेद का आलिम हूँ।' श्रीकृष्ण भी एक हक़शनास अज़ीम इंसान हैं, जोगियों में भी आ'ला जोगी थे। यहाँ यह सवाल पूरा हुआ। अब इर्शाद फ़र्माते हैं कि दुन्या में इंसान की शक्ल दो तरह की है-

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते।।१६।।

अर्जुन! इस दुन्या में **'क्षर'**- फ़ना होने वाले, बदलने वाले और **'अक्षर'**- (लाफ़ानी) न ख़त्म होने वाले, न बदलने वाले ऐसे दो तरह के इंसान है। उनमें सारे दुन्यवी जानदारों के अज्साम तो फ़ानी हैं, ख़त्म होने वाले इंसान हैं, आज हैं तो कल नहीं रह जायेंगे और यह बलन्दी पर फ़ाइज़ इंसान लाफ़ानी कहा जाता है। रियाज़त के ज़रीअः मन के साथ हवास पर क़ाबू या'नी जिसके हवास बतौर बलंदी पर ग़ैरमुतहर्रिक हैं, वही लाफ़ानी कहलाता है। अब आप औरत कहे जाते हों ख़्वाह मर्द, अगर जिस्म और जिस्मानी शक्ल इख़्तियार करने की वज्ह से तअस्सुरात (संस्कारों) का सिल्सिलः जारी है तो आप फ़ानी इंसान हैं और जब मन के साथ हवास साकिन हो जाते हैं तब वही लाफ़ानी इंसान कहलाता है लेकिन यह भी इंसान की ख़ास हालत ही है। इन दोनों से मावरा एक दूसरा इंसान भी है-

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः।।१७।।

उन दोनों से आ'ला इंसान तो दूसरा ही है, जो तीनों अवालिम में दाख़िल होकर सबको सँभालता और पर्वरिश करता है और लाफ़ानी, रूहेमुत्लक़, मा'बूद इस तरह से कहा गया है। रूहेमुत्लक़, ग़ैरमर्ई, लाफ़ानी, अज़ीम इंसान वग़ैरः उसके तआरुफ़ कुनिन्दः अल्फ़ाज़ हैं; दरहक़ीक़त यह दूसरा ही है या'नी लाबयान है। यह फ़ानी-लाफ़ानी से मावरा अज़ीम इंसान की इंतिहाई हालत है, जिसको मा'बूद वग़ैरः

अल्फ़ाज़ से इशारः किया गया है; मगर वह दूसरा है, या'नी लाबयान है। उसी हालत में जोग के मालिक श्रीकृष्ण अपना भी तआरुफ़ कराते हैं। जैसे-

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः।।१८।।

मैं मज़्कूरएबाला फ़ानी, क़ाबिले-तब्दील दाइरः से बिल्कुल मावरा और लाफ़ानी कभी न ख़त्म होने वाले मुस्तक़िल मिज़ाज इंसानों से भी बालातर हूँ। लिहाज़ा जहान और वेद में अज़ीम इंसान नाम से मश्हूर हूँ।

यो मामेवमसम्मूढो जानाति पुरुषोत्तमम्।
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत।।१९।।

ऐ भारत! जैसा कि ऊपर कहा गया है कि इस तरह जो आलिम इंसान मुझ आ'लातरीन इंसान को ज़ाहिरी तौर से जानता है, वह अलीम इंसान हर तरह से मुझ मा'बूद को ही याद करता है। वह मुझसे जुदा नहीं है।

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ।
एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत।।२०।।

बेगुनाह अर्जुन! इस तरह बहुत ही राज़ भरी यह शरीअ़त मेरे ज़रीअः बयान की गयी। इसको उंसुर से जानकर इंसान मुकम्मल आलिम और शादकाम हो जाता है। लिहाज़ा जोग के मालिक श्रीकृष्ण का यह कलाम ख़ुद में मुकम्मल शरीअ़त है।

श्रीकृष्ण का यह राज़ बेहद पोशीदः था। उन्होंने सिर्फ़ अपने तालिबों से बताया। यह अह्ल के लिए था, सबके लिए नहीं; लेकिन जब यही राज़ की बात (शरीअ़त) लिखने में आ जाती है, सबके सामने किताब रहती है, लिहाज़ा लगता है कि श्रीकृष्ण ने सबके लिए कहा, लेकिन हक़ीक़त में यह अह्ल के लिए ही है। श्रीकृष्ण की यह शक्ल सबके लिए थी भी नहीं। कोई उन्हें बादशाह, कोई पैग़म्बर तो कोई यादव (यदु ख़ानदान का ही) मानता था, लेकिन अह्ल अर्जुन से उन्होंने कोई निफ़ाक़ नहीं रखा। उसने पाया कि वह आ'ला व हक़ीक़ी अज़ीम इंसान हैं। निफ़ाक़ रखते तो उसका भला ही नहीं होता।

यही सिफ़ात हुसूलयाफ़्तः हर एक अज़ीम इंसान में पायी गयी। रामकृष्ण परमहंसदेव एक बार बहुत ख़ुश थे। मुक़ल्लिदों ने पूछा, ''आज तो आप बहुत ख़ुश हैं।'' वे बोले- ''आज मैं 'वह' परमहंस हो गया।'' उनके दौर में कोई आ'ला अज़ीम

इंसान, परमहंस थे। उनकी तरफ़ इशारः किया। कुछ वक़्त के बा'द वे मन, अमल और ज़बान (मन, क्रम, वचन) से लातअल्लुक़ी की उम्मीद के साथ अपने पीछे लगे रियाज़तकशों से बोले, ''देखो, अब तुम लोग शक मत करना। मैं वही राम हूँ जो त्रेता के दौर में हुए थे। वही कृष्ण हूँ जो द्वापर के वक़्त में हुए थे। मैं उन्हीं की पाकीज़ा रूह हूँ, वही शक्ल हूँ। अगर हासिल करना है, तो मुझे देखो।''

ठीक इसी तरह 'क़ाबिले-एहतिराम गुरु महाराज' भी सबके सामने कहा करते थे- ''हो, हम पर्वर्दगार के क़ासिद हैं। जो सचमुच में आरिफ़ है, वह मा'बूद का क़ासिद है; हमारे ज़रीअः ही उनका पैग़ाम मिलता है।'' ईसा ने कहा- ''मैं पर्वर्दगार का पिसर हूँ, मेरे करीब आओ - इस्ते वास्ते कि मा'बूद का पिसर कहलाओगे।'' लिहाज़ा सभी औलाद हो सकते हैं। हाँ, यह बात जुदा है कि क़रीब आने का मत्लब उन तक पहुँचने की रियाज़त, रियाज़त के सिल्सिलः में चलकर पूरी करनी है। हुज़ूर मुहम्मद ने फ़र्माया- ''मैं अल्लाह का रसूल हूँ, पैग़म्बर हूँ।'' 'क़ाबिले-एहतिराम महाराजजी' सबसे तो इतना ही कहते थे- ''न किसी ख़याल की तदीदः न हिमायत (न खण्डन न मण्डन)'', लेकिन जो बेज़ारी में पीछे लगे थे, उनसे कहते थे, ''सिर्फ़ मेरी शक्ल को देखो। अगर तुम्हें उस उंसुरे-आ'ला (मा'बूद) की चाहत है, तो मुझे देखो, शक मत करो।'' बहुतों ने शुब्हः किया, तो उनको एहसास में दिखाकर, डाँट-फटकार कर, उन ख़ारिजी ख़यालात से हटाकर, जिनमें जोग के मालिक श्रीकृष्ण के मुताबिक़ (बाब २/४०-४३) बेशुमार इबादत के तरीक़े हैं, अपनी शक्ल में लगाया। वे शुरू से आज तक अज़ीम इंसान की शक्ल में क़ाइम हैं। इसी तरह श्रीकृष्ण की अपनी हैसियत (हालत) बसीग़एराज़ तो थी; लेकिन अपने लाशरीक अक़ीदतमन्द मुकम्मल अह्लियत रखने वाले आशिक़ अर्जुन के लिए उन्होंने उसे आश्कारः किया। हर बन्दः के लिए मुम्किन है, अज़ीम इंसान लाखों को उस रास्तः पर चला देते हैं।

मग़्ज़े सुख़न :-

इस बाब की इब्तिदा में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया कि दुन्या एक दरख़्त है। पीपल जैसा दरख़्त है। पीपल मह्ज़ एक मिसाल है। ऊपर इसकी जड़ मा'बूद और नीचे तमाम कुद्रत तक इसकी शाख़ें दर शाख़ें हैं। जो इस दरख़्त को जड़ के साथ जान लेता है; वह वेदों का आलिम है। इस दुन्यवी दरख़्त की शाखें ऊपर और नीचे सभी जगह फैली हुई हैं और **'मूलानि'**- उसकी जड़ों का जाल भी ऊपर और नीचे हर तरफ़ फैला हुआ है; क्योंकि वह जड़ मा'बूद है और वही तुख़्म

की शक्ल में हर जानदार के दिल में क़याम करता है।

पुराण का वाक़िअः है एक बार नीलोफ़रे-आफ़्ताबी (कँवल) पर बैठे हुए ख़ालिक़ (ब्रह्मा) ने सोचा कि मेरा मस्दर (उद्गम) क्या है? जहाँ से वे पैदा हुए थे, उस कँवल के डंडी में उतरते चले गये। मुसल्सल उतरते रहे; लेकिन अपना मस्दर न देख सके। तब नाउम्मीद होकर वे उसी कँवल के ऊपर बैठ गये। तबीअ़त को क़ाबू करने में लग गये और तसव्वुर के ज़रीअः उन्होंने अपना अस्ल मस्दर पा लिया, उन्सुरे-आ'ला का बदीही दीदार किया, हम्दो-सना की। आ'लातरीन शक्ल वाले मा'बूद से ही हुक्म मिला कि मैं हूँ तो हर जगह, लेकिन मेरे हुसूल की जगह महज़ दिल है। दिल की दुन्या में जो तसव्वुर करता है, वह मुझे हासिल कर लेता है।

ख़ालिक़ एक अलामत है। जोग के रियाज़त की एक निखरी हुई हालत में इस मक़ाम की बेदारी है। मा'बूद की तरफ़ माइल इल्मे-तसव्वुफ से मुज़ैयन अक़्ल ही ख़ालिक़ है। कँवल पानी में रहते हुए भी बेदाग़ और लातअल्लुक़ रहता है। अक़्ल जब तक इधर-उधर तलाश करती है, तब तक नहीं पाती और जब वही अक़्ल लताफ़त के मक़ाम पर फ़ाइज़ होकर मन के साथ हवास को समेटकर दिल की दुन्या में बंदिश कर लेती है, उस बंदिश के भी तह्लील होने की हालत में अपने ही दिल में रूहेमुत्लक़ को हासिल कर लेती है।

यहाँ भी जोग के मालिक श्रीकृष्ण के मुताबिक़ दुन्या एक दरख़्त है, जिसकी जड़ हर तरफ़ है और शाख़ें भी हर जगह हैं। **'कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके'**- आ'माल के मुताबिक़ सिर्फ़ इंसान योनि में बंदिश तैयार करता है, बाँधता है। दूसरी योनियाँ तो इन्हीं आ'माल के मुताबिक़ अपने किये का नतीजः हासिल करती है। लिहाज़ा अटल बैराग की शक्ल वाले सिलाह के ज़रीअः इस दुन्यवी शक्ल वाले पीपल के दरख़्त को तू काट और आ'ला मक़ाम की तलाश कर, जिस मक़ाम पर पहुँचे हुए औलिया दुबारः जनम हासिल नहीं करते।

कैसे जाना जाय कि दुन्यवी दरख़्त कट गया? जोग के मालिक बताते हैं कि जो इज़्ज़त और फ़िरेफ़्तगी से हर तरह मुबर्रा है, जिसने सुह्बत के अस्नात पर फ़त्ह हासिल कर ली है, जिसकी ख़्वाहिशात ख़त्म हो गयी हैं और जो कशमकश से आज़ाद है, वह इंसान उस उंसुरे आ'ला को हासिल करता है। उस आ'ला मक़ाम को न सूरज, न चाँद और न आग ही रौशन कर पाती है, वह ख़ुद में नूर है जिसमें दाख़िल होने के बा'द लौटकर नहीं आना पड़ता। वह मेरा आ'ला मक़ाम है, जिसे हासिल

करने का इख़्तियार सबको हैं; क्योंकि वह ज़ीरूह मेरा ही ख़ालिस हिस्सः है।

जिस्म को तर्क करते वक़्त ज़ीरूह मन और पाँचों हवास के कारोबार को लेकर नये जिस्म को क़बूल करती है। तअस्सुरात सालेह हैं तो सालेह सत्ह पर पहुँच जाती है, मलकाते रदीयः वाली (राजसी) है तो औसत मक़ाम पर और मलकाते मज़मूम वाली (तामसी) रहने पर नफ़्रतअंगेज़ योनियों तक पहुँच जाती है और हवास के निगराँ मन के वसीलः से मौजूआत को देखती और उनसे लुत्फ़अन्दोज़ होती है। यह दिखायी नहीं पड़ती, इसे देखने की नज़र इल्म है। कुछ याद कर लेने का नाम इल्म नहीं है। जोगी हज़्रात दिल में तबीअ़त को समेटकर पूरी कोशिश के बा'द ही उसे देख पाते हैं, लिहाज़ा इल्म तद्बीर से हासिल होता है; हाँ मुतालअः से उसकी तरफ़ रुज़्हान पैदा होती है। शक से मुज़ैयन, एहसान फ़रामोश लोग कोशिश के बावुजूद भी उसे हासिल नहीं कर पाते।

यहाँ हुसूल वाले मक़ाम की अक्कासी है। लिहाज़ा उस हालत की शौकतों का बहाव कुद्रत के मुताबिक़ है। उन पर रोशनी डालते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं कि सूरज और चाँद में मैं ही रोशनी हूँ, आग में मैं ही जलाल हूँ। मैं ही शदीद आग की शक्ल से चार तरीक़ों से पकने वाले अनाज को हज़्म करता हूँ। श्रीकृष्ण के अल्फ़ाज़ में अनाज वाहिद मा'बूद है (**'अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्'**– जिस उपनिषद् से श्रीकृष्ण ने हवालः लिया है, उसका यही फैसलः है) जिसे हासिल कर यह रूह आसूदः हो जाती है। बैखरी से परा तक अनाज मुकम्मल तौर से पक कर हज़्म हो जाता है, वह ज़र्फ़ (बर्तन) भी ख़त्म हो जाता है। इस अनाज को मैं ही हज़्म करता हूँ, या'नी मुर्शिदे-कामिल जब तक रथबान न हों, तब तक यह हुसूलयाबी नहीं होती।

इस पर ज़ोर देते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण फिर बयान करते हैं कि तमाम जानदारों के दिल की दुन्या में मौजूद होकर मैं ही याद दिलाता हूँ। जो शक्ल फ़रामोश थी, उसकी याद दिलाता हूँ। याद के साथ हासिल होने वाला इल्म भी मैं ही हूँ। उसमें आने वाली दिक्कतों का हल भी मुझसे ही होता है। मैं ही जानने के लाइक़ हूँ और ज़ाहिर हो जाने के बा'द जानकारी का ख़ातिमः करने वाला भी मैं ही हूँ। कौन किसे जाने? मैं वेद का आलिम हूँ। बाब के शुरू में कहा था, जो दुन्यवी दरख़्त को जड़ के साथ जानता है, वह वेद का आलिम है; लेकिन उसको काटने वाला ही जानता है। यहाँ कहते हैं– मैं भी वेद का आलिम हूँ। उन वेद के आलिमों में अपने को भी

शुमार करते हैं। लिहाज़ा श्रीकृष्ण भी यहाँ वेद के आलिम आ'लातरीन इंसान हैं, जिसे पाने का इख़्तियार हर इंसान को है।

आख़िर में उन्होंने बताया कि दुन्या में तीन तरह के इंसान हैं। दुन्या के सारे जानदारों वग़ैरः के तमाम अज्साम फ़ानी हैं, मुस्तक़ल मिज़ाज होने की हालत में यही इंसान लाफ़ानी है; लेकिन है कशमकश वाला और इससे भी मावरा जो रूहेमुत्लक़ रब्बुलआलमीन, ग़ैरमर्ई और लाफ़ानी कहा जाता है, दरअस्ल वह दूसरा ही है। यह फ़ानी-लाफ़ानी से मावरा वाली हालत है, यही आ'ला मक़ाम की हालत है। इसके तनासुब से कहते हैं कि मैं भी फ़ना और बक़ा से मावरा वही हूँ, लिहाज़ा लोग मुझे आ'लातरीन इंसान कहते हैं। इस तरह आ'लातरीन इंसान को जो जानते हैं, वे आलिम अक़ीदतमंद लोग हमेशः, हर जानिब से ही याद करते हैं। उनकी जानकारी में फ़र्क़ नहीं है। अर्जुन! यह बेइंतिहा पोशीदः राज़ की बात मैंने तुझको बतायी। हुसूल वाले अज़ीम इंसान सबके सामने नहीं कहते, लेकिन जो अह्ल है उससे निफ़ाक़ भी नहीं रखते। निफ़ाक़ रखेंगे, तो वह हासिल करेगा कैसे?

इस बाब में रूह के तीन हालात का बयान फ़ानी, लाफ़ानी और बेहतरीन इंसान की शक्ल में ज़ाहिर किया गया, जैसा इससे पहले किसी दूसरे बाब में नहीं है। लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'पुरुषोत्तमयोगो' नाम पञ्चदशोऽध्यायः।।१५।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'पुरुषोत्तम योग' (मर्दे-हक़-आगाह जोग) नाम का पन्द्रहवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'पुरुषोत्तमयोगो' नाम पञ्चदशोऽध्यायः।।१५।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'पुरुषोत्तम योग' (मर्दे-हक़-आगाह जोग) नाम का पन्द्रहवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। ॐ श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ षोडशोऽध्यायः।।
(सोलहवाँ बाब)

जोग के मालिक बन्दःपर्वर श्रीकृष्ण के सवाल खड़ा करने का अपना मख़्सूस अन्दाज़ है। पहले वे मौजूअ की ख़ूबियों का बयान हैं, जिससे इंसान उसकी ओर मुतवज्जेह हो, उसके बा'द वे उस मौजूअ को साफ़ करते हैं। मिसाल के तौर पर अमल को लें। उन्होंने दूसरे बाब में ही तर्ग़ीब दी कि अर्जुन! अमल कर। तीसरे बाब में उन्होंने इशारः किया कि मुऐयनः अमल कर। मुऐयनः अमल है क्या? तो बताया कि यग का तरीक़-ए-कार ही अमल है। फिर उन्होंने यग की शक्ल न बताकर पहले यह बताया कि आया कहाँ से और देता क्या है? चौथे बाब में तेरह-चौदह तरीक़ों से यग की शक्ल को साफ़ किया, जिसको अंजाम देना अमल है। यहाँ अमल की साफ़ तस्वीर ज़ाहिर होती है, जिसका ख़ालिस मा'ना है फ़िक्रे जोग, इबादत, जो मन और हवास की तहरीक से होता है।

इसी तरह उन्होंने बाब नौ में रूहानी और दुन्यवी दौलत का नाम लिया। उनकी ख़ूबियों पर ज़ोर दिया कि, अर्जुन! दुन्यवी ख़स्लत वाले मुझे कमतर कहकर पुकारते हैं। वैसे हूँ तो मैं भी इंसानी जिस्म की बुन्याद वाला, क्योंकि इंसानी जिस्म में ही मुझे यह मर्तबः हासिल हुआ है। लेकिन दुन्यवी ख़स्लत वाले, जाहिल लोग मुझे नहीं याद करते, जबकि रूहानी दौलत के हामिल अक़ीदतमंद लोग लाशरीक अक़ीदत के साथ मेरी इबादत करते हैं। लेकिन इन दौलतों की शक्ल, उनकी साख़्त (गठन) अभी तक नहीं बतायी गयी। अब बाब सोलह में जोग के मालिक उनकी शक्ल साफ़ करने जा रहे हैं, जिनमें पेश है पहले रूहानी दौलत की पहचान-

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्।।१।।

ख़ौफ़ का हर तरह से ख़ातिमः, बातिन की तहारत, बसीरत के लिए तसव्वुर में अटल हालत या मुसल्सल लगन, सब कुछ की सुपुर्दगी, अच्छी तरह नफ़्सकुशी,

यग का बरताव (जैसा ख़ुद श्रीकृष्ण ने बाब चार में बताया है), इत्तेदाल की आग में हवन, आतशे-हवास में हवन, जान-रियाह में हवन और आख़िर में आतशे इल्म में हवन या'नी इबादत का तरीक़-ए-कार, जो मह्ज़ मन और हवास के बातिनी अमल से पूरा होता है; तिल, जौ, वेदी वग़ैरः चीज़ों से होने वाले यग का इस गीता में बताये गये यग से कोई सरोकार नहीं है। श्रीकृष्ण ने ऐसे किसी सौमोसलवात (कर्मकाण्ड) को यग नहीं माना। तहक़ीक़ या'नी अपनी शक्ल की तरफ़ माइल कराने वाला मुतालअः रियाज़त या'नी मन के साथ हवास को मा'बूद के मुताबिक़ ढालना और **'आर्जवम्'**- जिस्म और हवास के साथ बातिन की रास्ती (सरलता) -

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्।।२।।

अदमतशद्बुद (अहिंसा) या'नी रूह की नजात (रूह को तनज़्ज़ुल की तरफ़ ले जाना ही तशद्बुद है। श्रीकृष्ण कहते हैं- अगर मैं ख़बरदार होकर अमल का बरताव न करूँ, तो इन तमाम रिआयः को मारने वाला और दोग़लः का मुर्तकिब बनूँ। रूह की ख़ालिस नस्ल है रूहेमुत्लक़, उसका दुन्या में भटकना दोग़लः है, रूह की तशद्दुद है और रूह की नजात ही अदमतशद्दुत है।) सदाक़त (सदाक़त का मा'ना हक़ीक़त और दिल पसंद तक़्रीर नहीं है। आप कहते हैं, लिबास हमारा है, तो क्या आप सच बोलते हैं? इससे बड़ा झूठ और क्या होगा? जब जिस्म आपका नहीं है, फ़ानी है, तो इसे ढँकने वाला लिबास कब आपका है? दरअस्ल सदाक़त की शक्ल जोग के मालिक ने ख़ुद बतायी है कि, अर्जुन! तीनों दौर में सदाक़त की कमी कभी नहीं रहती है। यह रूह ही हक़ है, यही मावरा सदाक़त है - इस सदाक़त पर नज़र रखना।), ग़ुस्सः का न होना, सारा कुछ की सुपुर्दगी, मुबारक-नामुबारक आ'माल के नताइज का ईसार, तबीअ़त की शोख़ी का पूरी तरह ख़ातिमः, मक़्सद के बरख़िलाफ़, क़ाबिले-मज़म्मत कामों को न करना, सारे जानदारों के ऊपर रह्मदिली, हवास का मौजूआत से इत्तिफ़ाक होने के बा'द भी उनमें लगाव का न होना, नरमी, अपने मक़्सद से मुँह मोड़ लेने पर शर्मिन्दगी, बेकार की कोशिशों से बाज़याबी और-

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत।।३।।

जलाल (जो वाहिद मा'बूद में है, जिससे भलाई वुजूद में आती है, जो बुद्ध में था। यही वजह थी कि महात्मा बुद्ध की नज़र पड़ते ही अंगुलिमाल जैसे ख़ौफनाक

डाकू के ख़यालात बदल गये।), मुआफ़ी, सब्र, तहारत, किसी के साथ दुश्मनी के एहसास का न होना, अपने में ख़ुद को इबादत के क़ाबिल समझने के ख़याल का बिल्कुल न होना- ये सब तो, ऐ अर्जुन! रूहानी दौलत को हासिल करने वाले इंसान की निशानियाँ हैं। इस तरह तमाम सब छब्बीस निशानात बताये, जो सब के सब तो रियाज़त में कामिल हालत वाले इंसान में मुम्किन हैं और जुज़्बी तौर से आप में भी ज़रूर मौजूद हैं और दुन्यवी दौलत से मुलव्वस इंसानों में भी ये ख़ुसूसियात हैं, लेकिन ख़्वाविंदः हालत में रहती हैं, तभी तो बेहद गुनाहगार को भी नजात का हक़ है। अब दुन्यवी दौलत की ख़ास-ख़ास निशानियाँ बयान करते हैं-

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च।
अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ सम्पदमासुरीम्।।४।।

ऐ अर्जुन! रियाकारी, तकब्बुर, गुरूर, गुस्सः, सख़्त ज़बानी और जहालत- ये सब दुन्यवी दौलत को हासिल करने वाले इंसान की निशानियाँ हैं। दोनों दौलतों का काम क्या है?

दैवी सम्पद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता।
मा शुचः सम्पदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव।।५।।

इन दोनों तरह की दौलतों में से रूहानी दौलत तो **'विमोक्षाय'**- ख़ुसूसी नजात के लिए है और दुन्यवी दौलत बन्दिश के लिए मानी गई है। ऐ अर्जुन! तू ग़म मत कर; क्योंकि रूहानी दौलत को तूने हासिल किया है। ख़ुसूसी नजात को हासिल करेगा, या'नी मुझे हासिल करेगा। ये दौलतें रहती कहाँ हैं?

द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन्दैव आसुर एव च।
दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे शृणु।।६।।

ऐ अर्जुन! इस जहान में जानदारों के ख़साइल दो तरह के होते हैं- देवताओं की तरह और शैतानों की तरह। जब दिल में रूहानी दौलत अमल की शक्ल इख़्तियार कर लेती है तो इंसान ही देवता है और जब दुन्यवी दौलत की इफ़्रात हो तो इंसान ही शैतान है। दुन्या में ये दो ही ज़ाते हैं। वह चाहे अरब में पैदा हुआ है, चाहे आस्ट्रेलिया में; कहीं भी पैदा हुआ हो, लेकिन है इन दो में से ही। अभी तक देवताओं के मिज़ाज के बारे में तफ़्सील से बयान किया गया, अब शैतानों की फ़ित्रत को मुझसे तफ़्सील के साथ सुन-

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः।
न शौचं नापि चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते।।७।।

ऐ अर्जुन! शैतानी ख़स्लत वाले लोग **'कार्यम् कर्म'**–फ़र्ज़ में लगने और नाफ़रीज़ः कामों से अलग होना भी नहीं जानते लिहाज़ा उनमें न तहारत होती है, न बरताव और न सदाक़त ही रहती है। उन इंसानों के ख़यालात किस तरह के होते हैं?

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम्।
अपरस्परसम्भूतं किमन्यत्कामहैतुकम्।।८।।

ये शैतानी ख़स्लत वाले इंसान कहते हैं कि यह दुन्या पनाह से ख़ाली है, बिल्कुल झूठी है और बिला मा'बूद के ख़ुद-ब-ख़ुद तवालुदो-तनासुल से पैदा हुई हैं लिहाज़ा सिर्फ़ ऐशो-इश्रत का लुत्फ़ उठाने के लिए है, इसके सिवा और क्या है?

एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः।
प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः।।९।।

इस ग़लत नज़रीयः के बिना पर जिनका अत्वार ख़त्म हो चुका है, वे कमअक़्ल, संगदिल इंसान सिर्फ़ दुन्या को तबाह करने के लिए ही पैदा होते हैं।

काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः।
मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहान्प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः।।१०।।

वे इंसान गुरूर, इज़्ज़त और घमण्ड के हामिल बनकर, किसी भी तरह पूरी न होने वाली ख़्वाहिशात का सहारा लेकर, जहालत से ग़लत उसूलों को क़बूल करके, नामुबारक और बदउन्वान इरादों से मुज़ैयन होकर दुन्या में बरताव करते हैं। वे अज़्म तो करते हैं; लेकिन बदउन्वान हैं।

चिन्तामपरिमेयां च प्रलयान्तामुपाश्रिताः।
कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः।।११।।

वे आख़िरी साँस तक लामहमूद फ़िक्रो तरद्दुद से घिरे रहते हैं और दुन्यवी मौजूआत का लुत्फ़ उठाने में लगे हुए 'वे सिर्फ़ इतनी ही नशात है'– ऐसा मानते हैं। उनकी इतनी ही तस्लीमशुदगी होती है कि जितना हो सके ऐशो-इश्रत के सामानों इकट्ठा करो, इसके इलावः कुछ भी नहीं है।

आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः।
ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसञ्चयान्।।१२।।

उम्मीद के सैकड़ों फाँसी के फन्दों से (एक फाँसी के फंदः से लोग मर जाते हैं, यहाँ सैकड़ों फाँसी के फन्दों से) बँधे हुए, ख़्वाहिश-गुस्सः के हामिल, ऐशो-इश्रत को हासिल करने के लिए वे ग़ैरवाज़िब तरीक़ः से दौलत वग़ैरः बहुत से सामानों को इकट्ठा करने की कोशिश करते हैं। लिहाज़ा दौलत के लिए वे दिन-रात ग़ैरसमाजी (जो समाज के लिए तक़्लीफदेह है) क़दम उठाया करते हैं। आगे फ़र्माते हैं-

इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम्।
इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम्।।१३।।

वे सोचते हैं कि मैंने आज यह हासिल किया है, इस तमन्ना को पूरी करूँगा, मेरे पास इतनी दौलत है और फिर कभी इतनी हो जायेगी।

असौ मया हतः शत्रुर्हनिष्ये चापरानपि।
ईश्वरोऽहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान्सुखी।।१४।।

वह दुश्मन मेरे ज़रीअः मारा गया और दूसरे दुश्मनों को भी मैं मारूँगा। मैं ही पर्वरेआ'ला और आयो-ताब का सारिफ़ हूँ। मैं ही कामयाबियों से मुज़ैयन, बहादुर और बामसर्रत हूँ।

आढ्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया।
यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिताः।।१५।।

मैं बहुत बड़ा दौलतमंद और बड़े ख़ानदान वाला हूँ। मेरे बराबर दूसरा कौन है? मैं यग करूँगा, मैं सदक़ः दूँगा, मुझे खुशी होगी - इस तरह की जहालत से वे ख़ास फ़िरेफ़्तगी में रहते हैं। क्या यग और सदक़ः भी जहालत है? इस पर श्लोक सत्रह में साफ़ ज़ाहिर किया है। इतने पर भी वे रुकते नहीं बल्कि तमाम ग़लतफ़हमियों के शिकार रहते हैं। इस पर फ़र्माते हैं-

अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः।
प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ।।१६।।

तमाम तरह से गुमगस्तगी के शिकार हुए तबीअ़तवाले, फ़िरेफ़्तगी के जाल में फँसे हुए, दुन्यवी ऐशो-इश्रत में बेहद डूबे हुए वे शैतानी ख़स्लत वाले इंसान नापाक दोज़ख़ में गिरते हैं। आगे श्रीकृष्ण ख़ुद बतायेंगे कि दोज़ख़ क्या है?

आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः।
यजन्ते नामयज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम्।।१७।।

ख़ुद-ब-ख़ुद को ही अफ़्ज़ल मानने वाले, दौलत और इज़्ज़त के नशें में चूर होकर वे घमण्डी इंसान शरीअ़त के तरीक़ों से ख़ाली सिर्फ़ नाम भर को यगों के ज़रीअः ढोंग के साथ यग करते हैं। क्या वही यग करते हैं, जैसा श्रीकृष्ण ने बताया है? नहीं, उस तरीक़ः को छोड़कर करते हैं, क्योंकि तरीक़ः जोग के मालिक ने ख़ुद बताया है (बाब ४/२४-३३ और बाब ६/१०-१७)।

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः।
मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः।।१८।।

वे दूसरों की मज़म्मत करने वाले, तकब्बुर, ताक़त, ग़ुरूर, ख़्वाहिश और ग़ुस्सः के हामिल इंसान अपने और दूसरों के जिस्म में मौजूद मुझ आलमुलग़ैब क़ादिरे-मुत्लक़ से अदावत रखने वाले हैं। शरीअ़त के तरीक़ः के मुताबिक़ रूहेमुत्लक़ की याद करना एक यग है। जो इस तरीक़ः को तर्क कर महज़ नाम का यग करते हैं, यग के नाम पर कुछ न कुछ करते ही रहते हैं, वे अपने और दूसरे के जिस्म में मौजूद मुझ मा'बूद से अदावत करने वाले हैं। लोग अदावत करते ही रहते हैं और बच भी जाते हैं, क्या ये भी बच जायेंगे? इस पर कहते हैं- नहीं,

तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान्।
क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु।।१९।।

मुझसे अदावत करने वाले उन गुनाहगारों, संगदिल कमीनों को मैं दुन्या में मुसल्सल तौर पर शैतानी योनियों में ही गिराता हूँ। जो शरीअ़त के तरीक़ों को तर्क कर यग करते हैं, वे गुनाहों की योनियों वाले हैं, वहीं इंसानों में बदज़ात हैं, इन्हीं को बदकिर्दार कहा गया। दूसरा कोई बदज़ात नहीं है। पीछे कहा था, ऐसे बदज़ातो को मैं जहन्नुम रशीद करता हूँ। उसी को यहाँ कहते हैं कि उन्हें हमेशः रहने वाली शैतानी योनियों में ढकेलता हूँ। यही जहन्नुम है। आम क़ैदख़ानः की तक़्लीफ़ ख़ौफ़नाक होती है और यहाँ मुसल्सल शैतानी योनियों में गिरने का सिल्सिलः कितना तक़्लीफ़देह है। लिहाज़ा रूहानी दौलत के लिए कोशाँ रहना चाहिए।

आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि।
मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम्।।२०।।

कौन्तेय! जाहिल इंसान तमाम जनमों तक शैतानी योनि को हासिल करने वाले मुझे न हासिल कर, पहले से भी ज़ियादः बदअंजाम को हासिल करते हैं जिसका नाम

जहन्नुम है। अब देखें, जहन्नुम का मख़्रज क्या है?

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः।
कामः क्रोधस्तथालोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत्।।२१।।

ख़्वाहिश, गुस्सः और लालच - ये तीन तरह के जहन्नुम के अस्ल दरवाज़े हैं। ये रूह को तबाह करने वाले, उसे तनज़्ज़ुल में ले जाने वाले हैं। लिहाज़ा इन तीनों को तर्क कर देना चाहिए। इन्हीं तीनों की बुन्याद पर दुन्यवी दौलत टिकी हुई है। इन्हें तर्क करने से फ़ाइदः?

एतैर्विमुक्तः कौन्तेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः।
आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम्।।२२।।

कौन्तेय! जहन्नुम के इन तीनों दरवाज़ों से आज़ाद हुआ इंसान अपने फ़लाहे आ'ला के लिए अमल कर पाता है, जिससे वह आ'ला नजात या'नी मुझे हासिल करता। इन तीनों उयूब को तर्क करने पर ही इंसान मुऐयनः अमल करता है, जिसका नतीजः आ'ला शरफ़ है।

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्।।२३।।

जो इंसान मज़्कूरएबाला शरीअ़त के तरीक़ः को तर्क कर [(वह शरीअ़त कोई दूसरी नहीं, **'इति गुह्यतमं शास्त्रम्'** (बेहद बसीग़-ए-राज़ शरीअ़त) (बाब १५/२०)- गीता ख़ुद में मुकम्मल शरीअ़त है, **'इदमुक्तं मयानघ'** (यह मेरे ज़रीअ़ पाक कही गयी) जिसे ख़ुद श्रीकृष्ण ने बताया है, उस तरीक़ः को तर्क कर)] अपनी मर्ज़ी से बरताव करता है, उसे न कामयाबी मिलती है, न आ'ला नजात और न सुकून ही हासिल करता है।

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि।।२४।।

लिहाज़ा अर्जुन! तेरा 'क्या फ़र्ज़ है, और क्या फ़र्ज़ नहीं है' के इन्तिज़ाम में कि मैं क्या करूँ, क्या न करूँ? इसके इंतिज़ाम में शरीअ़त ही एक मशअलेराह है। ऐसा समझकर शरीअ़त के तरीक़ः से मुऐय्यन किये हुए अमल को ही तेरे ज़रीअः किया जाना लाज़िमी है।

बाब तीन में भी जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने **'नियतं कुरु कर्म त्वम्'** (तू

मुऐयनः अमल कर)- मुऐयनः अमल पर ज़ोर दिया और बताया कि यग का तरीक़-ए-कार ही वह मुऐयनः अमल है और वह यग इबादत के तरीक़-ए-ख़ास की अक्कासी है, जो मन को पूरी तरह क़ाबू में करके दाइमी मा'बूद में दाख़िलः दिलाता है। यहाँ उन्होंने बताया कि ख़्वाहिश, गुस्सः और लालच जहन्नुम के तीन ख़ास दरवाज़े हैं। इन तीनों को तर्क कर देने पर ही उस अमल की (मुऐयनः अमल की) शुरुआत होती है, जिसे मैंने बारहा कहा जो आ'ला शरफ़ और फ़लाहे-आ'ला दिलाने वाला बरताव है। बाहर दुन्यवी कामों में जो जितना ही मश्गूल है, उतना ही ज़ियादः ख़्वाहिश, गुस्सः और लालच उसके पास सजा-सजाया मिलता है। अमल कोई ऐसी चीज़ है कि ख़्वाहिश, गुस्सः और लालच को तर्क कर देने पर ही उसमें दाखिलः मिलता है। अमल बरताव में ढल जाता है। जो उस तरीक़ः को तर्क कर अपनी मर्ज़ी से बरताव करता है, उसके लिए सुकून का हुसूल या आ'ला नजात कुछ भी नहीं है। अब फ़र्ज़ और नाफ़र्ज़ के इंतिज़ाम में शरीअ़त ही वाहिद सनद है। लिहाज़ा शरीअ़त के तरीक़ः के ही मुताबिक़ तेरा अमल करना मुनासिब है और वह शरीअ़त है 'गीता'।

मग़्ज़े सुख़न :-

इस बाब की इब्तिदा में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने रूहानी दौलत का तफ़्सील के साथ बयान किया जिसमें तसव्वुर की हालत, सब कुछ की सुपुर्दगी, बातिनी के साथ तहारत, नफ़्सकुशी, मन पर क़ाबू, शक्ल की याद दिलाने वाला मुतालअः, यग के लिए कोशिश, मन के साथ हवास को तपाना, गुस्सः न करना, तबीअ़त का सुकून काम करना वग़ैरः छब्बीस पहचानें बतायीं; जो सबकी सब तो मा'बूद के क़रीब पहुँचे हुए जोग की रियाज़त में लगे किसी रियाज़तकश में ही मुम्किन हैं। ज़ुज़्बी तौर से सबके अन्दर हैं।

उसके बा'द उन्होंने दुन्यवी दौलत में ख़ास तौर पर चार-छः उयूब का नाम लिया। जैसे- तकब्बुर, गुरूर, सख़्ती, जहालत वग़ैरः और आख़िर में फैसलः दिया कि अर्जुन! रूहानी दौलत तो **'विमोक्षाय'-** मुकम्मल नजात के लिए है, आ'ला मर्तबः के हुसूल के लिए है और दुन्यवी दौलत बन्दिश और तनज़्ज़ुली के लिए है। अर्जुन! तू ग़म न कर; क्योंकि तुझे रूहानी दौलत हासिल है।

ये दौलतें होती कहाँ हैं? उन्होंने बताया कि इस दुन्या में इंसानों के ख़साइल दो तरह के होते हैं- देवताओं की तरह और शैतानों की तरह। जब रूहानी दौलत की ज़ियादती होती है, तो इंसान देवताओं जैसा होता है और जब दुन्यवी दौलत की

ज़ियादती होती है, तो इंसान शैतानों जैसा है। दुन्या में इंसानों की बस दो ही ज़ातें हैं; चाहे वह कहीं पैदा हुआ हो, कुछ भी कहलाता हो।

उसके बा'द उन्होंने शैतानी ख़स्लत वाले इंसानों की निशानियों का तफ़्सील से बयान किया। दुन्यवी दौलत का हामिल इंसान फ़र्ज़े-अमल में लगना नहीं जानता और जो फ़र्ज़ नहीं है, उन ग़ैरफ़रीज़ः अमल से अलग होना नहीं जानता। वह अमल में जब लगा ही नहीं तो उसमें न सदाक़त होती है, न तहारत और न बरताव ही होता है। उसकी सोच में यह दुन्या पनाह से ख़ाली, बिला मा'बूद के अपने आप तवालुदो तनासुल से पैदा हुई है। लिहाज़ा सिर्फ़ ऐशो-इश्रत के लिए है। इससे आगे क्या है? यह सोच श्रीकृष्ण के दौर में भी थी। हमेशः रही है। सिर्फ़ 'चार्वाक' (एक लामज़्हब फ़लसफ़ी) ने कहा हो, ऐसी बात नहीं है। जब तक लोगों के दिलो-दिमाग़ में रूहानी और दुन्यवी दौलत का उतार-चढ़ाव है, तब तक यह सोच रहेगी। श्रीकृष्ण कहते हैं- वे कमअक़्ल संगदिल इंसान सबको नुक़्सान पहुँचाने के लिए ही दुन्या में पैदा होते हैं। वे कहते हैं- मेरे ज़रीअः यह दुश्मन मारा गया, उसे मारूँगा। इस तरह अर्जुन! ख़्वाहिश और गुस्सः के वश में वे इंसान दुश्मनों को नहीं मारते, बल्कि ख़ुद और दूसरों के अज्साम में मौजूद मुझ रूहेमुत्लक़ से अदावत रखने वाले होते हैं। तो क्या अर्जुन ने अह्द करके जयद्रथ वग़ैरः को मारा? अगर मारता है, तो दुन्यवी दौलत वाला है, उस पर्वरेआ'ला से अदावत रखने वाला है; जबकि अर्जुन को श्रीकृष्ण ने साफ़ कहा कि तुझे रूहानी दौलत हासिल है, गद्यम मत कर। यहाँ भी साफ़ हुआ कि मा'बूद का मक़ाम सबके दिल की दुन्या में है। याद रखना चाहिए कि कोई तुझे मुसल्सल देख रहा है। लिहाज़ा हमेशः शरीअ़त में बताये गये तरीक़ः के मुताबिक़ ही बरताव करना चाहिए वर्नः सज़ा जरूर मिलेगी।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने फिर कहा कि शैतानी ख़स्लत वाले संगदिल इंसानों को मैं बार-बार जहन्नुम में गिराता हूँ। जहन्नुम की शक्ल क्या है? तो बताया, बार-बार नीच बदज़ात योनियों में गिरना एक दूसरे का मुतरादिफ़ है। यही जहन्नुम की शक्ल है। ख़्वाहिश, गुस्सः और लालच जहन्नुम के तीन अस्ल दरवाज़े हैं। इन तीनों पर ही दुन्यवी दौलत टिकी हुई है। इन तीनों को तर्क कर देने पर ही उस अमल की शुरुआत होती है, जिसे मैंने बार-बार बताया है। सांबित है कि अमल कोई ऐसी चीज़ है, जिसकी शुरुआत ख़्वाहिश, गुस्सः और लालच को तर्क कर देने पर ही होती है।

दुन्यवी कामों में, आबरू के साथ समाजी इन्तिज़ामात का फ़र्ज़ अदा करने में जो जितने मस्रूफ़ है, ख़्वाहिश, गुस्सः, लालच उनके पास उतने ही जियादः सजे-सजाये मिलते हैं। दरहक़ीक़त इन तीनों को तर्क कर देने पर ही आ'ला मा'बूद से निस्बत दिलाने वाले मुक़र्ररः आ'माल से मुनासबत होती है। लिहाज़ा मैं क्या करूँ, क्या न करूँ?, क्या फ़र्ज़ है, क्या फ़र्ज़ नहीं है? के इंतिज़ाम में शरीअ़त ही सनद है। कौन-सी शरीअ़त? यही गीता शरीअ़त (**किमन्यैः शास्त्रसंग्रहैः**) गीता से बड़ा दूसरा शास्त्र कौन है? लिहाज़ा इस शरीअ़त के ज़रीअः मुऐयन किये हुए ख़ास अमल (हक़ीक़ी अमल) को ही तू कर।

इस बाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने रूहानी और दुन्यवी दोनों दौलतों का तफ़्सील से बयान किया। उनका मक़ाम इंसानी-दिल को बताया। उनका समरः बताया। लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'दैवासुरसम्पद्विभागयोगो' नाम षोडशोऽध्यायः।।१६।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे-तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'दैवासुर सम्पद विभाग योग' (सिफ़ाते यज़्दाँ-ओ-अह्रमन जोग) नाम का सोलहवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'दैवासुरसम्पद्विभागयोगो' नाम षोडशोऽध्यायः।।१६।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'दैवासुर सम्पद विभाग योग' (सिफ़ाते यज्दाँ-ओ-अह्रमन जोग) नाम का सोलहवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ सप्तदशोऽध्यायः।।
(सत्रहवाँ बाब)

बाब सोलह के आख़िर में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने साफ़ तौर पर कहा कि ख़्वाहिश, गुस्सः और लालच को तर्क करने के बा'द ही अमल की शुरुआत होती है, जिसे मैंने बार-बार कहा है। जिस मुऐयनः अमल को किये बग़ैर न आराम, न कामयाबी और न आ'ला नजात ही हासिल होती है। इसवास्ते अब तेरे लिए 'क्या फ़र्ज़ है और क्या फर्ज़ नहीं है' के इन्तिज़ाम में कि 'क्या करूँ, क्या न करूँ' इसके मुतअल्लिक़ शरीअ़त ही सुबूत है। कोई दूसरी शरीअ़त नहीं बल्कि **'इति गुह्यतमं शास्त्रमिदम्'** (यह राज़ भरी वाहिद शरीअ़त है) गीता ख़ुद शरीअ़त है। दूसरे शराए' भी हैं; लेकिन यहाँ इसी गीता शरीअ़त पर नज़र रखें, दूसरे की तलाश न करने लगें। दूसरी जगह तलाश करेंगे तो यह सिल्सिलःबन्दी नहीं मिलेगी लिहाज़ा भटक जायेंगे।

इस पर अर्जुन ने सवाल खड़ा किया कि, बन्दःपर्वर! जो लोग शरीअ़त के तरीक़ः को तर्क कर पूरी अक़ीदत के साथ **'यजन्ते'**- यग करते हैं, उनका अंजाम कैसा है? मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः या मलकाते मज़मूम वाला है? क्योंकि पहले अर्जुन ने सुना था कि चाहे आप मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः या मलकाते मज़मूम के हामिल हों, जब तक सिफ़ात मौजूद हैं, किसी न किसी शक्ल (योनी) की ही वज्ह होते हैं, लिहाज़ा पेशक़र्दः बाब की इब्तिदा में ही उसने सवाल खड़ा किया-

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला)-

ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्वमाहो रजस्तमः।।१।।

ऐ श्रीकृष्ण! जो इंसान शरीअ़त का तरीक़ः तर्ककर अक़ीदत के साथ यग करते हैं, उनका अंजाम कौन-सा है? मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः या मलकाते मज़मूम वाला है? यग में देवता-यक्ष-जानदार, वग़ैरः सभी आ जाते हैं।

श्रीभगवानुवाच (श्री भगवान बोले) -

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा।
सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु।।२।।

बाब दो में जोग के मालिक ने बताया था कि अर्जुन! इस जोग में मुऐयनः अमल एक ही है। जाहिलों की अक़्ल बेशुमार शाखों वाली होती है लिहाज़ा वे बेशुमार तरीक़ः का फ़ैलाव कर लेते हैं, दिखावटी आरास्तः ज़बान में उसका इज़्हार भी करते हैं। उनकी बातों का असर जिनकी तबीअ़त पर पड़ता है, अर्जुन! उनकी भी अक़्ल गुम हो जाती है न कि कुछ हासिल करते हैं। ठीक इसी को यहाँ पर भी दुबारः कहा गया है, कि जो **'शास्त्रविधिमुत्सृज्य'**- शरीअ़त के तरीक़ः को तर्क कर याद करते हैं, उनकी अक़ीदत भी तीन तरह की होती है।

इस पर श्रीकृष्ण ने कहा- इंसान की आदत से पैदा हुई वह अक़ीदत मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः व मलकाते मज़मूम से मुज़ैयन - ऐसे तीन तरह की होती है, उसे तू मुझसे सुन। इंसान के दिल में यह अक़ीदत मुसल्सल तौर पर क़ाइम है।

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः।।३।।

ऐ भारत! सभी इंसानों की अक़ीदत उनकी तबीअ़त के ख़साइल के मुताबिक़ होती है। यह इंसान अक़ीदतमन्द है लिहाज़ा जो इंसान जैसी अक़ीदतवाला है, वह ख़ुद भी वही है। आमतौर से लोग पूछते हैं- मैं कौन हूँ? कोई कहता है, मैं तो रूह हूँ; लेकिन नहीं, यहाँ जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं कि जैसी अक़ीदत, जैसी ख़स्लत, वैसा इंसान।

गीता इल्मे-रियाज़त है। वली पतंजलि भी जोगी थे। उनका जोग का फ़ल्सफ़ः (योगदर्शन) है। जोग है क्या? उन्होंने बताया **'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः' (योगदर्शन, १/२)**- तबीअ़त के कारोबार का पूरी तरह रुक जाना जोग है। किसी ने मशक़्क़त करके रोक ही लिया तो फ़ाइदः क्या है? **'तदा द्रष्टुः स्त्ररूपेऽवस्थानम्' (योगदर्शन, १/३)**- उस वक़्त यह नाज़िर ज़ीरूह अपनी ही हक़ीक़ी शक्ल में क़ाइम हो जाती है। क्या क़ाइम होने से पहले यह दाग़दार थी? पतंजलि कहते हैं- **'वृत्तिसारूप्यमितरत्र' (योगदर्शन, १/४)**- दूसरे वक़्त में जैसी ख़स्लत की शक्ल है वैसा ही नाज़िर है। यहाँ जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं- यह इंसान अक़ीदत है, अक़ीदतमंद से लबरेज़ है। कहीं न कहीं अक़ीदत ज़रूर होगी और जैसी अक़ीदत वाला है, वह ख़ुद भी वही

है। जैसी ख़स्लत, वैसा इंसान। अब तीनों तरह के अक़ाइद को तक़्सीम करते हैं-

यजन्ते सात्त्विका देवान्यक्षरक्षांसि राजसाः।
प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः।।४।।

उनमें से मलकाते फ़ाज़िलः के हामिल इंसान देवताओं को मलकाते रदीयः के हामिल इंसान यक्ष और देवों (राक्षसों) को और मलकाते मज़मूम के हामिल इंसान आसेब और शैतानों की इबादत करते हैं। वे इबादत में बेतकान मशक़्क़त भी करते हैं।

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः।
दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः।।५।।

वे इंसान शरीअ़त के तरीक़ः से ख़ाली बेहद तख़य्युलाती (ख़याली तरीकों की तख़्लीक कर), रियाज़त की रियाज़ करते हैं, तकब्बुर और ग़ुरूर के हामिल, ख़्वाहिश और रग़बत की डोर से बँधे हुए-

कर्शयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः।
मां चैवान्तःशरीरस्थं तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान्।।६।।

वे जिस्म की शक्ल में मौजूद तमाम जानदारों को और बातिन में मौजूद मुझ आलिमुलग़ैब को भी कमज़ोर करने वाले हैं या'नी नातवाँ करने वाले हैं। रूह दुन्यवी दरारों में फँसकर उयूब से कमज़ोर और यग के वसीलों से मज़्बूत होती है। उन जाहिलों (बेहिस लोगों) को यक़ीनी तौर पर तू शैतान जान या'नी वे सबके सब शैतान हैं। सवाल पूरा हुआ।

शरीअ़त के तरीक़ः को तर्क कर याद करनेवाले मलकाते फ़ाज़िलः के हामिल इंसान देवताओं की, मलकाते रदीयः के हामिल यक्ष और देवों की और मलकाते मज़मूम के हामिल इंसान आसेब की इबादत करते हैं। सिर्फ़ इबादत ही नहीं, रियाज़त के लिए सख़्त मशक़्क़त भी करते हैं; लेकिन अर्जुन! जिस्मानी शक्ल से जानदारों को और आलिमुलग़ैब शक्ल से मौजूद मुझ मा'बूद को कमज़ोर करने वाले हैं, मुझसे दूरी पैदा करते हैं, न कि इबादत करते हैं। उनको तू शैतान जान या'नी देवताओं की इबादत करने वाले भी शैतान ही हैं। इससे ज़ियादः कोई क्या कहेगा? लिहाज़ा जिसके ये सभी मह्ज़ हिस्से हैं, उन वाहिद मा'बूद को याद करें। इसी बात पर आ'ला जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बार-बार ज़ोर दिया है।

आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः।
यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमं शृणु।।७।।

अर्जुन! जैसे अक़ीदत तीन तरह की होती है, वैसे ही सबको अपनी-अपनी ख़स्लत के मुताबिक़ ग़िज़ा भी तीन तरह की पसंद होती है और वैसे ही यग, रियाज़त और सदक़ः भी तीन-तीन तरह के होते हैं। उनकी किस्मों के बारे में तू मुझसे सुन। पहले पेश है ख़ुराक-

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः ।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः।।८।।

उम्र, अक़्ल, ताक़त, तन्दुरुस्ती, आराम और महब्बत का इज़ाफ़ः करने वाली लज़ीज़ चिकनी और क़ाइम रहने वाले और ख़स्लत से ही दिल को पसन्द आने वाली ख़ाने की चीज़ें मलकाते फ़ाज़िलः के हामिल इंसान को पसंद आती हैं। जोग के मालिक श्रीकृष्ण के मुताबिक़ ख़स्लत से दिल को पसंद आने वाली, ताक़त, तन्दुरूस्ती, अक़्ल और उम्र बढ़ाने वाली ख़ाने की चीज़ ही सालेह है। जो ख़ुराक सालेह है, वही सालेह इंसान को पसन्द आती है। इससे साफ़ ज़ाहिर हो जाता है कि कोई भी ख़ुराक मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः या मलकाते मज़मूम वाली नहीं होती। उनका इस्ते'माल मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः या मलकाते मज़मूम वाला हुआ करता है। न दूध मलकाते फ़ाज़िलः वाला है, न प्याज मलकाते रदीयः और न लहसुन मलकाते मज़मूम से मुज़य्यन है।

जहाँ तक ताक़त, अक़्ल, तन्दुरुस्ती और दिल को पसंद आने का सवाल है, तो दुन्या भर में इंसानों को अपनी-अपनी ख़स्लत, माहौल और हालात के मुताबिक़ मुख़्तलिफ़ ख़ाने की चीज़ें पसंद होती हैं। जैसे- बंगाली और मद्रासियों को चावल पसंद होता है और पंजाबियों को नान (रोटी)। एक तरफ़ तो अरब के बाशिन्दों को दुम्बा, चीन वालों को मेढक तो दूसरी तरफ़ ध्रुव जैसे ठंडे सूबों में गोश्त के बग़ैर गुज़ारा नहीं है। रूस और मंगोलिया के अस्ल बाशिन्दे ख़ुराक में घोड़े का इस्ते'माल करते हैं, यूरोप में रहने वाले गाय और सूअर दोनों खाते हैं फिर भी इल्म, अक़्ल के इज़ाफ़ः और तरक़्क़ी में अमेरिका और यूरोप के रहने वाले अव्वल दर्जः में शुमार किये जाते हैं।

गीता के मुताबिक़ लज़ीज़ चिकनी और टिकी रहने वाली ख़ाने की चीज़ सालेह है। लम्बी उम्र, हस्बे-ज़रूरत, ताक़त और अक़्ल बढ़ाने वाली, सेहतमंद खाने की चीज़

सालेह है। ख़स्लत के मुताबिक़ दिल को पसंद आने वाली खाने की चीज़ सालेह है। लिहाज़ा कहीं किसी ख़ाने की चीज़ को कमोबेश नहीं करना है। हालात, माहौल और मुल्की-मुनासबत के मुताबिक़ जो खाने की चीज़ मिज़ाज को पसंद आये और जीने के लिए तक़्वीयत अता करे, वही सालेह है। कोई खाने की चीज़ मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः या मलकाते मज़मूम के ता'सीर वाली नहीं होती, उसका इस्ते'माल मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः ख़्वाह मलकाते मज़मूम वाला होता है।

इसी मुताबक़त के लिए जो लोग घर-परिवार को तर्क कर सिर्फ़ मा'बूद की इबादत में डूबे हुए हैं, तर्के दुन्या की हालत (संन्यास आश्रम) में हैं, उनके लिए गोश्त और शराब मत्रूक है; क्योंकि तज्रिबः में देखा गया है कि ये चीज़ें रूहानी रास्ते के बरख़िलाफ़ रुज्हान पैदा करती है। लिहाज़ा इनके ज़रीअः रियाज़त के राह से भटकने की ज़ियादः गुंजाइश है। जो तन्हाई की ज़िंदगी जीने वाले तारीकुद्दुन्या हैं, उनके लिए जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बाब छः में ख़ुराक के लिए एक उसूल दिया कि **'युक्ताहार विहारस्य'**-(मुनासिब ख़ाना-पीना और तफ़्रीह), इसी के मद्देनज़र बरताव करना चाहिए। जो यादेइलाही में मददगार है, उतनी (वही) ख़ुराक लेनी चाहिए।

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ।
आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः।।९।।

तल्ख़, खट्टी, ज़ियादः नमकीन, काफी गर्म, तीखी, रूखी, जलन पैदा करने वाली और तक़्लीफ़देह ग़म व बीमारियों को जनम देने वाली ख़ुराक मलकाते रदीयः के हामिल इंसान को पसंद होती है।

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम्।।१०।।

जो खाना एक पहर (तीन घण्टे) से जियादः पहले का बना हुआ है, **'गतरसं'**- बेलज़्ज़त, बदबूदार, बासी, जूठा और नापाक भी है, वह मलकाते मज़मूम के हामिल इंसान को पसंद होता है। सवाल पूरा हुआ। अब पेश है यग-

अफलाकाङ्क्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते।
यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः।।११।।

जो यग **'विधिदृष्ट'**- शरीअ़त के तरीक़ः से मुकर्रर किया गया है (जैसा पहले बाब तीन में यग का नाम लिया, बाब चार में यग की शक्ल बतायी कि बहुत से

जोगी जान को रियाह में और रियाह को जान में हवन करते हैं। जान-रियाह की हरकत पर क़ाबू पाकर साँस के रफ़्तार के साकिन कर लेते हैं, एहतियात की आग में हवन करते हैं। इस तरह यग के चौदह ज़ीने बताये, जो सबके सब मा'बूद तक की दूरी तय करा देने वाले एक ही अमल के ऊँचे-नीचे ज़ीने हैं। मुख़्तसर में यग ख़ुसूसी ग़ैरोफ़िक्र के तरीक़-ए-कार की अक्कासी है, जिसका आख़िरी नतीज़ः अबदी मा'बूद में दाख़िलः है, जिसका तरीक़ः इस शरीअ़त में बताया गया है।)। उसी शरीअ़त के तरीक़ः पर फ़िर ज़ोर देते हैं कि अर्जुन! शरीअ़त के तरीक़ः से मुऐय्यन किये हुए जिसे करना ही फ़र्ज़ है और जो मन पर बंदिश रखने वाला है, जो समरः को न चाहने वाले इंसानों के ज़रीअः किया जाता है, वह यग सालेह है।

अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत्।
इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम्।।१२।।

ऐ अर्जुन! जो यग महज़ ख़ुद सिताइश के लिए ही हो या समरः को मक़्सद बनाकर किया जाता है, उसे मलकाते रदीयः का यग समझ। यह कारकुन यग का तरीक़ः जानता है; लेकिन ख़ुद सिताइश या समरः को मक़्सद बनाकर करता है कि फ़लाँ चीज़ मिलेगी और लोग देखें कि यग करता है, ता'रीफ़ करेंगे, ऐसा यग करने वाला दरहक़ीक़त मलकाते रदीयः का हामिल है। अब मलकाते मज़मूम वाले यग की शक्ल बताते हैं-

विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम्।
श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते।।१३।।

जो यग शरीअ़त के तरीक़ः से ख़ाली है, जो अनाज (मा'बूद) की तख़्लीक़ कर सकने में क़ासिर है, मन को भीतर क़ाबू करने की सलाहीयत नहीं रखता है, नज़्र या'नी अपना सारा कुछ सुपुर्द करने से आरी है और जो अक़ीदत से ख़ाली है, ऐसा यग मलकाते मज़मूम वाला यग कहा जाता है। ऐसा इंसान हक़ीक़ी यग को जानता ही नहीं। अब पेश है रियाज़त -

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते।।१४।।

आ'ला मा'बूद रूहेमुत्लक़ शिर्क पर फ़त्ह हासिल करने वाले (द्विज), मुर्शिद और आलिम हज़्रात की इबादत, पाकीज़गी, सीधापन, रहबानियत और अदमतशद्दुद

जिस्म से तअल्लुक़ रखने वाली रियाज़त कही जाती है। जिस्म हमेशः ख़्वाहिशात की तरफ़ बहकता है, उसे बातिन की मज़्कूरएबाला ख़साइल के मुताबिक़ तपाना जिस्मानी रियाज़त है।

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते।।१५।।

बेक़रारी न पैदा करने वाली, अज़ीज़, ख़ैरख़्वाह और हक़ बोलने व मा'बूद में दाख़िलः दिलाने वाली शराए' के ग़ौरोफ़िक्र की मश्क़, नाम का विर्दः यह रियाज़ते ज़बाँ कही जाती है। ज़बान दुन्यवी मौजूआत की जानिब माइल ख़यालात का भी इज़्हार करती रहती है, उस तरफ़ से समेटकर, हक़आ'ला की जानिब लगाना ज़बान से वाबस्तः रियाज़त है। अब मन से तअल्लुक़ रखने वाली रियाज़त पर नज़र डालें-

मनःप्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः।
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते।।१६।।

मन की खुशी, नर्मदिली, ख़ामोशी या'नी मा'बूद के इलावः दूसरे मौजूआत की याद भी न हो, मन पर क़ाबू, बातिन की पूरी तहारत- यह मन से तअल्लुक़ रखने वाली रियाज़त कही जाती है। मज़्कूरएबाला तीनों (जिस्म, जबान और मन) की रियाज़त मिलाकर एक सालेह रियाज़त है।

श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरैः।
अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते।।१७।।

समरः की चाहत के बग़ैर या'नी बेग़रज़ अमल के हामिल इंसानों के ज़रीअः आ'ला अक़ीदत के साथ की हुई मज़्कूरएबाला तीनों रियाज़तों को मिलाकर सालेह रियाज़त कही जाती है। अब पेश है मलकाते रदीयः से तअल्लुक़ रखने वाली रियाज़त-

सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत्।
क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमध्रुवम्।।१८।।

जो रियाज़त ख़ातिरदारी, इज़्ज़त और इबादत के लिए या सिर्फ़ रियाकारी से ही की जाती है, वह ग़ैर यक़ीनी और शोख़ समरः देने वाली रियाज़त मलकाते रदीयः से तअल्लुक़ रखने वाली कही गयी है।

मूढग्राहेणात्मनो यत्पीडया क्रियते तपः।
परस्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम्।।१९।।

जो रियाज़त जहालत के साथ हठ से मन, ज़बान और जिस्मानी तक़्लीफ़ के साथ या दूसरे को नुक़्सान पहुँचाने के लिए बदले के ख़याल से की जाती है, वह रियाज़त मलकाते मज़मूम वाली कही गयी है।

इस तरह सालेह रियाज़त में जिस्म, मन और ज़बान को मह्ज़ मा'बूद के मुताबिक़ ढालना है। मलकाते रदीयः से तअल्लुक़ रखने वाली रियाज़त में रियाज़त का तरीक़ः वही है; लेकिन ख़ुद सिताइश, इज़्ज़त की ख़्वाहिश से रियाज़त करते हैं। आमतौर से मर्दे-कामिल लोग घर-बार तर्क करने के बा'द भी इस ऐब के शिकार हो जाते हैं और तीसरी मलकाते मज़मूम से तअल्लुक़ रखने वाली रियाज़त ग़ैर मुऐयनः तरीक़ः से होती है, दूसरों को तक्लीफ़ पहुँचाने के नज़रीयः होती है। अब पेश है सदक़ः।

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे।
देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम्।।२०।।

'सदक़ः देना ही फर्ज़ है'- इस ख़याल से जो सदक़ः मौक़ा'महल (वक़्त के मुताबिक़) और मुस्तहक़ शख़्स के मिलने पर बदले में एहसान का ख़याल न रखकर दिया जाता है, वह सदक़ः सालेह कहा गया है।

यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः।
दीयते च परिक्लिष्टं तद्दानं राजसं स्मृतम्।।२१।।

जो सदक़ः तक्लीफ़ के साथ (जो देते नहीं बनता लेकिन देना पड़ रहा है।) और बदले की उम्मीद से 'यह करूँगा तो यह मिलेगा' या समरः को मक़्सद बनाकर दिया जाता है, वह सदक़ः मलकाते रदीयः से तअल्लुक़ रखने वाला कहा गया है।

अदेशकाले यद्दानमपात्रेभ्यश्च दीयते।
असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम्।।२२।।

जो सदक़ः बिना ख़ातिरदारी किये या बेरुख़ी के साथ झिड़ककर नामुनासिब जगह और वक़्त में ग़ैर ज़रूरतमंदों को दिया जाता है, वह सदक़ः मलकाते मज़मूम वाला कहा गया है। 'काबिले एहतिराम महाराज जी' कहा करते थे- ''हो, नाअह्ल को सदक़ः देने से सख़ी बर्बाद हो जाता है।'' ठीक इसी तरह श्रीकृष्ण का क़ौल है कि सदक़ः देना ही फर्ज़ है। जगह व वक़्त और अह्ल के हासिल होने पर बदले में एहसान न चाहने की नीयत से फ़राग़ दिली के साथ दिया जाने वाला सदक़ः सालेह

है। मुश्क़िल से दिया जाने वाला, बदले में समरः की नीयत से दिया जाने वाला सदक़ः मलकाते रदीयः वाला सदक़ः है और बिला ख़ातिरदारी के झिड़कियों के साथ मौका'महल के बरख़िलाफ़ नाअह्ल को दिया जाने वाला सदक़ः मलकाते मज़मूम वाला है, लेकिन है सदक़ः ही; लेकिन जो घर-बार कुल-ख़ानदान वग़ैरः सबकी उंसीयत को तर्क कर वाहिद मा'बूद पर ही मुन्हसिर है, उसके लिए सदक़ः का उसूल इससे और ऊँचा है और वह है सब कुछ की सुपुर्दगी, सारी ख़्वाहिशात से अलग हटकर मन की सुपुर्दगी, जैसा कि श्रीकृष्ण का क़ौल है, **'मय्येव मन आधत्स्व'** (मेरे में ही मन लगाओ।) लिहाज़ा सदक़ः निहायत ज़रूरी है। अब पेश है ॐ, तत् और सत् की शक्ल -

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा।।२३।।

अर्जुन! ॐ, तत् और सत् - ऐसा तीन तरह का नाम **'ब्रह्मणः निर्देशः स्मृतः'** मा'बूद (ब्रह्म) की रहबरी करता है, याद दिलाता है, इशारः करता है और मा'बूद का मज़्हर है। उसी से **'पुरा'**- पहले (शुरू में) बर्हमन, वेद और यग वग़ैरः की तख़्लीक़ की गई है। या'नी बर्हमन, यग और वेद ॐ से पैदा होते हैं। इनका वुजूद जोग से है। ओम् के मुसल्सल ग़ौरोफ़िक्र से ही इनकी तख़्लीक है, और कोई तरीक़ः नहीं है।

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपःक्रियाः।
प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम्।।२४।।

लिहाज़ा हक़परस्त लोग मा'बूद के एहकाम को क़बूल करने वाले शरीअ़त के मुऐयनः तरीक़ः से यग, सदक़ः और रियाज़त के आ'माल का बरताव मुसल्सल 'ओम्' नाम को तलफ़्फ़ुज़ करके ही शुरू करते हैं, जिससे उस मा'बूद की याद ताज़ः हो जाय। अब 'तत्' लफ़्ज़ का इस्ते'माल बताते हैं-

तदित्यनभिसन्धाय फलं यज्ञतपःक्रियाः।
दानक्रियाश्च विविधाः क्रियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभिः।।२५।।

'तत्' या'नी वह (मा'बूद) ही हर जगह मौजूद है, इस ख़याल से समरः की ख़्वाहिश न करके शरीअ़त के ज़री बताये गये तमाम तरह के यग, रियाज़त, और सदक़ः के आ'माल आ'ला भलाई की ख़्वाहिश करने वाले इंसानों के ज़रीअः किये जाते हैं। तत् लफ़्ज़ मा'बूद के मुतअल्लिक़ ईसार की निशानी है। या'नी विर्द तो ओम् का कीजिए; यग, सदक़ः और रियाज़त के आ'माल उस मा'बूद पर मुन्हसिर होकर

करें। अब 'सत्' के इस्ते'माल का मक़ाम बताते हैं-

सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते।।२६।।

और सत्; जोग के मालिक ने बताया कि सत् है क्या? गीता की इब्तिदा में ही अर्जुन ने सवाल खड़ा किया था कि फ़र्ज़े-मंसबी ही दाइमी है, बरहक़ है, तो श्रीकृष्ण ने फ़र्माया- अर्जुन! तेरे अन्दर यह जहालत कहाँ से पैदा हो गयी? सत् (हक़) की तीनों दौर में कभी कमी नहीं होती, उसे मिटाया नहीं जा सकता और असत् (बातिल) का तीनों दौरों में वुजूद नहीं है, दरहकीक़त वह कौन-सी चीज़ है, जिसकी तीनों दौरों में कमी नहीं है? वह बातिल चीज़ है क्या, जिसका वुजूद नहीं? तो बताया- यह रूह ही हक़ है और दुन्या के सारे जानदारों के अज्साम फ़ानी हैं। रूह अबदी है, ग़ैरमर्ई है, दाइमी और लाफ़ानी है। यही आ'ला हक है।

यहाँ फ़र्माते हैं- 'सत्' (हक) ऐसे रूहेमुत्लक़ का यह नाम **'सद्भावे'**- हक़ के मुतअल्लिक़ एहसास में और नेक ख़याल में इस्ते'माल किया जाता है और ऐ पार्थ! जब मुऐयनः अमल सरापा, अच्छी तरह होने लगे, तब सत् (हक़) लफ़्ज़ का इस्ते'माल किया जाता है। सत् का मा'ना यह नहीं है कि ये चीज़ें हमारी हैं। जब जिस्म ही हमारा नहीं है, तो इसके इस्ते'माल में आने वाली चीज़ें हमारी कब है? यह 'सत्' नहीं है। 'सत्' का इस्ते'माल सिर्फ एक मा'ना में किया जाता है- नेक ख़याल में। 'रूह ही आ'ला हक़ीक़त है।' इस सदाक़त के मुतअल्लिक़ लगाव हो, उसे हासिल करने के लिए नेक ख़ुलूस हो और उसको हासिल कराने वाला अमल ठीक तरह से सादिर होने लगे, वहीं 'सत्' लफ़्ज़ का इस्ते'माल किया जाता है। इसी बात पर जोग के मालिक इससे आगे कहते हैं-

यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते।
कर्म चैव तदर्थीयं सदित्येवाभिधीयते।।२७।।

यग रियाज़त और सदक़ः करने में जो मक़ाम हासिल होता है, वह भी सत् है- ऐसा कहा जाता है। **'तदर्थीयम्'**- उस मा'बूद को हासिल करने के लिए किया जाने वाला अमल ही सत् है, ऐसा कहा जाता है। या'नी उस मा'बूद को हासिल कराने वाला अमल ही सत् है; यग, सदक़ः, रियाज़त तो इस अमल के तक्मीलः हैं। आख़िर में फ़ैसलः देते हुए कहते हैं कि इन सबके लिए अक़ीदत लाज़िमी है।

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत्।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह।।२८।।

ऐ पार्थ! बिला अक़ीदत के किया हुआ हवन, दिया हुआ सदक़ः, तपी हुई रियाज़त और जो कुछ भी किया हुआ अमल है, वह सब असत् (बातिल) है- ऐसा कहा जाता है। वह न तो इस दुन्या में और न आलमे-बाला में ही इफ़ादी है। लिहाज़ा ख़ुद सुपुर्दगी के साथ अक़ीदत बेहद ज़रूरी है।

मग़्ज़े सुख़न :-

बाब की इब्तिदा में ही अर्जुन ने सवाल किया कि, बन्दःपर्वर! जो शरीअ़त में बताये गये तरीक़ः को तर्क कर और अक़ीदत के साथ यग करते हैं (लोग आसेब दीगर-दीगर की इबादत करते ही रहते हैं) तो उनकी अक़ीदत कैसी है? मलकाते फ़ाज़िलः वाली है, मलकाते रदीयः वाली है या मलकाते मज़मूम वाली इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा, अर्जुन! यह इंसान अक़ीदत का पुतला है, कहीं न कहीं उसकी अक़ीदत होगी ही। जैसी अक़ीदत वैसा इंसान, जैसी ख़स्लत वैसा इंसान। उनकी वह अक़ीदत मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः और मलकाते मज़मूम वाली तीन तरह की होती हैं। मलकाते फ़ाज़िलः के अक़ीदतमंद देवताओं को, मलकाते रदीयः के अक़ीदतमंद यक्ष (जो शुह्रत, बहादुरी अता करे), देवों (जो हिफ़ाज़त कर सके, उसका पीछा करते हैं) और मलकाते मज़मूम के अक़ीदतमंद भूत-प्रेत (आसेब) परस्तार होते हैं। शरीअ़त के तरीक़ः से ख़ाली इन इबादतों के ज़रीअः ये तीनों तरह के अक़ीदतमंद जिस्म में मौजूद तमाम माद्दः या'नी अपने इरादों और दिल की दुन्या में मौजूद मुझ आलिमुलग़ैब को भी कमज़ोर करते हैं, न कि इबादत करते हैं। उन सबको यक़ीनी तौर पर तू शैतान जान या'नी आसेब, यक्ष, देव और देवताओं की इबादत करने वाला शैतान है।

देवताओं के मौजूअ को श्रीकृष्ण ने यहाँ तीसरी बार उठाया है। पहले बाब सात में उन्होंने कहा था कि- अर्जुन! ख़्वाहिशात ने जिनके इल्म का इग़्वा कर लिया है, वही फ़ासिदुलअक़्ल दूसरे देवताओं की इबादत करते हैं। दूसरी बार बाब नौ में उसी सवाल को दुहराते हुए कहा, जो दूसरे दूसरे देवताओं की इबादत करते हैं, वे भी मेरी ही इबादत करते हैं; लेकिन उनकी वह इबादत ग़ैरमुनासिब या'नी शरीअ़त में मुक़र्ररः तरीक़ः से अलग है, लिहाज़ा वे ख़त्म हो जाते हैं। यहाँ बाब सत्रह में

उन्हें दुन्यवी ख़स्लत वाला कहकर मुख़ातब किया। श्रीकृष्ण के अल्फ़ाज़ में एक मा'बूद की ही इबादत का उसूल है।

उसके बा'द जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने चार सवाल खड़ा किये- ख़ुराक (आहार), यग, रियाज़त और सदक़ः। ख़ुराक तीन तरह की होती हैं। सालेह इंसान को तो सेहत अता करने वाली, ख़स्लत के मुताबिक़ पसंद आने वाली, लज़ीज़ ख़ुराक पसंद होती है। मलकाते रदीयः के हामिल इंसान को तल्ख़, तीखी, गरम, चटपटी, मसालेदार, बीमारियों को बढ़ाने वाली ख़ुराक पसंद आती है। मलकाते मज़मूम के हामिल इंसान को जूठी, बासी और नापाक ख़ुराक पसन्द होती है।

शरीअ़त में बताये गये तरीक़ः से किये जाने वाले यग (जो इबादत के बातिनी अमल है) जो मन पर बंदिश लगाता है। समरः की उम्मीद से ख़ाली वह यग सालेह है। घमण्ड व ग़ुरूर को ज़ाहिर करने वाला और समरः के ख़याल से किया जाने वाला वही यग मलकाते रदीयः वाला है और शरीअ़त में बताये गये तरीक़ः से बिल्कुल अलग दुआ (मंत्र) सदक़ः और बग़ैर अक़ीदत से किया हुआ यग मलकाते मज़मूम वाला यग है।

आ'ला मा'बूद रूहेमुत्लक़ में दाख़िलः दिलाने वाली सारी सलाहीयतें जिनके अन्दर मौजूद हैं, उन मुर्शिदे-कामिल की इबादत, ख़िद्मत-गुज़ारी और बातिनी तौर से अदमतशद्दुद रहबानियत और तहारत की मुनासबत से जिस्म को तपाना जिस्मानी रियाज़त है। हक़, ख़ुशतर और इफ़ादी बात बोलना, रियाज़ते ज़बाँ है और मन को अमल में लगाकर रखना, मा'बूद के इलावः मौजूआत के ग़ैरोफ़िक्र में मन को ख़ामोश रखना मन से वाबस्तः रियाज़त है। मन, ज़बान और जिस्म तीनों को मिलाकर इस जानिब तपाना सालेह रियाज़त है। मलकाते रदीयः वाली रियाज़त में ख़्वाहिशात के साथ उसी को किया जाता है, जबकि मलकाते मज़मूम वाली रियाज़त शरीअ़त के तरीक़ः से अलग अपनी मर्ज़ी पर मुन्हसिर है।

अपना फर्ज़ मानकर मौका'महल और अह्ल का ख़याल करके अक़ीदत से दिया गया सदक़ः सालेह है। किसी फ़ाइदः की लालच में मुश्किल से दिया जाने वाला सदक़ः मलकाते रदीयः वाला है और झिड़ककर नाअह्ल को दिया जाने वाला सदक़ः मलकाते मज़मूम का हामिल है।

ओम्, तत् और सत् की शक्ल बताते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बयान किया कि ये नाम मा'बूद की याद दिलाते हैं। शरीअ़त के तरीक़ः से मुऐय्यन रियाज़त

सदक़ः और यग की इब्तिदा करने में ॐ का इस्ते'माल होता है और तक़्मिलः में ही या'नी पूरा होने के बा'द ही 'ओम्' पीछा छोड़ता है। 'तत्' का मा'ना है- वह रूहेमुत्लक़। उसके लिए वक़्फ़ होकर ही वह अमल सादिर होता है और जब अमल तसल्सुल के साथ होने लगे, तब 'सत्' का इस्ते'माल किया जाता है। यादे-इलाही ही 'सत्' है। 'सत्' के लिए ख़याल और नेक ख़ुलूस में ही 'सत्' का इस्ते'माल किया जाता है। मा'बूद से निस्बत दिलाने वाले अमल, यग, सदक़ः और रियाज़त के समरः में भी सत् का इस्ते'माल है और मा'बूद से निस्बत दिला देने वाला अमल यक़ीनी तौर पर सत् है; लेकिन इन सबके साथ अक़ीदत का होना लाज़िमी है। अक़ीदत से मुबर्रा होकर किया हुआ अमल, दिया हुआ सदकः, तपी हुई रियाज़त न इस जनम में इफ़ादः पहुँचाने वाली है, न अगले जनमों में ही। अक़ीदत का होना हर हालत में लाज़िमी है।

पूरे बाब में अक़ीदत पर रोशनी डाली गई और आख़िर में ओम्, तत् और सत् की मुफ़स्सल तफ़्सीर पेश की गई, जो गीता के श्लोकों में पहली बार आयी है, लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'ॐ तत्सत् श्रद्धात्रयविभागयोगो' नाम सप्तदशोऽध्यायः।।१७।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'ओम् तत्सत् श्रद्धात्रय विभाग योग' (अक़ीदते ओम्, तत्, सत् बाबे जुज़ जोग) नाम का सत्रहवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'ॐ तत्सत् श्रद्धात्रयविभागयोगो' नाम सप्तदशोऽध्यायः।।१७।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'ओम् तत्सत् श्रद्धात्रय विभाग योग' (अक़ीदते ओम्, तत्, सत् बाबे जुज़ जोग) नाम का सत्रहवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

।। श्री परमात्मने नमः।।

।। अथ अष्टादशोऽध्यायः।।
(अठारहवाँ बाब)

यह गीता का आख़िरी बाब है, जिसके निस्फ़े अव्वल में जोग के मालिक श्रीकृष्ण के ज़रीअः पेश किये गये मुख़्तलिफ़ सवालात का हल है और निस्फ़े आख़िर में 'गीता' का इख़्तिताम है कि गीता से फाइदः क्या है? सत्रहवें बाब में ख़ुराक, रियाज़त, यग, सदक़ः और अक़ीदत की तक़्सीम के साथ शक्ल बयान की गई, उसी हवालः में ईसार के अक़्साम के बयानात बाक़ी हैं। इंसान जो कुछ करता है, उसमें सबब कौन है?, कौन कराता है?, मा'बूद कराते हैं या कुद्रत?- यह सवाल पहले से ही खड़ा था, जिस पर इस बाब में फिर रोशनी डाली गयी। इसी तरह नस्ल की दर्जःबन्दी (वर्ण-व्यवस्था) का ज़िक्र हो चुका था। दुन्या में उसकी शक्ल की तह्क़ीक़ इस बाब में पेश है। आख़िर में गीता से मिलने वाली शौकतों पर रोशनी डाली गयी है।

गुज़श्तः बाब में मुख़्तलिफ़ मसाइल की तक़्सीम सुनकर अर्जुन ने ख़ुद एक सवाल खड़ा किया कि ईसार और तर्के दुन्या (संन्यास) को भी फ़र्दन-फ़र्दन बताइये।

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) -

संन्यासस्य महाबाहो तत्त्वमिच्छामि वेदितुम्।
त्यागस्य च हृषीकेश पृथक्केशिनिषूदन।।१।।

अर्जुन ने कहा- ऐ बाजू-ए-अज़ीम! ऐ दिल के मालिक! ऐ केशिनिषूदन! मैं तर्के-दुन्या और ईसार की हक़ीक़ी शक्ल को फ़र्दन-फ़र्दन जानना चाहता हूँ। मुकम्मल ईसार ही तर्के-दुन्या है, जहाँ तहैया व तअस्सुरात (संस्कारों) का भी ख़ातिमः है और इससे पहले रियाज़त की तक़्मिलः की ख़ातिर यके बा'द दीगरे लगाव का ईसार ही तर्के-दुन्या है। यहाँ दो सवालात हैं, पहला यह कि तर्के-दुन्या के उंसुर को जानना चाहता हूँ और दूसरा- ईसार के उंसुर को जानना चाहता हूँ। इस पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा-

श्रीभगवानुवाच (श्रीभगवान बोले) -

काम्यानां कर्मणां न्यासं संन्यासं कवयो विदुः।
सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः।।२।।

अर्जुन! कितने ही आलिम हज़्रात ख़्वाहिशात से मुज़य्यन आ'माल के ईसार को तर्के दुन्या कहते हैं और कितने ही साहिबे-फिक्र लोग तमामी आ'माल के नताइज के ईसार को तर्के दुन्या कहते हैं।

त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिणः।
यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमिति चापरे।।३।।

कई एक आलिम ऐसा कहते हैं कि सभी आ'माल ऐबशुदः हैं, लिहाज़ा तर्क कर देने के क़ाबिल हैं और दूसरे आलिम ऐसा कहते हैं कि युग, सदक़ः और रियाज़त तर्क करने के क़ाबिल नहीं हैं। इस तरह मुख़्तलिफ़ ख़यालात पेश करके जोग के मालिक अपना भी यक़ीनी नज़रीयः पेश करते हैं।

निश्चयं शृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम।
त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः सम्प्रकीर्तितः।।४।।

ऐ अर्जुन! उस ईसार के बारे में तू मेरा फैसलः सुन। ऐ अश्रफुल मख़्लूक़ वह ईसार तीन तरह का कहा गया है।

यज्ञदानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्।।५।।

यग, सदक़ः और रियाज़त ये तीन तरह के आ'माल तर्क करने के क़ाबिल नहीं हैं, इनका आ'माल तो लाज़िमी है; क्योंकि यग, सदक़ः और रियाज़त तीनों ही इंसानों को पाक करने वाली चीजें हैं।

श्रीकृष्ण ने चार मुरव्वज ख़्यालात का बयान किया। पहला ख़्वाहिशात से मुज़य्यन आ'माल का ईसार, दूसरा तमाम आ'माल के नताइज का ईसार, तीसरा ऐबशुदः होने की वजह से सभी आ'माल का ईसार और चौथा नज़रीयः था- यग, सदक़ः और रियाज़त तर्क करने के क़ाबिल नहीं हैं। उनमें से एक ख़याल के बारे में अपनी रज़ामन्दी का इज्हार करते हुए फ़र्माया कि अर्जुन! मेरा भी यह तयशुदः ख़याल है कि यग, सदक़ः और रियाज़त की शक्ल में सादिर होने वाला अमल तर्क करने के क़ाबिल नहीं है। इससे साबित है कि कृष्ण के दौर में भी मुख़्तलिफ़ ख़यालात

मुरव्विज थे, जिनमें एक हक़ीक़ी था। उस दौर में भी मुख़्तलिफ़ नज़रीयात थे, आज भी हैं। अज़ीम इंसान जब दुन्या में आता है, तो मुख़्तलिफ़ मसाइल और नज़रीयात के बीच में से बेहतरीन और भलाई करने वाले ख़याल को मुन्तख़ब करके सामने खड़ा कर देता है। हर एक अज़ीम इंसान ने यही किया है, श्रीकृष्ण ने भी यही किया। उन्होंने कोई नया रास्तः नहीं बताया बल्कि राइज मुख़्तलिफ़ ख़यालात के बीच हक़ीक़ी नज़रीयः की हिमायत करके उसे साफ़ ज़ाहिर कर दिया।

एतान्यपि तु कर्माणि सङ्ग त्यक्त्वा फलानि च।
कर्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम्।।६।।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण ज़ोर देकर कहते हैं- पार्थ! यग, सदक़ः और रियाज़त की शक्ल वाले अमल को रग़बत और समरः का तर्क कर ज़रूर करना चाहिए, यह मेरे ज़रिअः तयशुदः बेहतरीन ख़याल है। अब अर्जुन के सवाल के मुताबिक़ वे ईसार का तज्जियः करते हैं-

नियतस्य तु संन्यासः कर्मणो नोपपद्यते।
मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः।।७।।

ऐ अर्जुन! मुऐयनः अमल (श्रीकृष्ण के अल्फाज़ में मुऐयनः अमल एक ही है, यग का तरीक़-ए-कार। इस मुऐयन लफ़्ज़ को आठ-दस बार जोग के मालिक ने कहा। इस पर बारहा जोर दिया कि कहीं रियाज़तकश भटककर दूसरा न करने लगे), इस शरीअ़त के तरीक़ः से मुऐयनः अमल का तर्क करना मुनासिब नहीं। फ़िरेफ़्तगी के बिना पर ईसार करना मलकाते मज़मूम वाला ईसार कहा गया है। दुन्यवी मौजूआत वाली चीज़ों की रग़बत में फँसकर करने क़ाबिल अमल (तयशुदः अमल और मुऐयनः अमल एक दूसरे के तक़्मिलः हैं) का ईसार मलकाते मज़मूम वाला है। ऐसा इंसान **'अधः गच्छति'**- हशरातुलअर्ज़ तक बदज़ात शक्लों (योनियों) में जाता है, क्योंकि उसने यादे-इलाही के ख़साइल को तर्क कर दिया। अब मलकाते रदीयः वाले ईसार के बारे में बताते हैं-

या दुःखमित्येव यत्कर्म कायक्लेशभयात्त्यजेत्।
स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत्।।८।।

अमल को तक्लीफ़देह मानकर, जिस्मानी अज़ीयत के ख़ौफ़ से उसका ईसार करनेवाला इंसान मलकाते रदीयः वाले ईसार को करके भी ईसार के समरः को हासिल नहीं करता। जिससे यादे-इलाही का सिल्सिलः पूरा न हो सके और **'कायक्लेशभयात्'-**

इस ख़ौफ़ से अमल को तर्क कर दे कि जिस्मानी तक्लीफ़ होगी, उस इंसान का ईसार मलकाते रदीयः वाला है। उसे ईसार का नतीजः आ'ला सुकून हासिल नहीं होता, और-

कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन।
सङ्ग त्यक्त्वा फलं चैव स त्यागः सात्त्विको मतः।।९।।

ऐ अर्जुन! 'अमल करना फर्ज़ है'- ऐसा समझकर जो **'नियतम्'-** शरीअ़त के तरीक़ः से मुऐयनः किया हुआ अमल, सुह्बते असर और समरः को तर्क करके किया जाता है, वही सालेह ईसार है। लिहाज़ा मुऐयनः अमल करें और इसके इलावः जो कुछ है, उसको तर्क कर दें। यह मुऐयनः अमल भी क्या करते ही रहेंगे या कभी इसका भी ईसार होगा?- इस पर फ़र्माते है, अब आख़िरी ईसार की शक्ल पर नज़र डालें-

न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते।
त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः।।१०।।

ऐ अर्जुन! जो इंसान **'अकुशलं कर्म'** या'नी ग़ैर इफ़ादी अमल से (शरीअ़त के ज़रीअः तयशुदः अमल ही इफ़ादी है, इसके बरख़िलाफ जो कुछ है, इसी दुन्या की बंदिश है, लिहाज़ा ग़ैरइफ़ादी है, ऐसे आ'माल से) नफ़्रत नहीं करता और फ़लाही अमल में राग़िब नहीं होता, जो करना था वह भी बाक़ी नहीं है- ऐसी सच्चाई से मुज़य्यन इंसान शको-शुब्हः से ख़ाली, इल्मदाँ और तारीकुदुन्या है, उसने सब कुछ ईसार कर दिया है, लेकिन हुसूल के साथ यह सब कुछ का ईसार ही तर्के-दुन्या है। मुम्किन है और कोई आसान रास्तः हो? इस पर कहते हैं- नहीं। ग़ौर फ़र्मायें-

न हि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः।
यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते।।११।।

जिस्मानी इंसानों के ज़रीअः (सिर्फ़ जिस्म ही नहीं, जिसे आप देखते हैं। श्रीकृष्ण के मुताबिक़ कुद्रत से पैदा मलकाते फ़ाज़िलः, मलकाते रदीयः, मलकाते मज़मूम तीनों सिफ़ात ही इस ज़ीरूह को अज्साम में क़ैद करती हैं। जब तक तीनों सिफ़ात ज़िंदः हैं तब तक वह जानदार है। किसी न किसी शक्ल में जिस्म बदलता रहेगा। जिस्म की वज्ह जब तक ज़िंदः है)। पूरे तौर से सारे आ'माल का ईसार मुम्किन नहीं है, लिहाज़ा जो इंसान अमल के समरः का ईसार करने वाला है, वही तारीकुद्दुन्या है- ऐसा कहा जाता है, लिहाज़ा जब तक जिस्म के वजूहात ज़िंदः हैं, तब तक मुऐयनः

अमल करें और उनके समरात का ईसार करें। बदले में किसी समरः की ख़्वाहिश न करें। वैसे ख़्वाहिशमंद इंसानों के आ'माल का समरः भी होता है-

अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम्।
भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु संन्यासिनां क्वचित्।।१२।।

ख़्वाहिशमन्द इंसानों के आ'माल का अच्छा, बुरा और मिला हुआ- ऐसा तीन तरह का समरः मौत के बा'द भी होता है, जब तक जीने-मरने का सिल्सिलः जारी रहता है; तब तक मिलता है, लेकिन **'संन्यासिनाम्'-** सब कुछ का ईसार (ख़ातिमः) करने वाले मुकम्मल तारीकुद्दुन्या इंसानों के आ'माल का समरः किसी भी वक़्त में नहीं होता। यही ख़ालिस तर्के-दुन्या है। तर्के-दुन्या आ'लातरीन हालत है। भले-बुरे आ'माल का नतीजः और मुकम्मल ईसार के वक़्त में उनके ख़ातिमः का सवाल पूरा हुआ। अब इंसान के ज़रीअः मुबारक ख़्वाह नामुबारक आ'माल के सादिर होने के पीछे क्या वजूहात हैं? इस पर गौर फ़र्मायें-

पञ्चैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे।
सांख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम्।।१३।।

ऐ बाजू-ए-अज़ीम! तमाम आ'माल की कामयाबी के लिए इल्मी उसूलों (सांख्य सिद्धांत) के मुताबिक़ पाँच वजूहात बताये गये हैं, उन्हें तू मुझसे अच्छी तरह जान।

अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम्।
विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम्।।१४।।

इस मौजूअ में कारकुन (यह मन), अलग-अलग वसीलः (जिनके ज़रीअः किया जाता है, अगर मुबारक ग़लबः होता है तो इर्फ़ान, तर्के-दुन्या, सरकोबी, नफ़्सकुशी, ईसार, मुसल्सल फिक्र के ख़साइल वसीलः होंगे। अगर नामुबारक का ग़लबः है तो ख़्वाहिश, गुस्सः, लगाव, अदावत, हिर्स वग़ैरः वसीलः होंगे। इनके वसीलः से आमादः होगें) तमाम तरह की अजीबो-ग़रीब हरकतें (बेशुमार ख़्वाहिशात), बुन्याद (या'नी वसीलः, जिस ख़्वाहिश के साथ वसीलः हासिल हुआ वही ख़्वाहिश पूरी होने लगती है) और पाँचवीं वज़्ह है- दैव (क़िस्मत) या संस्कार (तअस्सुरात)। इसे मुस्तनद करते हैं-

शरीरवाङ्मनोभिर्यत्कर्म प्रारभते नरः।
न्याय्यं वा विपरीतं वा पञ्चैते तस्य हेतवः।।१५।।

इंसान मन, ज़बान या जिस्म से शरीअ़त के मुताबिक़ या उसके बरख़िलाफ जो भी अमल शुरू करता है, उनके ये पाँचों ही वजूहात है लेकिन ऐसा होने पर भी–

तत्रैवं सति कर्तारमात्मानं केवलं तु यः।
पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मतिः।।१६।।

जो इंसान बद्अक़्ली की वजूह से उसके मुतअल्लिक़ वहदानियत की तम्सील रूह को कारकुन देखता है, वह फ़ासिदुलअक़्ल हक़ीक़त को नहीं देखता या'नी मा'बूद नहीं करते।

इस सवाल पर जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने दूसरी बार ज़ोर दिया। बाब पाँच में उन्होंने कहा था कि वह मा'बूद न करता है, न कराता है, न अमल के इत्तिफ़ाक को जोड़ता है। तो लोग कहते क्यों हैं? फ़िरेफ़्तगी से लोगों की अक़्ल पर पर्दः पड़ा है, लिहाज़ा कुछ भी कह सकते हैं। यहाँ भी कहते हैं– अमल होने में पाँच वजूहात हैं। उसके बावुजूद भी जो वहदानियत की तम्सील रूहेमुत्लक़ को कारकुन देखता है, वह बद्अक़्ल (फ़ासिदुलअक़्ल) हक़ीक़त को नहीं देखता या'नी मा'बूद नहीं करते, जबकि अर्जुन के लिए वे ताल ठोककर खड़े हो जाते हैं। **'निमित्तमात्रं भव'–** मुख़्तार-ए-कुल तो मैं हूँ, तू वसीलः बनकर खड़ा भर रह। आखिरकार वे अज़ीम इंसान कहना क्या चाहते हैं?

दरहक़ीक़त मा'बूद और दुन्या के बीच एक लकीरे-कशिश है। जब तक रियाज़तकश दुन्या की हद में है, मा'बूद नहीं करते। बहुत क़रीब रहकर भी नाज़िर की शक्ल में ही रहते हैं। लाशरीक अक़ीदत से मा'बूद की कुर्बत चाहने पर वे दिल की दुन्या में निगराँ बन जाते हैं। रियाज़तकश दुन्या की हदे-कशिश से बाहर निकलकर उनके हल्कः में दाख़िल हो जाता है। ऐसे आशिक़ के लिए वे ताल ठोककर हमेशः खड़े रहते हैं। सिर्फ उसी के लिए मा'बूद मेह्रबानी करते हैं। लिहाज़ा ग़ौरोफ़िक्र करें। सवाल पूरा हुआ। आगे देखें–

यस्य नाहंकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते।
हत्वापि स इमाँल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते।।१७।।

जिस इंसान के बातिन में 'मैं कारकुन हूँ'– ऐसा ख़याल नहीं है और जिसकी अक़्ल मुलव्वस नहीं होती, वह इंसान इस सारे अवालिम को मारकर भी हक़ीक़त में

न तो मारता है और न बँधता है। दुन्या से मुतअल्लिक़ तअस्सुरात (संस्कारों) की तह्लील ही दुन्या का ख़ातिमः है। अब उस मुऐयनः अमल की तर्ग़ीब किस तरह होती है?, इस पर नज़र डालें-

ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना।
करणं कर्म कर्तेति त्रिविधः कर्मसङ्ग्रहः।।१८।।

ऐ अर्जुन! आलिमेकुल या'नी मुकम्मल इल्म रखने वाले अज़ीम इंसानों से, **'ज्ञानम्'** (इल्म)- उसको जानने के तरीक़ः से और **'ज्ञेय'** (काबिले-इल्म)- जानने के क़ाबिल चीज़ (श्रीकृष्ण ने पहले कहा- मैं ही क़ाबिले-इल्म, जानने के क़ाबिल हूँ से अमल करने की तर्ग़ीब मिलती है। पहले तो आलिमेकुल कोई अज़ीम इंसान हो, उनके ज़रीअः उस इल्म को जानने का तरीक़ः हासिल हो, जानने के क़ाबिल मंज़िल पर नज़र हो तभी अमल की तर्ग़ीब मिलती है और कारकुन (मन की लगन), वसीलः (इर्फान, बैराग़, सरकोबी, ज़ब्ते-नफ़्स वग़ैरः) और अमल के इल्म से आ'माल का ज़खीरः बनता है, अमल इकट्ठा होने लगता है। पहले कहा गया था कि हुसूल के बा'द उस इंसान का अमल किये जाने से कोई मत्लब नहीं होता और न तर्क कर देने से कोई नुक़्सान ही होता है; फिर भी अवामी इफ़ादः या'नी ताबेइन के दिलों में इफ़ादी वसीलों के फ़राहम के लिए वह अमल में लगा रहता है। कारकुन वसीलः और अमल के ज़रीअः इनका फ़राहम होता है। इल्म, अमल और कारकुन की भी तीन-तीन अक़्साम हैं।

ज्ञानं कर्म च कर्त्ता च त्रिधैव गुणभेदतः।
प्रोच्यते गुणसङ्ख्याने यथावच्छृणु तान्यपि।।१९।।

इल्म, अमल और कारकुन भी सिफ़ात के फ़र्क़ से सांख्य शास्त्र (इल्मी जोग की शरीअ़त) में तीन-तीन तरह के बताये गये हैं, इन्हें भी तू बऐनी सुन। पेश है पहले इल्म के अक़्साम -

सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते।
अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम्।।२०।।

अर्जुन! जिस इल्म से इंसान अलग-अलग सभी जानदारों में एक लाफ़ानी ख़ुदाई एहसास को बिला तफ़्रीक़ यकसाँ देखता है, उस इल्म को तू सालेह समझ। इल्म रू-ब-रू एहसास है, जिसके साथ ही सिफ़ात का ख़ातिमः हो जाना है। यह इल्म की पुख़्तगी की हालत है। अब मलकाते रदीयः वाला इल्म देखें।

पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान्पृथग्विधान्।
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम्।।२१।।

जो इल्म सारे जानदारों में मुख़्तलिफ़ किस्म के तमाम एहसासात को जुदा-जुदा करके जानता है कि यह अच्छा है, यह बुरा है- उस इल्म को तू मलकाते रदीयः वाला समझ। ऐसी हालत है, तो मलकाते रदीयः वाली सत्ह पर तेरा इल्म है। अब देखें मलकाते मज़मूम वाला इल्म।

यत्तु कृत्स्नवेदकस्मिन्कार्ये सक्तमहैतुकम्।
अतत्त्वार्थवदल्पं च तत्तामसमुदाहृतम्।।२२।।

जो इल्म मह्ज़ जिस्म में ही पूरी तौर से मुलब्वस है, तर्कीब से ख़ाली या'नी जिसके पीछे कोई फ़े'ल नहीं है, उंसुर के मा'ना की शक्ल में मा'बूद के इल्म से जुदा करने वाला और हक़ीर (तुच्छ) है, वह इल्म मलकाते मज़मूम वाला कहा जाता है। अब पेश है अमल की तीन किस्में-

नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम्।
अफलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्सात्त्विकमुच्यते।।२३।।

जो अमल **'नियतम्'**- शरीअ़त के तरीक़ः से मुऐयन है, दूसरा नहीं, सुह्बते असर और समरः को न चाहने वाले इंसान के ज़रीअः बिला हसद अदावत के किया जाता है, वह अमल सालेह कहा जाता है। (मुऐयनः अमल (इबादत) फिक्र है, जो मावरा से निस्बत दिलाता है)।

यत्तु कामेप्सुना कर्म साहङ्कारेण वा पुनः।
क्रियते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतम्।।२४।।

जो अमल काफी मशक़्क़त से जुड़ा हुआ है, समरः को चाहने वाले और तकब्बुर से भरे हुए इंसान के ज़रीअः किया जाता है, वह अमल मलकाते रदीयः वाला अमल कहा जाता है। यह इंसान भी वही मुऐयनः अमल करता है; लेकिन फ़र्क़ मह्ज़ इतना ही है कि समरः की ख़्वाहिश और तकब्बुर से मुज़ैयन है, लिहाज़ा उसके ज़रीअः होने वाले आ'माल मलकाते रदीयः से मुज़य्यन हैं। अब देखें मलकाते मज़मूम वाला अमल-

अनुबन्धं क्षयं हिंसामनवेक्ष्य च पौरुषम्।
मोहादारभ्यते कर्म यत्तत्तामसमुच्यते।।२५।।

जो अमल बिलआख़िर ख़त्म होने वाला है, तशद्दुद की अहम्मीयत को नज़रअंदाज़ करके सिर्फ फ़िरेफ़्तगी के ज़ेरे-असर शुरू किया जाता है, वह अमल मलकाते मज़मूम वाला कहा गया है। ज़ाहिर है, यह अमल शरीअ़त का मुऐयनः अमल नहीं है, उसकी जगह पर गुमगस्तगी है। अब देखें, कारकुन की पहचान-

मुक्तसङ्गोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः।
सिद्ध्यसिद्ध्ययोर्निर्विकारः कर्ता सात्त्विक उच्यते।।२६।।

जो कारकुन सुहबते-असर से बचकर, गुरूर की बातें न बोलने वाला, सब्र और हौसला का हामिल होकर, काम के पूरा होने या न होने की हालत में ख़ुशी और ग़म वग़ैरः के उयूब से पूरी तरह मुबर्रा होकर अमल में शबो-रोज़ लगा है, वह कारकुन सालेह कहा जाता है। यही आ'ला रियाज़तकश की पहचान है। अमल वही है- मुऐयनः अमल।

रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः।
हर्षशोकान्वितः कर्ता राजसः परिकीर्तितः।।२७।।

रग़बत से मुज़ैयन, आ'माल के समरः को चाहने वाला, लालची, अर्वाह को तक्लीफ़ पहुँचाने वाला, नापाक और खुशी व रंज से जो मुलव्वस है, वह कारकुन मलकाते रदीयः वाला कहा गया है।

अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठो नैष्कृतिकोऽलसः।
विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते।।२८।।

जो शोख़ मिज़ाज, बदसुलूक, घमण्डी, धोक़ेबाज़ जो दूसरे के कामों में ख़लल पहुँचाने वाला, पज़मुर्दः, काहिल और तसाहुल-पसन्द है कि फिर कर लेंगे, वह कारकुन मलकाते मज़मूम वाला कहा जाता है। तसाहुल-पसन्द अमल को कल पर टालने वाला है, अगरचे करने की ख़्वाहिश उसे भी रहती है। इस तरह कारकुन की पहचानें पूरी हुई। अब जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने नया सवाल खड़ा किया- अक़्ल, अक़ीदः (धारणा) और आराम की पहचान-

बुद्धेर्भेदं धृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधं शृणु।
प्रोच्यमानमशेषेण पृथक्त्वेन धनंजय।।२९।।

धनंजय! अक़्ल और कुव्वते अक़ीदः (धारणा) का भी उनकी सिफ़ात के बिना पर तीन तरह के अक़्साम पूरी तरह बाबे जुज के साथ मुझसे सुन।

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये।
बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी।।३०।।

पार्थ! रुजूहान और गुलूख़लासी को, फ़रीज़ः और ग़ैरफ़रीज़ः को, ख़ौफ़ और बेख़ौफ़ को व बंदिश और नजात को जो अक़्ल हस्बे-हक़ीक़त जानती है, वह अक़्ल सालेह है या'नी राहे-मा'बूद, राहे-आमदो-रफ़्त दोनों की अच्छी तरह जानकारी सालेह अक़्ल है। और -

यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च।
अयथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी।।३१।।

पार्थ! जिस अक़्ल के ज़रीअः इंसान दीन और बेदीनी को व फ़रीज़ः और नाफ़रीज़ः को भी उसी तरह नहीं जानता, अधूरा जानता है, वह अक़्ल मलकाते रदीयः वाली है। अब मलकाते मज़मूम वाली अक़्ल की शक्ल देखें।

अधर्मं धर्ममिति या मन्यते तमसावृता।
सर्वार्थान्विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी।।३२।।

पार्थ! मलकाते मज़मूम से पर्दः पड़ी जो अक़्ल बेदीनी को दीन मानती है और तमाम मफ़ादात के ख़िलाफ़ नज़रीयः रखती है, वह अक़्ल मलकाते मज़मूम वाली है।

यहाँ श्लोक तीस से बत्तीस तक अक़्ल के तीन अक़्साम बताये गये, पहली अक़्ल किस काम से छुटकारा पाना है, किसमें लग जाना है, क्या फ़र्ज़ है, क्या फ़र्ज़ नहीं है, इसकी अच्छी तरह समझ रखती है, वह अक़्ल सालेह है। जो फ़रीज़ः और ग़ैर फ़रीज़ः को धूमिल तौर पर जानती है, हक़ीक़त से नावाकिफ है, वह मलकाते रदीयः वाली अक़्ल है और बेदीनी को दीन, फ़ानी को दाइमी व फ़ाइदःमंद को नुक़्सानदेह- इस तरह उल्टी समझ वाली अक़्ल मलकाते मज़मूम वाली है। इस तरह अक़्ल की किस्में पूरी हुईं। अब पेश है दूसरा सवाल, **धृति-** अक़ीदत के तीन अक़्साम-

धृत्या यया धारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः।
योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्त्विकी।।३३।।

'योगेन'- जोग के तरीक़-ए-कार के ज़रीअः **'अव्यभिचारिणी'** (लाशरीक) फ़िक्रे जोग के इलावः दूसरी किसी हरक़त का असरअन्दाज़ होना नफ़्सपरस्ती है, तबीअ़त का बहक जाना ऐयाशी है। लिहाज़ा ऐसे लाशरीक अक़ीदः से इंसान मन, जान और हवास के हरकत को जो क़बूल करता है, वह अक़ीदः सालेह है। या'नी

मन, जान और हवास को मा'बूद की तरफ़ मोड़ देना ही सालेह अक़ीदत है और-

यया तु धर्मकामार्थान्धृत्या धारयतेऽर्जुन।
प्रसङ्गेन फलाकाङ्क्षी धृतिः सा पार्थ राजसी।।३४।।

ऐ अर्जुन! समरः की ख़्वाहिश वाला इंसान बेइंतिहा रग़्बत से जिस अक़ीदः के ज़रीअः मह्ज़ दीन, दौलत और ख़्वाहिश को क़बूल करता है (नजात को नहीं), वह अक़ीदः मलकाते रदीयः वाला है। इस अक़ीदः में भी मक़्सद वही है, सिर्फ ख़्वाहिश करता है। जो कुछ करता है, उसके बदले में चाहता है। अब मलकाते मज़मूम वाले अक़ीदः की पहचान देखें।

यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च।
न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी।।३५।।

अर्जुन! बदअक़्ल इंसान जिस अक़ीदः के ज़रीअः नींद (गफ़्लत), ख़ौफ, फ़िक्र, तक्लीफ़ और गुरूर को भी (नहीं छोड़ता, इन सबको) क़बूल किये रहता है, वह अक़ीदः मलकाते मज़मूम वाला है। यह सवाल पूरा हुआ। अगला सवाल है, सुख-

सुखं त्विदानीं त्रिविधं शृणु मे भरतर्षभ।
अभ्यासाद्रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति।।३६।।

अर्जुन! अब सुख भी तीन तरह के मुझसे सुन। उनमें से जिस सुख में रियाज़तकश रियाज़त में लगा रहता है या'नी तबीअ़त को समेटकर मा'बूद में लगा रहता है और जो तक्लीफ़ों का ख़ातिमः करने वाला है और-

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्।
तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम्।।३७।।

मज़्कूरएबाला आराम के वसीलः के इब्तिदाई दौर में अगरचे ज़ह्र की तरह लगता है (प्रह्लाद को दार पर चढ़ाया गया, मीरा को ज़ह्र मिला। कबीर कहते हैं- **'सुखिया सब संसार है, खाये अरु सोवै। दुखिया दास कबीर है, जागे अरु रोवै।।'** लिहाज़ा शुरू में ज़ह्र जैसा मह्सूस होता है) लेकिन समरः की शक्ल में आबे हयात की तरह है, लाफ़ानी उंसुर को दिलाने वाला है। लिहाज़ा बातिनी अक़्ल की बरकत से पैदा हुआ आराम सालेह कहा गया है और-

विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम् ।
परिणामे विषमिव तत्सुखं राजसं स्मृतम्।।३८।।

जो आराम मौजूआत और हवास के इत्तिफ़ाक से होता है, वह अगरचे कि इस्ते'माल के वक़्त में आबे-हयात की तरह लगता है लेकिन अंजाम में ज़ह्र की मानिन्द है; क्योंकि जनम और मौत की वज्ह है, वह आराम मलकाते रदीयः का हामिल कहा गया है और-

यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः।
निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम्।।३९।।

जो आराम ऐश के वक़्त और अंजाम में भी रूह को फ़िरेफ़्तगी में डालने वाला है, नींद **'या निशा सर्वभूतानाम्'**- दुन्यवी शबेतार में बेहोश रखने वाला है, काहिली और नाकाम कोशिशों से पैदा हुआ आराम मलकाते मज़मूम वाला कहा गया है। अब जोग के मालिक श्रीकृष्ण सिफ़ात की पहुँच बताते हैं, जो सबके पीछे लगी हैं-

न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः।
सत्त्वं प्रकृतिजैर्मुक्तं यदेभिः स्यात्त्रिभिर्गुणैः।।४०।।

अर्जुन! ज़मीन में, जन्नत में ख़्वाह फ़िरिश्तों में ऐसा कोई भी जानदार नहीं है जो कुद्रत से पैदा हुई तीनों सिफ़ात से आरी हो। या'नी ख़ालिक से लगात हशरातुलअर्ज़ तक यहाँ दुन्या लम्हाती, मरने-जीने वाली है, तीनों सिफ़ात के तहत है या'नी फ़िरिश्तः भी तीनों सिफ़ात का ऐब है; फ़ानी है।

यहाँ बाहरी फिरिश्तों को जोग के मालिक ने चौथी बार हुआ। बाब सात, नौ, सत्रह और यहाँ अठारहवें बाब में इन सबका एक ही मत्लब है कि फ़िरिश्तः तीनों सिफ़ात के तह्त हैं। जो इनकी इबादत करता है, फ़ानी की इबादत करता है।

भागवत की दूसरी फ़स्ल के तीसरे बाब में 'वली शुक' और परीक्षित का मशहूर बयान है जिसमें नसीहत देते हुए वे कहते हैं कि औरत-मर्द में महब्बत के लिए पार्वती की, सेहतयाबी के लिए अश्विनीकुमारों की, फ़त्ह के लिए इन्द्र की और दौलत के लिए वसुओं की इबादत करें। इसी तरह मुख़्तलिफ़ ख़्वाहिशात का ज़िक्र कर आख़िर में फैसलः देते हैं कि तमाम ख़्वाहिशात को पूरा करने और नजात के लिए तो वाहिद मा'बूद की इबादत करनी चाहिए। **'तुलसी मूलहिं सींचिए, फूलइ फलइ अघाइ।'** लिहाज़ः हर जगह जल्वःगर मा'बूद की याद करें, जिसको हासिल करने के लिए मुर्शिद की पनाह, बिला छल-कपट वाले ख़याल से सवाल और ख़िद्मत वाहिद तरीक़ः है।

दुन्यवी और रूहानी दौलत बातिन के दो ख़साइल हैं, जिसमें रूहानी दौलत आ'ला मा'बूद रूहेमुत्लक़ का दीदार कराती है, लिहाज़ा रूहानी कही जाती है। लेकिन यह भी तीनों सिफ़ात के ही तह्त है। सिफ़ात के ख़ातिमः के बा'द इनका भी ख़ातिमः हो जाता है। उसके बा'द उस ख़ुदमुत्मइन जोगी के लिए कोई भी फर्ज़ बाकी नहीं रह जाता।

अब पेश है पीछे से शुरू किया गया सवाल - रंगो-नस्ल की इम्तियाज (वर्ण-व्यवस्था)। नस्ल पैदाइश से तअल्लुक़ रखने वाली है या कामों के हिसाब से पायी जाने वाली वातिनी सलाहीयत का नाम है?, इस पर नज़र डालें-

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परन्तप।
कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः।।४१।।

ऐ आ'ला रियाज़तकश! बर्हमन, क्षत्री, वैश्य और शूद्र के आ'माल उनकी ख़स्लत से पैदा हुई सिफ़ात के ज़रीअः तक़्सीम किये गये हैं। ख़स्लत में मलकाते फ़ाज़िलः होगा तो आपमें पाकीज़गी होगी, तसव्वुर और मुराकबः की सलाहीयत होगी। मलकाते मज़मूम होगा तो काहिली, नींद, ग़ुरूर रहेगा; उसी सत्ह से आपसे अमल भी सादिर होगा। जो सिफ़त मुतहर्रिक है, वही आपकी नस्ल (वर्ण) है, शक्ल है। इसी तरह निस्फ़ सालेह और निस्फ़ मलकाते रदीयः से एक तब्कः क्षत्री का है और निस्फ़ से कम मलकाते मज़मूम और मलकाते रदीयः की ज़ियादती से दूसरा तब्कः।

इस सवाल को जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने यहाँ पाँचवीं बार उठाया है। बाब-दो में इन चार नस्लों में से एक क्षत्री नस्ल का नाम लिया कि क्षत्री के लिए जंग से बेह्तर कोई रास्तः नहीं है। तीसरे बाब में उन्होंने कहा कि कमज़ोर सिफ़त वाले के लिए भी उसकी ख़स्लत से पैदा हुई सलाहीयत के मुताबिक़ दीन में लगना, उसमें फ़ना हो जाना भी आ'ला इफ़ादी है, दूसरों की नक़्ल करना ख़ौफ़नाक है। बाब चार में बताया कि चार नस्लों (वर्णों) की तख़्लीक़ मैंने की। तो क्या इंसान को चार जातों में तक़्सीम किया? फ़र्माते हैं- नहीं, **'गुणकर्म विभागशः'**- सिफ़ात की सलाहीयत से अमल को चार ज़ीनों में बाँटा। यहाँ ख़ुसूसियत एक पैमानः है, उसके ज़रीअः माप कर अमल करने की सलाहीयत को चार हिस्सों में तक़्सीम किया। श्रीकृष्ण के अल्फ़ाज़ में, अमल ग़ैरमर्ई इंसान के उसूल का वाहिद तरीक़ः है। मा'बूद को हासिल करने का बरताव इबादत है, जिसकी शुरुआत वाहिद मा'बूद में अक़ीदत रखने से है। ग़ौरोफ़िक्र का ख़ास तरीक़ः है, जिसे पहले बता आये हैं, इस यग के लिए किये जाने

वाले अमल को चार हिस्सों में तक़्सीम किया। अब कैसे समझें कि हममें कौन-सी सिफ़ात हैं और किस दर्ज की है? इस पर यहाँ कहते हैं-

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्।।४२।।

मन पर बंदिश, नफ़्सकुशी, मुकम्मल पाकीज़गी, मन-ज़बान और जिस्म को मा'बूद के मुताबिक़ ढालना, मुआफ़ी का ख़याल, मन, हवास और जिस्म की हर जानिब से सादगी, ख़ुदापरस्त अक़्ल या'नी एक मा'बूद में सच्ची अक़ीदत, इल्म या'नी मा'बूद के इल्म की तह्रीक ख़ुसूसी इल्म या'नी मा'बूद से मिलने वाले अहकाम की बेदारी और उसके मुताबिक़ चलने की सलाहीयत - ये सब ख़स्लत से पैदा हुए बर्हमन के आ'माल हैं या'नी जब ख़स्लत में ये सलाहीयतें पायी जायँ, अमल मुसल्सल तौर पर ख़स्लत में ढल जाय, तो वह बर्हमन दर्जः का रियाज़तकश है। और-

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्।।४३।।

बहादुरी, ख़ुदाई नूर हासिल होना, सब्र, फिक्र में महारत या'नी **'कर्मसु कौशलम्'**- अमल करने में महारत, दुन्यवी जंग से न भागने की ख़स्लत, सदक़ः या'नी सबकुछ की सुपुर्दगी, सारे ख़यालात के ऊपर मालिकानः ख़याल या'नी ख़ुदाई ख़याल - ये सब क्षत्री के **'स्वभावजम्'**-ख़स्लत से पैदा होने वाले आ'माल हैं। ख़स्लत में ये सलाहीयतें पायी जाती हैं, तो वह कारकुन क्षत्री है। अब पेश है, वैश्य और शूद्र की शक्ल -

कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम्।
परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम्।।४४।।

खेती, गो की हिफ़ाज़त और तिजारत वैश्य की ख़स्लत से पैदा होने वाले आ'माल है। गो की पर्वरिश ही क्यों? भैंस को मार डालें? बकरी न रखें? ऐसा कुछ नहीं है। कुरूने माज़ी (वेद के वक़्त के) अदब में 'गो' लफ़्ज़ बातिन और हवास के लिए मुरव्वजः था। 'गो' की पर्वरिश का मा'ना है- हवास की हिफ़ाज़त। इर्फान-बैराग-सरकोबी-नफ़्सकुशी के ज़रीअः हवास मह्फूज़ होते हैं, ख़्वाहिश-गुस्सः लालच फ़िरेफ़्तगी के ज़रीअः ये बँट जाते हैं- कमतर हो जाते हैं। रूहानी दौलत ही हमेशः मुस्तक़िल दौलत है। यह ख़ुद की दौलत है, जो एक बार साथ हो जाने पर हमेशः साथ देती

है। दुन्यवी वबालों के बीच से उनका धीरे-धीरे फ़राहम करना रोज़गार है (**'विद्या धनम् सर्वधनप्रधानम्'**- इल्म की दौलत सारी दौलतों में अज़ीम है। इसे हासिल करना तिजारत है।) जिस्म ही एक खेत है। इसके भीतर बोया गया तुख़्म तअस्सुरात (संस्कार) की शक्ल में भला-बुरा उगता है। अर्जुन! इस बेग़रज़ अमल में तुख़्म या'नी इब्तिदा का ख़ातिमः नहीं होता। (उनमें से अमल के इस तीसरे दर्जः में अमल या'नी फ़िक्रे मा'बूद मुऐयनः अमल) आ'ला उंसुर के तसव्वुर का जो तुख़्म इस खेत में पड़ा है, उसे मह्फ़ूज़ रखते हुए इसमे आने वाले ग़ैरनस्ली उयूब का इज़ालः करते जाना खेती है। **'कृषी निरावहिं चतुर किसाना। जिमि बुध तजहिं मोह मद माना।।' (मानस ४/१४/८)** इस तरह हवास की हिफ़ाज़त और दुन्यवी वबालों से रूहानी दौलत फ़राहम करना और इस खेत में उंसुरे आ'ला के ग़ौरोफ़िक्र में इज़ाफ़ः वैश्य दर्जः का अमल है।

श्रीकृष्ण के मुताबिक़ **'यज्ञशिष्टाशिनः'**- तक्मिलः दौर में यग जिस चीज़ को अता करता है, वह है- आ'लातरीन मा'बूद। उसका लुत्फ उठाने वाले आरिफ़ हज़्रात सारे गुनाहों से आज़ाद हो जाते हैं और उसी की धीरे-धीरे ग़ौरोफ़िक्र के अमल से तुख़्म-रेज़ी होती है। उसी तुख़्म की हिफ़ाज़त खेती है। वेद के वक़्त के शराए' में अनाज का मत्लब है रूहेमुत्लक़। वह रूहेमुत्लक़ ही वाहिद ख़ुराक है, अनाज है। ग़ौरोफ़िक्र के तक्मिलः दौर में यह रूह पूरे तौर पर आसूदः हो जाती है, फिर कभी ग़ैर आसूदगी नहीं होती, आमदोरफ़्त की गिरफ़्त में नहीं आती। इस अनाज के तुख़्म को उगाते हुए आगे बढ़ाना खेती है।

अपने से बालातर हालत वाले, मक़ामयाफ़्तः मुर्शिद हज़्रात की ख़िद्मत करना, शूद्र की ख़स्लत से पैदा होने वाला अमल है। शूद्र का मत्लब नीच नहीं, बल्कि कमइल्म है। निचले दर्जः का रियाज़तकश ही शूद्र है। इब्तिदाई दर्जः का वह रियाज़तकश ख़िद्मतगुज़ारी से ही अमल की शुरुआत करे। धीरे-धीरे ख़िद्मत से उसके दिल में उन तअस्सुरात (संरकारो) की पैदाइश होगी और बतद्रीज चलकर वह वैश्य, क्षत्री और बर्हमन तक की दूरी तय करके, नस्लों (वर्णों) को भी पार करके मा'बूद से तअल्लुक़ क़ाइम कर लेगा। ख़स्लत काबिले-तब्दील है। ख़स्लत की तब्दीली के साथ नस्ल तब्दील हो जाती है। दरअस्ल ये नस्लों के बेह्तरीन, बेह्तर, औसत और कमतर- चार हालात हैं, राहे-अमल पर चलने वाले रियाज़तकशों के ऊँचे-नीचे चार जीनें हैं; क्योंकि अमल एक ही है- मुऐयनः अमल। श्रीकृष्ण कहते हैं कि आ'ला

कामयाबी के हुसूल का यही एक रास्तः है कि ख़स्लत में जैसी सलाहीयत है, वहीं से शुरू करें। इसको देखें-

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।
स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तच्छृणु।।४५।।

अपनी-अपनी ख़स्लत में पायी जाने वाली सलाहीयत के मुताबिक़ अमल में लगा हुआ इंसान **'संसिद्धिम्'-** मा'बूद से तअल्लुक़ बनाने वाली आ'ला कामयाबी को हासिल करता है। पहले भी कह आये हैं- इस अमल को करके तू आ'ला कामयाबी को हासिल करेगा। कौन-सा अमल करके? अर्जुन! तू शरीअ़त के तरीक़ः से मुऐयनः अमल, यग के लिए अमल कर। अब अपने अमल करने की सलाहीयत के मुताबिक़ अमल में लगा हुआ इंसान आ'ला कामयाबी को किस तरह हासिल करता है, वह तरीक़ः तू मुझसे सुन। गौर फ़र्मायें-

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः।।४६।।

जिस मा'बूद से सारे जानदारों की तख़्लीक हुई, जिससे यह सारी दुन्या जारी-ओ-सारी है; उस रब्बुलआलमीन को **'स्वकर्मणा'-** अपनी ख़स्लत से पैदा हुए अमल के ज़रीअः इबादत कर इंसान आ'ला कामयाबी हासिल करता है। लिहाज़ा मा'बूद का ख़याल और मा'बूद की ही सरापा इबादत और बतसल्सुल बढ़ना ज़रूरी है। जैसे कोई बड़े दर्जः में बैठ जाय, तो छोटा दर्जः भी खो देगा और बड़ा तो मिलेगा ही नहीं। लिहाज़ा इस राहे-अमल पर ज़ीना-ब-ज़ीना आगे बढ़ने का तरीक़ः है। जैसे बाब १८/६ में इसी पर फिर ज़ोर देते हुए कहते हैं कि आप कम इल्म ही क्यों न हों, वहीं से इब्तिदा करें। वह तरीक़ः है मा'बूद के लिए वक़्फ़ हो जाना।

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम्।।४७।।

अच्छी तरह अज़्म के साथ शुरू किये हुए दूसरे के दीन से बिला ख़ासियत वाला भी फ़र्ज़े-मंसबी आ'ला इफ़ादी है। **'स्वभाव नियतम्'-** ख़स्लत के मुताबिक़ मुर्करर किया हुआ अमल करता हुआ इंसान गुनाह या'नी आमदोरफ़्त को हासिल नहीं होता। आमतौर से रियाज़तकशों को वह्शत होने लगती है कि हम ख़िद्मत करते ही रहेंगे, वे तो मुराक़िब हैं, अच्छी सिफ़ात की वज्ह से उनकी क़द्रो-मंज़िलत है; फ़ौरन वे नक़्ल करने लगते हैं। श्रीकृष्ण के मुताबिक़ नक़्ल या हसद से कुछ हासिल

होगा नहीं। अपनी ख़सूलत से अमल करने की सलाहीयत के मुताबिक़ अमल करके ही कोई आ'ला कामयाबी हासिल करता है, तर्क करके नहीं।

सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत्।
सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः।।४८।।

कौन्तेय! ऐबदार (कम इल्मी की हालत वाला है तो साबित है कि अभी उयूब की ज़ियादती है, ऐसा ऐबदार भी) **'सहजं कर्म'**– ख़सूलत से पैदा हुए फ़ित्री अमल को तर्क नहीं करना चाहिए; क्योंकि धुएँ से मुज़ैयन आग की तरह सारे आ'माल किसी न किसी ऐब से ढँके हैं। बर्हमन दर्जः ही सही, अमल तो करना पड़ रहा है। जब तक मक़ाम नहीं मिला, तब तक ऐब मौजूद हैं, दुन्यवी पर्दा मौजूद है। उयूब का ख़ातिमः वहाँ होगा, जहाँ बर्हमन दर्जः का अमल भी मा'बूद में दाख़िल होने के साथ तह्लील हो जाता है। उस हासिल करने वाले की पहचान क्या है, जहाँ आ'माल से वास्तः नहीं रह जाता?

असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः।
नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां संन्यासेनाधिगच्छति।।४९।।

हर जगह लगाव से ख़ाली आक़िल, ख़्वाहिशात से पूरी तरह मुबर्रा, बातिन पर क़ाबू रखने वाला इंसान **'संन्यासेन'**– सब कुछ के वक़्फ़ की हालत में आ'ला बेग़रज़ अमल की कामयाबी को हासिल करता है। यहाँ तर्के-दुन्या और आ'ला बेग़रज़ अमल की कामयाबी मुतरादिफ़ हैं। यहाँ राहे इल्म का जोगी (सांख्य योगी) वहीं पहुँचता है जहाँ कि बेग़रज़ अमली जोगी। यह कामयाबी दोनों तरह के जोगियों के लिए बराबर है। अब आ'ला बेग़रज़ अमल की कामयाबी को हासिल करने वाला इंसान जिस तरह मा'बूद को हासिल करता है, उसकी मुख़्तसर में अक्कासी करते हैं–

सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाप्नोति निबोध मे।
समासेनैव कौन्तेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा।।५०।।

कौन्तेय! जो इल्म की मावरा अक़ीदत है, इंतिहा है, उस आ'ला कामयाबी को हासिल करने वाला इंसान जिस तरह मा'बूद से निस्बत बनाता है, उस तरीक़ः को तू मुझसे मुख़्तसर समझ। पेशक़र्दः श्लोक में वही तरीक़ः बता रहे हैं, ग़ौर फ़र्माये–

बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च।
शब्दादीन्विषयांस्त्यक्त्वा रागद्वेषौ व्युदस्य च।।५१।।

विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्कायमानसः।
ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः।।५२।।

अर्जुन! ख़ासतौर से अक़्ले-सलीम का हामिल तन्हाई और मुतबर्रिकात से मुज़ैयन रियाज़त में ज़रूरत के मुताबिक़ ख़ुराक लेने वाला, मन, ज़बान और जिस्म पर क़ाबूयाफ़्तः, अटल बैराग की मंज़िल पर क़ाइम इंसान मुसल्सल तसव्वुर व जोग का हामिल और ऐसे अक़ीदः से मुज़ैयन या'नी इन सब पर साबित क़दमी वाला और बातिन को क़ाबू में करके लफ़्ज़ वग़ैरः मौजूआत तर्क कर हसद-अदावत को ख़त्म करके और-

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम्।
विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते।।५३।।

तकब्बुर, ताक़त, घमण्ड, ख़्वाहिश, ग़ुस्सः, ख़ारजी चीज़ों और अन्दरूनी फ़िक्रमंदी को तर्क कर शफ़क़त से आरी, बातिनी सुकून वाला इंसान आ'ला मा'बूद के साथ निस्बत बनाने के क़ाबिल होता है। आगे नज़र डालें-

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम्।।५४।।

मा'बूद के साथ यकताई की सलाहीयत रखने वाला वह ख़ुशमिज़ाज इंसान न तो किसी चीज़ के लिए ग़म करता है और न किसी की ख़्वाहिश ही करता है। सारे जानदारों में मुसावी हुआ वह अक़ीदत की इंतिहा पर है। अक़ीदत अपना समरः देने की हालत में है, जहाँ मा'बूद के साथ निस्बत मिलती है। अब-.

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदन्तरम्।।५५।।

वह मुझे उस मावरा अक़ीदत के ज़रीअः उंसुर के साथ अच्छी तरह जानता है। वह उंसुर है क्या? मैं जो हूँ और जिस असर वाला हूँ, अबदी, लाफ़ानी, दाइमी जिन मावराई ख़ुसूसियात वाला हूँ, उसे जानता है और मुझे उंसुर से जानकर उसी वक़्त मुझमें दाख़िल हो जाता है। दौरे-हुसूल में तो मा'बूद दिखाई पड़ते हैं और हुसूल के ठीक बा'द उसी वक़्त वह अपनी ही ज़ात को उन ख़ुदाई ख़ुसूसियात से मुज़य्यन पाता है कि रूह ही अबदी, लाफ़ानी, दाइमी, ग़ैरमर्ई और बरहक़ है।

दूसरे बाब में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा था कि रूह ही सादिक़ (हक़)

है, अबदी है, ग़ैरमर्ई और लाफ़ानी है; लेकिन इन शौकतों से मुज़य्यन रूह को मह्ज़ हक़शनास इंसानों ने देखा। अब वहाँ सवाल फ़ित्री था कि दरहक़ीक़त हक़शनासी है क्या? बहुत से लोग पाँच अनासिर, पचीस अनासिर का अक़्ली शुमार करने लगते है; लेकिन इस पर श्रीकृष्ण ने यहाँ अठारहवें बाब में फ़ैसलः दिया कि उंसुरे-आ'ला है रूहेमुत्लक़। जो उसे जानता है, वही रम्ज़शनास है। अब अगर आपको उंसुर की चाहत है, उंसुरे-रूहेमुत्लक़ की चाहत है, तो यादे-इलाही और ग़ौरोफ़िक्र ज़रूरी है।

यहाँ श्लोक ४६ से ५५ तक जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने साफ़ किया कि राहे-तर्के-दुन्या में भी अमल करना है। उन्होंने कहा, **'संन्यासेन'**- तर्के-दुन्या के ज़रीअः (या'नी इल्मी जोग के ज़रीअः) अमल करते-करते ख़्वाहिशात से आरी, बिला लगाव के और क़ाबूयाफ़्तः ताहिर बातिन वाला इंसान जिस तरह बेग़रज़ अमल की आ'ला कामयाबी को हासिल करता है, उसे मुख़्तसर में बयान करूँगा। तकब्बुर, ताक़त, घमण्ड, ख़्वाहिश, गुस्सः, ग़ुरूर, फ़िरेफ़्तगी वग़ैरः दुन्यादारी में गिराने वाले उयूब जब पूरी तरह ख़त्म हो जाते हैं और इर्फ़ान, बैराग, सरकोबी, नफ़्सकुशी, यकसुई, तसव्वुर वग़ैरः मा'बूद से निस्बत दिलाने वाली सलाहीयतें जब पूरी तरह पुख़्तः हो जाती हैं, उस वक़्त वह मा'बूद को जानने के क़ाबिल होता है। उस सलाहीयत का नाम ही मावराई अक़ीदत है, इसी सलाहीयत के ज़रीअः वह उंसुर को जानता है। उंसुर है क्या? मुझे जानता है? मा'बूद हक़ीक़त में जो है, जिन शौकतों वाला है, उसे जानता है और मुझे जानकर उसी वक़्त मेरे मक़ाम पर फ़ाइज़ हो जाता है। या'नी मा'बूद, उंसुर-ख़ुदा-पर्वर्दगार, रूहेमुत्लक़ और रूह एक दूसरे के मुतरादिफ हैं। एक की जानकारी के साथ ही इन सबकी जानकारी हो जाती है। यही आ'ला कामयाबी, आ'ला नजात और आ'ला मक़ाम भी है।

लिहाज़ा गीता का अटल इरादः है कि तर्के-दुन्या और बेग़रज़ अमली जोग दोनों ही हालात में आ'ला बेग़रज़ अमल की कामयाबी को हासिल करने के लिए मुऐयनः अमल (ग़ौरोफ़िक्र) ज़रूरी है।

अब तक तो ज़ाहिद के लिए याद और ग़ौरोफ़िक्र पर ज़ोर दिया और अब ख़ुद सुपुर्दगी की बात कहकर उसी बात को बेग़रज़ अमली जोगी के लिए भी कहते हैं-

सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मद्व्यपाश्रयः।
मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम्।।५६।।

ख़ासतौर पर मेरी पनाह में आया हुआ इंसान सारे आ'माल को मुसल्सल तौर पर करता हुआ; ज़रा-सी भी ख़ामी न रखते हुए अमल करता हुआ मेरे रह्मोकरम से दाइमी, लाफ़ानी आ'ला मक़ाम को हासिल करता है। अमल वही है- मुऐयनः अमल, यग का तरीक़-ए-कार। मुकम्मल जोग के मालिक मुर्शिद की पनाह में रियाज़तकश उनके रह्मोकरम से जल्द ही हासिल कर लेता है। लिहाज़ा उसे हासिल करने के लिए ख़ुद सुपुर्दगी ज़रूरी है।

चेतसा सर्वकर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः।
बुद्धियोगमुपाश्रित्य मच्चित्तः सततं भव।।५७।।

लिहाज़ा अर्जुन! सारे आ'माल को (जितना कुछ तुझसे बन पड़ता है) मन से मुझे सुपुर्द करके, अपने भरोसे नहीं बल्कि मुझे सुपुर्द करके, मेरा हामिल होकर अक़्ली जोग या'नी जोग की समझ का सहारा लेकर लगातार मुझमें तबीअ़त को लगा। जोग एक ही है, जो पूरी तरह तक्लीफ़ों का ख़ातिमः करने वाला और उंसुरे आ'ला मा'बूद से निस्बत दिलाने वाला है। उसका तरीक़ः भी एक ही है, यग का तरीक़-ए-कार, जो मन और हवास की एहतियात, तनफ़्फ़ुस और तसव्वुर वग़ैरः पर मुन्हसिर है। जिसका नतीज़ः भी एक ही है- **'यान्ति ब्रह्म सनातनम्'** (अबदी मा'बूद से निस्बत) इसी पर आगे कहते हैं-

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि।
अथ चेत्त्वमहङ्कारान्न श्रोष्यसि विनङ्क्ष्यसि।।५८।।

इस तरह मुसल्सल तौर से मुझमें तबीअ़त को लगाने वाला होकर तू मेरी इनायत से मन और हवास के सारे किलों पर अपने आप फ़त्ह हासिल कर लेगा। **'इन्द्रीं द्वार झरोखा नाना। तहँ तहँ सुर बैठे करि थाना।। आवत देखहिं बिषय बयारी। ते हठि देहिं कपाट उघारी।।'** (रामचरितमानस, ७/११७/११-१२)- ये ही असीरुलफ़त्ह किले हैं। मेरी मेह्बानी से तू इन अड़चनों को पार कर जायेगा; लेकिन अगर ग़ुरूर की वज्ह से मेरे क़ौल को नहीं सुनेगा तो बरबाद हो जायेगा, राहे हक़ से भटक जायेगा। फिर इसी पर ज़ोर देते हैं-

यदहङ्कारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे।
मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति।।५९।।

जो तू तकब्बुर का सहारा लेकर ऐसा मानता है कि जंग नहीं करूँगा, तो यह तेरा फ़ैसलः झूठा है, क्योंकि तेरी ख़स्लत तुझे ज़बरदस्ती जंग में लगा देगी।

स्वभावजेन कौन्तेय निबद्धः स्वेन कर्मणा।
कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात्करिष्यस्यवशोऽपि तत्।।६०।।

कौन्तेय! मोह की गिरिफ़्त में तू जिस अमल को नहीं करना चाहता, उसको भी अपनी ख़सूलत से पैदा हुए अमल से बँधा हुआ मज़्बूर होकर करेगा। दुन्यवी जंग से न भागने की तेरी क्षत्री दर्जः की ख़सूलत तुझे न चाहते हुए भी अमल में लगा देगी। सवाल पूरा हुआ। अब वह मा'बूद रहता कहाँ है? इस पर फ़र्माते हैं-

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया।।६१।।

अर्जुन! वह मा'बूद दुन्या के सारे जानदारों के दिल की दुन्या में मक़ाम करता है। इतना करीब है तो लोग जानते क्यों नहीं? दुन्यवी फ़ित्रत की तम्सील मशीन पर सवार होकर सब लोग फ़िरेफ़्तः हो चक्कर लगाते ही रहते हैं, लिहाज़ा नहीं जानते। यह मशीन बहुत ख़लल अन्दाज़ है, जो बार-बार फ़ानी अज्साम में घुमाती रहती है। तो पनाह किसकी लें?

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्।।६२।।

लिहाज़ा ऐ भारत! पूरे खुलूस के साथ उस मा'बूद की (जो दिल की दुन्या में मौजूद है) लाशरीक पनाह को हासिल कर। उनके रहमोकरम से तू आ'ला सुकून, दाइमी आ'ला मक़ाम को हासिल करेगा। लिहाज़ा तसव्वुर करना है तो दिल की दुन्या में करें। यह जानते हुए भी मंदिर, मस्जिद, चर्च या कहीं दूसरी जगह तलाश करना वक़्त बरबाद करना है। हाँ, जानकारी नहीं है तब तक फ़ित्री अम्र है। मा'बूद का मक़ाम दिल है। भागवत के 'चतुःश्लोकी गीता' (भागवत पुराण के चार श्लोकों में भागवत पुराण का मुकम्मल मफ़्हूम है जिसे 'चतुश्लोकी गीता' कहते हैं) का मग़्ज़े सुख़न भी यही है कि वैसे तो मैं हर जगह मौजूद हूँ, लेकिन मिलता तो हूँ दिल की दुन्या में तसव्वुर करने से ही।

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया।
विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु।।६३।।

इस तरह सिर्फ इतना ही पोशीदः से भी बेइंतिहा पोशीदः इल्म मैंने तुझे बताया है। इस तरीक़ः से मुकम्मल तौर से सोचकर; फिर तू जैसा चाहता है, वैसा कर।

हक़ीक़त यही है, तहक़ीक़ का मक़ाम यही है, हुसूल की जगह यही है। लेकिन दिल के अन्दर मौजूद मा'बूद दिखायी नहीं देता, इस पर तरीक़ः बताते हैं-

सर्वगुह्यतमं भूयंः शृणु मे परमं वचः।
इष्टोऽसि मे दृढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम्।।६४।।

अर्जुन! तमाम पोशीदः से भी बेहद पोशीदः मेरे राज़ भरे क़ौल को तू फिर भी सुन। (कहा है, लेकिन फिर भी सुन, रियाज़तकश के लिए मा'बूद हमेशः खड़े रहते हैं) क्योंकि तू मेरा बेहद महबूब है, लिहाज़ा यह आ'ला इफ़ादी क़ौल मैं तेरे लिए फिर भी कहूँगा। वह है क्या?

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे।।६५।।

अर्जुन! तू मुझसे ही पूरे ख़ुलूस के साथ दिल लगाने वाला बन, मेरा लाशरीक बन्दः बन, मेरे मुतअल्लिक़ पूरी अक़ीदत वाला हो (मेरी सुपुर्दगी में अश्के-रवाँ होने लगें) मेरी ही बन्दगी कर। ऐसा करने से तू मुझे ही हासिल करेगा। यह मैं तेरे लिए सच्चाई के अह्द के साथ कहता हूँ, क्योंकि तू मेरा बेइन्तिहा महबूब है। पहले बताया कि मा'बूद दिल की दुन्या में मौजूद है, उसकी पनाह में जा। यहाँ कहते हैं- मेरी पनाह में आ। यह बेहद पोशीदः राज़ से भरा हुआ क़ौल सुन कि मेरी पनाह में आ। दरहक़ीक़त जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहना क्या चाहते हैं? यही कि रियाज़तकश के लिए मुर्शिद की पनाह बेहद ज़रूरी है। श्रीकृष्ण मुकम्मल जोग के मालिक थे। अब सुपुर्दगी का तरीक़ः बताते हैं-

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।६६।।

तमाम फ़राइज़ को तर्क कर (या'नी मैं बर्हमन दर्जः का कारकुन हूँ या शूद्र दर्जः का, क्षत्री हूँ या वैश्य- इस ख़याल को तर्क कर) सिर्फ एक मेरी लाशरीक पनाह को हासिल कर। मैं तुझे तमाम गुनाहों से नजात दिला दूँगा। तू ग़म मत कर।

इन सारे बर्हमन, क्षत्री वग़ैरः नस्लों (वर्णों) का ख़याल न कर (कि इस अमली राह में किस सत्ह का हूँ), जो लाशरीक ख़याल से पूरे ख़ुलूस के साथ पनाह में हो जाता है, सिवा मा'बूद के दूसरे किसी को नहीं देखता, धीरे-धीरे उसके दर्जः में बदलाव, तरक़्क़ी और सारे गुनाहों से नजात की जिम्मःदारी वह मत्लूब मुर्शिद ख़ुद-ब-ख़ुद अपने हाथों में ले लेते हैं।

हर एक अज़ीम इंसान ने यही कहा। शरीअ़त जब कलमबंद होती है तो लगता है कि यह सबके लिए है; लेकिन है दरहक़ीक़त अक़ीदतमंद के लिए ही। अर्जुन अह्ल था, लिहाज़ा उससे ज़ोर देकर कहा। अब जोग के मालिक ख़ुद फैसलः देते हैं कि इसके अह्ल कौन हैं?

इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन।
न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति।।६७।।

अर्जुन! इस तरह तेरी भलाई के लिए बयान की गयी इस गीता की नसीहत को किसी दौर में ग़लती से भी न तो रियाज़त से ख़ाली इंसान के मुतअल्लिक़ कहनी चाहिए, न अक़ीदत से आरी इंसान से ही कहनी चाहिए, न सुनने की ख़्वाहिश न रखने वाले से कहनी चाहिए और जो मेरी ऐबजुई करता है- यह ऐब है, वह ऐब है- इस तरह झूठी नुक़्तःचीनी करता है, उसके मुतअल्लिक़ भी नहीं कहनी चाहिए। अज़ीम इंसान ही तो थे, जिनके सामने हम्दोसिताइश करने वालों के साथ-साथ चन्द मज़म्मत करने वाले भी रहे होंगे। इनसे तो नहीं कहना चाहिए; लेकिन सवाल फ़िक्री है कि कहा किससे जाय? इस पर देखें-

य इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः।।६८।।

जो इंसान मेरी मावरा अक़ीदत को हासिल कर इस बेहद राज़ भरी गीता की नसीहत को मेरे बन्दों तक पहुँचायेगा, वह अक़ीदतमंद बिला शुब्हः मुझे ही हासिल करेगा। क्योंकि जो सुन लेगा; नसीहत को अच्छी तरह सुनकर दिल में बसा लेगा, तो उस पर चलेगा और नजात हासिल कर लेगा। अब उस नासेह के लिए कहते हैं-

न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः।
भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि।।६९।।

न तो उससे बढ़कर मेरा बेहद मह्बूब काम करने वाला इंसानों में कोई है और न उससे बढ़कर मेरा बेहद अज़ीज़ इस ज़मीन पर दूसरा कोई होगा। किससे बढ़कर बेहद मह्बूब? जो मेरे बन्दों में मेरी नसीहत देगा, उनको उधर उस रास्तः पर चलायेगा, क्योंकि भलाई का यही वाहिद मख़्रज है, शाही रास्तः है। अब देखें- मुतालअः।

अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः।
ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः।।७०।।

जो इंसान हम दोनों के दीनी मुकालमः को **'अध्येष्यते'**– अच्छी तरह मुतालअः करेगा, उसके ज़रीअः मैं इल्म के यग से पूजा जाऊँगा या'नी ऐसा यग जिसका समरः इल्म है, जिसकी शक्ल पहले बतायी गयी है, जिसका मत्लब है– बदीही दीदार के साथ मिलने वाली जानकारी, ऐसा मेरा मज़्बूत ख़याल है।

श्रद्धावाननसूयश्च शृणुयादपि यो नरः।
सोऽपिमुक्तः शुभाँल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम्।।७१।।

जो इंसान अक़ीदत का हामिल और हसद से आरी होकर सिर्फ़ सुनेगा, वह भी गुनाहों से आज़ाद हुआ नेक काम करने वालों के बालातर अवालिम को हासिल करने वालों में होगा। या'नी करते हुए भी नजात न मिले तो सुना भर करें, अज़ीम दुन्या तब भी है; क्योंकि वह तबीअ़त में उन नसीहतों को क़बूल तो करता है। यहाँ सरसठ से लगात एकहत्तर तक पाँच श्लोकों में बन्दःपर्वर श्रीकृष्ण ने यह बताया कि गीता की नसीहत नाअह्ल लोगों को नहीं सुनानी चाहिए; लेकिन जो अक़ीदतमंद है उसे ज़रूर सुनानी चाहिए। जो सुनेगा, वह बन्दः मुझे हासिल करेगा; क्योंकि बेहद राज़ भरे अफ़सानः को सुनकर इंसान चलने लगता है। जो बन्दों को सुनायेगा, उससे जियादः मह्बूब कहा जाने वाला मेरा कोई नहीं है। जो मुतालअः करेगा, उसके ज़रीअः मैं इल्म के यग से पूजा जाऊँगा। यग का समरः ही इल्म है। जो गीता के मुताबिक़ अमल करने में क़ासिर है; लेकिन पूरी अक़ीदत से मह्ज़ सुनेगा, वह भी अवालिमे सालेह को हासिल करेगा। इस तरह बन्दःपर्वर श्रीकृष्ण ने इसके कहने, सुनने और मुतालअः करने का समरः बताया। सवाल पूरा हुआ। अब आख़िर में वे अर्जुन से पूछते हैं कि– कुछ समझ में आया?

कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चेतसा।
कच्चिदज्ञानसम्मोहः प्रनष्टस्ते धनंजय।।७२।।

ऐ पार्थ! क्या तूने मेरा यह क़ौल यकसुई के साथ सुना? क्या तेरी जहालत से पैदा होने वाली फ़िरेफ़्तगी ख़त्म हुई?, इस पर अर्जुन बोला–

अर्जुन उवाच (अर्जुन बोला) –

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वप्रसादान्मयाच्युत।
स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव।।७३।।

अच्युत! (मुस्तकिल मिज़ाज!) आपके रह्मोकरम से मेरी फ़िरेफ़्तगी ख़त्म हो गई है; में बाहोश हो गया हूँ, अब मैं शको-शुब्हः से मुबर्रा हुआ क़ाइम हूँ और आपका ता'मीले इर्शाद करूँगा, जबकि फ़ौजी मुआयनः के वक़्त दोनों ही फ़ौजों में अपने लोगों को देखकर अर्जुन परेशान हो गया था। उसने गुज़ारिश की थी कि गोविन्द! अपने लोगों को मारकर मैं किस तरह सुकून हासिल करूँगा? ऐसी जंग से दाइमी, ख़ानदानी फर्ज़ ख़त्म हो जायेगा, पिण्डा पारने का रिवाज ख़त्म हो जायेगा, दोग़लः पैदा होगा। हमलोग समझदार होकर भी गुनाह करने पर आमादः हैं। क्यों न इनसे मह्फूज़ रहने के लिए तरीक़ः निकालें? मुसल्लह ये कौरव मुझ जैसे निहत्थे को मैदाने-जंग में मार डालें, वह मौत भी बेह्तर है। गोविन्द! मैं जंग नहीं करूँगा- कहता हुआ वह रथ के पिछले हिस्से में बैठ गया।

इस तरह गीता में अर्जुन ने जोग के मालिक श्रीकृष्ण के सामने यके-बा'दे-दीगरे सवालों की झड़ी लगा दी। जैसे बाब २/७- वह वसीलः मुझे बताइये जिससे मैं आ'ला शरफ़ की मंज़िल पर पहुँच जाऊँ? बाब २/५४- मुस्तक़िल मिज़ाज अज़ीम इंसान के निशानात क्या हैं? बाब ३/१- जब आपकी नज़र में इल्मी जोग बेह्तर है, तो मुझे ख़ौफनाक आ'माल में क्यों लगाते हैं? ३/३६- इंसान न चाहता हुआ भी किसकी तर्ग़ीब से गुनाह का बरताव करता है? ४/४- आपका जनम अब हुआ है और सूरज का जनम क़दीम है, तो फिर मैं यह कैसे मान लूँ कि बदलाव (कल्प) की इब्तिदा में इस जोग को आपने सूरज के मुतअल्लिक़ कहा था? ५/१- कभी आप तर्के-दुन्या की ता'रीफ करते हैं तो कभी बेग़रज़ अमल की, इनमें से तय करके एक को बताइये ताकि मैं आ'ला शरफ (आ'ला मक़ाम) को हासिल कर लूँ। बाब ६/३५- मन शोख़ है, फिर कमजोर कोशिशों वाला अक़ीदतमंद इंसान आपको न हासिल करके किस बदहाली को पहुँचता है? बाब ८/१-२- गोविन्द! जिसका आपने बयान किया, वह रूहेमुत्लक़ क्या है? वह रूहानियत क्या है? मख़्सूस देवता (अधिदैव), मख़्सूस जानदार (अधिभूत) क्या है? इस जिस्म में मख़्सूस यग (अधियज्ञ) कौन है? वह अमल क्या है? आख़िरी वक़्त में आप किस तरह इल्म में आते हैं? अर्जुन ने सात सवालात खड़े किये। बाब १०/१७ में अर्जुन ने तज़स्सुस किया कि मुसल्सल ग़ौरोफ़िक्र करता हुआ मैं किन-किन ख़यालों के ज़रीअः आपकी याद करूँ? बाब ११/४ में उसने गुज़ारिश की कि जिन शौकतों का आपने बयान किया उन्हें मैं रू-ब-रू देखना चाहता हूँ। बाब १२/१- जो लाशरीक अक़ीदत से लगे हुए बन्दे अच्छी तरह आपकी इबादत करते

हैं और दूसरे जो लाफ़ानी ग़ैरमर्ई की इबादत करते हैं, इन दोनों में बेहतर जोग का आलिम कौन है? बाब १४/२१- तीनों सिफ़ात से ख़ाली हुआ इंसान किन निशानात से मुज़य्यन होता है और इंसान किस तरीक़ः से इन तीनों सिफ़ात से ख़ाली होता है? बाब १७/१- जो इंसान मज़्कूरएबाला शरीअ़त के तरीक़ः को तर्क कर लेकिन अक़ीदत के साथ यग करते हैं, उनका क्या अंजाम होता है; और बाब १८/१- कि ऐ बाजू-ए-अज़ीम! मैं ईसार और तर्के दुन्या की हक़ीक़ी शक्ल को अलग-अलग जानना चाहता हूँ।

इस तरह अर्जुन सवाल करता गया (जो वह नहीं कर सकता था, उन पोशिदः राज़ों को बन्दःपर्वर ने ख़ुद आश्कारा किया) इनका हल निकलते ही वह सवालात करने से अलग हो गया और बोला कि गोविन्द! अब मैं आपके हुक्म पर अमल करूँगा। हक़ीक़त में ये सवालात सारे इंसानों के मुतअल्लिक़ हैं। इन सभी सवालात के हल के बग़ैर कोई भी रियाज़तकश राहे-शरफ़ में आगे नहीं बढ़ सकता। लिहाज़ा मुर्शिद के हुक्म की ता'मील करने के लिए, राहे-शरफ़ में आगे बढ़ने के लिए पूरी गीता का सुनना बेहद ज़रूरी है। अर्जुन के सवालात का हल निकल गया। साथ ही जोग के मालिक श्रीकृष्ण की पाक ज़बान से निकले हुए कलाम का इख़्तिताम हुआ। इस पर संजय बोला-

[ग्यारहवें बाब में अज़ीमुश्शान शक्ल का नज़ारः करा देने के बाद जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा था कि अर्जुन! लाशरीक बन्दगी के ज़रीअः मैं इस तरह देखने को (जैसा तूने देखा है), उंसुर से जानने और तअल्लुक़ बनाने के लिए सह्लुलहुसूल हूँ (बाब ११/५४)। इस तरह दीदार करने वाले बदीही तौर पर मेरा मक़ाम हासिल कर लेते हैं और यहाँ अभी अर्जुन से सवाल करते हैं- क्या तेरी फ़िरेफ़्तगी ख़त्म हुई? अर्जुन ने जवाब दिया कि मेरी फ़िरेफ़्तगी ख़त्म हो गई। मैं अपने होश में आ गया हूँ। आप जो फ़र्मा रहे हैं, वहीं करूँगा। दीदार के साथ तो अर्जुन को नजात हासिल हो जानी चाहिए थी। दरअस्ल अर्जुन को तो जो होना था, हो गया; लेकिन शरीअ़त मुस्तक़्बिल में आने वाली नस्लों के लिए होती है। उसका इस्ते'माल आप सबके लिए ही है।]

संजय उवाच (संजय बोला) -

इत्यहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महात्मनः।
संवादमिममश्रौषमद्भुतं रोमहर्षणम्।।७४।।

इस तरह मैंने वासुदेव श्रीकृष्ण और मर्दे-ख़ुदा अर्जुन (अर्जुन एक मर्दे-ख़ुदा है, जोगी है, रियाज़तकश है; न कि कोई पर्ताबी (धनुर्धर) जो मारने के लिए खड़ा हो। लिहाज़ा मर्दे-ख़ुदा अर्जुन) के इस अजीबोगरीब और लर्जः ख़ेज़ मुकालमः को सुना। आपमें सुनने की सलाहीयत कैसे आयी? आगे फ़र्माते हैं -

व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद्गुह्यमहं परम्।
योगं योगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयम्।।७५।।

श्री व्यासजी की मेह्रबानी से, उनकी अता की हुई नज़र से मैंने इस आ'ला राज़ भरे जोग को मुजरसम कहते हुए ख़ुद जोग के मालिक श्रीकृष्ण से सुना है। संजय श्रीकृष्ण को जोग का मालिक मानता है। जो ख़ुद जोगी हो और दूसरों को भी जोग अता करने की सलाहीयत रखता हो, वह जोग का मालिक है।

राजन्संस्मृत्य संस्मृत्य संवादमिममद्भुतम्।
केशवार्जुनयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः।।७६।।

ऐ शाह (धृतराष्ट्र)! श्रीकृष्ण और अर्जुन के इस आ'ला रिफ़ाही और हैरतअंगेज़ मुकालमः को बारहा याद करके मैं बार-बार ख़ुश हो रहा हूँ। लिहाज़ा इस मुकालमः को हमेशः ज़ेह्न में रखना चाहिए और इसी याद से ख़ुश रहना चाहिए। अब उनकी शक्ल को याद कर संजय कहते हैं-

तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः।
विस्मयो मे महान् राजन्हृष्यामि च पुनः पुनः।।७७।।

ऐ शाह! हरि (श्रीकृष्ण) के (जो नेक-बद सभी का हरण ख़ातिमः) कर ख़ुद बाकी रहते हैं, उन हरि (कृष्ण) के बेहद हैरतअंगेज़ शक्ल को बार-बार याद करके मेरी तबीअ़त में बहुत बड़ा तअज्जुब होता है और मैं बार-बार ख़ुश होता हूँ। मा'बूद की शक्ल बार-बार याद करने की चीज़ है। आख़िर में संजय फैसलः देते हैं-

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।।७८।।

शाह! जहाँ जोग के मालिक श्रीकृष्ण और पर्ताबी (धनुर्धर) अर्जुन (तसव्वुर ही कमान है, हवास की मज़्बूती ही गाण्डीव (अर्जुन के धनुष का नाम) है, या'नी इस्तिक़ामत के साथ तसव्वुर करने वाला मर्दे-ख़ुदा अर्जुन हैं, वहीं पर **'श्रीः'**- शौकत, **'विजय'** (कामयाबी)- जिसके पीछे शिक़स्त नहीं है, ख़ुदाई शौकत और मुतहर्रिक

दुन्या में अटल रहने वाली अमली सोच (नीति) है - ऐसा मेरा मानना है।

आज तो पर्ताबी अर्जुन हैं नहीं। यह अमली सोच, कामयाबी की शौकत तो अर्जुन तक मह्दूद रह गई। वक़्ती सदाक़त थी, यह तो द्वापर में ही ख़त्म हो गयी। लेकिन ऐसी बात नहीं है। जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया कि मैं सबके दिल की दुन्या में मौजूद रहता हूँ। आपके दिल में भी वे हैं। इश्क़ ही अर्जुन है। इश्क़ आपके बातिन की मा'बूद के तरफ़ रग़बत का नाम है। अगर ऐसा इश्क़ आपमें है तो हमेशः हक़ीक़ी कामयाबी है और इस्तिक़ामत की हालत दिलाने वाली अमली सोच भी हमेशः रहेगी, न कि कभी थी। जब तक जानदार रहेंगे, मा'बूद का मक़ाम उनकी दिल की दुन्या में रहेगा, बेक़रार रूह उसे हासिल करने की तलबगार होगी और उनमें से जिस किसी के भी दिल में उसे पाने का इश्क़ उमड़ेगा वही अर्जुन का हम मर्तबः होगा; क्योंकि इश्क़ ही अर्जुन है। लिहाज़ा हर इंसान इसका तलबगार (उम्मीदवार) बन सकता है।

मग़्ज़े सुख़न :-

यह गीता का इख़्तितामी बाब है। शुरू में ही अर्जुन का सवाल था कि, बन्दःपर्वर! मैं ईसार और तर्के-दुन्या के फ़र्क़ और शक्ल को जानना चाहता हूँ। जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने इस बात पर मुरव्वजः चार नज़रीयात का तज़्किरः किया। इनमें एक सहीह भी था। इससे मिलता-जुलता ही फैसलः जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने दिया कि यग, सदक़ः और रियाज़त किसी दौर में तर्क करने के क़ाबिल नहीं हैं। ये मुफ़क़्क़िरों को भी पाक करने वाले हैं। इन तीनों को क़ाइम रखते हुए, इनके मुख़ालिफ़ उयूब का तर्क करना ही हक़ीक़ी ईसार है। यह सालेह ईसार है। समरः की ख़्वाहिश के साथ ईसार मलकाते रदीयः का ईसार है, और फ़िरेफ़्तगी में पड़कर मुऐयनः अमल को ही तर्क कर देना मलकाते मज़मूम वाला ईसार है और तर्के-दुन्या, ईसार की ही आ'लातरीन हालत है। मुऐयनः अमल और तसव्वुर से मुजैयन सुकून सालेह है। हवास और उनके मौजूआत का लुत्फ़ उठाना मलकाते रदीयः है और आसूदगी अता करने वाले अनाज की पैदाइश से ख़ाली तक्लीफ़देह सुख मलकाते मज़मूम का हामिल है।

इंसानों के ज़रीअः शरीअ़त के मुताबिक़ या उसके बरख़िलाफ़ किसी काम के होने में पाँच वसीले हैं- कारकुन (मन), अलग-अलग वसीलः (जिनके ज़रीअः किया

जाता है। अगर अच्छाई हाथ लगती है, तो इर्फ़ान, बैराग, सरकोबी, नफ़्सकुशी वसीलः हैं। नामुबारक हाथ लगता है, तो ख़्वाहिश, गुस्सः हसद, अदावत वग़ैरः वसीलः होंगे।) तमाम तरह की ख़्वाहिशात लामह्दूद हैं, ख़्वाहिशात सब पूरी नहीं हो सकती। सिर्फ वह ख़्वाहिश पूरी होती है जिसको बुन्याद मिल जाती है। चौथी वज्ह है- बुन्याद (वसीलः) और पाँचवी वज्ह है- दैव (तक़दीर या तब तक के आ'माल के तअस्सुरात)। हर एक काम के होने में यहीं पाँच वसीले हैं, फिर भी जो नजात की शक्ल वाले रूहेमुत्लक़ को कारकुन मानता है, वह जाहिल इंसान हक़ीक़त को नहीं जानता। या'नी मा'बूद नहीं करते, जबकि पहले कह आये हैं कि अर्जुन! तू मह्ज़ वसीलः बनकर खड़ा भर रह। सब कुछ करने वाला तो मैं हूँ। आख़िरकार उन अज़ीम इंसान का मत्लब क्या है?

दरहक़ीक़त कुद्रत और इंसान के बीच एक दिलकश हदे-कामिल है। जब तक इंसान दुन्या में जीता है, तब तक माया (फ़ित्रत) तर्ग़ीब देती है और जब वह इससे ऊपर उठकर वक़्फ़ मा'बूद की पनाह में सुपुर्द हो जाता है और वह मत्लूबः जब दिल की दुन्या में रथबान हो जाता है, फिर मा'बूद करते हैं। ऐसी सत्ह पर अर्जुन था, संजय भी था और सबके लिए इस (दर्जः) में पहुँचने का उसूल है। लिहाज़ा यहाँ मा'बूद तर्ग़ीब देते हैं। इल्मे कामिल अज़ीम इंसान, जानने का तरीक़ः और जानने के क़ाबिल रूहेमुत्लक़ - इन तीनों के मुनासबत से अमल की तर्ग़ीब मिलती है। लिहाज़ा किसी मुर्शिद कामिल की कुर्बत में समझने की कोशिश करनी चाहिए।

नस्ली तस्नीफ़ के सवाल को चौथी बार लेते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया कि ज़ब्ते-नफ़्स, मन की सरकोबी, यकसुई, जिस्मो-ज़बान और मन को मा'बूद की रज़ा के मुताबिक़ ढालना, ख़ुदाई इल्म की तह्रीक, रब्बानी अहकाम पर चलने की सलाहीयत वग़ैरः मा'बूद से निस्बत दिलाने वाली सलाहीयतें बर्हमन दर्जः के आ'माल हैं। बहादुरी, पीछे न हटने की ख़स्लत, सब ख़यालों से ऊपर मालिकानः ख़याल, अमल में लगने की महारत क्षत्री दर्जा का अमल है। हवास की हिफ़ाज़त, रूहानी दौलत का इज़ाफ़ः वग़ैरः वैश्य दर्जः का अमल है, और ख़िद्मतगुज़ारी शूद्र दर्जः का अमल है। शूद्र का मत्लब है- कमइल्म; कमइल्म रियाज़तकश, जो मुऐयनः अमल के तसव्वुर में दो घंटे बैठकर दस मिनट भी अपने मुआफ़िक नहीं पाता। जिस्म ज़रूर बैठा है, लेकिन जिस मन को टिकाना चाहिए, वह तो हवा से बातें कर रहा है। ऐसे रियाज़तकश का भला कैसे हो? उसे अपने से बेह्तर हालत वालों की ख़िद्मत करनी

चाहिए या मुर्शिद की। रफ़्तः-रफ़्तः उसमें भी तअस्सुरात (संस्कारों) की तख़्लीक़ होगी, रफ़्तार पकड़ लेगा। लिहाज़ा इस कमइल्म इंसान का अमल ख़िद्मत से ही शुरू होगा। अमल एक ही है- मुऐयनः अमल, ग़ैरोफ़िक्र। उसके कारकुन के चार दर्जात बेहूतरीन, बेहूतर, औसत और कमतर ही बर्हमन, क्षत्री, वैश्य और शूद्र हैं। इंसान को नहीं बल्कि सिफ़ात के वसीलः से अमल को चार हिस्सों में तक़्सीम किया गया। गीता के मुताबिक़ नस्लें इतने में ही महदूद हैं।

उंसुर को साफ़ करते हुए उन्होंने कहा कि अर्जुन! उस आ'ला कामयाबी का तरीक़ः बयान करूँगा जो इल्म की मावरा अक़ीदत है। इर्फ़ान, बैराग, ज़ब्ते नफ़्स, हब्से दम, मुसल्सल ग़ैरोफ़िक्र और तसव्वुर की ख़स्लत, मा'बूद से निस्बत दिलाने वाली सारी सलाहीयतें जब पुख़्तः हो जाती है; ख़्वाहिश, ग़ुस्सः, फ़िरेफ़्तगी, लगाव व हसद वग़ैरः दुन्या में घसीटकर मुलव्वस करने वाले ख़साइल जब पूरी तरह ख़त्म हो जाते हैं, उस वक़्त इंसान मा'बूद को जानने के क़ाबिल होता हैं। उसी सलाहीयत का नाम मावरा अक़ीदत है। मावरा अक़ीदत के ज़रीअः ही वह उंसुर को जानता है। उंसुर है क्या? बताया- में जो हूँ, जिन शौकतों का हामिल हूँ, उनको जानता है या'नी रूहेमुत्लक़ जो है, ग़ैरमर्ई, दाइमी, नाकाबिले-तब्दील जिन मावराई सिफ़ात वाला है, उसे जानता है और जानकर वह फौरन मुझमें पिन्हा हो जाता है। लिहाज़ा उंसुर है- उंसुरे-आ'ला, न कि पाँच या पचीस अनासिर। हुसूल के साथ रूह उसी शक्ल में पिन्हा हो जाती है, उन्हीं से मुज़ैयन हो जाती है।

मा'बूद का मक़ाम बताते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा, अर्जुन! वह मा'बूद सारे जानदारों के दिल की दुन्या में मक़ाम करता है; लेकिन दुन्यवी फ़ित्रत वाली मशीन में चढ़कर लोग भटक रहे हैं, लिहाज़ा नहीं जानते। लिहाज़ा अर्जुन! तू दिल में मौजूद उस मा'बूद की कुर्बत में जा। इससे भी पोशीदः एक राज़ और है कि तमाम फ़राइज़ की फिक्र को तर्क कर तू मेरी पनाह में आ, तू मुझे हासिल करेगा। यह राज़ नाअह्ल को नहीं बताना चाहिए- जो अक़ीदतमंद नहीं है, उसे नहीं बताना चाहिए; लेकिन जो अक़ीदतमंद है, उससे बताना जरूरी है। उससे निफ़ाक़ रखें, तो उसका भला कैसे होगा? आख़िर में जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने सवाल किया कि अर्जुन! मैंने जो कुछ कहा, उसे तूने अच्छी तरह सुना-समझा? तुम्हारी फ़िरेफ़्तगी ख़त्म हुई कि नहीं? अर्जुन ने कहा- बन्दःपर्वर! मेरी फ़िरेफ़्तगी ख़त्म हो गयी है। मैं बाहोश हो गया हूँ। आप जो कुछ फ़र्माते हैं, वही हक़ीक़त है और मैं अब वही करूँगा।

संजय, जिसने इन दोनों के मुकालमः को अच्छी तरह सुना है, अपना फ़ैसलः देता है कि श्रीकृष्ण अज़ीम जोग के मालिक और अर्जुन एक मर्दे-ख़ुदा है। उनका मुकालमः बार-बार याद कर वह ख़ुश हो रहा है। लिहाज़ा इसकी याद करते रहना चाहिए। उन हरि (कृष्ण) की शक्ल को याद करके भी वह बार-बार ख़ुश होता है। लिहाज़ा बार-बार शक्ल को याद करते रहना चाहिए, तसव्वुर करते रहना चाहिए। जहाँ जोग के मालिक श्रीकृष्ण हैं और जहाँ मर्दे-ख़ुदा अर्जुन हैं वहीं शरफ़ है, फ़त्ह की शौकत और अटल अमली सोच भी वहीं है। तख़्लीक़ के उसूल आज हैं, तो कल बदलेंगे। मुस्तह्कम (ध्रुव) तो वाहिद मा'बूद है। उसमें पिन्हा करने वाली अमली सोच, मुस्तह्कम अमली सोच भी वही है। अगर श्रीकृष्ण और अर्जुन को द्वापर के ज़माने का ख़ुसूसी इंसान मान लिया जाय तब तो आज न अर्जुन है और न श्रीकृष्ण। आपको न कामयाबी मिलनी चाहिए और न जाहो-जलाल। तब तो गीता आपके लिए बिल्कुल नाम'आनी है। लेकिन नहीं, श्रीकृष्ण एक जोगी थे, उसीयत से भरे हुए दिल वाला मर्दे-ख़ुदा ही अर्जुन है। वे हमेशः ही रहते हैं और रहेंगे। श्रीकृष्ण ने अपना तअर्रुफ़ कराते हुए कहा कि मैं हूँ तो ग़ैरमर्ई लेकिन जिस ख़याल को मैं हासिल हूँ, वह मा'बूद सबके दिल की दुन्या में मक़ाम करता है। वह हमेशः ही है और रहेगा। सबको उसकी पनाह में जाना है। पनाह में जाने वाला ही मर्दे ख़ुदा है, उंसीयत वाला है और उंसीयत ही अर्जुन है। इसके लिए किसी दाना-ए-हाल (रम्ज़शनास) अज़ीम इंसान की पनाह में जाना बेहद ज़रूरी है, क्योंकि वही इसके मुतहर्रिक हैं।

इस बाब में तर्के-दुन्या की शक्ल साफ़ की गई कि सब कुछ का ईसार ही तर्के-दुन्या (संन्यास) है। सिर्फ़ लिबास पहन लेना तर्के-दुन्या नहीं है, बल्कि इनके साथ यकसुई क़ाइम रखते हुए मुऐयनः अमल में हस्बे-कुव्वत को समझकर या ख़ुद सुपुर्दगी के साथ मुसल्सल कोशिश करना हर तरह से ज़रूरी है। हुसूल के साथ सारे आ'माल का ईसार ही तर्के-दुन्या (संन्यास) है, जो नजात का मुतरादिफ़ है। यही तके-दुन्या की इंतिहा है। लिहाज़ा-

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसम्वादे 'संन्यासयोगो' नाम अष्टादशोऽध्यायः।।१८।।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता की तम्सील उपनिषद् व इल्मे तसव्वुफ़ व इल्मे रियाज़त से मुतअल्लिक़ श्रीकृष्ण और अर्जुन के मुकालमः में 'संन्यास योग' (इल्मे तर्के दुन्या) नाम का अठारहवाँ बाब मुकम्मल होता है।

इति श्रीमत्परमहंसपरमानन्दस्य शिष्य स्वामीअड़गड़ानन्दकृते श्रीमद्भगवद्गीतायाः 'यथार्थ गीता' भाष्ये 'संन्यासयोगो' नाम अष्टादशोऽध्यायः।।१८।।

इस तरह क़ाबिले एहतिराम परमहंस परमानन्द जी के मुक़ल्लिद स्वामी अड़गड़ानन्द के ज़रीअः लिखी श्रीमद्भगवद्गीता की तश्रीह 'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) में 'संन्यास योग' (इल्मे तर्के दुन्या) नाम का अठारहवाँ बाब मुकम्मल हुआ।

।। हरि ॐ तत्सत्।।

इख़्तिताम (उपशम)

आमतौर पर लोग तश्रीहों में नयी बात की तलाश करते हैं, लेकिन दरहक़ीक़त सचाई तो सचाई है। वह न नयी होती है और न पुरानी पड़ती है। नयी बातें तो अख़बारों में साया होती रहती हैं, जो मरते-उभरते वाक़िआत हैं। सचाई तो नाक़ाबिले-तब्दील है, ऐसी हालत में कोई दूसरा कहे भी क्या! अगर कहता है, तो उसने हासिल नहीं किया। हर अज़ीम इंसान अगर चलकर उस मंज़िले-मक़्सूद तक पहुँच गया, तो एक ही बात कहेगा। वह समाज के बीच दरार नहीं डाल सकता। अगर डालता है, तो साबित है कि उसने हासिल नहीं किया। श्रीकृष्ण भी उसी सचाई को अयाँ करते हैं, जिसे पहले के मुफ़क्किरीन ने देखा था, हासिल किया था और मुस्तक़्बिल में होने वाले अज़ीम इंसान भी अगर हासिल करते हैं, तो यहीं कहेंगे।

अज़ीम इंसान और उनका तरीक़-ए-कार – अज़ीम इंसान दुन्या में सच के नाम पर फ़ैली और सच की तरह नज़र आने वाली बुरे रिवाजों को ख़त्म करके भलाई की राह तैयार कर देते हैं। यह राह भी दुन्या में पहले से मौजूद रहती है, लेकिन उसी के मुतवाज़ी, उसी की तरह महसूस होने वाली तमाम राहें राइज हो जाती हैं। उनमें से सच को अलग कर पाना मुश्किल हो जाता है कि दरहक़ीक़त सचाई है क्या? अज़ीम इंसान हक़ीक़ी मक़ाम पर फाइज़ होने की वजह से उनमें सच की पहचान करते हैं, उसे तय करते हैं और उस सचाई की जानिब रू-ब-रू होने के लिए समाज को तर्ग़ीब देते हैं। यही राम ने किया, महावीर ने किया, यही महात्मा बुद्ध ने किया, यही ईसा ने किया और यही कोशिश मुहम्मद साहब (सल्ल०) ने की। कबीर, गुरुनानक वग़ैरः सबने यही किया। अज़ीम इंसान जब दुन्या से पर्दः कर लेता है तो बा'द वाले लोग उसके बताये हुए रास्तः पर न चलकर उसके मक़ामे-पैदाइश, फ़ना होने की जगह और उन मक़ामात की इबादत करने लगते हैं, जहाँ उन्होंने क़याम किया था। बतद्रीज वे उनका बुत बनाकर इबादत करने लगते हैं। अगरचे शुरू में वे उनकी यादें ही सँजोते हैं; लेकिन बा'द में चलकर गुमराह हो जाते हैं और वही गुमराही क़दामत की शक्ल इख़्तियार कर लेती है।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने भी उस वक़्ती मुआशरः में सचाई के नाम पर राइज रस्म-रिवाज़ों की तर्दीद करके मुआशरः को सहीह राह पर लाकर खड़ा कर दिया। बाब २/१६ में उन्होंने फ़र्माया- अर्जुन! बातिल चीज़ का कोई वुजूद नहीं है और हक़ की तीनों दौरों में कमी नहीं है। बन्दःपर्वर होने की बिना पर यह मैं अपनी तरफ़ से नहीं कह रहा हूँ, बल्कि इनके फ़र्क़ को हक़शनास इंसानों ने देखा और वही मैं बयान करने जा रहा हूँ। तेरहवें बाब में उन्होंने मैदान और आलिमे-मैदाँ (क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ) का बयान उसी तरह किया जो **'ऋषिभिर्बहुधागीतम्'**- आरिफ़ हज़्रात के ज़रीअः आमतौर से गाया जा चुका था। अठारहवें बाब में ईसार और तर्के-दुन्या का उंसुर बताते हुए उन्होंने चार ख़यालात में से एक को मुन्तख़ब किया और उसे अपनी हिमायत अता की।

तर्के-दुन्या (संन्यास) - श्रीकृष्ण के ज़माने में आग को न छूने वाले और ग़ौरोफ़िक्र को भी तर्क करके अपने को जोगी, तारीकुद्दुन्या (ज़ाहिद) कहने वालों का फ़िर्क़ा भी सरसब्ज़ हो रहा था। इसकी तर्दीद करते हुए उन्होंने साफ़-साफ़ कहा कि राहे-इल्म (ज्ञानमार्ग) और राहे-बन्दगी (भक्तिमार्ग), दोनों में से किसी भी रास्तः के मुताबिक़ अ़मल को तर्क करने का उसूल नहीं है। अ़मल तो करना ही होगा। अ़मल करते-करते रियाज़त इतनी लतीफ़ हो जाती है कि सारे इरादों की कमी हो जाती है। वह मुकम्मल तर्के-दुन्या है। बीच रास्तः में तर्के-दुन्या नाम की कोई चीज़ नहीं है। सिर्फ आ'माल को तर्क कर देने से और आग न छूने से न तो कोई ज़ाहिद होता है और न जोगी जिसे बाब दो, तीन, पाँच, छः और ख़ासतौर पर बाब अठारह में देखा जा सकता है।

अ़मल - इसी तरह की ग़लतफ़हमी अ़मल के मुतअल्लिक़ भी हैं। इसके बारे में बाब २/३९ में श्रीकृष्ण ने बताया कि- अर्जुन! अब तक यह अक़्ल की बात तेरे लिए इल्मी जोग (सांख्ययोग) के मुतअल्लिक़ कही गयी और अब इसी को तू बेग़रज़ अ़मल के बारे में सुन। इसका हामिल बनकर तू आ'माल की बंदिश का अच्छी तरह ख़ातिमः कर सकेगा। इसका थोड़ा भी बर्ताव ज़िंदगी और मौत के बहुत बड़े ख़ौफ़ से नजात दिलाने वाला होता है। इस बेग़रज़ अ़मल में यक़ीनी तरीक़ः एक ही है, अक़्ल एक ही है, सम्त भी एक ही है; लेकिन जाहिलों की अक़्ल बेशुमार शाखों वाली है, लिहाज़ा वे अ़मल के नाम पर मुख़्तलिफ़ तरीकों का फैलाव कर लेते हैं। अर्जुन! तू मुऐयनः अ़मल कर। या'नी तरीक़े बहुत से हैं, लेकिन वे अ़मल नहीं हैं। अ़मल

कोई मुक़र्ररः सम्त है। अ़मल कोई ऐसी चीज़ है, जो तमाम जनमों से चले आ रहे अज्साम के सफ़र का ख़ातिमः कर देता है। अगर एक भी जनम लेना पड़ा तो सफ़र पूरा कहाँ हुआ?

यग – ऊपर जिस मुऐयनः अ़मल की बात कही गई वह मुऐयनः अ़मल है कौन-सा? श्रीकृष्ण ने साफ़ किया कि **'यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः'**– अर्जुन! यग का तरीक़-ए-कार ही अ़मल है। इसके इलावः दुन्या में जो कुछ किया जाता है, वह इसी दुन्या की बन्दिश है, न कि अ़मल। अ़मल तो इस दुन्या की कैद से नजात दिलाता है। अब वह यग क्या है, जिसे अ़मल में लायें तो अ़मल पूरा हो सके? बाब चार में श्रीकृष्ण ने तेरह-चौदह तरीक़ों से यग का बयान किया, जिसका लुब्बे-लुवाब मा'बूद में दाख़िलः दिला देने वाले तरीक़-ए-ख़ास की अक्कासी है- जो तनफ़्फ़ुस से, तसव्वुर से, ग़ौरोफ़िक्र और ज़ब्ते नफ़्स वग़ैरः से कामयाब होने वाला है। श्रीकृष्ण ने यह भी साफ़ कर दिया कि दुन्यवी मालो मताअ' से इस यग का कोई तअल्लुक़ नहीं है। दुन्यावी मालो मताअ' से कामयाब होने वाले यग बहुत कम हैं- आप करोड़ का हवन ही क्यों न करें। सारे यग मन और हवास के बातिनी अ़मल से कामयाब होने वाले हैं। मुकम्मल होने पर यग जिसकी तख़्लीक करता है, उस उंसुरे लाफ़ानी की जानकारी का नाम इल्म है। उस लाफ़ानी इल्म को हासिल करने वाले जोगी अबदी मा'बूद से तअल्लुक़ बना लेते हैं। जिसे हासिल करना था, हासिल कर ही लिया, तो फिर उस इंसान का अ़मल से कोई सरोकार नहीं है। लिहाज़ा सारे आ'माल उस बदीही दीदार के साथ इल्म में ख़त्म हो जाते हैं। अ़मल करने की बंदिश से वह आज़ाद हो जाता है। इस तरह मुक़र्ररः यग को अमली जामः पहना देना अ़मल है। अ़मल का ख़ालिस मा'ना है – इबादत।

इस मुऐयनः अ़मल, यग के लिए अ़मल या उस मा'बूद के लिए अ़मल के सिवा गीता में दूसरा कोई अ़मल नहीं है। इसी पर श्रीकृष्ण ने जगह-जगह पर ज़ोर दिया। बाब छः में इसी को उन्होंने **'कार्यम् कर्म'** (करने के क़ाबिल अ़मल) कहा। बाब सोलह में बताया कि ख़्वाहिश, गुस्सः और लालच का तर्क कर देने पर ही वह अ़मल शुरू होता है, जो आ'ला शरफ़ को अता कराने वाला है। दुन्यवी कामों में तो जो जितना मश्गूल है, उसके पास ख़्वाहिश, गुस्सः और लालच उतने ही ज़ियादः सजे-सजाये दिखाई पड़ते है, इफ़्रात पाये जाते हैं। इसी मुऐयनः अ़मल को उन्होंने शरीअ़त के उसूलों के मुताबिक़ अ़मल का नाम दिया। गीता अपने में मुकम्मल शरीअ़त

है। आ'लातरीन शरीअ़त वेद हैं, वेदों के जौहर उपनिषद् हैं और उन सबका लुब्बे-लुवाब जोग के मालिक श्रीकृष्ण का यही कलाम 'गीता' है। सत्रहवें और अठारहवें बाब में भी शरीअ़त के तरीक़ः से मुकर्ररः अ़मल, मुअय्यनः, अ़मल, फ़र्ज़े-अ़मल और अ़मले सवाब से इशारः करके उन्होंने बार-बार ज़ोर दिया कि मुऐयनः अ़मल ही आ'ला इफ़ादी है, भलाई करने वाला है।

जोग के मालिक श्रीकृष्ण के इतना ज़ोर देने पर भी आप उस मुऐयनः अ़मल को न करके, श्रीकृष्ण का कहना न मानकर उल्टा-सीधा तख़य्युल करते हैं कि जो कुछ भी दुन्या में किया जाता है, अ़मल है। कुछ भी तर्क करने की ज़रूरत नहीं है, सिर्फ समरः की ख़्वाहिश मत करो, हो गया बेग़रज़ अमली जोग। फ़र्ज़ का एहसास करके करो, हो गया फ़र्ज़ का जोग। कुछ भी करो, मा'बूद को सुपुर्द कर दो - हो गया ख़ुद सुपुर्दगी का जोग। इसी तरह यग का नाम आते ही हम भूत-यग (जिसमें तमाम जानदारों का ख़ुद के खाने में से निवालः दिया जाता है), अज्दाद का यग (पितृयज्ञ; जिसमें अज्दाद को पानी, तिल वग़ैरः देते हैं), अध्यापन एवं संध्यावंदन यग (जिसमें मुतालअः और इबादत की जाती है), होमयज्ञ या देवयज्ञ (जिसमें विष्णु वग़ैरः देवताओं को हवन देते हैं), अतिथि यज्ञ (मेह्मान नवाज़ी) या'नी पाँच यज्ञ (पांच यग) गढ़ लेते हैं और उसके तरीक़-ए-कार में 'स्वाहा'-'स्वाहा' लफ़्ज़ बोलकर यग की चीजें आग को सुपुर्द कर देते हैं और खड़े हो जाते हैं। अगर श्रीकृष्ण ने साफ़-साफ़ बयान न किया हो, तो हम कुछ भी करें। अगर बयान किया है, तो जितना कहा है, उतना ही मान लें। लेकिन हम मान नहीं पाते। विरासत में तमाम रस्मो-रिवाज, इबादत के तौर-तरीक़े हमारे दिमाग़ को जकड़े हुए हैं। ख़ारिजी चीज़ों को कभी हम फ़रोख़्त कर भाग भी नहीं सकते हैं; लेकिन दिल में पहले से ही मौजूद ये इस्रार दिमाग़ में बैठकर हमारे साथ चलते हैं। श्रीकृष्ण के अल्फाज़ को भी हम उन्हीं के मुताबिक़ ढालकर क़बूल करते हैं। गीता तो बेहद सलीस, आमफ़ह्म संस्कृत में है। आप तर्तीब के मुताबिक़ भी मा'ना निकालें तो कभी शुब्हः नहीं होगा। यही कोशिश पेशक़र्दः किताब में की गयी है।

जंग (युद्ध) - अगर यग और अ़मल- दो सवालात ही सहीह तौर से समझ लें तो जंग, नस्ली तस्नीफ़, दोगलः, इल्मी जोग, अमली जोग या मुख़्तसर में मुकम्मल गीता ही आपके समझ में आ जाय। अर्जुन जंग नहीं करना चाहता था। वह कमान फेंककर रथ के पीछे वाले हिस्सः में बैठ गया; लेकिन जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने

वाहिद अ़मल की नसीहत देकर अ़मल को सिर्फ़ मुस्तह्कम ही नहीं किया, बल्कि अर्जुन को उस अ़मल की राह पर चला भी दिया। जंग हुई, इसमें शक नहीं। गीता के पन्द्रह-बीस श्लोक ऐसे हैं जिनमें बार-बार कहा गया, अर्जुन! तू जंग कर; लेकिन एक भी श्लोक ऐसा नहीं है जो बाहरी मार-काट की हिमायत करता है। (क़ाबिले-ग़ौर है- बाब दो, तीन, ग्यारह, पन्द्रह और अठारह) क्योंकि जिस अ़मल पर ज़ोर दिया गया- वह था मुऐयनः अ़मल, जो यकसुई में जाने के बा'द, तबीअ़त को हर जानिब से समेटकर तसव्वुर करने से होता है। जब अ़मल की यही शक्ल है, तबीअ़त, यकसुई और तसव्वुर में लगी है, तो जंग कैसी। अगर गीता के मुताबिक़ इफ़ादः जंग करने वाले के लिए ही है, तो आप गीता का पल्लः छोड़ दें। आपके सामने अर्जुन की तरह जंग की कोई हालत तो है नहीं। दरअस्ल तब भी वह हालत मौजूद थी और आज भी जैसी की तैसी है। जब तबीअ़त को सब तरफ़ से समेटकर आप दिल की दुन्या में तसव्वुर करने लगेंगे, तो ख़्वाहिश, ग़ुस्सः, लगाव, हसद वग़ैरः उयूब आपकी तबीअ़त को टिकने नहीं देंगे। उन उयूब से टक्कर लेना, उनका ख़ातिमः करना ही जंग है। दुन्या में जंग होती ही रहती है; लेकिन उससे भलाई नहीं, बल्कि बरबादी होती है। उसे सुकून कह लें या हालत की नज़ाकत, दूसरा कोई सुकून इस दुन्या में नहीं मिन्नता। सुकून तभी मिलता है, जब यह रूह अपने बरहक़ मुक़ाम को हासिल कर ले। यही वाहिद सुकून है, जिसके बा'द कोई बेइत्मीनानी नहीं होती है। लेकिन यह सुकून तद्बीर से मिलता है। उसी के लिए मुऐयनः अ़मल का उसूल है।

नस्ल (वर्ण) - उस अ़मल को ही चार नस्लों (बर्हमन, क्षत्री, वैश्य और शूद्र) में तक़्सीम किया गया। फ़िक्र में लगते तो सभी हैं; लेकिन कोई तनफ़्फ़ुस के रफ़्तार पर बन्दिश लगाने में क़ादिर होगा, तो कोई शुरू में दो घंटे तक फ़िक्र में बैठकर दस मिनट भी अपने मुआफ़िक़ नहीं पाता। ऐसी हालत वाला कमइल्म रिवाज़तकश शूद्र नस्ल (दर्जः) का है। वह अपनी फ़ित्री सलाहीयत के मुताबिक़ ख़िद्मत से ही अ़मल की शुरुआत करे। बतद्रीज वैश्य, क्षत्री और बर्हमन नस्लों (दर्जात) की सलाहीयत उसके ख़स्लत में ढलती जायेगी। वह तरक़्क़ीयाप्तः होता जायेगा। लेकिन वह बर्हमन नस्ल (दर्जः) ऐबदार है; क्योंकि अभी वह मा'बूद से जुदा है। मा'बूद में दाख़िलः पा जाने पर वह बर्हमन भी नहीं रह जाता। नस्ल (वर्ण) का मा'ना है शक्ल। यह जिस्म आपकी शक्ल नहीं है। आपकी शक्ल वैसी है, जैसी आपकी ख़स्लत है। श्रीकृष्ण

कहते हैं- अर्जुन! इंसान अक़ीदतमंद है; लिहाज़ा कहीं न कहीं उसकी अक़ीदत ज़रूर होगी। जैसी अक़ीदत वाला वह इंसान है, ख़ुद भी वही है। जैसी ख़स्लत, वैसा इंसान। नस्ल अ़मल की सलाहीयत का बातिनी पैमानः है, लेकिन लोगों ने मुऐयनः अ़मल को तर्क कर बाहर समाज में पैदाइश की बुन्याद पर ज़ातों को नस्ल (वर्ण) मानकर उनके रोज़गार का वसीलः तय कर दिया, जो मह्ज़ एक मुआशराती इंतिज़ाम था। वे अ़मल की हक़ीक़ी शक्ल को तोड़ते-मरोड़ते हैं, जिससे उनकी खोखली मआशराती इज़्ज़त और रोज़ी-रोटी को आँच न आये। आगे चलकर नस्ल का तअय्युन सिर्फ़ पैदाइश से होने लगा। ऐसा कुछ नहीं है। श्रीकृष्ण ने कहा, चार नस्लों की तख़्लीक़ मैंने की। क्या भारत से बाहर तख़्लीक नहीं है? दूसरी जगह तो इन ज़ातों का कोई वुजूद ही नहीं है। भारत में इस इंतिज़ाम के तहत लाखों ज़ाते और ज़ैली ज़ातें भी हैं। श्रीकृष्ण ने क्या इंसानों को बाँटा था? नहीं, **'गुणकर्म विभागशः'**- ख़ुसूसियात की बुन्याद पर आ'माल बाँटे गये, **'कर्माणि प्रविभक्तानि'**- अ़मल बाँटा गया। अ़मल समझ में आ गया, तो नस्ल (वर्ण) का म'आनी समझ में आ जायेगा, और नस्ल समझ में आ जाने पर इब्नुलग़ैब (दोग़लः) की हक़ीक़ी शक्ल आप समझ लेंगे।

दोग़लः (वर्णसंकर) - इस राहे अ़मल से डिग जाना ही दोग़लः है। रूह की ख़ालिस नस्ल है रूहे मुत्लक़। उससे तअल्लुक़ बनाने वाले आ'माल से भटककर क़ुद्रत में मुरक्कब हो जाना ही दोग़लः है। श्रीकृष्ण ने साफ़ अयाँ किया कि इस आ'मान को किये बग़ैर उस मक़ाम को कोई हासिल करता नहीं और हासिल करने वाले अज़ीम इंसान को अ़मल करने से न कोई फ़ाइदः है, न छोड़ने से कोई नुक़्सान, फिर भी अवामी फ़राहम के लिए वे अ़मल का बरताव करते हैं। उन अज़ीम इंसानों की तरह मुझे भी हासिल होने के क़ाबिल कोई चीज़ लाहासिल नहीं है, फिर भी मैं ताबेईन की भलाई के ख़याल से अ़मल का बर्ताव करता हूँ। अगर न करूँ, तो सभी दोग़लः हो जाँय। औरतों के नाक़िस होने से दोग़लः होना तो सुना गया; लेकिन यहाँ श्रीकृष्ण कहते हैं कि आ'ला मक़ाम पर फ़ाइज़ अज़ीम इंसान अ़मल न करे, तब लोग दोग़लः हो जाते हैं। उस अज़ीम इंसान की नक़्ल करके इबादत करना बंद कर देने से वे दुन्या में भटकते रहेंगे, दोग़लः हो जायेंगे; क्योंकि इस अ़मल को करके ही उस आ'ला बेग़रज़ अ़मल की हालत को अपनी ख़ालिस नस्ल रूहे मुत्लक़ को हासिल किया जा सकता है।

इल्मी जोग और अमली जोग (ज्ञानयोग तथा कर्मयोग) – अ़मल एक ही है– मुऐयनः अ़मल, इबादत; लेकिन उसको करने के नज़रीयात दो हैं। अपनी कुव्वत को समझकर, नफ़ा-नुक़्सान का फ़ैसलः लेकर इस अ़मल को करना इल्मी जोग (ज्ञानयोग) है। इस राह का रियाज़तकश जानता है कि ''आज मेरी यह हालत है, आगे इस राह में मेरा किर्दार बदलकर यह हो जायेगा, फिर अपने मक़ाम को हासिल करूँगा।'' इस ख़याल को मद्देनज़र रखते हुए अ़मल में लगता है। अपनी हालत को जानकर चलता है, लिहाज़ा इल्मी जोगी कहा जाता है। ख़ुद सुपुर्दगी के साथ उसी अ़मल में लगना, नफ़ा-नुक़्सान का फ़ैसलः मा'बूद के हवाले करके चलना बेग़रज़ अमली जोग (कर्मयोग), राहे-बंदगी है। दोनों के मुहर्रिक पीरो-मुर्शिद हैं। एक ही अज़ीम इंसान से नसीहत लेकर एक ख़ुद-कफ़ील होकर उस अ़मल में लगता है और दूसरा उन्हीं मुर्शिद पर मुन्हसिर होकर लगा होता है, बस फ़र्क़ इतना ही है। लिहाज़ा जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने कहा– अर्जुन! इल्मी जोग (सांख्ययोग) के ज़रीअः जो आ'ला हक़ीक़त रू-ब-रू होती है, वही आ'ला हक़ीक़त बेग़रज़ अमली जोग के ज़रीअः भी हासिल होती है। जो दोनों को मुसावी देखता है, वही हक़शनास होता है। दोनों आ'माल का तरीक़ः बताने वाला रम्ज़आश्ना एक है, तरीक़ः भी एक ही है – इबादत। ख़्वाहिशात का ईसार दोनों करते हैं और नतीजः भी एक ही है, सिर्फ़ अ़मल के नज़रीयात दो हैं।

एक रूहे मुत्लक़ – मुऐयनः अ़मल, मन और हवास का एक मुक़र्ररः बातिनी अ़मल है। जब अ़मल की यही शक्ल है तो बाहर मन्दिर-मस्जिद-चर्च बनाकर तमाम देवी-देवताओं के बुत या शबीह की इबादत करना कहाँ तक मुनासिब है? भारत में हिन्दू कहलाने वाले समाज (दरहक़ीक़त वे अबदी दीनी हैं, उनके आबा-व-अज्दाद ने मावरा सचाई की तह्क़ीक़ करके मुल्क और ग़ैरमुल्क में उसकी तब्लीग़ की। उस राह पर चलने वाला दुन्या में कहीं भी हो, अबदी दीन वाला है। इतनी बड़ी अज़्मत वाला हिन्दू समाज) ख़्वाहिशात के ज़ेरे-असर मज्बूर होकर मुख़्तलिफ़ ग़लतफ़ह्मियों का शिकार हो गया। श्रीकृष्ण कहते हैं– अर्जुन! देवताओं की जगह पर देवता नाम की कोई ताक़त नहीं है। जहाँ कहीं भी इंसान की अक़ीदत सर झुकाती है, उसके पसमंज़र मैं ही खड़ा होकर समरः अता करता हूँ। उसकी अक़ीदत को तस्दीक करता हूँ; क्योंकि हर जगह मेरा ही वुजूद है। लेकिन उसकी वह इबादत का तरीक़ः ग़ैरमुनासिब है, उनका समरः फ़ानी है। ख़्वाहिशात ने जिनके इल्म को सल्ब कर दिया है, वे

कमअक़्ल लोग ही दूसरे देवताओं की इबादत करते हैं। सालेह लोग देवताओं की इबादत करते हैं, मलकाते रदीयः वाले यक्ष-देवों को और मलकाते मज़मूम के हामिल आसेब की इबादत करते हैं; कड़ी रियाज़त करते हैं, लेकिन अर्जुन! वे जिस्म में मौजूद तमाम माद्दः और बातिन में मौजूद मुझ रूहे मुत्लक़ को कमज़ोर करते हैं, न कि इबादत करते हैं। यक़ीनी तौर पर तू उन्हें दुन्यवी ख़सूलत से मुज़य्यन जान। इससे जियादः श्रीकृष्ण क्या कहते! उन्होंने साफ़ तौर पर कहा- अर्जुन! पर्वर्दगार सभी जानदारों के दिल में मक़ाम करता है। सिर्फ़ उसी की पनाह में जा। इबादत की जगह दिल में है, बाहर नहीं। फिर भी लोग पत्थर-पानी, मन्दिर-मस्जिद, देवी-देवताओं का पीछा करते ही हैं। उन्हीं के साथ श्रीकृष्ण की भी एक मूरत गढ़कर बढ़ा लेते हैं। श्रीकृष्ण की ही इबादत पर ज़ोर देने वाले और ताउम्र बुतपरस्ती की तर्दीद करने वाले 'बुद्ध' की भी एक मूरत उनके मुक़ल्लिदों ने गढ़ ली और लगे इबादत करने (चराग़ दिखाने), जबकि बुद्ध ने कहा था- आनन्द! तथागत (गौतम बुद्ध) की जिस्मानी इबादत में वक़्त बरबाद न करना।

मन्दिर, मस्जिद, चर्च, ज़ियारतगाह, बुत और यादगारों के ज़रीअः पहले होने वाले अज़ीम इंसानों की यादे सँजोई जाती हैं, जिससे उनकी हुसूलयाबियों की याद आती रहे। अज़ीम इंसानों में औरत और मर्द सभी होते आये हैं। जनक की दुख़्तर 'सीता' पिछले जनम में एक बर्हमन की बेटी थी। अपने पिदर (बाप) की तर्ग़ीब से आ'ला मा'बूद को हासिल करने के लिए उसने रियाज़त की, लेकिन कामयाब न हो सकी। दूसरे जनम में उसने 'राम' को हासिल किया और ख़ालिस इल्मवाली (चिन्मय) लाफ़ानी, अबदी ताक़त (आदिशक्ति) की शक्ल में मुअज़्ज़मः हुई। ठीक इसी तरह शाही ख़ानदान में पैदा 'मीरा' में रूहे-मुत्लक़ की अक़ीदत फूट पड़ी। सारा कुछ का ईसार कर वह मा'बूद की फ़िक्र में लग गयी, दिक्कतें झेली और कामयाब रही। इनकी याद सँजोने के लिए मंदिर बने, यादगारें बनीं ताकि समाज उनकी नसीहतों से तर्ग़ीब हासिल कर सके। मीरा, सीता या इस जानिब का मुहक़्क़िक़ हर अज़ीम इंसान हमारी मश्अले-राह है। हमें उनके नक़्शे-क़दम पर चलना चाहिए; लेकिन इससे बड़ी ग़लती क्या होगी, अगर हम सिर्फ़ उनके क़दमों में फूल चढ़ाकर, संदल लगाकर मन अपने फ़राइज़ को पूरा समझ बैठें।

आमतौर से जो जिसका नस्बुल्ऐन होता है, उसका मुजस्सम, तस्वीर, खड़ाऊँ, उसका मक़ाम ख़्वाह उससे मुतअल्लिक़ कुछ भी देखने-सुनने पर मन में अक़ीदत

उमड़ आती है। यह बजा ही है। हम भी अपने बन्दःपर्वर मुर्शिद की तस्वीर को कूड़े में नहीं फेंक सकते, क्योंकि वे हमारी मश्अले-राह हैं। उन्हीं की तर्ग़ीब और हुक्म के मुताबिक़ हमें चलना है। जो मक़ाम उनका है, आहिस्तः-आहिस्तः चलकर उसका हुसूल हमारी भी मंज़िल है और यही उनकी हक़ीक़ी इबादत है। यहाँ तक तो ठीक है कि जो दरहक़ीक़त मश्अले-राह हैं, उनकी बेहुर्मती न करें; लेकिन उन पर फूल-माला चढ़ाने को ही बंदगी मान बैठने से, उतने को ही भलाई का ज़रीअः मान लेने से हम मंज़िले मक़्सूद से बहुत दूर भटक जायेंगे।

अपनी मश्अले-राह की नसीहतों को दिलनशीन करने और उस पर चलने की तर्ग़ीब क़बूल करने के लिए ही यादगारों का इस्ते'माल है, चाहे उसे ख़ानकाह, मंदिर, मस्ज़िद, चर्च, मठ, विहार, गुरुद्वारा या कुछ भी नाम दे लें बशर्ते उन मर्कज़ों का तअल्लुक़ दीन से है तो। जिसका मुजस्समः है, उसने क्या किया और क्या हासिल किया?, कैसे रियाज़त की?, कैसे हासिल किया?- सिर्फ इतनी ही ता'लीम लेने के लिए हम वहाँ पहुँचते हैं और पहुँचना भी चाहिए; लेकिन अगर इन जगहों पर अज़ीम इंसानों के क़दमों के निशानात नहीं बताये गये, करके नहीं सिखाये गये, भलाई का इंतिज़ाम नहीं मिला तो वह जगह ग़लत है। वहाँ आपको सिर्फ क़दामत मिलेगी। वहाँ जाने में आपका नुक़्सान है। ज़ाती तौर पर घर-घर, गली-गली जाकर पैग़ाम पहुँचाने के मुकाबलः में इज्तिमाई नसीहतों के मक़ामात की शक्ल में इन दीनी इदारों को क़ाइम किया गया था, लेकिन वक़्त के साथ आगे चलकर इन तर्ग़ीब देने वाले मक़ामात से ही बुतपरस्ती और क़दामतों ने दीन की जगह ले ली। यहीं से भटकाव की हालत पैदा हो गयी।

शरीअ़त (ग्रन्थ) - शराए' का मुतालअः ज़रूरी है, जिससे आप उस हिदायतशुदः तरीक़ः को समझ सकें, जिसे जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने मुऐय्यन अ़मल कहा है और जब समझ में आ जाय तो फ़ौरन करना शुरू कर दें। ज़ेह्न से उतरने लगे, तो दुबारः मुतालअः कर लें। यह नहीं कि किताब को हाथ जोड़कर चावल, सन्दल छिड़ककर रख दें। किताब राहनुमा निशान है, जो आख़िरी अंजाम तक साथ देती है। देखते हुए आगे बढ़ते चलें, अपने मंज़िले मक़्सूद की ओर। जब मा'बूद को दिल में बसा लेंगे, तो वह मा'बूद ही किताब बन जायेगा। लिहाज़ा याद को सँजोना नुक़्सानदेह नहीं है; लेकिन इन यादगारों की इबादत से ही मुतमइन हो जाना नुक़्सानदेह है।

दीन (धर्म) – (बाब २/१६-२९) जोग के मालिक श्रीकृष्ण के मुताबिक़ बातिल चीज़ का वुजूद नहीं है और हक़ की कभी कमी नहीं है। रूहे-मुत्लक़ ही हक़ है, दाइमी है, लाफ़ानी, नाक़ाबिले-तब्दील और अबदी है। लेकिन वह रूहे-मुत्लक़ नाक़ाबिले फ़हूम, मावरा-ए-हिस और तबीअ़त है। अब तबीअ़त पर क़ाबू कैसे हो? तबीअ़त को क़ाबू में करके उस रूहे-मुत्लक़ को पाने के तरीक़-ए-ख़ास का नाम अ़मल है। इस अ़मल को अमली जामा पहनना ही दीन है, जिम्मःदारी है।

गीता (बाब २/४०) में लिखा है कि अर्जुन! इस अमली जोग में इब्तिदा का ख़ातिमः नहीं है। इस अ़मल की शक्ल वाले दीन का ज़रा-सा भी वसीलः आमदो-रफ़्त के बहुत बड़े ख़ौफ़ से नजात दिलाने वाला होता है या'नी इस अ़मल को अमली जामः पहना देना ही दीन है।

इस मुऐयनः अ़मल (राहे-रियाज़त) को रियाज़तकश की ख़स्लत में मौजूद सलाहीयत के मुताबिक़ चार हिस्सों में तक़्सीम किया गया है। अ़मल को समझकर इंसान जब से शुरू करता है, उस इब्तिदाई दौर में वह शूद्र है। आहिस्तः-आहिस्तः तरीक़ः पकड़ में आया तो वही वैश्य है। दुन्या के बवाल को झेलने की सलाहीयत और बहादुरी आने पर वही इंसान क्षत्री और मा'बूद का मक़ाम हासिल करने की सलाहीयत इल्म (हक़ीक़ी इल्म), खुसूसी इल्म (इल्हाम) उस वुजूद पर मुन्हसिर रहने की सलाहीयत – ऐसी लियाक़तों के आने पर वही बर्हमन है। लिहाज़ा जोग के मालिक श्रीकृष्ण (गीता, बाब १८/४६-४७) में कहते हैं कि ख़स्लत में पायी जाने वाली सलाहीयत के मुताबिक़ अ़मल में लगना फ़र्ज़े-मंसबी है। कम वज़्नी होने पर भी फ़ित्री तौर पर हासिल फर्ज़े-मंसबी बेह्तर है और सलाहीयत हासिल किये वग़ैरः ही दूसरों के तरक़्क़ीयाफ़्तः अ़मल का इत्तिबाअ भी मुज़िर है। फ़र्ज़े-मंसबी में मरना भी बेह्तर है; क्योंकि लिबास बदलने से लिबास बदलने वाला तो बदल नहीं जाता। उसके वसीला का सिल्सिलः वहीं से फिर शुरू हो जायेगा, जहाँ से छूटा था। ज़ीनः-ब-ज़ीनः चढ़कर वह आ'ला कामयाबी लाफ़ानी मक़ाम को हासिल कर लेगा।

इसी पर फिर ज़ोर देते हैं कि जिस रूहे-मुत्लक़ से सारे जानदारों की तख़्लीक़ हुई है, जो सब जगह जारी-ओ-सारी है, ख़स्लत से पैदा हुई सलाहीयत के मुताबिक़ उसकी अच्छी तरह इबादत करके इंसान आ'ला कामयाबी को हासिल कर लेता है। या'नी मुऐवनः तरीक़ः से एक रूहे-मुत्लक़ का ग़ौरोफ़िक्र ही दीन है।

दीन में दख़्ल किसका है? इस मुऐयनः अ़मल को करने का इख़्तियार किसे है? इसे साफ़ करते हुए जोग के मालिक ने बताया- ''अर्जुन! बहुत बड़ा गुनाहगार भी अगर लाशरीक अक़ीदत से मुझे याद करता है (लाशरीक या'नी बिला शिर्कते ग़ैर), मेरे सिवा दूसरे किसी को भी न याद कर सिर्फ मुझे याद करता है तो **'क्षिप्रं भवति धर्मात्मा'**- वह जल्द ही दीनदार हो जाता है।'' उसकी रूह दीन से मुज़ैयन हो जाती है। लिहाज़ा श्रीकृष्ण के मुताबिक़ दीनदार वह है, जो एक रूहे-मुत्लक़ में लाशरीक अक़ीदत से लग गया है। दीनदार वह है, जो एक रूहे-मुत्लक़ के हुसूल के लिए मुऐयनः अ़मल पर कारबंद होता है। दीनदार वह है, जो ख़स्लत से मुऐयनः कुव्वत के मुताबिक़ मा'बूद की तह्क़ीक़ में लगा है।

आख़िर में कहते हैं कि **'सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज'**- अर्जुन! सारे मज़ाहिब की फ़िक्र छोड़कर मह्ज़ मेरी पनाह में हो जा। लिहाज़ा एक रूहे-मुत्लक़ के लिए वक़्फ़ इंसान ही दीनदार है। एक रूहे-मुत्लक़ में अक़ीदत साकिन करना ही दीन है। उस एक रूहे-मुत्लक़ के हुसूल के मुऐयनः अ़मल को करना दीन है। इस मक़ाम को हासिल करने वाला अज़ीम इंसान, ख़ुद इत्मीनान अज़ीम इंसानों का उसूल ही दुन्या में वाहिद दीन है। उनकी पनाह में जाना चाहिए कि उन अज़ीम इंसानों ने कैसे उस रूहे-मुत्लक़ को हासिल किया? किस रास्तः से चले? वह रास्तः हमेशः एक ही है, उस रास्तः से चलना दीन है।

दीन इंसानी रविश है, इंसान के बरताव की चीज़ है। वह बरताव सिर्फ़ एक है- **'व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन'** (बाब २/४१)- इस अमली जोग में मुकर्ररः तरीक़ः एक ही है- हवास की कोशिश और मन के कारोबार पर बंदिश लगाकर रूह में (आ'लातरीन ब्रह्म में) जारी करना (बाब ४/२७)।

तब्दीले-दीन (धर्मान्तरण) - अबदी दीन (सनातन धर्म) के मख़्रज भारत में बदरिवाज यहाँ तक पनपे कि मुसल्मानों के हमलों के वक़्त उनका दीन हम्लावरों के हाथ का एक निवालः चावल खाने से, दो घूँट पानी पीने से बर्बाद होने लगा। बेदीन करार पाने वाले हज़ारों हिन्दुओं ने ख़ुदकुशी कर ली। दीन के लिए वे मरना जानते थे, लेकिन दीन समझें तब तो। दीन तो हो गया छुईमुई। छुईमुई का पौदा छूने पर मुरझा जाता है लेकिन छूटते ही फिर ज्यों का त्यों हो जाता है। उनका अबदी दीन (सनातन धर्म) तो ऐसा मुरझाया कि कभी नहीं पनपा। (दीन का तअल्लुक़ रूह से है) जिस अबदी रूह को दुन्यवी चीज़े छू भी नहीं पाती, वह कहीं छूने-खाने से

बरबाद होता है? आप तलवार से मरें, दीन छूने से मर गया? क्या सचमुच दीन बरबाद हुआ? हरगिज़ नहीं, दीन के नाम पर कोई बदरिवाज पल रही थी, वह बरबाद हुई।

जिन्होंने इस तरह दीन तब्दील कर लिया, क्या कोई दीन पा गये? हिन्दू से मुसल्मान बन जाना या एक तरह की बूदोबाश से दूसरे बूदोबाश में चले जाना दीन तो नहीं है। इस तरह के मन्सूबः के तहत साजिश का शिकंजः बनाकर जिन्होंने उन्हें बदला, क्या वे दीनदार थे? वे तो और भी बड़े बदरिवाजों के शिकार थे। हिन्दू उसी में जाकर फँस गये। ग़ैर तरक़्क़ीयाफ़्तः और गुमराह कबीलों को मुहज़्ज़ब बनाने के लिए मुहम्मद (सल्ल०) ने शादी, तलाक, वसीयत, लेन-देन, सूद, गुवाही, क़सम, तौबः (कफ़्फ़ारः), रोज़ी-रोटी, खाना-पीना, बूदो-बाश वग़ैरः मुआमलात में एक मुआशराती इंतिज़ाम दिया और बुतपरस्ती, शिर्क, ज़िनाकारी, चोरी, शराब, जुआ, माँ-दादी वग़ैरः से शादी पर बंदिश लगायी, और हैज़वाली औरतों के साथ मुबाशरत पर रोक लगाकर रोज़े के दिनों में भी इसके लिए ढील दी। जन्नत में बहुत सी हमउम्र, अनछुई हूरो की बात कही और नौजवान लड़कों की लालच दी। यह कोई दीन नहीं था, एक तरह का मुआशराती निज़ाम था। ऐसा कुछ कहकर उन्होंने शह्वत में डूबे हुए समाज को उधर से मोड़कर अपनी तरफ़ माइल किया।

मुहम्मद साहब ने जिसे दीन बताया, उधर किसी का ख़याल ही नहीं है। उन्होंने बताया था कि जिस इंसान की एक भी साँस उस ख़ुदा के नाम के बग़ैर ख़ाली जाती है, उससे ख़ुदा क़ियामत में वैसे ही पूछता है, जैसे किसी गुनाहगार से उसके गुनाह के बदले में बाज़पुर्स की जाय, जिसकी सज़ा है हमेशः-हमेशः के लिए दोज़ख़। कितने सच्चे मुसल्मान हैं, जिनकी एक भी साँस ख़ाली न जाती हो? करोड़ों में बिरला ही कोई होगा। बाक़ी सभी की साँस ख़ाली ही जाती है, जिसकी सज़ा वही है, जो गुनाहगारों के लिए है। बताने की ज़रूरत नहीं, 'दोज़ख'। मुहम्मद साहब ने इंतिज़ाम दिया कि जो किसी को नहीं परेशान करता, जानवरों को भी तक्लीफ़ नहीं देता, वह ख़ुदा की जानिब से निदाएग़ैब सुनता है। यह सभी जगहों के लिए था, लेकिन बा'द वालों ने एक रास्तः निकाल लिया कि मक्का में एक मस्जिद है, जिसमें हरी घास नहीं तोड़नी चाहिए, उस मस्जिद में किसी जानवर को नहीं मारना चाहिए, वहाँ किसी को ठेस नहीं पहुँचानी चाहिए और घूम-फिरकर वे उसी दाइरः में खड़े हो गये। क्या ख़ुदा की जानिब से निदाएग़ैब सुनने से पहले मुहम्मद साहब ने कोई मस्जिद बनवाई

थी? कभी किसी मस्जिद में कोई आयत उतरी? यह मस्जिद तो उनका मक़ाम रही है, जिसमें उनकी यादगार मह्फ़ूज़ है। मुहम्मद साहब के मफ़्हूम को तबरेज़ ने समझा था, मंसूर ने जाना था; इक़्बाल ने जाना था; लेकिन वे मज़हबी लोगों के शिकार हुए, उन्हें तक्लीफ़ें दी गयीं। सुकरात को ज़हर दिया गया; क्योंकि वह लोगों को लामज़्हब बना रहा था। ऐसा ही इल्ज़ाम ईसा पर भी लगाया गया, उन्हें दार पर चढ़ाया गया; क्योंकि वे ता'तील के दिन भी काम करते थे, नाबीना लोगों को बीनाई अता करते थे। ऐसा ही भारत में भी है। जब भी कोई हकक़्शनास अज़ीम इंसान सच की तरफ़ इशारः करता है, तो इन मंदिर, मस्ज़िद, मठ, फ़िर्क़ों और ज़ियारतगाहों से जिनकी रोज़ी-रोटी चलती है, हाय-तौबः करने लगते हैं, बेदीनी-बेदीनी शोर मचाने लगते हैं। किसी को इनसे लाखों-करोड़ों की आमदनी है, तो किसी की दाल-रोटी ही चलती है। हक़ीक़त आम होने से अपनी रोज़ी-रोटी को ख़त्रः दिखायी पड़ता है। वे सचाई को पनपने नहीं देते और न कभी पनपने दे सकते हैं। इसके सिवा उनकी मुख़ालफ़त की कोई वज्ह नहीं है। कुरूने माज़ी में यह याद क्यों मह्फ़ूज़ की गयी थी, इसका उन्हें एहसास नहीं है।

गिरहस्तों का इख्तियार – अमूमन लोग पूछते हैं कि जब अ़मल की यही शक्ल है, जिसमें यकसुई, ज़ब्ते नफ़्स, मुसल्सल फ़िक्र और तसव्वुर करना है, तब तो गीता आम घर-बार वालों के लिए बेकार है, तब तो गीता सिर्फ फ़क़ीरों के लिए है। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं है। गीता बुन्यादी तौर पर उसके लिए है, जो इस राह का राही है और ज़ुज़्बी तौर पर उसके लिए भी है, जो इस राह का राही बनना चाहता है। गीता तमाम इंसानों के लिए बराबर का सरोकार रखती है। सालेह गिरहस्तों के लिए तो इसका ख़ास इस्ते'माल है; क्योंकि वहीं से अ़मल की इब्तिदा होती है।

श्रीकृष्ण ने कहा था, अर्जुन! इस बेग़रज़ अमली जोग में इब्तिदा का कभी ख़ातिमः नहीं होता। इस पर की जाने वाली थोड़ी सी भी रियाज़त आमदो-रफ़्त के बहुत बड़े ख़ौफ़ से नजात दिला करके ही छोड़ती है। आप ही बतायें, थोड़ी रियाज़त कौन करेगा? गिरहस्त या तारीकुद्दुन्या? गिरहस्त ही इसके लिए थोड़ा वक़्त देगा, यह उसके लिए ही है। बाब ४/३६ में फ़र्माया- अर्जुन! तू अगर सारे गुनाहगारों से भी ज़ियादः गुनाहगार है, तब भी इल्म की कश्ती से बिलाशक पार हो जायेगा। ज़ियादः गुनाहगार कौन है? जो मुसल्सल लगा है वह या जो अभी लगना चाहता है। लिहाज़ा सालेह गिरहस्त की ज़िंदगी से ही अ़मल की शुरुआत है। बाब ६/३७-४५ में अर्जुन

ने सवाल खड़ा किया- बन्दःपर्वर! कमज़ोर कोशिश वाला अक़ीदतमंद इंसान आ'ला नजात को न हासिल कर किस बदहाली को पहुँचता है? श्रीकृष्ण ने कहा- अर्जुन! जोग से डिगे हुए कमज़ोर कोशिश वाले इंसान का भी कभी ख़ातिमः नहीं होता। वह जोग से बदउन्वान बामर्तबः लोगों [पाक (सदाक़त) बर्ताव वाले ही बामर्तबः लोग हैं।] के यहाँ जनम लेकर जोगी ख़ानदान में दाख़िलः पा जाता है, वसीलः के जानिब उसका रुज़्हान होता है और तमाम जनमों का सफर तय करता हुआ वहीं पहुँच जाता है, जिसका नाम आ'ला नजात या'नी आ'ला मक़ाम है। यह कमज़ोर कोशिश कौन करता है? जोग से बदउन्वान होकर वह कहाँ जनम लेता है? गिरहस्त ही तो बना। वहीं से वह रियाज़त की तरफ़ मुख़ातब होता है। बाब ९/३० में उन्होंने कहा कि बेहद बदकिर्दार भी अगर लाशरीक अक़ीदत से मुझे याद करने लगे, तो वह सूफ़ी ही है; क्योंकि वह पुख़्तः इरादः के साथ सही राह पर लग गया है। बेहद बदकिर्दार कौन होगा? जो यादे इलाही में लग गया वह, या वह जिसने अभी शुरू ही नहीं किया? बाब ९/३२ में कहा- औरत, वैश्य, शूद्र और गुनाहगार योनियों वाले ही क्यों न हों, मेरी पनाह में आकर रियाज़त करने से आ'ला नजात पा जाते हैं। हिन्दू हो, ईसाई हो, मुसल्मान हो; कोई हो श्रीकृष्ण ऐसा कुछ नहीं कहते। बेहद बदकिर्दार, नीच ही क्यों न हो, मेरी पनाह में आकर आ'ला नजात हासिल करते हैं। लिहाज़ा गीता तमाम इंसानों के लिए है। सालेह गिरहस्त की ज़िंदग़ी से ही इस अ़मल की इब्तिदा है। आहिस्तः-आहिस्तः वह सालेह गिरहस्त जोगी बन जाता है, मुकम्मल तारीकुद्दुन्या हो जाता है और उंसुर का बदीही दीदार करके रूहे-मुत्लक़ से निस्बत पा जाता है जिसे श्रीकृष्ण ने कहा कि आलिम मेरा हममर्तबः है।

ख़वातीन (स्त्रियाँ) - गीता के मुताबिक़ जिस्म एक लिबास है। जिस तरह बोसीदः लिबास को तर्क कर इंसान नया लिबास क़बूल कर लेता है ठीक उसी तरह रूह इस जिस्म के तम्सीली लिबास को तर्क कर दूसरा जिस्म (लिबास) क़बूल कर लेती है। आप जिर्म (पिण्ड) की शक्ल में औरत हों ख़्वाह मर्द, ये जिस्म की शक्लें हैं। दुन्या में इंसान सिर्फ दो तरह के हैं- फ़ानी और लाफ़ानी। तमाम जानदारों का जिस्म फ़ानी ख़्वाह तग़य्युर पिज़ीर है। मन के साथ हवास जब साकिन हो जाते हैं तब वहीं लाफ़ानी इंसान है। उसका कभी ख़ातिमः नहीं होता। यह यादे-इलाहे की हालत है।

औरतों के मुतअल्लिक़ कभी इज़्ज़त तो कभी बेइज़्ज़ती का ख़याल समाज में

बना ही रहता है लेकिन गीता के मावराई कलाम में यह साफ़ ज़ाहिर है कि शूद्र (कमइल्म), वैश्य (तरीक़-ए-कार का हामिल), औरत ख़्वाह मर्द कोई क्यों न हो, मेरी पनाह में आकर आ'ला नजात को हासिल करता है। लिहाज़ा इस सिराते मुस्तक़ीम में औरतों का भी वहीं मक़ाम है जो मर्दों का है।

माद्दी ख़ुशहाली – गीता आ'ला इफ़ादः तो देती है, साथ ही इंसानों के लिए ज़रूरी माद्दी चीज़ों का भी बन्दोबस्त करती है। बाब ९/२०-२२ में जोग के मालिक श्रीकृष्ण कहते हैं कि बहुत से लोग मुकर्ररः तरीक़ः से मेरी इबादत करके बदले में जन्नत की ख़्वाहिश करते हैं। उन्हें अज़ीम जन्नत की दुन्या हासिल होती है, मैं अता करता हूँ। जो माँगोगे, वह मुझसे हासिल होगा; लेकिन इस्ते'माल के बा'द उसका ख़ातिमः हो जायेगा, क्योंकि जन्नत तअय्युशात भी फ़ानी हैं। उन्हें दुबारः जनम लेना पड़ेगा। हाँ, मुझसे मन्सूब होने के बिना पर वे ख़त्म नहीं होते; क्योंकि मैं भलाई की तम्सील हूँ। मैं उन्हें तअय्युशात देता हूँ और आहिस्तः-आहिस्तः अलग कराकर फिर उन्हें कारे-सवाब में लगा देता हूँ।

मैदान (क्षेत्र) – जिस रूहे-मुत्लक़ की पाक ज़बान का कलाम यह गीता है, उन्होंने ख़ुद क्षेत्र का तअर्रुफ कराया कि, अर्जुन! **'इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्य-भिधीयते'**– यह जिस्म ही मैदान (क्षेत्र) है, जिसमें बोया हुआ भले और बुरे अ़मल का बीज तअस्सुर (संस्कार) की शक्ल में उगता और बा'द में आरामो-तक्लीफ़ की शक्ल लेकर तलज़्ज़ुज़ात की शक्ल में हासिल होता है। दुन्यवी दौलत नीच योनियों में ले जाने के लिए है, जबकि रूहानी दौलत पर्वर्दगार रूहे मुत्लक़ से निस्बत दिलाती है, मुर्शिद की कुर्बत से इनमें फैसलःकुन जंग की शुरुआत होती है। यही मैदान और आलिमे-मैदाँ की जंग है।

शर्हनवीसों का क़ौल है- एक मैदान-ए-अ़मल (कुरुक्षेत्र) बाहर है और दूसरा मन के भीतर है। गीता का एक मत्लब ख़ारजी है, दूसरा दाख़िली। लेकिन ऐसा कुछ नहीं है। मुक़र्रिर एक बात कहता है, लेकिन सुनने वाले अपनी समझ के मुताबिक़ ही उसे पकड़ पाते हैं, लिहाज़ा मुख़्तलिफ़ मा'ना महसूस होते हैं। राहे-रियाज़त पर बतद्रीज चलकर जो भी इंसान श्रीकृष्ण की सत्ह पर खड़ा हो जायेगा तो जो मंज़र श्रीकृष्ण के सामने था, वही उसके भी सामने होगा। वही अज़ीम इंसान उनके दिली एहसासात को, गीता के इशारों को समझ सकता है, समझा सकता है।

गीता का एक भी श्लोक ख़ारिजी अक्कासी नहीं करता। ख़ाना-पहनना-रहना आप जानते ही हैं। बूदो-बाश, तस्लीमशुदगी, दुन्यवी रस्मो-रिवाज में जगह, वक़्त और हालात के मुताबिक़ तब्दीली कुद्रत की देन है। इसमें श्रीकृष्ण आपको कौन-सा इंतिज़ाम दें? कहीं लड़कियों की ज़ियादती है, कई शादियाँ होती हैं, तो कहीं उनकी ता'दाद कम है, कई भाइयों के बीच एक बीबी रह लेती है, इसमें श्रीकृष्ण कौन-सा इंतिजाम दें। दूसरी आलमी जंग के बा'द जापान में आबादी की कमी एक मस्अलः बन गयी तो तीस बच्चों को जनम देने वाली एक औरत को 'मदर लैण्ड' (मादरेवतन) के ख़िताब से नवाज़ा गया। वेद के वक़्त के भारत में पहले दस बच्चे पैदा करने का दस्तूर था, अब 'एक या दो बच्चे, होते हैं घर में अच्छे' का नारा लग रहा है। शायद वे न रहें तो मुल्क के लिए फ़िक्र की बात नहीं, मसाइल का हल ही होता है। श्रीकृष्ण इसमें कौन-सा इंतिज़ाम दें?

शरफ़ (श्रेय) - ख़्वाहिश, गुस्सः, लालच, फ़िरेफ़्तगी के कहीं मदरसे नहीं खुले हैं, फिर भी इन उयूब में बच्चे, बड़े और सयानों से कहीं ज़ियादः माहिर निकलते हैं, इसमें श्रीकृष्ण क्या नसीहत दें? यह सब कुछ तो कुद्रती तौर पर अपने आप होता है। कभी वेद पढ़ाये जाते थे, तीरन्दाज़ी और जंगेगुर्ज़ की ता'लीम दी जाती थी, आज इनकी ता'लीम कौन हासिल करता है? आज तो तमंचा चला रहे हैं, खुदकार आलात का ज़मानः है। कभी रथ हाँकना सीखना पड़ता था, घोड़ों की लीद फेंकनी पड़ती थी, आज मोटरों का तेल साफ़ किया जाता है। इस बारे में श्रीकृष्ण क्या बतायें? कह दें कि घोड़ों की इस तरह मालिश मत करो। बाहर आपको कैसा इंतिजाम दें? पहले स्वाहा लफ़्ज़ बोलने से बारिश होती थी, आज मन के मुआफ़िक़ फ़स्ल लेने लगे हैं। जोग के मालिक कहते हैं कि कुद्रत से पैदा हुई सिफ़ात के ज़ेरे-असर मज्बूर होकर इंसान हालात के मुताबिक़ ढलता ही रहता है। सिफ़ात खुद उन्हें अपने मुताबिक़ ढालने में क़ादिर हैं। इल्मे-माद्दीयात, इल्मे मुआशरत, इल्मुलइक़्तिसाद, इल्मे-कलाम वह गढ़ता ही रहता है। एक ही चीज़ ऐसी है जो इंसान नहीं जानता, नहीं पहचानता। वह है तो उसी के करीब लेकिन वह उससे ग़ाफ़िल है। गीता सुनकर अर्जुन की वही याद्दाश्त लौट आई थी। वह याद है- रूहे-मुत्लक़ की, जो दिल की दुन्या में रहते हुए भी उससे बहुत दूर है। उसी को इंसान हासिल करना चाहता है; लेकिन रास्तः नहीं पाता। सिर्फ भलाई की राह से ही इंसान नावाक़िफ़ है। फ़िरेफ़्तगी का पर्दः इतना मोटा है कि उस जानिब सोचने का वक़्त ही नहीं मिलता। उन अज़ीम इंसान ने

आपके लिए वक़्त दिया है, उस अ़मल को साफ़ किया है, जिसे करने की हिदायत गीता में है। गीता ख़ास तौर से यही अता करती है। माद्दी चीजें भी उससे हासिल होती हैं, लेकिन शरफ़ (श्रेय) के मुकाबलः में दुन्यादारी (प्रेय) नाक़ाबिले शुमार है।

जोग का अता कुनिन्दबलः (योग-प्रदाता) – जोग के मालिक श्रीकृष्ण के मुताबिक़ फ़लाह की राह का इल्म, उसको हासिल करने का वसीलः और उसका हुसूल मुर्शिद से होता है। इधर-उधर ज़ियारतगाहों में बहुत भटकने या बहुत मेह्नत से यह तब तक हासिल नहीं होता, जब तक किसी सूफ़ी के ज़रीअः न हासिल किया जाय। बाब ३/३४ में श्रीकृष्ण ने कहा- अर्जुन! तू किसी रम्ज़शनास अज़ीम इंसान की कुर्बत में जाकर, अच्छी तरह आदाब बजाकर, साफ़ दिल से ख़िद्मत करके, सवाल करके उस इल्म को हासिल कर। हासिल करने का वाहिद तरीक़ः है- किसी अज़ीम इंसान की कुर्बत और उनकी ख़िद्मतगुज़ारी। उनके मुताबिक़ चलकर जोग की मंजिल हासिल करने के दौर में हासिल करेगा। बाब १८/१८ में उन्होंने बताया कि कामिल या'नी हक़शनास अज़ीम इंसान, इल्म या'नी जानने का तरीक़ः और क़ाबिले-इल्म रूहे-मुत्लक़ तीनों अ़मल के मुहर्रिक हैं। लिहाज़ा श्रीकृष्ण के मुताबिक़ अज़ीम इंसान ही अ़मल के ज़रीअः हैं, न कि सिर्फ़ क़िताब। क़िताब तो एक नुस्ख़ा है। नुस्ख़ा याद करने से कोई सेहतमंद नहीं होता बल्कि उसे अ़मल में लाना पड़ता है।

दोज़ख (जहन्नम) – बाब १६/१६ में दुन्यवी दौलत का बयान करते हुए जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने बताया कि तमाम तरह से गुमराह तबीअ़त वाले फ़िरेफ़्तगी में फँसे, दुन्यवी ख़स्लत वाले इंसान नापाक जहन्नम में गिरते हैं। सवाल फ़ित्री है कि जहन्नम है कैसा और किसे कहते हैं? इसी तसल्सुल में साफ़ करते हैं कि मुझसे कीना रखने वाले बदज़ात लोगों को मैं बार-बार शैतानी शक्लों (योनियों) में गिराता हूँ, तक्लीफ़देह शैतानी योनियों में गिराता हूँ। वही जहन्नम है। इस जहन्नम का दरवाज़ः क्या है? उन्होंने बताया कि ख़्वाहिश, गुस्सः और लालच जहन्नम के तीन दरवाज़े हैं, जिसमें दुन्यवी दौलत साख़्त होती है। लिहाज़ा बार-बार हशरातुलअर्ज़, जानवर वग़ैरः योनियों में आना ही जहन्नम (दोज़ख) है।

बख़्शिश-ए-जिर्म (पिण्डदान) – पहले बाब में ग़मज़दः अर्जुन को अन्देशः था कि जंग की बिना पर होने वाले क़त्लेआम से मर्दुमीन बख़्शिश-ए-जिर्म और नज़्र (अर्पण) से महरूम रह जायेंगे, मर्हुमीन गिर जायेंगे। इस पर बंदःपर्वर श्रीकृष्ण ने कहा कि अर्जुन! तेरे अन्दर यह जहालत कहाँ से आ गयी? बख़्शिश-ए-जिर्म के

रिवाज को श्रीकृष्ण ने जहालत बताया और बताया कि, जिस तरह बोसीदः लिबास को तर्क कर इंसान नया लिबास पहन लेता है, ठीक इसी तरह यह रूह बोसीदः जिस्म को तर्क कर उसी वक़्त जिस्मानी शक्ल वाला नया लिबास क़बूल कर लेती है। यहाँ जिस्म महज़ एक लिबास है और जब रूह ने सिर्फ लिबास बदला, वह फ़ना हुई नहीं, फ़ानी जिस्म को ही बदला है, उसके इंतिज़ामात साबिके दस्तूर हैं तो ख़ाना (बख़्शिश-ए-जिर्म), आसनी, पलंग, सवारी, मकान या पानी वग़ैरः से किसकी आसूदगी दरकार है? यही वज्ह है कि जोग के मालिक ने इसे जहालत कहा। बाब १५/७ में इसी पर ज़ोर देते हुए कहते हैं कि यह रूह मेरी अबदी जुज़ है, शक्ल है और मन के साथ पाँचों हवास के कारोबार से पैदा होने वाले तअस्सुरात (संस्कार) को लेकर दूसरे जिस्म को क़बूल कर लेती है और मन के साथ छः हवास के ज़रीअः अगले जिस्म में तअय्युशात का लुत्फ़ उठाती है। रूह ने जिस जिस्म को क़बूल किया, वहाँ भी ऐशो-इश्रत मौजूद है, फिर बख़्शिश-ए-जिर्म की क्या ज़रूरत है?

इधर एक जिस्म को तर्क किया, उधर दूसरे जिस्म को क़बूल किया, वह रूह सीधा उस जिस्म में दाख़िल हो जाती है, बीच में कोई पड़ाव नहीं; कोई जगह नहीं तो हज़ारों पुश्तों के मर्हुमीन का लामद्दूद वक़्त से पड़ा रहना और उनका रिज़्क़ ख़ानदानी रविश के मुताबिक़ तय करना और क़फ़स में क़ैद परिन्दः की तरह उनकी छटपटाहट, ज़वाल महज़ एक जहालत है। लिहाज़ा श्रीकृष्ण ने इसको जहालत बताया।

अज़ाब व सवाब (पाप और पुण्य) – इस सवाल पर मुआशरः में तमाम ग़लतफ़हमियाँ हैं; लेकिन जोग के मालिक श्रीकृष्ण के मुताबिक़ मलकाते रदीयः से पैदा हुए ये ख़्वाहिश और ग़ुस्सः, ऐशो-इश्रत से कभी आसूदः न होने वाले बहुत बड़े गुनाहगार है या'नी ख़्वाहिश ही वाहिद गुनाहगार है। अज़ाब का मख़्रज हविस है, ख़्वाहिशात हैं। ये ख़्वाहिशात रहती कहाँ हैं? श्रीकृष्ण ने बताया कि हवास, मन और अक़्ल इनके रहने के मक़ामात बताये जाते हैं। जब उयूब जिस्म में नहीं, मन में ही होते हैं तो जिस्म की सफाई करने से क्या फ़ाइदः होगा?

बक़ौल श्रीकृष्ण इस मन की तहारत होती है- नाम के विर्द से, तसव्वुर से, उस दौर के किसी रम्ज़शनास अज़ीम इंसान की ख़िद्मत से, उनमें अक़ीदत से, जिसके लिए वे बाब ४/३४ में हौसलः अफ़्ज़ाई करते हैं कि **'तद्विद्धि प्रणिपातेन'**- ख़िद्मत और सवाल करके उस इल्म को हासिल कर, जिससे सभी अज़ाब ख़त्म हो जाते हैं।

बाब ३/१३ में उन्होंने कहा कि यग का तबर्रुक़ खाने वाले आबिद हज़्रात तमाम गुनाहों से नजात पा जाते हैं और जो जिस्म हासिल करने की ख़्वाहिश करते हैं, वे गुनाहगार अज़ाब ही ख़ाते हैं। यहाँ यग फ़िक्र का एक मुऐयनः तरीक़ः है, जिससे मन में मौजूद मुतहर्रिको साकिन हर शै के दुन्यवी तअस्सुरात (संस्कार) जल जाते हैं, बाकी मह्ज़ रब ही बचता है। लिहाज़ा जिस्म की पैदाइश की जो वज्ह है, वही अज़ाब है और जो उस लाफ़ानी उंसुर को दिलाने वाला है, जिसके बा'द कभी जिस्म हासिल न करना पड़े, वही सवाब है।

बाब ७/२९ में वे कहते हैं कि मेरी पनाह में होकर ज़ईफ़ी-मौत और उयूब से आज़ाद होने के लिए कोशाँ, सालेहीन जिन इंसानों का गुनाह ख़त्म हो गया है, वे मुकम्मल ज़ाते-मुत्लक़ को सारे आ'माल, सारी रूहानियत को और मुझे अच्छी तरह जानते हैं व मुझे जानकर मेरे ही अन्दर मौजूद रहते हैं। लिहाज़ा अमले-सवाब वह है, जो ज़ईफी व मौत और उयूब से ऊपर उठाकर बरहक़ की जानकारी और उसी मा'बूद से हमेशः के लिए मन्सूब कराता है और जो आमदोरफ़्त, ज़ईफी और मौत, दुःख पहुँचाने वाले उयूब के दाइरे में घुमाकर रखता है, वही अमले-अज़ाब है।

बाब १०/३ में कहते हैं- जो मुझ आमदोरफ़्त से आरी, इब्तिदा और इंतिहा से मुबर्रा व अज़ीम रब्बुलआलमीन को बदीही दीदार के साथ जान लेता है, वह इंसान फ़नापिज़ीर इंसानों में इल्मदाँ है और ऐसा इल्म रखने वाला तमाम अज़ाबों से नजात पा लेता है। लिहाज़ा बदीही दीदार के साथ ही सारे अज़ाबों से छुटकारा मिलता है।

लुब्बे-लुवाब यह कि बार-बार आमदोरफ़्त की वज्ह ही अज़ाब है और जो उससे बचाकर दाइमी रूहे मुत्लक़ की तरफ़ मुख़ातब करा दे, आ'ला सुकून को हासिल करा दे, वही अमले-सवाब है। सच बोलना, सिर्फ अपनी मेह्नत का खाना, औरतों के साथ माँ जैसा बर्ताव, ईमानदारी वग़ैरः भी इस नेक अ़मल के मददगार हिस्से हैं, लेकिन बेह्तरीन सवाब है- रूहे मुत्लक़ का हुसूल। जो वाहिद मा'बूद की अक़ीदत को तोड़ता है, वह अज़ाब है।

सारे आबिद एक (सन्त सब एक) – गीता, बाब ४/१ में बन्दःपर्वर श्रीकृष्ण ने बताया कि इस लाफ़ानी जोग को कल्प (बदलाव) के शुरू में मैंने सूरज के मुतअल्लिक़ कहा था; लेकिन श्रीकृष्ण के मासबक़ तारीख़ ख़्वाह दीगर किसी भी शरीअ़त में कृष्ण के नाम का ज़िक्र नहीं मिलता।

दरहक़ीक़त श्रीकृष्ण एक कामिल जोग के मालिक है, वे एक ग़ैरमर्ई और लाफ़ानी मक़ाम वाले हैं। जब कभी रूहे मुत्लक़ से मिलाने वाले अ़मल या'नी जोग की शुरुआत की गयी तो इसी मक़ाम पर फ़ाइज़ किसी अज़ीम इंसान ने की, चाहे वह 'राम' हो या आरिफ़ 'जरथुस्त्र' ही क्यों न रहे हों? बा'द के वक़्त में यही नसीहत ईसा, मुहम्मद साहब (सल्ल०), गुरु नानक वग़ैरः चाहे जिस किसी ने दी, दी श्रीकृष्ण ने ही।

लिहाज़ा सभी अज़ीम इंसान एक ही हैं। सबके सब एक ही मर्कज़ पर पहुँचकर एक ही शक्ल को हासिल करते हैं। यह मर्तबः एक ईकाई है। तमाम इंसान इस रास्तः पर चलेंगे; मगर जब हासिल करेंगे, एक ही मर्तबः को हासिल करेंगे। ऐसे मक़ाम को हासिल करने वाले आबिद का जिस्म महज़ एक मकान भर रह जाता है, वे ख़ालिस ख़ुद कफ़ील हैं। ऐसी हालत वालों ने कभी कुछ कहा तो वह एक जोग के मालिक ने ही कहा।

आबिद कहीं न कहीं तो पैदा होता ही है; मश्रिक़ ख़्वाह मग़्रिब में स्याह या सफ़ेद ख़ानदान में, पहले से मुरव्वजः किन्हीं मज़्हबों के मानने वालों के बीच ख़्वाह कमअक़्ल कबीलों में; आम-सी जिंदगी बसर करने वाले गरीब ख़्वाह अमीरों में पैदा होकर भी आबिद उनकी रस्मो-रिवाज वाला नहीं होता। वह तो अपने मंजिले-मक़्सूद रूहे-मुत्लक़ को पकड़कर अपने मक़्सद या'नी रूहे-मुत्लक़ की जानिब बढ़ जाता है, वही हो जाता है। उनकी नसीहतों में ज़ात-पात, नस्ली तफ़्रिकः और अमीर-गरीब की दीवारें नहीं रहती है। यहाँ तक कि उनकी नज़र में औरत-मर्द का फ़र्क़ भी नहीं रह जाता (देखें, गीता- १५/१६- **'द्वाविमौ पुरुषौ लोके'**- दुन्या में ये दो तरह के इंसान हैं।)

अज़ीम इंसानों के बा'द उनके पैरो अपना फ़िर्क़ः बनाकर महदूद हो जाते हैं। किसी अज़ीम इंसान के पैरों यहूदी हो जाते हैं, तो किसी के पैरो इसाई, मुसल्मान, सनातनी वग़ैरः हो जाते हैं, लेकिन इन दीवारों से संत (आबिद) का तअल्लुक़ कभी भी नहीं होता। आबिद न कोई फ़िर्क़ःपरस्त है और न किसी ज़ात का। आबिद, आबिद है। उसे किसी मुआशराती जमाअ़त में न समेटें।

लिहाज़ा दुन्या भर के आबिदों की, चाहे किसी क़बीले में उनकी पैदाइश हुई हो. चाहे किसी मज़्हब (फ़िर्क़ः) वाले उनकी इबादत ज़ियादः करते हों, किसी फ़िर्क़ःबंदी के ज़ेरे असर ऐसे आबिदों की नुक़्तःचीनी नहीं करनी चाहिए; क्योंकि वे ग़ैरजानिबदार

(ख़ुद मुख़्तार) हैं। दुन्या के किसी भी जगह पर पैदा हुआ आबिद मज़म्मत के क़ाबिल नहीं होता। अगर कोई ऐसा करता है, तो वह अपने अंदर मौजूद आलिमुलग़ैब रूहे-मुत्लक़ को कमज़ोर करता है, अपने को रूहे-मुत्लक़ से दूर कर लेता है, ख़ुद अपना नुक़्सान करता है। दुन्या में पैदा होने वालों में अगर आपका कोई सच्चा ख़ैर ख़्वाह है, तो आबिद ही। लिहाज़ा उनके मुतअल्लिक़ रवादारी का होना, दुन्या भर के लोगों का बुन्यादी फ़र्ज़ है। इसमें कोताही करना ख़ुद को धोका देना है।

वेद – गीता में वेद का तज़्किरः बहुत आया है; लेकिन कुल मिलाकर वेद मह्ज़ राहनुमा निशान (Mile Stone) हैं। मंज़िल तक पहुँच जाने पर उस इंसान के लिए उनका इस्ते'माल ख़त्म हो जाता है। बाब २/४५ में श्रीकृष्ण ने कहा- अर्जुन! वेद तीनों सिफ़ात तक ही रोशनी देने में क़ादिर हैं, तू वेदों के काम के दाइरः से ऊपर उठ। बाब २/४६ में कहा- हर तरफ़ से भरी हुई पाक-साफ़ झील के हासिल होने पर छोटे तालाब से इंसान का जितना वास्तः रह जाता है; अच्छी तरह मा'बूद का इल्म रखने वाले अज़ीम इंसान या'नी बर्हमन का वेदों से उतना ही वास्तः रह जाता है, लेकिन दूसरों के लिए तो उनका इस्ते'माल है ही। बाब ८/२८ में उन्होंने कहा- अर्जुन! मुझे उंसुर के साथ अच्छी तरह से जान लेने पर जोगी वेद, यग, रियाज़त, सदक़ः वग़ैरः के नेक समरः को पार कर अबदी मक़ाम को हासिल कर लेता है। या'नी जब तक वेद जिंदः हैं, यग करना बाकी है, तब तक अबदी मक़ाम का हुसूल नहीं है। बाब १५/१ में बताया- ऊपर रूहे मुत्लक़ ही जिसकी जड़ है, नीचे हशरातुलअर्ज़ तक क़ुद्रत जिसकी शाख़ें दर शाख़ें हैं, दुन्या ऐसा पीपल का एक लाफ़ानी दरख़्त है। जो इसे जड़ के साथ जानता है, वह वेद का आलिम है। इस इल्म का मद्रक़ अज़ीम इंसान है, उसके ज़रीअः हिदायतकर्दः यादे-इलाही है; क़िताब ख़्वाह मक्तब भी उन्हीं की तरफ़ तर्ग़ीब देते हैं।

ओम् – श्रीकृष्ण की रहबरी में 'ॐ' के विर्द का उसूल पाया जाता है। बाब ७/८- ओंकार मैं हूँ। बाब ८/१३- ॐ का विर्द और मेरा तसव्वुर कर। बाब ९/१७- क़ाबिले इल्म ताहिर ओंकार मैं हूँ। बाब १०/३३- हुरूफ़ में 'अ' से शुरू होने वाला (अकार) हूँ। बाब १०/२५- ज़बानों में एक हर्फ़ (अक्षर) मैं हूँ। बाब १७/२३- ॐ, तत् और सत् ज़ाते मुत्लक़ का मज़्हर है। बाब १७/२४- यग, सदक़ः और रियाज़त के आ'माल की इब्दिता ॐ से ही होती है। लिहाज़ा श्रीकृष्ण के मुताबिक़ ॐ का विर्द बेहद ज़रूरी है, जिसका तरीक़ः किसी पहुँचे हुए अज़ीम इंसान से सीखें।

अज़ीम इंसान ख़ारिजी और दाख़िली, अमली और रूहानी, रस्मे-दुन्या और हक़ीक़ी वेद से मुतअल्लिक़ रिवाज दोनों का इल्म रखता है। यही वजह है कि तमाम समाज को अज़ीम इंसानों ने रहन-सहन का तरीक़ः बताया और एक इज़्ज़त-बख़्श इंतिज़ाम दिया। वशिष्ठ, शुक्राचार्य, खुद जोग के मालिक श्रीकृष्ण, महात्मा बुद्ध, मूसा, ईसा, मुहम्मद सल्ल०, रामदास, दयानन्द, गुरुगोविन्द सिंह वग़ैरः हज़ारों अज़ीम इंसानों ने ऐसा किया; लेकिन ये इन्तिज़ामात वक़्ती होते हैं। मुसीबतज़दः मुआशरः को माद्दीयाती चीज़ें अता करना सचाई नहीं है। दुन्यवी उल्झनें लम्हाती हैं, दाइमी नहीं। लिहाज़ा उनका हल भी हस्बेहाल होता है। उसे दाइमी इंतिज़ाम की शक्ल में क़बूल नहीं किया जा सकता।

मुन्तज़िम (व्यवस्थाकार) – मुआशराती तग़य्युरात को अज़ीम इंसान सुलझाया करते हैं। अगर इन्हें न सुलझाया जाय, तो इल्म और वैराग से मुज़ैयन आ'ला रियाज़त की बात कौन सुनेगा। इंसान जिस माहौल में फँसा है, उसे वहाँ से हटाकर हक़ीक़त को जानने की हालत में लाने के लिए तरह-तरह की हिर्सो-हवस (लोभ और लालच) दी जाती हैं। इसके लिए अज़ीम इंसान जिस अल्फाज़ का इस्ते'माल करते हैं, कोई इंतिज़ाम देते हैं, वह दीन नहीं है। उससे सौ-दो सौ साल का इंतिज़ाम मिलता है, चार-छः सौ साल के लिए नज़ीर बन जाता है और हज़ार-दो हज़ार साल में वह मुआशराती ईजाद नये हालात के साथ-साथ बेजान हो जाता है। गुरुगोविन्द सिंह के मुआशराती इंतिज़ाम में सिलाह लाज़िमी था। क्या अब उस शमसीर का, सिलाह की जगह पर कोई मा'कूलियत है? ईसा मसीह गधे पर बैठते थे (मत्ती २१)। गधा के मुतअल्लिक़ उनके दिये गये इतिज़ामात का आज क्या इस्ते'माल है? उन्होंने कहा- किसी का गधा मत चुराओ। आज गधा कौन पालता है? इसी तरह जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने उस वक़्त के मुआशरः को हस्बेहाल मुनज़्ज़म किया, जिसका बयान महाभारत, भागवत् वग़ैरः किताबों में है, साथ ही इन किताबों में उन्होंने हक़ीक़त की भी जहाँ-तहाँ अक्कासी की। आ'ला रिफ़ाही रियाज़त और दुन्यवी इंतिज़ामात के अह्काम को एक में मिला देने से मुआशरः उंसुर के फ़ैसलःकुन सिल्सिलः को मुकम्मल तौर पर नहीं समझ पाता। दुन्यवी इंतिज़ामात को जैसे का तैसा नहीं बल्कि बढ़ा-चढ़ाकर क़बूल करता है, क्योंकि वह दुन्यवी है। 'अज़ीम इंसान ने कहा'- ऐसा कहकर इन इंतिज़ामात के लिए अज़ीम इंसानों की दुहाई भी देते हैं। वे अज़ीम इंसान के हक़ीक़ी अ़मल को तोड़-मरोड़कर उसे गुमराहकुन बना देते हैं। वेद, रामायण, महाभारत,

बाइबिल, कुरआन सबके मुतअल्लिक़ पहले से चले आ रहे इस्रार के धुँधले ख़यालात बाकी हैं।

गीता तमाम इंसान के लिए – पंतजलि वग़ैरः मुख़्तलिफ़ अज़ीम इंसानों ने आ'ला शरफ़ के हक़ीक़ी तरीक़ः को मुआशराती निज़ाम से हटाकर अलग तरह से पेश किया। जोग के मालिक श्रीकृष्ण ने भी अलग करना इफ़ादी समझा। अफ़्ज़ल मुस्तहूक के मुतअल्लिक़ ही उन्होंने उसका इज़्हार किया। श्रीकृष्ण ने बारहा कहा कि तुझ जैसे बेहद मुहब्बत रखने वाले बन्दः की भलाई की ख़्वाहिश से कहता हूँ। यह बेहद बसीग़एराज़ है। आख़िर में उन्होंने कहा– जो मो'तक़िद नहीं हो तो इंतिज़ार करो, उसको उस रास्तः पर लाओ, फिर उसी के लिए बयान करो। यही तमाम इंसान की हक़ीक़ी भलाई का वाहिद तरीक़ः है, जिसका सिल्सिलःवार बयान श्रीकृष्ण से मन्सूब गीता है।

पेशक़र्दः तफ़्सीर – जोग के मालिक श्रीकृष्ण के मक़्सद को हू-ब-हू बयान करने की वजह से पेशक़र्दः तफ़्सीर का नाम 'यथार्थ गीता' है। गीता ख़ुद में मुकम्मल वसीलः की पाक किताब है। पूरी गीता में शको-शुब्हः का एक भी मक़ाम नहीं है। जहाँ कहीं शको-शुब्हः महसूस होता है; उसे अक़्ली तौर पर जाना नहीं जा सकता है, इस वज्ह से मह्सूस होता है। लिहाज़ा कहीं समझ में न आये तो किसी रम्ज़शनास अज़ीम इंसान की कुर्बत में समझने की कोशिश करें।

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः।।

(तू मुर्शिद की कुर्बत में बैठकर हक़ीक़त को जानने की कोशिश कर, उनसे इन्किसारी के साथ अपना तजस्सुस ज़ाहिर कर और उनकी ख़िद्मत कर। आ'ला मक़ाम पर फ़ाइज़ अज़ीम इंसान तुम्हें इल्म अता कर सकते हैं। क्योंकि उन्होंने हक़ीक़त का बदीही दीदार हासिल किया है।)

ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

बिल तम्मत खैर!

गुज़ारिश

'यथार्थ गीता' (हक़ीक़ी गीता) जोग के मालिक श्रीकृष्ण का मुम्ताज़ कलाम श्रीमद्भगवद्गीता का ही तर्जुमः है। इसमें आपके दिल में मौजूद रूहेमुत्लक़ को हासिल करने के तरीक़ः को, हासिल करने के बा'द की गयी अक्कासी है। नाफ़र्मानी की नज़र से इसका इस्ते'माल मना है वर्नः हम अपने मक़्सद के मा'लूमात से महरूम रह जायेंगे। इसका पूरी अक़ीदत के साथ मुतालअः करने से इंसान भलाई के वसीलों से लबरेज़ हो जाता है और मुख़्तसर तौर पर भी क़बूल करेगा तो मुम्ताज़ शरफ़ को हासिल कर लेगा; क्योंकि इस राहे-ख़ुदा में आग़ाज़ का कभी ख़ातिमः नहीं होता।

– स्वामी अड़गड़ानन्द

कैसेट नश्रुस्सौत में अबवाब के पहले का दीबाचः

१. सिर्फ एक रूहे-मुत्लक़ में अक़ीदत और ख़ुद सुपुर्दगी का पैग़ाम देने वाली गीता सबको पाक-साफ़ बनाने की खुली दा'वत देती है। दुन्या में कहीं भी रहने वाले अमीर ख़्वाह गरीब, अश्फ़ और ग़ैरअश्फ, शरीफुन्नफ़्स और गुनाहगार, औरत व मर्द, मुत्तकीं व बदकिर्दार सबका उसमें दख़्ल है। ख़ासतौर पर गीता गुनाहगारों की ही नजात का सह्ल रास्तः बताती है, शरीफुन्नफ़्स तो याद करते ही हैं। पेश है उसी गीता की बेमिस्ल तश्रीह **'यथार्थ गीता'** (हक़ीक़ी गीता) का कैसेट नश्रियः।

२. शरीअ़त की तस्नीफ़ दो नज़रीयात से की जाती है- एक तो मुआशराती इंतिज़ाम और तहज़ीब को बरक़रार रखना, जिससे लोग बड़े-बुजुर्गों के नक़्शेक़दम का इत्तिबाअ कर सकें और दूसरा यह कि वे दाइमी सुकून को हासिल कर लें। रामचरितमानस, बाइबिल, कुरआन वग़ैरः में दोनों तरफ़ की समूलियत है लेकिन माद्दी नज़रख़ास होने की वजह से इंसान मुआशरः को फ़ाइदः पहुँचाने वाले इंतिज़ाम को ही पकड़ पाता है। रूहानी मकूलों को भी वह मुआशराती इंतिज़ाम के ही हवाला से देखने लगता है; कहता है कि ऐसा तो शरीअ़त में लिखा है। लिहाज़ा वेदव्यास ने दोनों के लिए एक ही किताब महाभारत लिखते हुए भी रूहानी अ़मल की तद्वीन 'गीता' की शक्ल में अलग से की जिससे कि लोग इस बुन्यादी इफ़ादी राह में ग़लतफ़हमी को शामिल न कर सकें। उन्हीं रूहानी कीमतों के साथ पेश है गीता का मावराई पैग़ाम।

३. गीता किसी ख़ास इंसान, ज़ात, तब्कः, मस्लक, वक़्त, जगह या किसी कदामत-पसंद फ़िर्क़ः की किताब नहीं है बल्कि यह आ'लमगीर और दाइमी दीनी शरीअ़त है। यह हर एक मुल्क, हर एक ज़ात, हर एक उम्र के औरत-मर्द सबके लिए है। दरहक़ीक़त गीता दुन्या के सभी इंसानों की दीनी शरीअ़त है और फ़ख़्र की बात है कि गीता आपकी दीनी शरीअ़त है।

४. क़ाबिले-परस्तिश भगवान महावीर, तथागत भगवान बुद्ध बाख़बर होते हुए भी इलाकाई ज़बानों में गीता के ही पैग़ाम को पहुँचाने वाले हैं। रूह हक़ है और मुकम्मल एहतियात (ज़ब्ते-नफ़्स) से हक़शनासी की हालत का उसूल है- यह गीता का ही ख़याल है। बुद्ध ने उसी उंसुर को अलीम और लाफ़ानी मक़ाम

कहकर गीता के ही ख़याल को तस्दीक किया है। इतना ही नहीं बल्कि आलमी-अदब में दीन के नाम पर जो कुछ भी लुब्बे-लुवाब है, जैसे- एक ख़ुदा, इल्तिजा, नदामत, रियाज़त वग़ैरः गीता की ही नसीहतें हैं। उन्हीं नसीहतों को मुहतरम स्वामी अड़गड़ानन्द जी की पाक ज़बान से निकली हुई 'यथार्थ गीता' कैसेट की शक्ल में तमाम इंसानों की नजात का मावराई पैग़ाम बनकर आपके सामने मौजूद है।

५. भारत के इलाक़ाई अफ़्सानों में है कि सुकरात की शार्गिद रिवायत के मुफ़क्किर अरस्तू ने अपने शागिर्द सिकन्दर को भारत से गीता का सहीह इल्म रखने वाले मुअल्लिम लाने का हुक्म दिया था। गीता की ही वहदानियत (तौहीद) को दुन्या की मुतफ़र्रिक़ ज़बानों में मूसा, ईसा और मुख़्तलिफ़ सूफ़ी फ़क़ीरों ने फैलाया। तब्दीले ज़बान होने से ये जुदा-जुदा मह्सूस होते हैं, लेकिन उसूल गीता के ही हैं। लिहाज़ा गीता तमाम इंसानों की बातिनी यकज़ेह्ती की दीनी शरीअ़त है। गीता का मफ़्हूम 'यथार्थ गीता' की शक्ल में पेश कर श्री अगड़गड़ानन्द स्वामी ने तमाम इंसानों को एक बेशकीमती दौलत अता की है, जिसकी कैसेट तब्दीले शार्गिदों के तवस्सुल से हुई है। गीता के हज़ारहा तर्जुमात के बीच मुनव्वर इस तश्रीह की रोशनी में आप सब आ'ला शरफ़ के मुस्तहक़ बनें।

६. दुन्या में राइज सारे दीन गीता के फासिलः पर मौजूद मह्ज़ बरअक्स आवाज़ हैं। श्री स्वामी अड़गड़ानन्द जी महाराज के ज़रीअः इसकी तश्रीह 'यथार्थ गीता' को सुनकर शार्गिदों ने अह्द ही कर लिया कि कैसेटों के वसीलः से इनका नश्रुस्सौत हो; क्योंकि भगवान महावीर, भगवान बुद्ध, गुरुनानक, कबीर वग़ैरः की अक़ीदत से लबरेज़ रियाज़त के उसूलों का आ'लातरीन इज़्हार गीता है। गीता के वे ही कैसेट के ख़ूबसूरत फूल आप सबके सामने ख़ुदशनासी के लिए पेशे-ख़िद्मत हैं।

७. गीता के दो हजार साल बा'द तक दीन के नाम पर फ़िर्क़े नहीं बने थे, इस वास्ते गीता मज़्हबी तफ़्रीकः से आज़ाद है। उस वक़्त दुन्या की अक़्लियत में एक ही शरीअ़त गूँज रही थी- उपनिषदों का मग्ज़े-सुख़न गीता! आ'ला नजात और शौकतों का मख़्ज गीता!! शरीअ़त पढ़ने से बजाए ख़ुद उसका सुनना ज़ियादः इफ़ादी है क्योंकि तलफ़्फ़ुज़ की पाकीज़गी वग़ैरः में यकसुई बँट जाती है। इस वास्ते सलीस ज़बान में तब्दील 'यथार्थ गीता' के ये कैसेट आपकी

ख़िद्मत में पेश हैं। इनके सुनने से बच्चे-बच्चे में, इर्द-गिर्द रूहे-मुत्लक़ के नेक और मुबारक तअस्सुरात की तह्रीक होगी, आपके घर-आँगन की फ़ज़ा भी सरज़मीने-रियाज़त की मानिन्द मह्क उठेगी।

८. वह घर कब्रगाह है जिसमें ज़िक्रेइलाही न हो। आज का इंसान इतना मस्रूफ़ है कि चाहकर भी यादे-इलाही के लिए वक़्त नहीं निकाल पाता। ऐसी हालत में गीता का पैग़ाम कान तक पहुँच भर जाय तो आ'ला शरफ़ और शौकत के तअस्सुरात की तुख़्मरेज़ी हो जाती है। मा'बूद के कलाम के इन कैसेटों से शबो-रोज़ उस आ'ला मा'बूद की याद बनी रहेगी और यही यादे इलाही की संगेबुन्याद है।

६. अपने बच्चों को हम ता'लीम दिलाते हैं कि वे नेक तअस्सुरात को हासिल करें। नेक तअस्सुरात का मफ़्हूम लोग समझ लेते हैं कि वे अपनी रोज़ी-रोटी, घर-मकान और तरक़्क़ी के मसाइल को हल कर लें। मा'बूद के जानिब किसी का ख़याल ही नहीं है। किसी-किसी के पास इतना कुछ है कि मा'बूद को याद करने की ज़रूरत ही नहीं महसूस करता। लेकिन यह सब कुछ फ़ानी ही तो है। न चाहते हुए भी ये सारी दौलत यहीं छोड़कर जाना पड़ता है। ऐसी हालत में मा'बूद की पहचान ही वाहिद सहारा है, जिसे अता कर रहा है **'यथार्थ गीता'** का यह कैसेट नश्रियः।

१०. दुन्या में जितने भी दीनी इख़्तिलाफात हैं, वे सब के सब किसी अज़ीम इंसान के पीछे अक़ीदतमंदों का मुनज़्ज़म समाज है। अज़ीम इंसान की यादे-इलाही की ख़लवतगाह ही वक़्त के साथ ज़ियारतगाह, ख़ानकाह, दरगाह, मठ और मन्दिरों की शक्ल ले लेते हैं, जहाँ अज़ीम इंसान के नाम पर रोज़ी-रोटी से लेकर ऐशो-इश्रत तक के सरो-सामान इकट्ठा किये जाते हैं। गद्दियाँ अज़ीम इंसान के बा'द बनती हैं, गद्दियों से कोई अज़ीम इंसान नहीं बनता। लिहाज़ा दीन हमेशः से ही बदीही दीदार करने वाले अज़ीम इंसान के दाइरः की चीज़ रहा है। गीता ऐसे ही ग़ैरइख़्तिलाफ़ी अज़ीम इंसान जोग के मालिक श्रीकृष्ण का कलाम है जिसकी कदीमी सच्चाइयों से आपका सामना करा रहा है **'यथार्थ गीता'** का यह कैसेट नश्रियः।

ॐ

कुछ ख़ास अल्फ़ाज के मआनी

अ

अंजाम	परिणाम, अंत
अ़क़ाइद	धर्म विश्वास
अ़क़ीदत	श्रद्धा
अ़क़ीदतमंद	श्रद्धावान
अ़क़्ली सत्ह	बौद्धिक स्तर
अ़क़्ले सलीम	संतुलित बुद्धि
अ़क़्ल बसरी	बुद्धिजीवी
अ़क्स	प्रतिबिम्ब, छाया
अक्कासी	चित्रकारी
अग़रचे	यद्यपि
अज़ अव्वलताअख़ीर	शुरु से अंत तक
अजज़ाए तर्तीबी	अन्वय
अजाब	प्रकोप, पापकष्ट
अज़ीज़	स्वजन, प्रिय
अज़ीज़तरीन	अत्यन्त प्रिय
अज़ीम इंसान	महापुरुष
अज़ीम सिपहसालार	महारथी
अज़ीमुल मर्तबत	श्रेष्ठ, सम्मानित
अजीमुश्शान दीदार	विराट्-दर्शन
अज़ीयत	दुर्गति
अज्दाद	बाप-दादे
अज्दादे वक़्त	युग-पितामह
अज़्म	संकल्प
अज्साम	शरीरों
अत्वार	आचरण
अता	दान, प्रदान, देना
अदम तशद्दुद	अहिंसा
अदा	हाव-भाव, नाज़, अंदाज़
अनासिर	तत्त्वों
अन्फ़ास	साँसें
अफ़्ई	नाग
अफ़्ज़ल	उत्तमतर, श्रेष्ठतर
अफ़्सानः	आख्यायिका
अबदी	सनातन, सार्वकालिक
अबदी दीन	सनातन धर्म
अबवाब	परिच्छेदों, अध्यायों
अब्रू	मेघ, बादल
अमल	कार्य, कर्म
अ़मली	कार्य सम्बन्धी
अमली तर्बियत	क्रियात्मक प्रशिक्षण
अमली नज़्मोज़ब्त	क्रियात्मक अनुशासन
अमानत	धरोहर, थाती
अम्र	समस्या, मस्अलः
अ़याँ	स्पष्ट, ज़ाहिर
अर्वाह	आत्माएँ
अ़लामत	निशान, लक्षण, प्रतीक
अल्फ़ाज़	शब्द समूह
अ़ल्लामः	महापंडित, महाज्ञानी
अवामुन्नास	सर्वसाधारण
अवालिम	बहुत से संसार
अव्वल दर्जः	प्रथम श्रेणी
अश्के-रवाँ	अश्रुपात
अश्रफ़	प्रतिष्ठित, शरीफ
अस्ना	मध्य, अंतराल
अस्लिहः	अस्त्र-शस्त्र, हथियार
अहबाब	सुहृदजन, दोस्त
अहम्मीयत	महत्ता
अह्काम	आज्ञाएँ, आदेश
अह्बाबे आलम	विश्व-बन्धु
अह्ल	योग्य, अधिकारी
अह्लीयत	योग्यता, पात्रता

अह्ले ज़बान	भाषाविद्
अह्ले नूर	प्रकाशवान
अह्ले बसीरत	अर्न्तद्रष्टा

आ

आक़िल	बुद्धिमान
आग़ाज़	शुरुआत
आ'ज़ा	अंगों
आजिज़ी	बेबसी, लाचारी
आजिज़ो इन्किसारी	विनम्रता
आदाब	प्रणाम, शिष्टाचार
आददेशुमार	गणना
आतशेजोग	योगाग्नि
आबनोश	जलग्रहण, पानी पीना
आबिद	संत
आबे हयात	अमृत
आबोताब	ऐश्वर्य
आमदोरफ़्त	आवागमन
आ'माल	कर्मों
आमेजिश	मिलावट, मिश्रण
आरास्तः ज़बान	शोभायुक्त वाणी
आरिफ़	ऋषि, संत
आरिफ़े मलकूत	देवर्षि
आलमगीर	सार्वभौम
आलमी जंग	विश्वयुद्ध
आ'ला	परम, श्रेष्ठ
आ'ला इफ़ादी	परम कल्याणकारी
आ'ला बुजुर्ग	परम पूज्य
आ'ला मक़ाम	परम धाम
आ'ला मसर्रत	परम सुख
आ'ला सुकून	परम शान्ति
आलिमुलकुल	अन्तर्यामी, सर्वज्ञ
आलिमुल ग़ैब	अन्तर्यामी
आलिमे मैदाँ	क्षेत्रज्ञ
आशिक़	अनुरागी
आश्कारा	प्रकट, ज़ाहिर
आसूदः	तृप्त
आसेब	भूतप्रेत
आहोजारी	विलाप

इ

इंतिक़ाम	बदला
इंतिक़ाल	मौत
इंतिख़ाब	चुनाव
इंतिहा	पराकाष्ठा, अंत
इक़्तिदार	राज्य, सत्ता
इक़्तिदारे आ'ला	परम सत्ता
इक़्तिबास	प्रकाशमान होना, अवतार
इख़्तिताम	समापन, अंत
इख़्तियार	अधिकार
इख़्तिलाफ़ात	उथल-पुथल, मतभेद
इख़्तिसार	संक्षेप
इग़्वा	अपहरण
इज़ाफ़ः	वृद्धि, विकास
इज़ालः	निवारण
इज़्ज़त-ज़िल्लत	मानापमान
इज़्ज़ा	संचालित
इज़्हार	व्यक्त, प्रकट
इज़्हारे अक़ीदत	श्रद्धाभिव्यक्ति
इज़्तिराब	बेचैनी
इज़्तिमाई मफ़ाद	लोक-कल्याण
इत्मीनान	संतोष
इत्तिबाअ	मतानुगमन, अनुकरण
इत्तिफ़ाक़	संयोग
इत्तिदाल	संयम
इत्तिहाद	एकत्व
इनायत	कृपा
इफ़ादी	कल्याणकारी

इफ़्रात	बाहुल्य, अधिकता
इफ़्रीत	असुर, प्रेत
इबादत	पूजा, आराधना
इब्नुल ग़ैब	दोग़लः, वर्णसंकर
इब्तिदाई दर्जः	प्रारम्भिक स्तर
इम्तिदादे ज़मानः	कालान्तर
इम्तियाज़	श्रेय, परमकल्याण
इम्रोज़ो-फ़र्दः	आजकल
इर्फ़ान	विवेक
इलाह	ईश्वर, प्राप्तव्य
इलाक़ाई	क्षेत्रीय
इल्म	ज्ञान, विद्या
इल्तिजा	दुहाई, प्रार्थना, याचना
इल्मी राह	ज्ञानमार्ग
इल्मुल इक़्तिसाद	अर्थशास्त्र
इल्मे कलाम	तर्कशास्त्र
इल्मे तसव्वुफ़	ब्रह्मविद्या, दर्शनशास्त्र
इल्मे रियाज़त	योगशास्त्र
इशाअत	प्रसारण
इशारियः	संकेत
इश्क़	अनुराग, प्रेम
इश्तिहार	विज्ञापन
इस्मत	सतीत्व
इस्तिक़लाल	दृढ़ता
इस्तिक़्रार	ठिकाना
इस्रार	आग्रह
	ई
ईजाद	आविष्कार
ईसार	त्याग
	उ
उंसीयत	राग, लगाव, प्रेम
उंसुर	तत्त्व
उंसुर बीनी	तत्त्वदर्शिता, तत्त्वदर्शन
उंसुरे आ'ला	परम तत्त्व
उज़्व	अंग
उज़्वे तनासुल	जननेन्द्रिय
उयूब	बुराइयाँ, दोष
उरुज	उत्थान
उलूम	विद्याएँ
उसूल	सिद्धान्त
	ए
ए'लान	घोषणा
एहतिमाम-ए-नस्ल	वर्ण-व्यवस्था
एहतियात	संयम
एहतिराम	सम्मान
एहसान फ़रामोश	कृतघ्न
	ऐ
ऐब	बुराई, विकार
ऐबजूई	बुराई करना
ऐश	भोग
ऐशो-इश्रत	भोग-विलास
	औ
औलाद	बेटे, पुत्रगण
औलिया	ऋषियों
	क
कज फ़हूम	मूढ़बुद्धि
क़ता तअल्लुक़	सम्बन्ध-विच्छेद
क़दामत	रूढ़ि, पुरानापन
कदामत परस्त	रूढ़िग्रस्त
क़दीमी	पुरातन
कद्रो मंज़िलत	सम्मान
कफ़्फ़ारः	प्रायश्चित
क़बूल	धारण, स्वीकार
कमयाब	दुर्लभ
कमरबस्तः	कटिबद्ध
कमरबस्तगी	तत्परता

क़याम	ठहराव, ठहरना
करारदाद	संकल्पमय
कर्दगार	कर्त्ता, पात्र
कलाम	वाणी
कलालत	ग्लानि
क़ल्बी	हृदयगत, मनोगत
क़ल्बी रुज़्हान	चित्तवृत्ति
क़वाइद	व्याकरण
कशमकश	ऊहापोह, दुविधा
कशकोल	कमण्डल
कश्ती	नौका
क़सीदः ख़्वाँ	चारण, स्तुतिगायक
काइनात	ब्रह्मांड,संसार, हैसियत
क़ाइम	दृढ़, स्थिर, मज़बूत
क़ाइम-दाइम	सदा स्थिर
क़ाइमुल अक़्ल	स्थिर-बुद्धि
क़ादिर	समर्थ
क़ादिरे मुत्लक़	परमेश्वर, सर्वशक्तिमान
कान	खान, मख़्ज़न
क़ाबिले एहतिराम	पूजनीय
क़ाबिले क़बूल	स्वीकार्य
क़ाबिले ज़ख़ीरः	संग्रहणीय
क़ाबिले तवज्जुह	ध्यान देने योग्य
क़ाबिले ता'ज़ीम	सम्माननीय
क़ाबिले हम्दोसना	स्तुत्य
कामिल	पूर्ण
कारकुन	कर्ता
कारबन्द	क्रियाशील
क़ासिद	दूत, पत्रवाहक
क़ासिर	असमर्थ, नाकाम
किताबे शरीअ़त	धर्मशास्त्र
क़िर्तास	पटल
कीनः	द्वेष
कुद्रती तख़्लीक़ात	प्राकृतिक रचनाएँ
कुरूने वुस्ता	मध्यवर्ती समय में
कुरूने माज़ी	अतीतकाल, सुदूर अतीत
कुर्बत	सान्निध्य
कुव्वत	शक्ति, सामर्थ्य
कुव्वतबख़्श	शक्तिदायक
कोताह नज़री	दोष दृष्टि, अनुदारता
कौमी इत्तिहाद	राष्ट्रीय एकता
क़ौल	वचन, कथन

ख

ख़याल	मत, विचार, भाव
ख़ला	आस्मान
ख़लिश	कष्ट, शोक
ख़ल्क	सृष्टि, संसार
ख़वातीन	स्त्रियाँ
ख़साइल	प्रवृत्तियाँ
ख़स्लत	प्रवृत्ति
ख़्वास्तः	इच्छित
ख़्वाह	अथवा, या
ख़ाकसारी	विनम्रता
ख़ाकी	पार्थिव, मिट्टी का
ख़ादिम	सेवक
ख़ानकाह	आश्रम
ख़ारिज़ी	बाह्य, बाहरी
ख़ालिक़	ब्रह्मा, ईश्वर
ख़ालिके कुल	ब्रह्म
ख़ालिद	नित्य, अमर
ख़ालिस	शुद्ध, पर्याप्त
ख़ास-उल-ख़ास	प्रमुख
ख़िद्मतगुज़ार	सेवक
ख़िद्मते आम्मः	सर्वसाधारण की सेवा
ख़ुद कफ़ील	आत्मरत, आत्मस्थिर
ख़ुदकुशी	आत्महत्या

ख़ुद पुरनूर	स्वयं प्रकाशमान
ख़ुदशनासी	आत्मदर्शन
ख़ुदसाज़	आत्मपरायण
ख़ुद सिताइश	आत्म-अनुशंसा
ख़ुदाई	ईश्वरीय
ख़ुदाई नोशाब	ईश्वरीय अमृत
ख़ुदाई मसर्रत	ब्रह्मानन्द
ख़ुलासः	स्पष्टीकरण
ख़ुलूस	श्रद्धा, प्रेम
ख़ुशतर	आह्लादपूर्ण
ख़ुश्क	सूखा, रूखा
ख़ूँ आलूदः	रक्तरंजित
ख़ैर ख़्वाह	कुशलक्षेम चाहने वाला
ख़ौफ़	डर, मय
	ग
ग़फ़्लत	भ्रम, असावधानी, बेहोशी
गमज़दः	संतप्त,दुःखी, शोकग्रस्त
ग़र्क़	निमग्न, पानी में डूबना
गामज़न	चलनेवाला, गमनकर्ता
ग़िर्स	झिल्ली
गुज़ारिश	प्रार्थना, निवेदन
गुनाह	पाप, अपराध
गुमराह	भ्रान्त, भटका हुआ
गुमराहकुन	भ्रामक
गुमगश्तगी	भटकाव
गुर्ज़	गदा
गुलूख़लासी	निवृत्ति, छुटकारा
ग़ुस्ल	स्नान
ग़ैर अश्रफ़	अकुलीन
ग़ैर इख़्तिलाफ़ाती	निर्विवाद
ग़ैर नस्ली	विजातीय
ग़ैर मर्ई	अव्यक्त
ग़ैर मुनासिब	अनुचित
ग़ैर मुश्तब्ह	निश्चयात्मक
ग़ैर मुसल्लह	शस्त्रविहीन
ग़ैर मुसावात	असमानता
ग़ैर मुस्तनद	तथाकथित, अप्रकाशित
	च
चन्द	कतिपय
चन्दरोज़ः	क्षणिक, कुछ दिनों का
चर्ख़	चक्र, आसमान
चश्म	आँख
चश्मः	स्रोत, सोता, झरना
	ज
जंग	युद्ध
जंगजू	योद्धा
जंगे रोज़ी-रोटी	जीविका-संग्राम
ज़कात	दान, सदका
जज़्ब	विलीन
जज़्बाती	भावुक
जज़्बातीयत	भावुकता
जदीद	आधुनिक
जन्नत	स्वर्ग
जन्नतनशीं	स्वर्गारूढ़
जफ़ाकश	बहादुर, पराक्रमी
ज़ब्तेनफ़्स	इन्द्रिय निग्रह
ज़मीर	अन्तःकरण
ज़मान-ए-क़दीम	प्राचीनकाल
ज़रख़ेज़	उपजाऊ, उर्वर
ज़रीअः	साधन, माध्यम
जलाल	तेज
जलाली	तेजवान, तेजस्वी
ज़लील	पतित
जल्वःनुमाया	प्रकाशित
ज़वाल	पतन
जहन्नुमी	नरकगामी, नारकीय

ज़ाए’	बरबाद
ज़ात	जाति
जान-रियाह	प्राण-अपान वायु
जानिबदार	पक्षघर
जामिद	जड़
जारी-ओ-सारी	व्याप्त
ज़ालिम	क्रूर, आततायी
जावेद-अबदी	अजर-अमर
ज़ाहिद	संयमी, जितेन्द्रिय
जाहिल	मूर्ख, अज्ञानी
जाहोजलाल	तेज, ऐश्वर्य
ज़िक्र	चर्चा
ज़ियारत	तीर्थाटन
ज़ियारतगाह	तीर्थस्थल
जिर्म	पिण्ड
ज़िल्लत	अपमान, बेइज़्ज़ती
जिहाद	धर्मयुद्ध
जिस्म	शरीर
ज़ीनः	सीढ़ी
ज़ीनः ब ज़ीनः	एक के बाद दूसरी सीढ़ी
जुज्चक़्ती	क्षणभंगुर
जुज़्वी	आंशिक
जुम्लः	वाक्य
जुहूर	अवतार
ज़ेरे असर	प्रभाव से
ज़ेह्न	याद्दाश्त, स्मृति, बुद्धि
जोग	योग
जौहर	तत्त्व, गुण

त

तंजीम	व्यवस्था
तअम्मा	उत्कर्ष
तअय्युन	निर्धारण
तअर्रुफ़	परिचय
तअर्रुफ़ कुनिंदः	परिचायक
तअल्लुक़	सम्बन्ध
तअस्सुर	संस्कार
तकब्बुर	घमण्ड
तक़्वा	संयम, इंद्रिय निग्रह
तक़्वियत	बल, शक्ति
तक्मिलः	पूर्ति
तख़्ईल	ध्यान
तख़ातुब	सम्बोधन
तख़्लीक़	सृष्टि, रचना
तग़य्युर	परिवर्तन
तग़य्युर पज़ीर	परिवर्तनशील
तजस्सुस	जिज्ञासा
त’ज़ाद	विरोधाभास
तज्रिबःकार	अनुभवी
तज़्किरः	चर्चा, ज़िक्र
तद्वीन	संकलन, संग्रह
तद्बीर	साधन, कोशिश
तनफ़्फ़ुस	वास-प्रश्वास
तनज़्ज़ुली	अपकर्ष
तफ़्सरा	वर्णन, चर्चा
तफ़्सीर	व्याख्या
तफ़्सील	विस्तार, विवरण
तफ़्रीक़	भेद, अंतर
तफ़्रीह	मनोरंजन, सैर-सपाटा
तफ़्सीलाती	विवरणात्मक
तबीअ़त	चित्त, मन
तब्दील	परिवर्तित
तब्दीली	परिवर्तन, बदलाव
तब्लीग़	प्रचार
तम्सील	उपमा, तुलना, दृष्टान्त
तम्हीद	भूमिका
तमंचा	पिस्तौल

तरक़्क़ीयाफ़्तः	विकासशील
तरद्दुद	कठिनाई
तरीक़-ए-कार	प्रक्रिया, कार्य-प्रणाली
तर्क	छोड़ना
तर्के दुन्या	संन्यास
तर्ग़ीब	प्रेरणा
तर्जीह	प्रधानता
तर्जुमा	अनुवाद
तर्ज़े अमल	कार्यशैली
तर्ज़े तक़्रीर	भाषण-शैली
तर्बियत	प्रशिक्षण
तलज़्ज़ुज़ात	भोग-सामग्रियाँ
तलफ़्फ़ुज़	उच्चारण
तलब	आवश्यकता, इच्छा,
तवारीख़	इतिहास
तवालुदो तनासुल	संतान उत्पन्न करना
तवस्सुत	मध्यस्थता
तशद्दुद	हिंसा
तश्रीह	टीका, व्याख्या
तश्नगी	प्यास, तृष्णा
तश्बीह	जपमाला
तसव्वुर	कल्पना, ध्यान
तसव्वुराती	ध्यानजन्य, काल्पनिक
तसल्लुत	प्रभुत्व, अधिकार
तसल्सुल	धारावाही
तसादुम	लड़ाई, संघर्ष
तस्नीफ़	रचना, लेखन
तस्लीमशुदगी	स्वीकृति, मंजूरी
तहक़ीक़	ख़ोज, विश्लेषण
तहक़ीक़एहक़	सत्य शोध
तह्ज़ीब	सभ्यता,संस्कृति, शिष्टता
तह्रीक	संचार
तह्रीर	लिखावट, लेख
तह्लील	विलय
तहारत	पवित्रता
तसाहुलपसन्द	आलसी
ताईद	पुष्ट, प्रमाणित
ताउम्र	जीवनपर्यन्त
ता'दाद	संख्या
ताबेईन	अनुयायी
ता'मील	अनुपालन
तामीरी इन्क़िलाब	रचनात्मक परिवर्तन
ता'मीले इर्शाद	आज्ञापालन
तारीख़ी	ऐतिहासिक
तालिबे इल्म	शिक्षार्थी
ता'लीमयाफ़्तः	शिक्षित
तिजारत	व्यापार
तुख़्म	बीज
तुख़्मरेज़ी	बीजारोपण
तौफ़ीक़	दैवानुग्रह
तौरो तरीक़ः	भाव-भगिमा, रंग-ढंग

द

दक़ीक़	सूक्ष्म, बारीक़
दफ़्अतन	अचानक
दरख़्त	पेड़, वृक्ष
दरहक़ीक़त	वास्तव में, सचमुच
दर्जःबन्दी	वर्ण-व्यवस्था
दलील	तर्क
दस्तोपा	हाथ-पैर
दस्तबस्तः	करबद्ध, हाथ जोड़कर
दह्शत ज़दः	भयभीत
दह्न	मुख, मुँह
दाइमी	शाश्वत
दाइमुल वुजूद	शाश्वत अस्तित्व वाला
दानिशमंद	बुद्धिमान
दावत	आमंत्रण

दिलकश	रोजक, आकर्षक
दिलनशीं	हृदयगम
दिली एहसास	मनोगत भाव
दीगर	अन्य, दूसरा
दीदार	दर्शन
दीदारे रब	ईश-दर्शन
दीन	धर्म
दीनी	धर्म से सम्बन्धित
दीनदार	धार्मिक, धर्मनिष्ठ
दीबाचः	प्राक्कथन
दुई	द्वैत
दुन्यवी दौलत	आसुरी सम्पत्ति
देव	राक्षस
दोज़ख	नरक
दोशीजः	युवाकन्या
दौर	काल, युग

न

नक़्श	चिह्न, निशान
नक़्शे कदम	पदचिह्न
नग़्मः सराई	गायन
नजात	मुक्ति, मोक्ष, उद्धार
नज़ाकत	सूक्ष्मता, बारीकी
नजातयाफ़्तः	मुमुक्ष, मोक्ष प्राप्त
नज़्र	भेंट
नफ़्स	इन्द्रिय
नफ़से आमद	श्वास
नफ़से ख़ारिज	प्रश्वास
नफ़्शकुश	जितेन्द्रिय, इन्द्रियनिग्रह
नफ़्श परस्ती	इन्द्रिय भोग
नमनाक	गीला
नवाज़ना	भेंट करना
नबातात	वनस्पतियाँ
नशात	खुशी, शान्ति
नश्रियः	प्रसारण
नस्बुल ऐन	आदर्श
नसीहत	शिक्षा, उपदेश
नस्ल	जाति, वर्ण
नस्ली तक्सीम	वर्ण-व्यवस्था
नाअह्ल	अनाधिकारी, अयोग्य
नाक़ाबिले तस्ख़ीर	दुर्धर्ष
नाक़ाबिले तराश	अकाट्य
नाक़ाबिले हलाक़	अवध्य
नाक़िस	दूषित
नाज़िम	व्यवस्थापक
नाज़िर	द्रष्टा
नादिर	अद्भुत, श्रेष्ठ, उत्तम
नाबीना	अंधा
नाफ़रीज़ः	अकरणीय
नामर्द	नपुंसक
नामुबारक	अशुभ
नामुक़म्मल	अपूर्ण
नासेह	उपदेशक
निगराँ	संरक्षक
निगहबान	देखभाल करने वाला
निज़ाम	व्यवस्था
निदाए ग़ैब	आकाशवाणी
निफ़ाक़	दूरी, अलगाव
निस्फ़	आधा
निस्फ़े अव्वल	पूर्वार्द्ध
निस्फ़े आख़िर	उत्तरार्द्ध
निस्बत	सम्बन्ध
नीमशब	आधी रात
नुमू पज़ीर	विकसित होने वाला
नेक अह्ले ज़िंदगी	सद्गृहस्थ
नेकोबद	भला-बुरा
नोशाब	अमृत

प

पज़मुर्दः	खिन्न, मलिन, उदास
पज़ीर, पिज़ीर	स्वीकृत करने वाला
पनाह	शरण
पर्चम	झंडा
पर्ताबी	धनुर्धर
परस्तार	पूजक, आराधक
परस्तीदनी	पूज्यता
पर्वर्दगार	प्रभु, ईश्वर
पर्वरे आ'ला	परमेश्वर
पस अंदाज़	मितव्ययी, किफ़ायत
पर्हेज़गार	धर्मात्मा, संयमी
पायः	स्तर
पारीनःमुद्दत	पुरातन
पिदर	पिता
पिन्हा	समाहित
पुख़्तः	दृढ़, मज्बूत
पुरज़ोर	शक्तिपूर्ण, सशक्त
पुरनूर	प्रकाशपूर्ण, ज्योतिर्मय
पुर फ़रेब	छली, धूर्त
पुर लुत्फ़	आनंदपूर्ण
पेचोख़म	टेढ़ा-मेढ़ा, जटिल
पेशकर्दः	प्रस्तुत
पैग़ाम	संदेश, पयाम
पैरी	अनुयायी
पोशीदः	गुप्त, छिपा हुआ

फ

फ़क़त	केवल, सिर्फ, समाप्त
फ़ख्रे आलम	विश्वगौरव
फ़जीलते आ'ला	परम प्रतिष्ठा
फ़ज़्ल	कृपा, अनुकम्पा
फ़त्ह	विजय
फ़न	कला
फ़ना	मृत्यु, मरण, नष्ट
फ़नाफ़िल्लाह	ब्रह्मलीन
फ़नापज़ीर	मरणधर्मा
फ़राख़दिली	उदारता
फ़रामोश	भूला हुआ, विस्मृत
फ़राहम	एकत्र, इकट्ठा
फ़रीजः	कर्त्तव्य, फर्ज़
फ़र्ज़	कर्त्तव्य, अनिवार्य
फ़र्ज़े मंसबी	स्वधर्म
फ़र्ज़ फे'ल	धर्म-कर्म
फ़र्दन-फ़र्दन	अलग-अलग
फ़र्माबर्दारी	आज्ञाकारिता
फ़लाहे अवाम	परमकल्याण
फल्सफः	दर्शन
फाइज़	सफल, कामयाब
फ़ानी	नश्वर, नाशवान
फ़ारिग़	मुक्त, आज़ाद
फ़ासिदुल अक़्ल	दुर्बुद्धि
फ़िक्र	चिन्ता, चिन्तन
फ़ित्रत	स्वभाव, प्रकृति
फ़िराक	वियोग, जुदाई, पृथकता
फ़िरेफ़्तः	मुग्ध, आसक्त
फ़िरेफ़्तगी	प्रेम, लगाव, आशिकी
फ़िर्क़ः	सम्प्रदाय
फ़ैज़	दानशीलता, उपकार
फ़ैसलःकुन	निर्णयाधीन

ब

बंदःपर्वर	भगवान
बंदोबस्त	प्रबन्ध
बईदुल क़ियास	आचिन्त्य
बऐनी	जैसे का तैसा, यथावत
बख़ील	कृपण, कंजूस
बज़ाहिर	स्पष्ट

बतद्रीज़	क्रमानुसार
बतसल्सुल	क्रमानुसार
बतौर कुल्ली	पूर्णरूप से
बदअक़्ल	दुर्बुद्धि
बदअख़्लाकी	अतीति
बदउन्वान	भ्रष्ट, स्वेच्छाचारी
बदउन्वानी	स्वेच्छाचार
बदकिर्दार/कर्दार	दुराचारी, कदाचारी
बदज़ात	अधम, नीच
बदरविश	कुरीति
बदसगुन	अपशकुन
बदीही दीदार	साक्षात् दर्शन
बरअक्स	विसदृश, प्रतिकूल
बरअक्स तसव्वुर	विकल्प
बरख़िलाफ़	प्रतिकूल
बरताव	आचरण
बरमहल	ठीक मौके पर, उचित
बरुहानी तर्ग़ीब	अन्तस्प्रेरणा
बर्हमन आरिफ़	ब्रह्मर्षि
बहावर	सम्पन्न
बसीग़एराज़	गोपनीय
बिहिश्त	स्वर्ग
बाज़पुर्स	पूछ-ताछ, खोज-बीन
बाजू-ए-अज़ीम	महाबाहु
बाज़-ए-तवील	आजानुबाहु
बातिनी	आन्तरिक
बातिल	झूठ
बामसर्रत	सुखी
बारहा	बार-बार
बालातर	बेहतर, श्रेष्ठ
बाहोश	सचेत
बिलआख़िर	अन्ततः
बिलाशुब्हः	निःसंदेह
बीनाई	दृष्टि, नज़र
बुज़ुर्गवार	पूज्य, मान्य
बुत	मूर्ति
बुतखानः	मंदिर, मूर्तिगृह
बुतपरस्ती	मूर्तिपूजा
बूदोबाश	रहन-सहन, रहाइश
बेक़रार	व्याकुल, आतुर, उद्विग्न
बेग़रज़	निःस्वार्थ, निष्काम
बेगरज़ अमली जोग	निष्काम कर्मयोग
बेज़रर	अचूक
बे'तकान	अथक
बेदार	जागृत
बेदारी	जागृति
बेमिस्ल	बेजोड़
बेशुमार	अगणित
बेहद	असीम, अत्यन्त
बेहिस	अचेत
बेहुर्मती	बेइज़्ज़ती
बोसीदः	जीर्ण-शीर्ण
	म
मंज़र	दृश्य, कौतुक
मंज़रकशी	दृश्यांकन
मंज़िले मक़्सूद	उद्देश्य, लक्ष्य
मआनी	अर्थसमूह, माना
मक़ाम	स्थान, जगह
मक़ामे खुदा	ईश-स्थान
मक़ामे पैदाइश	जन्मस्थान
मक़ूलः	क़ौल, कथन
मख़्ज़न	भांडागार, भंडार
मख़्फ़ी	गुप्त, छिपा हुआ
मख़ज	उद्गम, स्रोत
मख़्लूक़	संसार, उत्पन्न, मनुष्य
मख़्सूस	प्रमुख, प्रधान

मग्ज़े सुख़न	निष्कर्ष
मग़्रिब	पश्चिम
मज़म्मत	भर्त्सना, निन्दा
मज़ामिन	लेख समूह
मज़्कूरएबाला	उपरोक्त
मज़्मूअः	संकलन, संग्रह
मज़्मून नवीसी	लेखन-क्रिया
मज़्हर	प्रकट होने का स्थान
मत्लूब	वांछित, प्रेम-पात्र
मत्लूबे कुल्ली	परम आराध्य
मनाज़िर	दृश्य-समूह
मफ़्हूम	तात्पर्य, आशय
मबऊस	अवतार, अवतरित
मम्नूअ	निषिद्ध
मयस्सर	उपलब्ध
मर्क़ज़	केन्द्र
मर्दे आदमी	सज्जन व्यक्ति, पुरुषश्रेष्ठ
मर्दे कामिल	पूर्ण पुरुष
मर्दे ख़ुदा	महात्मा
मर्तबः	पद, स्तर, दर्जः
मर्हूमीन	दिवंगत लोग
मलकाते मज़मूम	तमोगुण
मलकाते फाज़िलः	सतोगुण
मलकाते रदीयः	रजोगुण
मलकुल मौत	यमराज, मौत का देवता
मलाहत	लावण्य, सौन्दर्य
मश्गूल	संलग्न, लीन
मश्रिक़	पूरब
मस्अलः	समस्या
मश्अले-राह	आदर्श, पथ-प्रकाश
मसर्रत	हर्ष, आनन्द, ख़ुशी
मसाइल	समस्याएँ
मस्दर	उद्गम, उत्पत्ति-स्थान
मस्तुई सय्यारः	उपग्रह
मस्रूफ़	व्यस्त, संलग्न, लीन
मह्दूद	सीमित
मह्फ़ूज़	सुरक्षित
मह्बूब	प्रिय
मह्सूर	घिरा हुआ
मह्व	तल्लीन, तन्मय
माइल	झुकाव रखनेवाला, आकर्षित
मा'कूल	उचित, मुनासिब
माज़ी	गुज़रा हुआ, अतीत काल
माद्दी	भौतिक
मा'बूद	उपास्य, ईश्वर
माबैन	बीच में, अंतराल
मायूस	निराश, हताश
मा'रिफत (मा'र्फत)	द्वारा, जरिये से, अध्यात्म
मालिकुल ख़ल्क	जगत्पति, विश्वनाथ
मालो-मताअ'	ऐश्वर्य, धन-दौलत
मावरा	परे, अतीत
मावराई	अलौकिक
माहिर	कुशल, दक्ष
माहिरीनआसरेक़दीमः	पुरातत्वविद्
माहीयत	वास्तविकता, हक़ीक़त
मीज़ान	जोड़, योगफल
मुंतख़ब	निर्वाचित, संकलित
मुअज़्ज़म	प्रतिष्ठित, इज़्ज़तदार
मुअज़्ज़ज़	प्रतिष्ठित, सम्मानित
मुऐयन (मुअय्यन)	निश्चित, निर्धारित
मुअल्लिम	शिक्षक
मुअल्लिमः	शिक्षिका
मुआज़नः	तुलना, समानता, बराबरी
मआफ़क़त	समानता, अनुकूलता
मुआयनः	निरीक्षण
मुआशरः	समाज

मुकद्दस पवित्र, पुनीताम्मा
मुक़र्ररः नियत, निश्चित
मुक़र्रिर वक्ता, भाषण देने वाला
मुकम्मल सम्पूर्ण, पूर्ण, समाप्त
मुक़व्वी बलवर्द्धक
मुकालमः वार्तालाप, परस्पर बातचीत
मुख़ालफ़त विरोध, वैमनस्य
मुख़्तसर संक्षिप्त, न्यून, ख़ुलासा
मुख़्तारेकुल सबका मालिक
मुजस्सम साक्षात्, साकार
मुजाहिदे आज़म प्रधान सेनापति
मुज़्मिर सन्निहित, गोयक
मुज़ैयन (मुज़य्यन) सुसज्जित, आरास्तः
मुतअस्सिर प्रभावित
मुतअल्लिक़ात सम्बन्धित बातें
मुतज़ल्ज़िल हिलने-डुलने वाला
मुतजस्सिस खोजी, जिज्ञासु
मुतबर्रिक पवित्र, पुनीत
मुत्मइन आश्वस्त
मुतवाज़ी समानान्तर
मुतरादिफ़ पर्यायवाची
मुताबकत अनुरूपता
मुतालअः अध्ययन
मुत्तकी संयमी, इन्द्रिय निग्रही
मुत्तहद संयुक्त, हमराय, सहमत
मुतहम्मिल सहिष्णु, सहनशील
मुतवस्सिलेमुर्शिदकामिल सद्गुरु-कृपाश्रयी
मुंदरजः ज़ैल निम्नलिखित
मुनज़्ज़म क्रमबद्ध, क्रियागत
मुनव्वर उज्जवल, प्रकाशमान
मुन्हसिर निर्भर, आश्रित
मुनाज़रः शास्त्रार्थ
मुनाजात प्रार्थना

मुनासबत सम्बन्ध, अनुकूलता
मुन्कसिरुलमिज़ाज विनीतात्मा, विनम्र स्वभाव
मुफ़क्किरीन विचार को
मुफ़स्सल सविस्तार
मुफ़ीद उपयोगी, कल्याणकारी
मुबर्रा बरी किया हुआ, मुक्त
मुबस्सिर मर्मज्ञ, पारखी
मुबारक शुभ
मुमानअत निषेध
मुम्किन सम्भाव्य, सामर्थ्य
मुम्ताज़ विशिष्ट
मुरव्वजः प्रचलित, राइज
मुरक्कब मिश्रित, मिला हुआ
मुरुव्विज़मुरस्सा अंदाज़ अलंकारिक शैली
मुराकबः समाधि
मुराक़िब समाधिस्थ
मुराद इच्छा, कामना, अभिलाषा
मुर्तकिब पाप या दोष करने वाला
मुर्शिद धर्मगुरु, पीर, सद्गुरु
मुर्शिद-कामिल सद्गुरु
मुशक्कल साकार, साक्षात्
मुसन्निफ़ लेखक, रचयिता
मुलव्वस सना हुआ, लिप्त
मुल्तजी निवेदक, इच्छुक
मुसल्सल लगातार, निरन्तर
मुसल्लह सशस्त्र, हथियारबंद
मुसल्लमात सर्वमान्य, प्रमाणित बातें
मुसव्विरी चित्रकारी
मुसावात समानता
मुसावी समान, तुल्य, बराबर
मुशाहदः निरीक्षण, दर्शन, देखना
मुस्तक़्बिल भविष्य
मुस्तहक़ अधिकारी

मुस्तह्कम	निश्चय, अटल
मुहक़्क़क़	प्रमाणित
मुहक़्क़िक़	अन्वेषक
मुहज़्ज़ब	शिष्ट, सुशील
मुहिब	सखा
मुहीत	व्यापक, आच्छादित
मूसीक़ी	गान-विद्या, संगीत-कला
मक्अ़द	गुदा, मलद्वार
मेह्बा	दयालु, सकरुण
मेह्बानी	कृपा, दया, करुणा
मो'तक़िद	श्रद्धालु, श्रद्धावान
मो'तदिल	संतुलित, समशीतोष्ण
मौजूआत	विषयों

य

यक	एक
यक नज़र	समदर्शी
यकरंग	निश्छल, एक तरह
यकसाँ	एक समान, सदृश
यके-बादे-दीगरे	उत्तरोत्तर
यग	यज्ञ
याद	भजन
यादे-इलाही	ईश्वर-भजन
याफ़्त	प्राप्त, पाया हुआ

र

रग़्बत	लगाव, अभिरुचि, चाह
रज़ामंदी	सहमति
रज़ील	अधम, नीच, कमीना
रज़्मियात	जंगी दास्तान या नज़्म
रथबान	रथी
रब	ईश्वर, स्वामी
रब्बानी	ईश्वरीय, दैवी
रब्बनियत	ईश्वरत्व, ख़ुदाई
रम्ज़शनास	मर्मज्ञ, रहस्यवेत्ता
रवादारी	सहृदयता, उदारता
रवाँ	ज़ोर से बहता हुआ
रविश	आचार-व्यवहार, पद्धति
रसूल	ईशदूत, नबी, ईश्वरावतार
रहनुमा	पथ-प्रदर्शक
रहनुमा निशान	पथ-प्रदर्शक चिह्न
रहबरी	नेतृत्व, पथ-प्रदर्शन
रहबानियत	ब्रह्मचर्य, संन्यास
राग़िब	आकर्षित, दिलचस्प
राज़	रहस्य, भेद, मर्म
राज़िक़	अन्नदाता, पालनहार
रासिख़	अटल, दृढ़, पक्का
राहत	सुख, चैन, आराम
राहरौ	राहगीरी, पथिक
राहनुमाई	पथ-प्रदर्शन
राहे ख़ुदा	ईश्वर-पथ
राहे इल्म	ज्ञान-मार्ग
राहे रब	ईश्वर-पथ
राहे ग़ौरो-फ़िक्र	चिन्तन-पथ
रिफ़ाह	भलाइयाँ, सुख
रियाकार	पाखण्डी, आडम्बरी, ढोंगी
रियाकारी	पाखण्ड, ढोंग
रियाज़त	तपस्या, प्रयास, अभ्यास
रियाज़तकश	इन्द्रियनिग्रह करने वाला, तपस्वी
रियाज़ते जोग	योगाभ्यास
रिवायत	यथावत् वर्णन
रुज्हान	प्रवृत्ति, रुचि
रुस्वाई	बदनामी, निंदा, अपयश
रू-ब-रू	आमने-सामने, प्रत्यक्ष
रुबूबी आलिमः	ब्रह्मविदुषी
रूह	आत्मा, प्राण-वायु, सत
रूहानियत	अध्यात्मवाद

रूहानी दौलत	दैवी सम्पत्ति
रूहे-तबूई	अपानवायु
रूहे-हयात	प्राणवायु
रूहे मुत्लक़	ईश्वर, परमात्मा
रोज़े पीर	सोमवार
रौनक़ अफ़रोज़	शोभा बढ़ना, शोभायमान
रौशनज़दः	प्रकाशमान
रौशन ज़मीर	अन्तर्यामी
	ल
लकीरे कशिश	आकर्षण रेखा
लज़ीज़	स्वादिष्ट, सुस्वाद
लज्ज़ते-दुन्या	सांसारिक आनन्द
लताफ़त	कोमलता, सूक्ष्मता
लतीफ़	कोमल, नर्म, सूक्ष्म
लबरेज़	परिपूर्ण, भरा हुआ
लम्स	स्पर्श, छूना
लम्हाती	क्षणभंगुर
लर्ज़ः ख़ेज़	रोमांचित कर देने वाला
लर्ज़ः बर अंदामकुन	शरीर में कँपकँपी कर देने वाला
लर्ज़िश	कँपकँपी, थरथराहट
लाअक़ीदत	अश्रद्धा
लाइके ता'ज़ीम	स्वीकार्य, अनुपालनीय
लाइल्मी	अज्ञानता
लातअल्लुक़ी	असंगत
लाफ़ानी	अविनाशी
लाफानी उंसुर	शाश्वत तत्व
लाबवान	अवर्णनीय
लामज़्हब	धर्मविहीन
लामुतनाही	अनन्त, असीम
लामुतबादिल	अपरिवर्तनशील
लामुलब्बस	निर्लिप्त
लाशरीक	अनन्य
लियाक़त	योग्यता
लिहाज़ा	अतः, इसलिए
	व
वक़्फ़	ईश्वरार्पण, उत्सर्ग, न्यास
वक़्ती सदाक़त	सामयिक सच्चाई
वज़ीफः	जप, छात्रवृत्ति
वफ़ात	मृत्यु, मरण
वबाल	आपत्ति, विपदा, झंझट
वलद	पुत्र, बेटा
वली	महात्मा, ऋषि, मित्र
वलीयुल्लाह	पहुँचा हुआ इंसान, मर्मज्ञ
वसीलः	माध्यम, साधन
वस्त	बीच, मध्य, दरम्यान
वस्लो-हिज्र	संयोग-वियोग
वहूदानियत	एकत्व, एकता
वह्शत	पागलपन, भय, त्रास
वाक़ियात	घटनाएँ
वालिद	पिता
वालिदः	माता
वालिदैन	माता-पिता
वाबस्तः	आबद्ध, सम्बद्ध
वाहिद	एक, एकमात्र
वुजूद	अस्तित्व
वुजूहात	कारण-समूह
वुस्अत	विस्तार, सामर्थ्य
विरासत	दायाधिकार, उत्तराधिकार
विर्द	बार-बार दुहराना, जप करना
	श
शनाख़्त	पहचान
शदीद	प्रचण्ड, तीव्र दुष्कर
शबीह	चित्र, तस्वीर, समान
शबेतार	नितांत अंधेरी रात
शम्सीर	असि, कृपाण, तलवार

शरफ़	श्रेष्ठता, उत्तमता, बुजुर्गी
शराए'	शास्त्रों
शरीअ़त	शास्त्र
शरीफुन्नफ़्स	शिष्ट, सज्जन
शर्ह	व्याख्या, टीका
शर्हनवीस	टीकाकार, भाष्यकार
शफ़्फ़ाफ	स्वच्छ, उज्ज्वल, शुद्ध
शागिर्द	शिष्य, तालिबे-इल्म
शाज़	विरला, अकेला
शाह	राजा
शाही आरिफ़	राजर्षि
शाहे मलाइक	देवराज
शिगुफ्तः	विकसित, हर्षित
शिर्क	द्वैतवादी होना, अनेकेश्वरवादी होना
शुनीदः	सुना हुआ
शुमार	गणना
शोख़	चंचल, चुलबुला, उदंड
संजीदः	संतुलित, गंभीर
संदल	चंदन
सक़ालत	गुरुत्व, भारीपन
सदाए नाकूस	शंख-ध्वनि
सदाक़त	सच्चाई
सफ़आरा	पंक्तिबद्ध
सबब	कारण
समरः	फल, परिणाम
समरात	फलों, परिणामों
सम्त	दिशा, तरफ़
सय्यारः	ग्रह, तारा
सरकोबी	सर कुचलना, दमन करना
सरज़द	घटित
सरपरस्ती	पालन-पोषण
सलाहीयत	समझ, योग्यता, खूबी
सलीस	सरल
सताब	अच्छे कार्यों के लिए परलोक में मिलने वाला पुण्य
सह्लुल हुसूल	सुलभ, सहज ही प्राप्त
सह्व	विस्मरण
साकिन	स्थिर
साजिश	षड्यंत्र
सादिक़	न्यायनिष्ठ, सत्यवादी
साबिक़	पिछला
साबिकुल अक़्ल	पूर्ववत् बुद्धि, स्थिर बुद्धि
साबित कदम	दृढ़ प्रतिज्ञ
साबिर	सहिष्णु, सहनशील
सायः	छाया
सारिफ़	उपभोक्ता
सालिम	अखण्ड, सम्पूर्ण
सालेह्	सदाचारी
साहिबे फ़िक्र	विचारक
सिपहसालार	सेनापति, सेनाध्यक्ष
सिपहसालारे-आ'ज़म	प्रधान सेनापति
सिफ़त	गुण, प्रशंसा
सिफ़ात	गुणों
सिराते मुस्तक़ीम	धर्म-पथ, सन्मार्ग
सिल्सिलः	शृंखला, क्रम
सिल्सिलः बन्दी	क्रमबद्धता
सुकून	शान्ति, संतोष, इत्मीनान
सुतूर	लकीरें, पंक्तियाँ
सुपुर्दगी	समर्पण
सुरत	याद
सुह्बते असर	संग-प्रभाव
सुह्बते नेक	सत्संग
सूफ़ी	अध्यात्मवादी, ब्रह्मज्ञानी
सौमो-सलवात	धर्मनिष्ठा, नमाज़

ह

हक़	सत्य
हक़परस्त	सत्याराधक
हक़शनास	ब्रह्मविद्
हक़ीक़त	सच्चाई
हक़ीक़ी	वास्तविक, यथार्थ
हक़ीक़ी सुकून	वास्तविक स्रोत
हक़ीक़ी राह	सत्य-मार्ग
हक़ीर	तुच्छ, क्षुद्र, अति न्यून
हत्मी	निश्चित रूप से
हदे कामिल	पूर्ण पराकाष्ठा
हब्सेदम	प्राणायाम
हफ़्तऔरंग	सप्तर्षि, बनातुन्नाश
हमज़ात	सजातीय
हमनवा	एक राय, सहमत
हममर्तबत	बराबर का
हमवज़्न	बराबर
हमसर	बराबर
हमरंग	एक बराबर
हम्दोसना	स्तुति
हम्दसराई	ईश्वर की स्तुति करना
हम्दो सिताइश	स्तुति-गान
हया सोज़	घृणित
हरकत	गति, चाल
हर शै	प्रत्येक वस्तु
हलाक	हत, बधित, मारा हुआ
हल्क़	कंठ, गला
हवास	इन्द्रियाँ
हवासे जाहिरी	कर्मेन्द्रियाँ (स्पर्श, श्रवण, घ्राण, स्वाद, दृष्टि)
हवासे-बातिकी	ज्ञानेन्द्रियाँ
हसद-अदावत	ईर्ष्या-द्वेष
हस्बे हाल	हालत और दशा के अनुसार
हस्रातुलअर्ज़	कीट-पतंग
हाल	वृत्तांत, बयान, दशा
हासिल	प्राप्त, उपलब्ध
हिदायत	आदेश, हुक्म
हिदायतकर्दः	निर्देशित, आदेशित
हिफ़ाजत	रक्षा, बचाव
हिमायत	पक्षपात, पोषण
हिम्मत अफ़्ज़ाई	प्रोत्साहन देना
हिज्रज़दः	वियोगी, विरहग्रस्त
हिस	संवेदन, संवेदनशक्ति
हुजूम	जनसमूह, भीड़
हुज़ूरे आ'ला	महामहिम
हुसूल	प्राप्ति, उपलब्धि, लाभ
हुसूलयाफ्तः	प्राप्त, लब्ध
हैज़	रजस्वला
हैरतअंगेज़	आश्चर्यजनक

गीता आपकी दीनी शरीअ़त है

दुन्या में मुरव्वजः सारे दीनी ख़यालात के अव्वली मख़ज़ का मक़ाम भारत की सारी रूहानियत और ख़ुदक़फ़ीली दिलाने वाली सारी तहक़ीक़ के वसीलः के सिल्सिलः का साफ़-साफ़ बयान इस गीता में है, जिसमें वाहिद मा'बूद, हासिल करने का तरीक़ः एक, राह में मेह्बानी एक और समरः एक है..... वह है मा'बूद का दीदार, मा'बूद की हक़ीक़ी शक्ल का हुसूल और लाफ़ानी लामह्दूद ज़िंदगी। देखें- **'यथार्थ गीता'**।

सालों के लम्बे अरसा के बाद श्रीमद्भगवद्गीता की दाइमी तशीह

शरीअ़त

रूहे मुल्क़ में दाख़िलः दिलाने वाले अमली नज़्मो-ज़ब्त के उसूलों की तद्वीन ही शरीअ़त है। इस नज़रीयः से बन्दःपर्वर श्रीकृष्ण के ज़रीअः बयान की गयी गीता अबदी, दाइमी दीन की पाक शरीअ़त है; जो चारों वेद, उपनिषद्, सारे इल्मेरियाज़त, रामचरित मानस और दुन्या के तमाम मक़ूलों (उलूमें इलाहीयात) की तन्हा ही नुमाइंदगी करती है। गीता तमाम इंसानों के लिए दीन की नाक़ाबिले दलील शरीअ़त है।

रूहे मुल्क़ का मुक़ाम

वह क़ादिरेकुल, दाइमी रूहेमुल्क़ इंसानों के दिल में मौजूद है। पूरी अक़ीदत से उसकी पनाह में जाने का उसूल है, जिससे बरहक़ मक़ाम, दाइमी सुकून और लामह्दूद ज़िंदगी का हुसूल होता है।

पैग़ाम

हक़ की तीनों दौरों में कमी नहीं है और बातिल का वुजूद नहीं है। मा'बूद की तीनों दौरों में हक़ है, दाइमी है, अबदी है।

–स्वामी अड़गड़ानन्द

५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००
५२००

सालों के लम्बे अस्ना के बाद श्रीमद्भगवद्गीता की दाइमी तशीह

ॐ

श्री परमहंस स्वामी अड़गड़ानन्दजी आश्रम ट्रस्ट

न्यू अपोलो स्टेट, गाला नं- 5, मोगरा लेन (रेलवे सब वे के पास)
अंधेरी (पूर्व), मुम्बई - 400069, भारत
ई-मेल- contact@yatharthgeeta.com वेबसाइट- www.yatharthgeeta.com